श्री रत्नप्रभसूरीमद्गुरुभ्यो नम

अथश्री

ज्ञान विलास.

(पच्चवीसपुष्पोंका सग्रह)

सग्राहक,

श्रीमदुपकेश (कमला) गच्छीयमुनि

श्री ज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्दजी)

द्रव्य सहायक—

श्री सघ-फलोधी सुपनोंकी आमदनीसे

प्रबन्धकर्ता

शाहा मेघराजजी मोणोयत मु० फलोधी

प्रथम आवृत्ति १०००

वीर सवत् २४४६

विक्रम सवत् १९७६

धी 'आनंद' प्री. प्रेसमें शाह गुलाबचंद लल्लुभाइने छापा.

प्रस्तावना

प्यारे पाठक वृन्द !

इस आरापार संसारके अन्दर परिभ्रमन करते हुवे जीवोंको शास्त्रकारोंने मनुष्यजन्मादि अच्छी सामग्री मीलना अति दुर्लभ बतलाया है अगर कभी पूर्व पुन्योदयसे मील भी जावे तो आत्मकल्याण करना बहुतही दुष्कर है क्यों कि आत्मा निमित्तवासी है। जीवात्माको जेसा जेसा निमित्त मीलता है वेसी वेसी प्रवृत्ति हुवा करती है इस वास्ते आत्मकल्याणी पुरुषोको सर्वेके लिये शुद्ध निमित्त-कारणकी ही गवेषणा करना चाहिये

मोक्षमार्ग साधनेके लिये भी शास्त्रकारोंने प्रथम खास अच्छे निमित्त-कारणकी आवश्यक्ता बतलाइ है इसके लिये पूर्व महा ऋषियोंने बहुतसे साधन और उपाय बतलाये हैं, जेसे सत्सग, नानाभ्यास, ज्ञानमय पुस्तकोंका पठन-पाठन, सिद्धान्तश्रवण, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, प्रभुपूजा, प्रभावना, दान, शील, तप, भावना इत्यादि इनके अलावा महात्माओंने पूर्ण परिश्रम द्वारा अनेक अपूर्व और परम उपयोगी ग्रन्थ बनाके जनसमाजपर बडाही उपकार किया है। परन्तु वे ग्रन्थ प्राय संस्कृत-प्राकृत भाषाके होनेसे साधारण समाजको उस ग्रन्थोका पूर्ण लाभ नहीं मिल सकता है। कारण आजकाल लोगोका ख्याल प्रचलित भाषाकी और विशेष है वास्ते समयानुसार प्रचलित भाषाओंके ग्रन्थकी अत्यावश्यक्ता है अगर एक ग्रन्थ एसा

तैयार किया जाय कि प्रचलित धर्मक्रियाएं सर्व सविस्तर जिस्के अन्दर प्रतिपादन हो. परन्तु साथमें भय इस वातका खडा होता है कि वह ग्रन्थ वहुत बडा हो जानेसे हाथमें लेतेही मगज कंप उठेगा, अगर भिन्न भिन्न विषयकी भिन्न भिन्न पुस्तके बनाइ जाय तो पुस्तक वहुतसी वन जायगी तो उसकी संभाल रखनेमें तथा पढनेमे आलस्य—प्रमाद आके घेर लेगा। इस दोनो पक्षके इन्साफ तथा प्रमादग्रस्त जीवोको जागृत करनेके लिये एक एसा ग्रन्थ तैयार कराया जाय कि जिस्में प्रचलित सब धर्मक्रियाओका समावेश होनेपर भी ग्रन्थ वहुत बडा न हो, जिस्को सुगमतापूर्वक अपने पासमे रखते हुवे हमेशा पठन—पाठन कर अपना आत्मकल्याण कर सके। इस सहेतुक यह लघु ग्रन्थ तैयार करवाके आप साहिबोंके करकमलोंमें रखा जाता है.

इस लघु ग्रन्थमें बडेही उपयोगी पच्चीश पुष्पोका संग्रह किया गया है. उक्त पुष्प भिन्न भिन्न विषयसे परिपूर्ण है. जैसे नमस्कारसे लेके सामायिक विधिपूर्वक लेना—पारना, प्रतिक्रमण, चैत्यवन्दनो, स्तवनो, सझायो, गहुंलीयो, मन्दिरजीमे वोलनेके श्लोक, दोहा, प्रभुपूजाका हेतु, फल, विधि, शुद्धता तथा दश त्रीक, पांच अभिगम, चोराशी आशातना और भी विधिचैत्य अविधिचैत्यका विवरणके साथ और भी वहुत वातें वतलाइ गइ है.

धर्मके सन्मुख कोन हो सक्ते है? इसके लिये मार्गानुसारीपनेके पैंतीस वोल, प्रतिदिन चितारने योग चौदा नियम विस्तारपूर्वक और श्रावकको गत कालकी आलोचनापूर्वक शुद्ध देव गुरु, धर्मकी पहि-

चानक साथ वारह व्रत ग्रहन करना और १२४ अतिचारका संक्षिप्तमें अच्छा खुलासा किया गया है

जीवोंके साथ कभी सुमति कभी कुमति आया करती है तथा यह जीव मोहराजाकी पासमें बन्धा हुवा चौरासीके अन्दर विविध प्रकारका नाटक कर रहा है इसका प्रदर्शन कक्काबत्तीसी द्वारा कराया है जिस्मे नय, निक्षेप प्रमाण, स्याद्वाद, सप्तभंगी आदिका खुलासा करते हुये मोहराजापर विजयका रस्ता बतलाया है

जैन मुनि कैसे होने चाहिये और कितनी योग्यता हो तथा कहातक परिक्षामें पास हुवे हो तो दीक्षा देना, इसको भी सविस्तारसे दरसाया गया है

यह लघु ग्रन्थ साधारण जनको ही उपयोगी नही परन्तु व्याख्यानदाता वक्तावोंको भी पूर्ण साहितारूप है क्यों कि इसके अन्दर व्याख्यानिकास संस्कृत, प्राकृत और हिन्दी भाषाके अन्दर बडी मनोरंजक और असर करनेवाली कवितावोंका भी समावेश किया गया है

वर्तमान समाजका दिग्दर्शन करानेके लिये एक नीनतीशतकने भी इस लघु ग्रन्थमें महत्त्वका स्थान रोक रखा है यह भी अवश्य पढ्ने योग्य है

मूर्ति और दयादान नहीं माननेवाले ढुंढीया और तेरापन्थीयोंका जन्म किस किस कारणसे कोनसे कोनसे समयमे हुवा है, वह मनोरंजक दृश्य कविताद्वारा बतलाया है उक्त मतवालोंकी कितनीक क्रिया

जैनोसे विपरीत है वह भी स्पष्ट बतला दीया है. मूर्ति तथा दयादानके विषयमें आगम प्रमाण तथा युक्तिप्रमाणसे अच्छा प्रतिपादन किया है. साथमे वे लोक केवल ३२ सूत्र वे भी मूल पाठ माननेका आग्रह करते है इसके लिये बत्तीस सूत्रोके मूल पाठके १०० प्रश्न पूछे गये है इत्यादि ।

अन्तमें ग्रन्थकर्ता मुनिश्री अपने उपकेशगच्छ (पार्श्वनाथ-परम्परा) की पट्टावली मनोरंजक कवितामे दी है, जिस्मे ओसवाल, पोरवाल, श्रीमाली जातियोके स्थापक श्रीस्वयप्रभसूरिजी, श्रीरत्न-प्रभसूरिजी, यक्षदेवसूरिजी महाराजोंका जैन कोमपर कितना उपकार है उसका विवरण कर बतलाया है.

इसके सिवाय और भी इस ग्रन्थके अन्दर बहुतसी विषय है कि जो सर्व साधारण समाजके लिये बडेही हितकारी और निरंतर उपकारी है जिसका प्रतिदिन पठन–पाठन, मनन करनेसे अपूर्व ज्ञान और आत्मकल्याण सुगमतापूर्वक हो सके. इस लघु प्रस्तावनाको समाप्त करते हुवे हम हमारे आत्मबन्धुओसे निवेदन करते हैं कि आप एक दफे इस ग्रन्थको आद्योपान्त अवश्य पढे । कारण ग्रन्थकी उपयोगिता और ग्रन्थकर्ताका श्रम जब ही सफल होगा कि इस ग्रन्थको आद्योपान्त पढेगे. सुज्ञेषु कि बहुना. इतिशम् ।

प्रकाशक.



श्री मदुपकेशगच्छीय–

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज ।



जन्म स १९३७ । दीक्षा स १९६२ ।

(१) विषयानुक्रमणिका

(२४) प्रतिक्रमण सूत्र.

—•∻(◎)∻•—

(२) विषयानुक्रमणिका.

(१) देवगुरुवन्दनमाला.

(२) चैत्यवन्दनादि स्तवन.

(३) जैननियमावली

(४) सुबोधनियमावली

(५) ८४ आशातना

(६) जिनस्तुति

(७) प्रभुपजा

(८) तीर्थयात्रा

(९) जैन दीक्षा



शीघ्रबोधके थोकडोंकी संख्या.



नं.	शीघ्र.	थोकडे	नं.	शीघ्र.	थोकडे
१	भाग १ ला. ...	१६	१४	भाग १४ वा.	१७
२	भाग २ जा.	२	१५	भाग १५ वां. प्र० उ०	५
३	भाग ३ जा.	९	१६	भाग १६ वां. ...	१२
४	भाग ४ था.	९	१७	भाग १७ वा.	तीन सूत्र
५	भाग ५ वा.	१७	१८	भाग १८ वां.	पाच सूत्र
६	भाग ६ ठा.	३	१९	भाग १९ वां.	एक सूत्र
७	भाग ७ वा.	२	२०	भाग २० वा.	,,
८	भाग ८ वां.	२८	२१	भाग २१ वां.	,,
९	भाग ९ वा.	२१	२२	भाग २२ वां.	,,
१०	भाग १० वां. . .	२	२३	भाग २३ वां.	थो० २
११	भाग ११ वां. .	२१	२४	भाग २४ वां.	छपते हे
१२	भाग १२ वां. .	२१	२५	भाग २५ वां.	,,
१३	भाग १३ वा.	७	६६	द्रव्यानुयोग.	थो० ४



अथ श्री

प्रतिक्रमण मूल सूत्रम्।

नमस्कार, इर्यावहि, तस्सोत्तरी, अन्नत्थ, लोगस्स, सामायिक लेना, पारना, चैत्यवन्दनो, स्तुइयो, स्तवनो, सझायो आदि सूत्रों इसी पुस्तकके प्रारभमें लिखा गया है। कण्ठस्थ करनेवाले भाइ इसी पुस्तकमे कर सक्ते है वास्ते वह सूत्र यहा नहीं लिखा है। यहापर मात्र प्रतिक्रमणके शेष मूल सूत्र ही लिखा जावेगा। जो कि कण्ठस्थ करनेवाले सुभितेके साथ कर सके। सार्थ और सहेतु प्रतिक्रमण ग्रन्थ पुस्तक द्वारा प्रकाशित किया जायगा।

॥ प्रतिक्रमणकी आदिमे देववन्दन ॥

इरियावहि पडिक्कमके चैत्यवन्दनमे नमुथ्थुण तक कहेना देखो पृष्ट ३ से बादमें अरिहत चेइआणका पाठ—

अरिहत चेइआण करेमि काउस्सग्ग वदणवत्तिआए पूअणवत्तिआए सकारवत्तिआए सम्माणवत्तिआए बोहिलाभ वत्तिआए निरूवसग्गवत्तिआए सद्धाए मेहाए धीईए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्ग। अन्नत्थ०। एक नवकारका काउस्सग्ग करके एक थुई बोलना, देखो पृष्ट १७ से

थुई । बादमें लोगस्स कहके—सव्वलोए अरिहंत चेइआणं करेमि काउस्सग्गं० पूर्ववत् एक थुई कहेना । बादमें पुक्खरवरदीका पाठ—

॥ पुक्खरवरदी ॥

पुक्खरवर दीवड्ढे धायइ संडेअ जंबुदीवे अ ॥ भरहेरवय विदेहे । धम्माइगरे नमंसामि ॥ १ ॥ तम तिमिर पडल विद्धं सणस्स । सुरगण नरिंद महिअस्स । सीमा धरस्स वंदे । पप्फोडिअ मोह जालस्स ॥ २ ॥ जाई जरा मरण सोग पणासणस्स । कल्लाण पुक्खल विसाल सुहावहस्स ॥ को देव दाणव नरिंद गणच्चिअस्स । धम्मस्स सार मुवलप्भ करे पमायं ॥ ३ ॥ सिद्धे भो पयओ णमो जिणमए नंदी सया संजमे । देवं नाग सुवन्न किन्नर गण स्सप्भुअ भावच्चिए ॥ लोगो जत्थ पइट्ठिओ जगमिणं ॥ तेलुक मच्चासुरं । धम्मो वड्ढओ सासओ विजयओ धम्मुत्तरं वड्ढओ ॥४॥ सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं वंदणवत्तिआए० यावत् एक थुइ कहना ॥ बाद—

॥ अथ सिद्धाणं बुद्धाणं ॥

सिद्धाणं बुद्धाणं । पारगयाणं परंपर गयाणं । लोअग्ग मुवगयाणं ॥ नमो सया सव्व सिद्धाणं ॥ १ ॥ जो देवाणवि देवो । जं देवा पंजली नमंसंति ॥ तं देव देव महिअं । सिरसा वंदे महावीरं ॥ २ ॥ इक्कोवि नमुक्कारो । जिणवर वसहस्स वद्धमाणस्स ॥ संसार सागराओ । तारेइ नरं व नारिं वा ॥३॥

उज्झित सेल सिहरे। दिक्खा नाण निसीहिआ जस्स॥ त धम्मचक्कवट्टिं। अरिट्ठनेमिं नमसामि॥४॥ चत्तारि अठ दस दो य। वंदिया जिणवरा चउव्वीस॥ परमठ निठिअठा। सिद्धा सिद्धि ममदिसतु॥ ५॥

॥ अथ वेयावच्चगराण ॥

वेयावच्चगराण संतिगराण। सम्मदिठि समाहिगराण॥ करेमि काउस्सग्ग। अन्नथ० यावत् एक थुइ कहके नमुत्थुणं कहना।

॥ अथ भगवानादि वंदनं ॥

भगवान ह, आचार्य ह, उपाध्याय ह, सर्व साधु ह॥इति॥

॥ अथ देवसिअ पडिक्रमणे ठाउ ॥

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्। देवसिअ पडिक्कमणे ठाउ॥ 'इच्छं' सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चितिअ। दुब्भासिअ दुच्चिठिअ॥ तस्स मिच्छामि दुक्कड। बाद करेमिभंते कहके—

॥ इच्छामि ठामि काउस्सग्ग ॥

इच्छामि ठामि काउस्सग्ग। जो मे देवसिओ अइआरो कओ॥ काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उमग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ। दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो असमावग पाउग्गो। नाणे दसणे चरित्ताचरित्ते। सुए सामाइए तिण्ह गुत्तीण चउण्ह कसायाण। पंचण्हमणुव्वयाण। नि-

एहंगुणव्वयाणं । चउएहं सिक्खावयाणं । बारस विहस्स सा-
वग धम्मस्स । जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं
॥ तस्सोत्तरी० अन्नत्थ० काउस्सग्ग करके काउस्सग्गमें ८
गाथाएं चिंत्तवे सो पाठ ॥

॥ अतिचारकी आठ गाथा ॥

नाणंमि दंसणंमि अ । चरणंमि तवंमि तहय विरियंमि ॥
आयरणं आयारो । इअ एसो पंचहा भणिओ ॥ १ ॥ काले
विणए बहुमाणे । उवहाणे तह य निण्हवणे ॥ वंजण अत्थ
तदुभए । अठविहो नाण मायारो ॥ २ ॥ निस्संकिअ निकं-
खिअ । निव्वितिगिच्छा अमूढ दिठीअ ॥ उववूह थिरीकरणे ।
वच्छल्ल प्पभावणे अठ ॥३॥ पणिहाण जोगजुत्तो । पंचहिं स-
मिईहिं तिहिं गुत्तीहिं ॥ एस चरित्तायारो । अठविहो होइ नाय-
व्वो ॥४॥ बारस विहंमिवि तवे । सभिंतर बाहिरे कुसल दिठे ॥
अगिलाइ अणाजीवी । नायव्वो सो तवायारो ॥ ५ ॥ अण-
सण मूणोअरिया । वित्तीसंखेवणं रसच्चाओ ॥ काय किलेसो
संली णया य बज्झो तवो होइ ॥ ६ ॥ पायच्छित्तं विणओ ।
वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ॥ झाणं उस्सग्गोविअ । अभिंतरओ
तवो होई ॥ ७ ॥ अणिगूहिअ बल विरिओ । पडिक्कमइ जो
जहुत्त माउत्तो ॥ जुंजइ अ जहा थामं । नायव्वो वीरिआयारो
॥८॥ काउ० पारके एक लोगस्स कहके तीसरे आवश्यककी
मुहपत्ति पडिलेहन करके वन्दन करे सो पाठ—

॥ सुगुरुने वादणा ॥

इच्छामि खमासमणो । वंदिउं जावणिज्जाए । निसी-हिआए । अणुजाणह मे मिउग्गहं निसीहि। अहो कायं काय-संफास । खमणिज्जो भे किलामो । अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे । दिवसो वइक्कंतो जत्ता भे जवणिं ज्जं च भे खामेमि खमा-समणो । देवसिअं वइक्कमं आवसिआए । पडिक्कमामि खमा-समणाणं। देवसिआए आसायणाए। तित्तीसन्नयराए जंकिंचि मिच्छाए । मणदुक्कडाए, वय दुक्कडाए काय दुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्व कालिआए । सव्व मिच्छोवयाराए । सव्व धम्माइक्कमणाए । आसायणाए जो मे अइआरो कओ । तस्स खमासमणो पडिक्कमामि । निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ॥ १ ॥ दुजीवारके वांदणे 'आवसिआए' ए पद नहीं कहेना ।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्। देवसिअं आलोउं 'इच्छं' आलोएमि जोमे देवसिओ० ॥

॥ अथ सात लाख ॥

सात लाख पृथिवीकाय । सात लाख अप्पकाय । सात लाख तेउकाय । सात लाख वाउकाय । दशलाख प्रत्येक वनस्पतिकाय । चउद लाख साधारण वनस्पतिकाय । बे लाख बेंद्री, बे लाख तेंद्री, बे लाख चौरिंद्री, चार लाख

देवता, चार लाख नारकी। चार लाख तिर्यंच पंचेंद्री। चौद लाख मनुष्य, एवंकारे। चोराशी लाख जीवायोनि मांहि म्हारे जीवे जे कोइ जीव हण्यो होय, हणाव्यों होय, हणतां प्रत्ये अनुमोद्यो होय। ते सव्वे मने वचने कायाए करी तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

॥ अथ अठारा पापस्थानक ॥

पहेले प्राणातिपात, बीजे मृषावाद, त्रीजे अदत्तादान, चोथे मैथुन, पांचमे परिग्रह, छठे क्रोध, सातमे मान, आठमे माया, नवमे लोभ, दशमे राग, इग्यारमे द्वेष, बारमे कलह, तेरमे अभ्याख्यान, चौदमे पैशुन्य, पन्नरमे रति अरति, सोलमे परपरिवाद, सत्तरमे माया मृषावाद, अढारमे मिथ्यात्वशल्य, ए अढार पापस्थानक मांहि, महारे जीवे जे कोइ पाप सेव्युं होय सेवराव्युं होय सेवतां प्रत्ये, अनुमोद्युं होय ते सव्वे मने वचने कायाए करी तस्स मिछामि दुक्कडं।

॥ अथ सव्वस्सवि ॥

सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चिंतिअ, दुप्भासिअ, दुच्चिठिअ इछाकारेण संदिसह भगवन् 'इछं' तस्स मिछामि दुक्कडं ॥

एक नवकार एक करोमिभंते। इच्छामि पडिक्कमिउं। जो मे देवसिओ अइआरो कओ०

॥ अथ श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र ॥

[वंदित्ता सूत्र]

वंदित्तु सव्व सिद्धे । धम्मायरिए अ सव्व साहू अ ॥ इच्छामि पडिक्कमिओ । सावग धम्माइआरस्स ॥ १ ॥ जो मे वयाइआरो । नाणे तह दसणे चरित्ते अ ॥ सुहुमो अ बायरो वा । त निंदे त च गरिहामि ॥ २ ॥ दुविहे परिग्गहमि । सावज्जे बहुविहे अ आरंभे ॥ कारावणे अ करणे । पडिक्कमे देवसिअ सव्व ॥ ३ ॥ ज बद्ध मिंदिएहि । चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहिं ॥ रागेणव दोसेणव । त निंदे त च गरिहामि ॥ ४ ॥ आगमणे निग्गमणे । ठाणे चकमणे अणाभोगे ॥ अभिओगे अ निओगे ॥ पडिक्कमे० ॥ ५ ॥ सका कख विगिच्छा । पसस तह सथवो कुलिंगीसु ॥ सम्मत्तस्सइआरे । पडिक्कमे० ॥ ६ ॥ छकाय समारभे । पयणे अ पयावणे अ जे दोसा ॥ अत्तट्ठा य परट्ठा । उभयट्ठा चेव त निंदे ॥७॥ पचण्ह मणुव्वयाण । गुणव्वयाण च तिण्ह मइयारे ॥ सिक्खाण च चउण्ह ॥ पडिक्कमे० ॥८॥ पढमे अणुव्वयमि । थूलग पाणाइवाय विरइओ ॥ आयरिअ मप्पसत्थे । इत्थ पमाय प्पसगेण ॥ ९ ॥ वह बध छविच्छेए । अइभारे भत्तपाण वुच्छेए ॥ पढम वयस्सइआरे ॥ पडिक्कमे० ॥ १० ॥ बीए अणुव्वयमि । परिथूलग अलिअ वयण विरईओ ॥ आयरिय मप्पसत्थे । इत्थ पमाय प्पसगेण ॥ ११ ॥ सहसा रहस्स दारे । मोसुवएसे अ कूडलेहे अ ॥

बीअवयस्सइआरे ॥ पडिक्कमे० ॥ १२ ॥ तइए अणुव्वयंमि ।
थूलग परदव्व हरण विरइओ ॥ आयरिअ मप्पसत्थे । इत्थ
पमाय प्पसंगेणं ॥ ॥३ ॥ तेनाहड प्पओगे । तप्पडिरूवे वि-
रुद्ध गमणे अ ॥ कूडतुल कूडमाणे ॥ पडिक्कमे० ॥ १४ ॥
चउत्थे अणुव्वयंमि । निच्चं परदार गमण विरईओ ॥ आयरिअ
मप्पसत्थे । इत्थ पमाय प्पसंगेणं ॥१५॥ अपरिग्गहिआ इत्तर ।
अणंग वीवाह तिव्व अणुरागे । चउत्थवयस्सइआरे ॥ पडि-
क्कमे० ॥ १६ ॥ इत्तो अणुव्वए पंचमंमि आयरिअ मप्पस-
त्थंमि । परिमाण परिच्छेए । इत्थ पमाय प्पसंगेण ॥ १७ ॥
धण धन्न खित्त वत्थू । रुप्प सुवन्ने अ कुविअ परिमाणे ।
दुपए चउप्पयंमि ॥ पडिक्कमे० ॥१८॥ गमणस्सओ परिमाणे ।
दिसासु उड्ढं अहे अ तिरिअं च ॥ वुड्ढि सइ अंतरद्धा । पढ-
मंमि गुणव्वए निंदे ॥ १९ ॥ मज्जंमि अ मंसंमि अ । पुप्फे
अ फले अ गंधमल्ले अ ॥ उवभोगे परिभोगे । बीअंमि गुण-
व्वए निंदे ॥ २० ॥ सच्चित्ते पडिबद्धे । अपोल दुप्पोलिअं च
आहारे । तुच्छोसहि भक्खणया ॥पडिक्कमे०॥२१॥ इंगाली वण
साडी । भाडी फोडी सुवज्जए कम्मं ॥ वाणिज्जं चेव य दंत,
लक्ख रस केस विस विसयं ॥ २२ ॥ एवं खु जंतपिल्लण
कम्मं । निल्लंछणं च दवदाणं ॥ सर दह तलाय सोसं । असई
पोसं च वज्जिज्जा ॥ २३ ॥ सत्थग्गि मुसल जंतग । तण कठे
मंत मूल भेसज्जे । दिन्ने दवाविएवा ॥ पडिक्कमे० ॥२४॥ न्हा-
णुवट्टण वन्नग । विलेवणे सद्द रूव रस गंधे । वत्थासण

आभरणे ॥ पडिक्कमे० ॥ २५ ॥ कंदप्पे कुक्कुइए । मोहरि अहिग-रण भोग अइरित्ते ॥ दंडमि अणट्ठाए । तइअंमि गुणव्वए निंदे ॥ २६ ॥ तिविहे दुप्पणिहाणे । अणवट्ठाणे तहा सइ विहूणे ॥ सामाइअ वितह कए । पढमे सिक्खावए निंदे ॥२७। आणवणे पेसवणे, सद्दे रूवे अ पुग्गलक्खेवे॥ देसावगासिअंमि । बीए सिक्खावए निंदे ॥ २८ ॥ संथारुच्चार विही । पमाय तह चेव भोअणाभोए ॥ पोसह विहि विवरीए । तइए सिक्खावए निंदे ॥ २९ ॥ सचित्ते निक्खिवणे । पिहिणे ववएस मच्छरे चेव ॥ कालाइक्कम दाणे । चउत्थे सिक्खावए निंदे ॥ ३० ॥ सुहिएसु अ दुहिएसु अ । जा मे असंजएसु अणुकंपा ॥ रागे-णव दोसेणव । तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ३१ ॥ साहूसु संविभागो । न कओ तव चरण करण जुत्तेसु ॥ संते फासुअ दाणे । तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ३२ ॥ इहलोए परलोए । जीविअ मरणे अ आसंस पओगे ॥ पंचविहो अइआरो । मा मज्झ हुज्ज मरणंते ॥ ३३ ॥ काएण काइअस्स । पडिक्कमे वाइ अस्स वायाए ॥ मणसा माणसिअस्स । सव्वस्स वयाइआरस्स ॥ वंदण वय सिक्खा गारवेसु । सन्ना कसाय दंडेसु ॥ गुत्तीसु अ समिईसु अ । जो अइआरो अ तं निंदे ॥३५॥ सम्मदिट्ठी जीवो । जइवि हु पाव समायरे किंचि ॥ अप्पोसि होइ बंधो ॥ जेण न निद्धंधसं कुणइ ॥ ३६ ॥ तंपि हु सपडिक्कमणं । सप्प-रिआवं सउत्तरगुणं च ॥ खिप्पं उवसामेई । वाहिव्व सुसि-

खिओ विज्जो ॥ ३७ ॥ जहा विसं कुठगयं । मंत मूल विसारया । विज्जा हणंति मंतेहिं । तो तं हवइ निव्विसं ॥ ३८ ॥ एवं अठविहं कम्मं । राग दोस समज्जिअं ॥ आलोअंतो अ निंदंतो । खिप्पं हणइ सुसावओ ॥३९॥ कयपावोवि मणुस्सो। आलोइय निंदिअ गुरु सगासे ॥ होइ अइरेग लहुओ । ओहरिअ भरुव्व भारवहो ॥ ४० ॥ आवस्सएण एएण । सावओ जइवि वहुरओ होइ ॥ दुक्खाणमंतकिरिअं । काही अचिरेण कालेण ॥ ४१ ॥ आलोअणा बहुविहा। नय संभरिआ पडिक्कमणकाले ॥ मूलगुण उत्तरगुणे । तं निंदे तं च गरिहामि ॥४२॥ तस्स धम्मस्स केवलि पन्नत्तस्स। अप्भुठ्ठिओमि आराहणाए। विरओमि विराहणाए ॥ तिविहेण पडिकंतो वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥ ४३ ॥ जावंति चेइआइं उढ्ढे अ अहे अ तिरिअलोए अ ॥ सव्वाइं ताइं वंदे । इह संतो तत्थ संताइं ॥ ४४ ॥ जावंत केवि साहू । भरहेरवय महाविदेहे अ ॥ सव्वेसिं तेसिं पणओ । तिविहेण तिदंड विरयाणं ॥ ४५ ॥ चिर संचिय पाव पणासणीइ । भव सय सहस्स महणीए ॥ चउवीस जिण विणिग्गय कहाइं । वोलंतु मे दिअहा ॥ ४६ ॥ मम मंगल मरिहंता । सिद्धा साहू सुअं च धम्मो अ ॥ सम्मदिठ्ठी देवा । दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥ ४७ ॥ पडिसिद्धाणं करणे । किच्चाण मकरणे पडिक्कमणं ॥ असद्दहणे अ तहा । विवरीय परूवणाए अ ॥ ४८ ॥ खामेमि सव्व जीवे, सव्वे

जीवा खमतु मे। मित्तीमे सव्व भूएसु, वेर मज्झ न केणइ ॥४६॥ एव मह आलोइअ। निंदिअ गरहिअ दुगछिअ सम्म ॥ तिविहेण पडिक्कतो । वदामिजिणे चउव्वीस ॥ ५० ॥ दोय वन्दना देना। अब्भुट्ठिओ खमायके। दो वन्दना।

॥ अथ आयरिअ उवझाए ॥

आयरिअ उवभाए। सीसे साहम्मिए कुल गणेअ ॥ जे मे केइ कसाया। सव्वे तिविहेण खामेमि ॥ १ ॥ सव्वस्स समण सघस्स। भगवओ अजलि करिअ सीसे ॥ सव्व खमावइत्ता। खमामि सव्वस्स अहयपि ॥ २ ॥ सव्वस्स जीव रासिस्स। भावओ धम्म निहिअ निअचित्तो ॥ सव्व खमावइत्ता खमामि सव्वस्स अहयपि ।।३॥ बादमें करेमिभते० इच्छामिठामि० तस्सोत्तरी० अन्न०५० दो लोगस्सका काउस्सग्ग० एक लोगस्स प्रगट, सव्वलोए अरिहत चेइआण यावत् एक लोगस्सका काउस्सग्ग० । पुक्खर० यावत् एक लोगस्सका काउ० । सिद्धाण बुद्धाण के बादमें—श्रुतदेवताका एक नवकारका काउस्सग्ग करके स्तुति—

यान्देवी वरदेवी भूता, पुस्तीका पद्म लिखयतु।
आपो व्या वि नजेस्तु, पुस्तीका पद्म लिखयतु ॥

बादमें वैरोट्यादेवीका एक नवकारका काउ० स्तुति।

सामानगास्ति पुत्राभो, वैरोट्यारमयेनतु ।
शान्तो रात्रिर्जाति य ग्रह। वैरोट्यार्रमयेनतु ॥ १ ॥

बादमें क्षेत्रदेवताका काउ० और स्तुति।

यस्याः क्षेत्रं समाश्रीत्य। साधुभिः साध्यते क्रियाः॥
सा क्षेत्र देवता नित्यं। भूयान्नः सुखदायिनी ॥ १ ॥

एक नवकार कहके छठा आवश्यककी मुहपत्ती प्रतिलेखनकर दोय वन्दना देके पच्चखान करो। बादमे—

इच्छामो अणुसठिं नमोखमासमणाणं। नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः।

नमोऽस्तु वर्द्धमानाय। स्पर्द्धमानाय कर्मणा॥ तज्जयावाप्त मोक्षाय। परोक्षाय कुतीथिंनां॥ १ ॥ येषां विकचारविंदराज्या। ज्यायः क्रम कमलावलिं दधत्या॥ सदृशै रिति संगतं प्रशस्यं। कथितं संतु शिवाय ते जिनेंद्राः॥ २॥ कषाय तापार्दित जंतुनिर्वृतिं। करोति यो जैनमुखांबुदोद्गतः॥ स शुक्रमासोद्भव वृष्टि सन्निभो। दधातु तुष्टिं मयि विस्तरो गिरां॥३॥

नमुत्थुणं कहके स्तवन कहेना तथा उपसर्गहर कहना।

॥ अथ उपसर्गहर स्तवन ॥

उवसग्ग हरं पासं। पासं वंदामि कम्मघण मुक्कं॥ विसहर विस निन्नासं। मंगल कल्लाण आवासं॥ १ ॥ विसहर फुलिंग मंतं। कंठे धारेइ जो सया मणुओ॥ तस्स गह रोगमारी। दुठ जरा जंति उवसामं॥ २ ॥ चिठउ दूरे मंतो। तुज्ज पणामो वि बहु फलो होइ॥ नर तिरिएसु वि जीवा।

पावंति न दुक्ख दोगच ॥ ३ ॥ तुह सम्मत्ते लद्धे । चिंतामणि कप्पपायवब्भहिए ॥ पावंति अविग्घेण । जीवा अयरामर ठाण ॥ ४ ॥ इअ संथुओ महायस । भत्तिब्भर निब्भरेण हिअएण ॥ ता देव दिज्ज बोहि । भवे भवे पास जिणचंद ॥

॥ अथ श्री वरकनक ॥

वर कनक शंख विद्रुम । मरकत घन सन्निभ विगत मोहं । सप्तति शत जिनानां । सर्वामर पूजितं वन्दे ॥ १ ॥

भगवानादि च्यारको नमस्कार करके ।

॥ अथ अड्ढाइज्जेसु=मुनिवंदन ॥

अड्ढाइज्जेसु दीव समुद्देसु । पन्नरससु कम्म भूमिसु ॥ जावंत केवि साहू । रयहरण गुच्छ पडिग्गह धारा ॥ पंच महव्वयधारा । अठारस सहस्स सीलंग धारा ॥ १ ॥ अक्खु-यायार चरित्ता । ते सव्वे सिरसा मणसा । मत्थएण वंदामि ॥ २ ॥ बादमें देवसि पायच्छित विशुद्धार्थे च्यार लोगस्सका काउस्सग्ग करके एक लोगस्स प्रगट कहेना बादमें—

श्रीमदुपकेश गच्छ शृंगारहार भट्टारक दादाजी श्रीरत्न-प्रभसूरिजी महाराज चारित्र चुडामणि आराधना निमित्तं काउ-स्सग्ग करूं ? 'इच्छं' करेमि काउस्सग्गं० च्यार लोगस्सका काउ० एक लोगस्स प्रगट कहके सज्झायका आदेश लेके सज्झाय क-हेना सज्झाय इसी पुस्तकमें लिखी है देखो पृष्ट ४१४ । बादमें—

दुक्खक्खयो कम्मक्खओ निमित्तं च्यार लोगस्सका काउ

स्सग्ग करणा, बादमें एक श्रावक शान्त कहे और सब लोग काउस्सग्गमें सुने—

॥ अथ लघुशांति स्तव ॥

शांतिं शांति निशांतं । शांतं शांताशिवं नमस्कृत्य ॥ स्तोतुः शांति निमित्तं । मंत्रपदैः शांतये स्तौमि ॥ १ ॥ ओमिति निश्चित वचसे । नमो नमो भगवतेऽर्हते पूजां ॥ शांति जिनाय जयवते । यशस्विने स्वामिने दमिनां ॥२॥ सकलातिशेपक महा । संपत्ति समन्विताय शस्याय ॥ त्रैलोक्य पूजिताय च । नमो नमः शांति देवाय ॥३॥ सर्वामर सुसमूह । स्वामिक संपूजिताय निजिताय ॥ भुवन जन पालनोद्यत । तमाय सततं नमस्तस्मै ॥४॥ सर्व दुरितौघ नाशन । कराय सर्वाशिव प्रशमनाय ॥ दुष्ट ग्रह भूत पिशाच । शाकिनीनां प्रमथनाय ॥५॥ यस्येति नाम मंत्र । प्रधान वाक्योपयोग कृततोपा ॥ विजया कुरुते जनहित । मिति च नुता नमत तं शांतिं ॥६॥ भवतु नमस्ते भगवति । विजये सुजये परापरैरजिते ॥ अपराजित्त जगत्यां । जयतीति जयावहे भवति ॥ ७ ॥ सर्वस्यापि च संघस्य । भद्र कल्याण मंगल प्रददे ॥ साधूनां च सदा शिवसु तुष्टि पुष्टि प्रदे जीयाः ॥ ८ ॥ भव्यानां कृत सिद्धे । निर्वृत्ति निर्वाण जननि सत्वानां ॥ अभयप्रदान निरते । नमोस्तु स्वस्तिप्रदे तुभ्यं ॥ ९ ॥ भक्तानां जंतूनां । शुभावहे नित्यमुद्यते देवि ॥ सम्यग्दृष्टीनां-धृति । रति मति बुद्धि प्रदानाय ॥ १० ॥ जिनशासन निर-

तानां । शांतिनतानां च जगति जनतानां ॥ श्रीसंपत्कीर्ति यशो । वर्द्धनि जयदेवि विजयस्व ॥ ११ ॥ सलिलानल विष विषधर । दुष्टग्रह राज रोग रणभयतः ॥ राक्षस रिपुगण मारी । चौरेति श्वापदादिभ्यः ॥ १२ ॥ अथ रक्ष रक्ष सुशिवं । कुरु कुरु शांतिं च कुरु कुरु सदेति ॥ तुष्टिं कुरु कुरु पुष्टिं । कुरु कुरु स्वस्तिं च कुरु कुरु त्वं ॥ १३ ॥ भगवति गुणवति शिव-शांति । तुष्टि पुष्टि स्वस्तीह कुरुकुरु जनानां ॥ ओमिति नमो नमो ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रः । य क्ष. ह्रीँ फुट फुट् स्वाहा ॥ १४ ॥ एवं यन्नामाक्षर । पुरस्सर संस्तुता जयादेवी ॥ कुरुते शांतिं नमतां । नमो नमः शांतये तस्मै ॥१५॥ इति पूर्वसूरि दर्शित । मंत्रपद विदर्भितः स्तवः शांतेः ॥ सलिलादि भय विनाशी । शांत्यादिकरश्च भक्तिमतां ॥ १६ ॥ यश्चैनं पठति सदा । शृणोति भावयति वा यथायोग्यं ॥ सहि शांतिपदं यायात् । सूरि. श्रीमानदेवश्च ॥ १७ ॥ उपसर्गाः क्षयं यांति । छिद्यंते विघ्नवल्लयः ॥ मनः प्रसन्नतामेति । पूज्यमाने जिनेश्वरे ॥१८॥ सर्व मंगल मांगल्यं । सर्व कल्याण कारणं ॥ प्रधानं सर्व-धर्माणां । जैनं जयति शासनं ॥ १९ ॥ एक लोगस्स प्रगट कहके इरियावहि करना बादमें—

॥ अथ चउक्कसाय ॥

चउक्कसाय पडिमल्लुल्लूरणु । दुज्जय मयण बाण मुसु-मूरणु ॥ सरस पियंगु वन्नु गयगामिओ । जयउ पासु भुवण-

त्तय सामिश्रो ॥१॥ जसु तणु कंति कडप्पासिणिद्धश्रो । सोहइ फणि मणि किरणालिद्धश्रो ॥ निन्नव जलहर तडिल्लय लंछिश्रो । सो जिणु पासु पयच्छउ वंछिश्रो ॥ बादमें नमुत्थुणं से जयवीयराय तक चैत्यवन्दन कर सामायिक पारे । इति ॥

॥ राइप्रतिक्रमण ॥

प्रथम विधिपूर्वक सामायिक करके आदेशपूर्वक "कुसुमिणी दुसुमिणी ओडावणी राई पायच्छित विसोहउणत्थं काउस्सग्ग करुं? "इच्छं" कुसुमिण० च्यार लोगस्सका काउ० एक लोगस्स प्रगट कहेना बादमें आदेशपूर्वक चैत्यवन्दन करना सो—

॥ जगचिंतामणि चैत्यवंदन ॥

जग चिंतामणि जग नाह । जग गुरु जग रक्खण ॥ जग बंधव जग सत्थवाह । जग भाव विअक्खण ॥ अठावय संठविअ रूव । कम्मठ विणासण ॥ चउवीसंपि जिणवर जयंतु । अप्पडिहय सासण ॥ १ ॥ कम्मभूमिहिं कम्मभूमिहिं । पढम संघयणि ॥ उक्कोसय सत्तरिसय ॥ जिणवराण विहरंत लब्भइ ॥ नवकोडिहिं केवलिण ॥ कोडि सहस्स नव साहु गम्मइ ॥ संपइ जिणवर वीसमुणि ॥ बिहुं कोडिहिं वरनाण ॥ समणह कोडि सहस दुअ ॥ थुणिज्जअ निच्च विहाणि ॥ २ ॥ जयउ सामी जयउ सामी ॥ रिसह सत्तुंजि उज्जित पहु नेमि-

जिण, जयउ वीर सचउरि मंडण ॥ भरुअच्छहि मुणिसुव्वय । मुहरि पास दुह दुरिअ खंडण ॥ अवर विदेहिं तित्थयरा । चिहु दिसि विदिसि जिं केवि ॥ तीआणागय संपइअ । वंदु जिण सव्वेवि ॥ ३ ॥ सत्ताणवइ सहस्सा । लक्खा छप्पन्न अट्ठकोडीओ ॥ बत्तीस बासिआइं । तिअलोए चेइए वंदे ॥४॥ पनरस्स कोडि सयाइं । कोडि बायाल लक्ख अडवन्ना ॥ छत्तीस सहस असिआइं । सासयबिंबाइं पणमामि ॥ ५ ॥

जं किंचि नाम तित्थं । सग्गे पायालि माणुसे लोए ॥ जाइं जिणबिंबाइं । ताइं सव्वाइं वंदामि ॥ १ ॥ यावत् जयवीयराय तक कहेना । बादमें भगवानादिको च्यारों नमस्कार कर आदेशपूर्वक सझाय करना सो—

भरहेसर बाहुबली । अभयकुमारो अ ढंढण कुमारो ॥ सिरिओ अणिआउत्तो । अइमुत्तो नागदत्तो अ ॥ १ ॥ मेअज्ज थूलिभद्दो । वयररिसि नंदिसेण सीहगिरी ॥ कयवन्नो अ सुकोसल । पुंडरिओ केसि करकंडू ॥२॥ हल्ल विहल्ल सुदंसण । साल महासाल सालिभद्दो अ ॥ भद्दो दसन्नभद्दो । पसन्नचंदोअ जसभद्दो ॥३॥ जंबुपहु वंकचूलो । गयसुकुमालो अवंति सुकुमालो ॥ धन्नो इलाइपुत्तो । चिलाइपुत्तो अ बाहुमुणी ॥४॥ अज्ज गिरि अज्जरक्खिअ । अज्जसुहत्थी उदायगो मणगो ॥ कालय सूरी संबो । पज्जुन्नो मूलदेवो अ ॥५॥ पभवो विण्हुकुमारो । अद्दकुमारो दढप्पहारी अ ॥ सिज्जंस कूरगडू अ । सिज्जंभव मेहकुमारो अ ॥ ६ ॥ एमाइ महासत्ता । दिंतु सुह गुणगणेहिं

संजुत्ता ॥ जेसिं नामग्गहणे । पावपबंधा विलय जंति ॥ ७ ॥ सुलसा चंदनबाला । मणोरमा मयणरेहा दमयंती ॥ नमया सुंदरी सीया । नंदा भद्दा सुभद्दा य ॥८॥ रायिमई रिसिदत्ता। पउमावइ अंजणा सिरीदेवी॥ जिठ सुजिठ मिगावई । पभावई चिल्लणादेवी ॥ ९ ॥ बंभी सुंदरी रुप्पिणि । रेवइ कुंती सिवा जयंती य ॥ देवइ दोवइ धारिणि । कलावई पुप्फचूला य ॥१०॥ पउमावई य गोरी । गंधारी लक्खमणा सुसीमा य ॥ जंबुवई सच्चभामा । रुप्पिणि कन्हठ महिसीओ ॥ ११ ॥ जक्खाय जक्खदिन्ना। भूआ तह चेव भूअदिन्ना य ॥ सेणा वेणा रेणा। भयणीओ थूलिभद्दस्स ॥ १२ ॥ इच्चाइ महासइओ । जयंति अकलंक सील कलिआओ ॥ अज्जवि वज्जइ जासिं। जस पडहो तिहुअणे सयले॥ १३ ॥ इति ॥

बादमें खमासमण देके सुहराइका पाठ कहके आदेशपूर्वक राईप्रतिक्रमण ठाउं पाठ कहे। बादमें नमुत्थुणं कहके करेमिभंते० इच्छामिठामि० तस्सोत्तरी० अन्नत्थ० एक लोगस्सका काउस्सग्ग० प्रगट एक लोगस्स० सव्वलोए अरिहंत चेइआणं यावत् एक लोगस्सका काउस्सग्ग० पुक्खरवर० आठ गाथाका काउस्सग्ग (दोय लोगस्स) बादमें सिद्धाणं बुद्धाणं कहके तीजा आवश्यककी मुहपत्तिका प्रतिलेखन कर देवसिप्रतिक्रमणकी माफीक आयरिय उवज्झाय तक कहेना। करेमिभंते० इच्छामिठामि० तस्सोत्तरी० अन्नत्थ तपचिंतवनार्थ काउस्सग्ग करना (च्यार लोगस्स)- एक

लोगस्स प्रगट कहे। छठा आवश्यककी मुहपत्ति प्रतिलेखन करना, दोय वन्दना देना। बादमें सकलतीर्थ स्तव कहेना सो–

सकल तीर्थ वदु करजोड। जिनवर नामे मगल कोड ॥ पहिले स्वर्गे लाख बत्रीस। जिनवर चैत्य नमु निशदिश ॥१॥ बीजे लाख अठावीस कह्या। त्रीजे बार लाख सद्दह्या॥ चोथे स्वर्गे अडलख धार। पाचमे वदु लाखज चार ॥ २ ॥ छठे स्वर्गे सहस पचास। सातमे चालिश सहस प्रासाद ॥ आठमे स्वर्गे छ हजार। नव दशमें वदु शत चार ॥ ३ ॥ अग्यार बारमें त्रणशें सार। नवग्रैवेके त्रणशें अढार॥ पांच अनुत्तर सर्वे मळी। लाख चोराशी अधिका वळी ॥ ४ ॥ सहस सत्ताणु त्रेविश सार। जिनवर भुवन तणो अधिकार॥ लांबा सो जोजन विस्तार। पचास उचा बहुतेर धार॥ ५ ॥ एकसो एशी बिंब प्रमाण। सभा सहित एक चैत्ये जाण॥ सो कोड बावन कोड सभाल। लाख चोराणु सहस चौआल ॥ ६ ॥ सातशें उपर साठ विशाल। सवि बिंब प्रणमु त्रणय काल॥ सात कोटने बहुतेर लाख। भुवनपतिमा देवल भाख ॥ ७ ॥ एकसो एशी बिंब प्रमाण। एक एक चैत्ये सख्या जाण॥ तेरशें कोड नेव्याशी कोड। साठ लाख वदु करजोड ॥ ८ ॥ बत्रीशेंने ओगणसाठ। तीर्च्छा लोकमा चैत्यनो पाठ॥ त्रणय लाख एकाणु हजार। त्रणशे वीश ते बिंब जुहार॥ ९ ॥ व्यतर ज्योतिषिमां वळी जेह। शाश्वता जिन वदु तेह॥ रिखभ चद्रानन वारिषेण। वर्द्धमान नामे

गुणसेण ॥ १० ॥ समेतशिखर वंदुं जिन वीश । अष्टापद वंदुं चोवीश ॥ विमलाचल ने गढ गिरनार । आबु उपर जिनवर जुहार ॥ ११ ॥ शंखेश्वर केसरियो सार । तारंगे श्री अजित जुहार ॥ अंतरीक वरकाणो पास । जिरावलो ने थंभण पास ॥ १२ ॥ गाम नगर पुर पाटण जेह । जिनवर चैत्य नमुं गुणगेह ॥ विहरमान वंदुं जिन वीश । सिद्ध अनंत नमुं निशदिश ॥ १३ ॥ अढिद्विपमां जे अणगार । अढार सहस सिलांगना धार । पंचमहाव्रत समिति सार ॥ पाले पलावे पंचाचार ॥ १४ ॥ बाह्य अभ्भितर तप उजमाल । ते मुनि वंदुं गुणमणिमाल ॥ नित नित उठी कीरति करूं । जीव कहे भवसायर तरूं ॥ १५ ॥ इति ॥

बादमें यथाशक्ति पच्चक्खान करना । बादमें सामायिक चोवीसथ्थो वन्दणा पडिक्कमण काउस्सग्ग पच्चक्खाण इच्छामि अणुसठिं नमो तेसिं खमासमणाणं । नमोऽर्हत् सिद्धाचार्यो-पाध्याय सर्व साधुभ्यः । बादमें विशाललोचन कहेना—

विशाललोचन दलं । प्रोद्यद्दंतांशु केशरं ॥ प्रातर्वीर जिनेंद्रस्य । मुखपद्मं पुनातु वः ॥ १ ॥ येषामभिषेक कर्म कृत्वा । मत्ता हर्षभरात् सुखं सुरेंद्राः ॥ तृणमपि गणयंति नैव नाकं । प्रातःसंतु शिवाय ते जिनेंद्राः ॥ २ ॥ कलंक निर्मुक्त ममुक्त पूर्णतं । कुतर्क राहु ग्रसनं सदोदयम् ॥ अपूर्व चन्द्रं जिनचन्द्र भाषितं । दिनागमे नौमि बुधैर्नमस्कृतम् ॥ ३ ॥

बादमें नमुत्थुणं कहके च्यार थुईसे देववन्दन करना । कल्लाणकन्दंकी च्यार थुई—

कल्लाण कंद पढम जिणंद । संतिं तओ नेमिजिणं मुणिंद ॥ पास पयास सुगुणिक्क ठाण । भत्तीइ वंदे सिरि वद्धमाण ॥ १ ॥ अपार संसार समुद्द पार । पत्ता सिवं दिंतु सुइक्क सार ॥ सव्वे जिणंदा सुरविंद वंदा । कल्लाण वल्लीण विसाल कंदा ॥ २ ॥ निव्वाण मग्गे वर जाण कप्प । पणा-सियासेस कुवाइ दप्प ॥ मय जिणाणं सरणं बुहाण । नमामि निच्च तिजगप्पहाण ॥ ३ ॥ कुंदिंदुगोक्खीरतुसारवन्ना । सरोज हत्था कमले निसन्ना ॥ वाएसिरी पुत्थय वग्गहत्था । सुहाय सा अम्ह सया पसत्था ॥ ४ ॥

बादमें नमुत्थुणं कहके अड्डाइज्जेसु कहेना ।

॥ अथ सीमंधर जिन चैत्यवंदन ॥

श्री सीमंधर वीतराग । त्रीभुवन उपगारी ॥ श्री श्रेयांस पिता कुले । बहु शोभा तुमारी ॥ १ ॥ धन्य धन्य माता सत्यकी । जेणे जायो जयकारी ॥ वृषभ लंछन विराजमान । वंदे नरनारी ॥ २ ॥ धनुष पांचशे देहडीए । सोहीए सोवन वान ॥ कीर्त्तिविजय उवझायनो । विनय धरे तुम ध्यान ॥३॥

॥ अथ सीमंधर जिन स्तवन ॥

पुक्खलवइ विजये जयो रे । नयरी पुंडरिगिणि सार ॥ श्री सीमंधर साहिबा रे । राय श्रेयांस कुमार ॥ जिणंदराय । धरजो धर्म सनेह ॥ ए आंकणी ॥ १ ॥ मोटा नाहाना अंतरो रे । गिरुआ नवि दाखवत ॥ शशि दरिसण सायर

वधे रे । कैरववन विकसंत ॥ जि० ॥ २ ॥ ठाम कुठाम न लेखवे रे । जग वरसंत जलधार ॥ करदोय कुसुमे वासिये रे। छाया सवि आधार ॥ जि० ॥ ३ ॥ रायने रंक सरिखा गणे रे । उद्योते शशि सूर ॥ गंगाजल ते विहुंतणा रे । ताप करे सवि दूर ॥ जि० ॥ ४ ॥ सरिखा सहुने तारवा रे । तिम तुमे छो महाराज ॥ मुजशुं अंतर किम करो रे। बांह ग्रह्यानी लाज ॥ जि० ॥ ५ ॥ मुह देखी टीलुं करे रे । ते नवि होय प्रमाण ॥ मुजरो माने सवितणो रे । साहिब तेह सुजाण ॥ जि० ॥ ६ ॥ वृषभ लंछन मांता सत्यकी रे। नंदन रुकमिणी कंत ॥ वाचक जस इम विनवे रे । भयभंजन भगवंत ॥जि०॥७॥ श्री सीमंधरस्वामी आराधवा काउस्सग्ग एक नवकारका करना ॥

॥ अथ सीमंधर जिन स्तुति ॥

श्रीसीमंधर जिनवर । सुखकर साहिब देव ॥ अरिहंत सकलनी । भाव धरी करुं सेव ॥ सकलागम पारग । गणधर भाखित वाणी ॥ जयवंती आणा । ज्ञानविमल गुणखाणी ॥

॥ अथ सिद्धाचलनुं चैत्यवन्दन ॥

श्रीशत्रुंजय सिद्धखेत्र । दीठे दुर्गति वारे ॥ भाव धरीने जे चढे । तेने भवपार उतारे ॥ १ ॥ अनंतसिद्धनो एह ठाम। सकल तीर्थनो राय ॥ पुरव नवाणुं रिखभ देव । ज्यां ठविया प्रभु पाय ॥२॥ सूरज कुंड सोहामणो । कवडजक्ष अभिराम ॥ नाभिराया कुलमंडणो जिनवर करुं प्रणाम ॥ ३ ॥

॥ अथ श्री सिद्धाचल स्तवन ॥

मारु मन मोहुरे श्री सिद्धाचलेरे। देखी हरषित होय ॥ विधि शु किजेरे यात्रा एहनीरे। भवभवना दुःख जाय ॥ मा० ॥ १ ॥ पचमे आरेरे पावन कारणेरे। ए समु तीर्थ न कोय ॥ मोटो महिमारे महीयल एहनोरे। आ भरते इहां जोय ॥ मा० ॥ २ ॥ इणे गिरि आव्यारे जिनवर गणधरारे। सिद्धा साधु अनत ॥ कठिण कर्म पण इण गिरि फरसतारे। होय कर्म निशान्त ।।मा०॥३॥ जैन धर्म ते साचो जाणीयेरे। मानव तीर्थ एह थम॥ सुरनर किन्नर नृप विद्याधरारे। करता नाटारम ॥ मा० ॥ ४ ॥ धन्य धन्य दहाडो धन्य धन्य ए घडीरे। धरी हृदय मझार ॥ ज्ञानविमल प्रभु एहना गुण-गणारे। कहेता न आवे पार ॥ मा० ॥ ५ ॥ इति ॥ सिद्धाचल आराधना काउस्सग्ग एक नवकारका करना ॥

॥ स्तुति ॥

पुडरगिरि महिमा। आगममां प्रसिद्ध ॥ निमलाचल भेटी। लहीये अविचल रिद्ध ॥ पचमी गति पहोता। मुनिवर कोडाकोड। एणे तीरथ आवी। कर्म विपातिक छोड ॥

पूर्वविधि माफीक सामायिक पारे और हमेशोंके लिये भावना भावे ॥ शम् ॥

॥ अथ प्रभातना पच्चखाण ॥

॥ नमुकारसहि मुठिसहि नु ॥

“ उग्गए सूरे, नमुकार सहिय, मुठि सहिय, पच्चरखाइ,

चउविहंपि आहारं, असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणा भोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तिया-गारेणं वोसिरे " इति ॥

॥ पोरिसिसाढपोरिसिनुं ॥

" उग्गए सूरे, नमुकार सहिअं, पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुठिसहियं पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे, चउव्विहंपि आहारं, असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरे " इति ॥

॥ अथ सांझना पच्चखाण ॥

॥ चउविहारनुं ॥

" दिवस चरिमं पच्चक्खाइ, चउविहंपि आहारं, असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्त-रागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं, वोसिरे " इति ॥

॥ अथ तिविहारनुं ॥

" दिवस चरिमं पच्चक्खाइ, तिविहंपि आहारं, असणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं, वोसिरे " इति ॥

॥ अथ दुविहारनुं ॥

" दिवस चरिमं पच्चक्खाइ, दुविहंपि आहारं, असणं, खाइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं, वोसिरे " इति ॥

अथश्री

देवगुरुवन्दनमाला

और

चैत्यवन्दन स्तवनादि.



नमो अरिहंताण, नमो सिद्धाण, नमो आयरियाण, नमो उवझायाण, नमो लोएसव्वसाहुण, एसो पचनमुकारो, सव्वपावप्पणासणो, मगलाणच सव्वेसिं, पढमहोइ मगलम् ॥

चौवीस तीर्थकरोंका स्मरण

१ श्री ऋषभदेवजी
२ श्री अजितनाथजी
३ श्री सभवनाथजी
४ श्री अभिनन्दनजी
५ श्री सुमतिनाथजी
६ श्री पद्मप्रभुजी
७ श्री सुपार्श्वनाथजी
८ श्री चन्द्राप्रभुजी
९ श्री सुवधीनाथजी
१० श्री शीतलनाथजी
११ श्री श्रेयांसनाथजी
१२ श्री वासपूज्यजी

१३ श्री विमलनाथजी	१६ श्री मल्लिनाथजी
१४ श्री अन्तनाथजी	२० श्री मुनिसुव्रतजी
१५ श्री धर्मनाथजी	२१ श्री नमिनाथजी
१६ श्री शान्तिनाथजी	२२ श्री नेमिनाथजी
१७ श्री कुंथुनाथजी	२३ श्री पार्श्वनाथजी
१८ श्री अरेनाथजी	२४ श्री महावीरजी

सामायिक लेनेकि विधि.

सामायिक करने वाले श्रावक वर्ग कों प्रथम च्यार प्रकारसे शुद्धि होना चहिये (१) द्रव्यशुद्धि-शरीर या सामायिकके उपगरणशुद्ध (२) क्षेत्र=मकांन धर्मशालादि शुद्ध (३) काल=लेनदेन राज न्यातादिके कार्यसे या शरीरचिंता आदिसे निवृत्ति होना (४) भाव=अन्तःकरणकि शुद्धि ।

गुरुमहाराज होतो सब क्रिया गुरुमहाराजके आदेशसे करना, अगर गुरुमहाराज न होतो उचे आसनपर पुस्तकादि कि स्थापना कर उन्ही स्थापनामे गुण आरोपनकि दोय गाथा केहनी ।

पंचिंदिय संवरणो, तह नवविह बंभचेरगुत्तिधरो ।
चउविह कसायमुक्को, इह अट्ठारस्स गुणेहिं संजुत्तो ॥ १ ॥
पंच महव्वय जुत्तो, पंचविहायार पालण समत्थो ।
पंच समिओ तुगुत्तो, छत्तीश गुणो गुरु मज्झ ॥ २ ॥

जीतना गुरुमहाराजकों वहू मान दीयाजाता है इतनाही स्थापनाजीकों देना चाहिये स्थापनाजीके आगे वन्दन करना

इच्छामिखमासमणो वदिउ जावणिज्जाए निसीहियाए मत्थएण वदामि ॥ यह पाठ तीनदफे उठ वेठके कहेना.

इच्छकार भगवन् सुहराइ सुहदेवसि सुखतपशरीर निरावाध सुख सजम जात्रा निर्वहोछोजी स्वामिसुखसाता है भातपाणीका लाभ देनाजी ॥ एक खमासमण देके अब्भुठिओका पाठ केहना

इच्छाकारेण सदिसह भगवान् अब्भुठिओमि अभिंतर देवसिय खामेओ "इच्छ खामेमिदेवसिय" ज किंचि अपत्तिय परपत्तिय भत्ते पाणे विणए वेयावच्चे आलावे सलावे उच्चासणे समासणे अतर भासाए उवरिभासाए ज किंचि मज्झ विणय परिहीण सुहुम वा वायर वा तुब्भे जाणह अह न याणामि तस्समिच्छामिदुकड ॥ एक खमासमणा और देके वन्दन करना ।

सामायिक लेने वालोंकों पेहला इरियावहिय करना

इच्छाकारेण सदिसह भगवन् इरियावहिय पडिकमामि "इच्छ इच्छामि पडिकमिओ" इरियावहियाए विराहणाए गमणागमणे पाणक्कमणे वीयक्कमणे हरियक्कमणे ओसाउत्तिंग पणगदग मट्टीमक्कडा सताणासक्कमणे जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पचिंदिया अभिहया

वत्तिया लेसिया संघाइया संघट्टिया परियाविया किलामिया उद्दविया ठाणाओ ठाणं, संकामिया जीवियाओ ववरोविया तस्समिच्छामिदुक्कडं.

तस्सउत्तरीकरणेणं पायच्छित्तकरणेणं विसोहीकरणेणं विसल्लिकरणेणं पावाणं कम्माणं निग्घायणठाए ठामि काउस्सग्गं ॥ अन्नत्थऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं छीएणं जंभाइएणं उड्डुएणं वायनिसग्गेणं भमलीए पित्तमुच्छाए सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्जमे काउस्सग्गे जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि तावकायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥ यहांपर एक लोगस्स " चंदेसु निम्मलयरा " तक केहना फिर नमो अरिहंताणं केहके काउस्सग्ग पारके लोगस्स केहेना ॥

लोगस्स उज्जोअगरे धम्मतित्थयरेजिणे अरिहंतेकित्तइस्सं चउविसंपि केवली ॥ १ ॥ उसभमजियंच वन्दे, संभवमभिणंदणंच सुमइंचपउमप्पहं सुपासं जिणंच चंदप्पहं वन्दे ॥ २ ॥ सुविहिंच पुप्फदंतं, सीयलसिज्जंस वासुपुज्जंच, विमलमणंतंच जिणं धम्मंसंतिच वंदामि ॥ ३ ॥ कुंथु अरं च मल्लिं वन्दे मुणिसुव्वयं, नमिजिणंच वंदामि रिठनेमिं पासं तह वद्धमाणंच ॥ ४ ॥ एवंमए अभिथुआ, विहुयरमला पहीण

जरमरणा चउवीसपि जिणवरा॥५॥तिन्थयरामे पसीयतु कित्तिय वदिय महिया, जेए लोगस्स उत्तमा सिद्धा आरूग्ग बोहिलाभ समाहिवरमुत्तम दिंतु ॥ ६ ॥ चदेसु निम्मलयरा आइचेसु अहिय पयासयरा, सागरवरगभीरा सिद्धासिद्धिं मम दिसतु ॥७॥

एक खमासमणा दे आदेश लेके सामायिक लेनेको मुहपत्ति पडिलेहन करना सो विधिमुहपत्ति हाथमें लेके खो- लती वखत केहेना सूत्र अर्थ सचाश्रद्दहु, सम्यत्त्वमोहनिय, मिथ्यात्वमोहनिय, मिश्रमोहनिय परित्याग करू। द्रष्टिकी प्रति- लेखन करतों कामराग, स्नेहराग, द्रष्टिरागका परित्याग करू। यह सात बोल केहेनेके बाद मुहपतिके विभाग जीमणे हाथकि अगुलीके विचमें पकडके डाबा हाथपर प्रतिलेखन समय सुदेव सुगुरु सुधर्म आदरू कुदेव कुगुरु कुधर्म परित्याग करू। ज्ञान दर्शन चारित्र आदरू यह ६ बोल केहकर मुहपत्ति डाबा हाथके अगुलीयोंके विचमें लेके जीमणा हाथपर प्रतिलेखन करना यथा ज्ञानविराधना दर्शनविराधना चारित्रविराधनाका परित्याग करू। मनोगुप्ती वचनगुप्ती कायगुप्ती आदरू। मनोदड वचनदड कायादडका परित्याग करू। एव २५ बोल।

अब शरीर प्रतिलेखन करनेकि विधि केहेते है

मस्तकपर मुहपत्ति लगाके कृष्ण निल कापोत लेश्याका परित्याग करू। मुखपर मुहपत्ति रख--ऋद्धिगारव रसगारव

सातागारवका परित्याग करूं। हृदयपर मुहपत्ति रखके नियाणशल्य मायाशल्य मिथ्यादर्शनशल्यका परित्याग करूं। जीमणे खांधेपर क्रोध मान और डावे खांधेपर माया लोभका परित्याग करूं। डावे हाथकी बाहापर हास्य रति अरति और जीमणे हाथकि बाहापर भय शोक जुगुप्साका परित्याग करूं। पृथ्वीकाय अपकाय तेउकाय कि विराधना डावे पगपर रजोहरणसे और वायुकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय कि विराधना जीमणे पगपर रजोहरणसे परित्याग करूं। इन्ही विधिसे उपयोगयुक्त मुहपत्तिका प्रतिलेखन कर खमासमण देके "इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामायिक संदिसवु" 'इच्छं' खमासमणा देके इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामायिक ठाउं 'इच्छं' दोनों हाथ जोडके एक नवकार केहेना। इच्छकारि भगवन् पसायकारि सामायिक दंडक उच्चरावोजी अगर गुरूमहाराज न हो तो पाठ अपने मुखसें" केहना. करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहं मणेणं वायाणं काएणं न करेमि न करावेमि तस्सभंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि"॥

खमासमणा आदेशपूर्वक वेसणुं संदिसावु वेसणो ठाउं सज्झाय संदिसावु सज्झाय ठाउं सज्झायका तीन नवकार केहकर दोय घडी (४८ मीन्ट) आत्मध्यान या पठन पाठन करना चाहिये॥

सामायिक करनेवाले आत्मबन्धुओंको प्रथम ३२ दोषकों जानना चाहिये ॥

१० मनके दोष

१ अविवेकदोष–अविवेकतासे क्रिया करे या सामायिक करके मोक्षमें कोन गये हैं या इसे क्या फल है ।
२ यशोवाञ्छादोष–सामायिक कर यशकीर्तिकि इच्छा करे ।
३ धनवाञ्छादोष–सा० करके धनकि इच्छा करे ।
४ गार्वदोष–सा० अहङ्कार करे मैं हि सामायिक करता हू ।
५ भयदोष–लौकिकके भयके मारे लोक मुजे क्या कहेगा ।
६ निदानदोष–सा० इस लोक परलोकका नियाणा करना ।
७ संशयदोष–सा० क्या जाने फल होगा या न होगा ।
८ कषायदोष–क्रोधके मार या सा० मे क्रोध करे ।
९ अविनयदोष–गुरु विनय न करे जेसे मूर्खकि माफीक ।
१० अवहूमान–उत्साहरहित वेगारकि माफीक सामायिक करके मनकों सावद्य कार्यकि चिंतवनेमें लगादे इत्यादि ।

१० वचनके दोष

१ कुबोल–सामायिकमें मकार चकारादि कुवचन बोलना ।
२ सहसात्कार–सा० विनोविचारे वालना ।
३ असदारोपण–दुसरेको पापकारी मति देना ।

४ निरपेक्षवाक्य-शास्त्रोकि अपेक्षारहित बोलना ।
५ संक्षेपदेष-सा०सूत्र अर्थ संक्षेपसे बोलना ।
६ कलहदोष-सा० कोइके साथ कलेश करना ।
७ विकथादोष-सा० च्यार प्रकारकि विकथा करे ।
८ हास्य दोष-सा० दुसरेकि हासी मिसकरी ठठा करना ।
९ अशुद्धपाठ दोष-सा० अशुद्ध पाठ या न्युनाधिक बोले ।
१० मुणमणाट दोष-सा० स्पष्टउच्चारण न करे ।

१२ कायाके दोष.

१ पगपर पग छडाके बेठे इन्हीसे अविनय होता है ।
२ आसन चलन इदर उदर बेठता रहै ।
३ चलन द्रष्टी-वार वार इदर उदर देखताही रहै ।
४ सवद्य क्रिया-सा० पापकारी या गृह कार्य करे ।
५ आलंबन दोष-भीत स्थंभादिका ओटा लेके बेठे ।
६ आकुंचनप्रसारण दोष-सा० विनोपुंजे हास्तपाद चलावे ।
७ आलस दोष-सा० अंगमोड कटका करे ।
८ मोटन दोष-उठ बेठ कसरत करना दंड निकालना ।
९ मेल दोष-खाजखीणे मेल उत्तारे मालस करे ।
१० विमासन दोष-सागल हाथ देके बेठ दोनो गोडा उचा कर हाथोंकी या कपडाकि ठासडी मारके बेठे ।
११ निद्रा दोष-सा० निद्रा लेवे ।

१२ शीत दोष-शीतके कारण सर्व अगकों कपडासे ढाकके बेठे।

उपर लिखे ३२ दोषोंको टालके शुद्ध उपयोगसे आत्मज्ञानमे रमणता करनेसे कर्मोंकि निर्जरा होती है ।

सामयिक पारनेकि विधि

गुरु आदेश लेके इरियावहि पूर्ववत् लगस्सतक केहना-आदेश लेके सामायिक पारनेकि मुहपत्तिका प्रतिलेखन करना । आदेश-अर्थात् खमासमण देके इच्छा कारण सदिसह भगवान् सामायिक पारु । तब गुरु कहे "पुणोवि कायव्वो" आप कहै" यथाशक्ति" फीर खमासमणादिके इच्छा कारण सदिसह भगवन् सामायिक पार्यु गुरु कहे " आयारो न मोत्तव्वो " आप कहे " तहत्ति " फिर जीमणा हाथ चरवालापर रखके एक नवकार केहके गाथा केहनी ।

सामाइय वयजुत्तो, जावमणे होइ नियम सजुत्तो ।
छिन्नइ असुह कम्म, सामाइय जत्तिया वारा ॥ १ ॥
सामाइयमिउ कए, समणो इय सावओ हवइ जम्हा ।
एएण कारणेण, बहुसो सामाइय कुज्जा ॥ २ ॥

सामायिक विधिसे लीधि विधिसे पारी विधि करतों अविधि हुइ हो सामायिकमें दश मनका दश वचनका बारह कायाका एव ३२ दोषसे कोइ भी दोष लागा होय तो मिच्छामिदुक्कड ॥

(१) चैत्यवंदन.

सकल कुशलवल्लि पुष्करावर्त मेघो,
दुरित तिमिर भानुः कल्पवृक्षोपमानः ।
भवजलनिधि पोतः सर्व सम्पत्ति हेतुः,
सभवतु सततं वः श्रेयसे पार्श्वनाथः ॥ १ ॥

२ बीजका चैत्यवंदन.

अजितनाथ प्रणमुं सदा, तीर्थंकर दुजो ।
शिव रमणीके कारणे, चोखे चित्त पूजो ॥१॥
उत्कृष्टा जिनकेवली, लाद्धे संघ मुनिन्द्र ।
बीज कहे जिनराजने, सेवे सुरनर इन्द्र ॥२॥
अचिरा अंगज उपना, मृगी रोग निवार ।
चक्रवर्त पद्धि ल्ही, पट् खंडनो सीरदार ॥३॥
चक्ररतनको छोडके, धर्मचक्र ल्ही लार ।
शान्तिनाथ पूजो सदा, दिनमे वार हजार ॥४॥
चवन जन्म दीक्षातणा, नाण अने निर्वाण ।
बीजतणे दिन जे हुवा, तीर्थंकर कल्याण ॥५॥
वन्दु जेह जिनेन्द्रने, धर्म प्रकाश्यो दोय ।
साधुने श्रावकतणो, आराध्या शिव होय ॥६॥
छोडो विषय कषायने, आरंभ परिग्रह दोय ।
धर्म शुक्ल ध्यावो सदा, ज्ञान दर्शन शुद्ध होय ॥७॥

३ पचमिका चैत्यवदन

शासनपति निराजीया, समोसरण मझार ।
भक्तिभावे पुन्छीयो, श्रीगौतम गणधार ॥१॥
कहो स्वामि किम पामीये, निर्मल केवल नाण ।
उत्तर आपे वीरजी, साभल गौतम वाण ॥२॥
शुक्लपक्षकि पचमि, आराधे शुद्ध भाव ।
पाँपद गुणणो जो करे, उजमणो चित्त चाव ॥३॥
ज्ञान विनो पशु सारखो, क्रिया नहीं विन ज्ञान ।
देश आराद्धि क्रिया कही, सर्व आराद्धि ज्ञान ॥४॥
पच वर्ष पच मासकि, उत्कृष्टी जावा जीव ।
पच मास लघु कही, ज्ञान आराधन नीव ॥५॥
महा निमिथमे भाखीयो, ज्ञानतणो अधिकार ।
वरदत्त ने गुणमझरी, पाम्या भवनो पार ॥६॥
पचकल्याणक जिनतणा, पालो पचाचार ।
पचमि गति वरना भणी, ज्ञान सदा श्रीकार ॥७॥

४ अष्टमिका चैत्यवदन

नमु नमु आठम दिने, कल्याणक जगनाथ ।
चैत्र वदि आठम दिने, जनम्या आदिनाथ ॥१॥
सोहम इन्द्र वनिता गयो, मेरू आया शेप ।
जन्म मफल जेणे कीयो, तीर्थंकर अभिशेप ॥२॥

आठ सहस चौसठ कलसे, नव्हरावे भावे ।
प्रभु पखाल करावतों, कर्म मेल जावे ॥३॥
आठमने दीक्षा लीवी, आठ कर्म कीया नास ।
अष्टापद गिरि उपरे, अष्टमि गति कीयो वास ॥४॥
पर्वतीथीये मोटकी, हुवा जिन कल्याण ।
केइ चविया केइ जनमीया, दीक्षा नाण निर्वाण ॥५॥
आठ वर्ष तप अष्टमि, शुद्ध भावे करसी ।
दंड वीरज राजापरे, शिवरमणी वरसी ॥६॥
अठपवयण आदरो, पूजा अष्ट प्रकार ।
अष्ट महासिद्धि संपजे, ज्ञान सदा जयकार ॥७॥

५ एकादशीका चैत्यवंदन.

जगतारण जगवलहो, त्रिसलाको जायो ।
मिगसर शुद्ध एकादशी, महासेन वन आयो ॥१॥
इन्द्रभूति आदि करी, एकादश आया ।
संशयछेदि वीरमे, गणधरपद पाया ॥२॥
त्रिपदीमे तीण रच्यो, द्वादशांगीसार ।
च्यार सहस्रने च्यारसों, कयो सहुनो परिवार ॥ ३ ॥
तीन कल्याणक मल्लितणा, वंदी जे भावे ।
सब जिनका गीणतों थकों, दोढसो आवे ॥ ४ ॥
मौन एकादशी मोटकी, वर्ष इग्यारे करसी ।

उजमणो करतों थकॉ, शिवरमणी वरसी ॥ ५ ॥
अग इग्यारे लिखावीये, इग्यारे ठवणी ।
पाटी पुठा विटांगणा, साही कल्मकवली ॥ ६ ॥
पूजा श्रीजिनराजकी, गुरुभक्ति कीजे ।
सम्यक्ज्ञान पामी करी, नरभव फल लिजे ॥ ७ ॥

६ परकीका चैत्यवन्दन

रिसहनाह श्रीनाभिराय मरुदेवियनन्दन ।
जइ जइ अजिय जिणद देवसिवपुर पुहसहदन ॥
गय भय भय सभव अपार भव सयर तारे ।
अभिनदव आणद कन्द मह दुरिय निवारे ॥ १ ॥
सुमइ देव मह सुमइनाह भुवण त्तय सामि ।
पउम प्पहु प्पहुयइ पसाय पूज्जोमणकामी ॥
सव्व जगुत्तम जिण सुपास सत्तम तित्थेसर ।
चदप्पह मुह कुमय तिमिर तिहुयण परमेसर ॥ २ ॥
सुनिह सुनिह पडइण समत्थ वदउ नदउ नर ।
सीयल तुठे हुति नयण सीयल निमचयपर ॥
सिरियसह नदण हरग लाहुय्र जिम कीजे ।
वासपूज पूजे वनिय जम्मह फल लीजे ॥ ३ ॥
देह देव सिरि निमल नाह निम्मल मगल मुह ।
सिरि अनत सतुठि सुठि लब्भे मिव सुह सुह ॥

मुत्ति मुत्ति निय धम्म धाम्मि धामी मण मोहे ।
संतिकरण सिरिसान्ति नाह दंसण जग सोहे ॥ ४ ॥
हत्थीहत्थ सिवसत्थी वाहु जय कुंथुं जिणेसर ।
अंतरंग अरि वग्ग दलण पूजिजे जिणवर ॥
मोह वेल्लि वल हरण माल्लि अनन्निय आराहो ।
मुणिसुव्वय दरसणय नाह मुज्ज मन उमाहो ॥ ५ ॥
नमिर सुरासुर वंदि नंदि श्री नमि तीर्थंकर ।
रेवेगिरि सिरि तिलोय नेमि जयराय महीवर ॥
तिहुअणा लाच्छि निवास पास मह विग्घपणासे ।
वद्धमाण तिहि रीद्धि वद्धि पत्थारय पयासे ॥ ६ ॥
दह दिसि पसारिय कीत्ति पसार पखालिय कलमल ।
पंच मादन घण माण दलण सरण गइ वच्छल ॥
इम संथवसिरि सिद्ध सूरीसर जस निम्मल ।
दंतु सुख चोवीस देव तिहुयण गये मंगल ॥ ७ ॥

७ पार्श्वनाथ चैत्यवंदन.

जय जय चिंतामणि पास, जय त्रिभुवनस्वामी ।
अष्ट कर्मरिपु जीतने, पंचमि गति पामी ॥ १ ॥
प्रभु नामे आनन्द कन्द, सुखसंपत लहिये ।
प्रभु नामे भवभयतणा पातिक सब दहिये ॥ २ ॥
ॐ ह्रँ वर्ण जोडि करि, जपिये पार्श्व नाम ।
विप अमृत होय परिगमे, पामे अविचल ठाम ॥ ३ ॥

८ महावीर चैत्यवंदन

सिद्धारथ राजातणो, नन्दन श्रीमहावीर ।
चहोतेर वर्षको आयुखो, सोवन वर्ण शरीर ॥ १ ॥
बारह वर्ष छद्मस्थ रह्या, तीस वर्ष गृहवास ।
तीस वर्ष प्रभु केवली, पाचमि गति कीयो वास ॥ २ ॥
सिंह लछन शासनपति, वन्दु उगमते सूर ।
शिवसपत वच्छत फले, ज्ञानसे बढते नूर ॥ ३ ॥

९ शान्तिनाथ चैत्यवंदन

विश्वसेन कुल चन्दलो, अचिरादेवी माय ।
शान्ति करी सर्व देशमें, सोननवरणी काय ॥ १ ॥
अनन्त ज्ञान दर्शन धणी, चरण अनतु जाण ।
गजपद लन्छन नित्य नमु, जग उगमते भाण ॥ २ ॥
कारण सफलोमे लेही, साधन कारज रूप ।
वच्छत ज्ञान सदा फले, तु त्रिभुवनको भूप ॥ ३ ॥

१० नेमिनाथ चैत्यवंदन

गिरनार मडन नेमिजिन, सेनादेवी माय ।
समुद्रविजय सुत गुण निलो, सख लन्छन पाय ॥ १ ॥
परसत्ता त्याग न करी, त्यागी राजुल नार ।
स्वसत्ता रमण करे, शिव सुन्दर भरतार ॥ २ ॥

पदपंकज धय जन लही, ध्याता अमर करे ध्यान।
कर्म वन दहन करी, पामे केवलज्ञान ॥ ३ ॥

११ आदेश्वर चैत्यवंदन.

नन्दन नाभि नरेन्द्रको, सिद्धाचल सोहे।
मरूदेवीको लाडलो, सुरनर मन मोहे ॥ १ ॥
धोरी लंच्छन आयुखो, पूर्व चोरासी लाख।
सोवन वर्ण सुखकरण, कल्पवृक्षनी साख ॥ २ ॥
अखंड अमल अमुरति, छेद भेद नहीं रूप।
सहज समाधि ज्ञानरस, दीजे त्रिभुवन भूप ॥ ३ ॥

जंकिंचि नाम तित्थं, सग्गे पायालि माणुसे लोए।
जाइं जिण विंबाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि ॥ १ ॥

शक्रस्तव.

नमुत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थगराणं सयंसंबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरियाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं अभयदयाणं चरकुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं बोहिदयाणं (जीवदयाणं) धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं (दीवताणसरणगइपईठा) अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं वियट्टछउमाणं जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं

बुद्धाण बोहियाण मुत्ताण मोअयाण सव्वन्नूण सव्वदरिसीण सिवमयलमरुअमणतमरकयमव्वाबाह मपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेय ठाण सपत्ताण नमो जिणाण जिअभयाण ॥ जेय अइआसिद्धा, जेअ भविस्सतिणागइकाले, सपइअ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वदामि ॥ इति ॥

जावति चेइआइ उड्ढेअ अहेअ तिरियलोए य ।
सव्वाइ ताइ वदे इह सते तत्थ सताइ ॥ १ ॥
जावति केइ साहू भरहेरवय महाविदेहेय ।
सव्वेसिं तेसिं पणाउ तिविहेण तिदड विरयाण ॥२॥

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो

स्तुति सग्रह

---

१ बीजकि स्तुति

अजित जिनेश्वर अन्तर जामि, बीजे बीजा सुणीये जी ।
निर्मल चित्ते जिनवर पूजी, शिवपुरना सुख लुणीये जी ॥
उत्कृष्टा जिन केवली मुनिवर, तेहने वारे लाधे जी ।
अतित अनागत सम्प्रतकाले, वन्दो आगम साधे जी ॥ १ ॥
दोयउज्जल दाय राते वरणे, श्याम वरण दोय सोहे जी ।
निले वरणे युगजिनवरजी, सुरनरना मन मोहे जी ॥
सोवन वरण जिनेश्वर सोला, चौवीसे जिन पूजो जी ।

रायपसेणी मुक्ति केरो, फलदाता नहीं दुजो जी ॥ २ ॥
सुरधर रचीत समौसरण, चौमुख देशना अमृत भाखी जी ।
जलथल पुष्प ढीचण जेता, समवायांगजी साखी जी ॥
जिनवाणि आराधी प्राणी, मोक्ष गया वली जासी जी ।
लुपक पापी प्रतिमा उत्थापी, तेहनी शु गति थासी जी ॥ ३ ॥
शासन सुरी सवदुःख चुरी, अजित वला सुख पुरी जी ।
समकित साची नाटिक नाची, करी जिन भक्ति सनुरी जी ॥
उपकेशगच्छ मंडन मिथ्या त्रिहंडन, रत्नप्रभ सुरी राया जी ।
तस्सपद राचीक शिवसुख जाचिक, ज्ञानसुन्दर गुण गाया जी ॥

२ पंचामकि स्तुति.

समुदविजय सेवा देवीनन्दन, जादव कुलनी जोत जी ।
श्रावण शुद्धि पांचमिने जनम्या, हुवो लोक उद्योत जी ॥
मेरू शीखरे चौष्टइन्द्र, मोहत्सव कियो मन रंगे जी ।
शिव मन्दिरमे नेमिजिनवर, रम रह्या राजुल संगे जी ॥ १ ॥
अनन्त तीर्थकर इणीपर भाखे, पंचमि तप तुम धारो जी ।
जघन्य मध्यम उत्कृष्टी करिये, उज्जमणो उद्धारो जी ॥
केवल कमला लीलकरे घर, महा निसिथमे सारो जी ।
तीन कालका जिनवर वन्दी, पामी जे भव पारो जी ॥ २ ॥
पंचाचार निरमला पालों, पांचे सामिति सुमता जी ।
पंचइन्द्रिय निग्रह किजे, तीने गुप्ती गुपता जी ॥

पाचज्ञानकों गुणणो करीने, नन्दीसूत्रने पुजोजी ।
श्रुति ज्ञान समो नही कोइ, उपकारी जग दुजो जी ॥ ३ ॥
गीरनार मडन नेमिजिनवर तस पद किंकर सेवी जी ।
साहानिधकारी सर्व सघने, भली अम्बिका देवी जी ॥
उपकेशगच्छ नायक शिवसुख लायक, रत्नसूरी मन भायाजी ।
ज्ञानसुन्दर कहे गुरु कृपामे, दिनदिन सुख सवाया जी ॥ ४ ॥

२ अष्टमिकि स्तुति

अष्टमि आठमा जिनवर पूजो, चन्दा प्रभु चित लाइ जी ।
आगी रचावों नृत्य करावों, मृदग ताल बजाइ जी ॥
रावण गीत तीर्थंकर बांधो, अष्टापद पर जाइ जी ।
आज हर्ष चित्त भक्ति म्हारे, मामि मुक्ति आइ जी ॥ १ ॥
तीन लोकमें प्रभुकि प्रतिमा, नन्दो पूजो भावे जी ।
आचारग ठाणायाग नन्दी, ज्ञाता सूत्रमें गावे जी ॥
रायप्पसेणी जीवाभिगम, भगवती पेच्छोणो जी ।
आगम पाठ उत्थापे प्रतिमा, पापी अभव्य जाणों जी ॥ २ ॥
अष्ट महा प्रतिहार विराजे, समोसरण जिनराजे जी ।
देशना अमृत अर्थ अनोपम, भव्य जीवों हितकाजे जी ॥
सूत्र रुपे गणधर गुथी, द्वादशागनी वाणि जी ।
चोखे चित्ते जेह आराधे, शिवसुख ल्हे भव्य प्राणी जी ॥ ३ ॥
अष्ट प्रकारे पूजा करके, अष्टमि गतिमे जावो जी ।
अष्टम तप कर नागकेतु जिम, निर्मल केवल पावो जी ॥

उपकेशगच्छनायक शिवसुखदायक, रत्नसुयश सवायो जी।
शासनसुरी सब दुःख चुरी, ज्ञान अमर पद पायो जी ॥ ४ ॥

४ एकादशीकी स्तुति.

ऊगणीसमा वन्दु मल्लि जिनवर देव।
सुरनरना नायक सारे ज्हेनी सेव ॥
मीगसर शुद्ध एकादशी हुवा तीन कल्याण।
नित्य नित्य हु वन्दु अनन्त सुखोकि खाण ॥ १ ॥
मौन एकादशी भाखी श्री वर्धमान।
सहु मीलने हुवा दोडसो कल्याण ॥
यह तप आराध्या तुटे कर्मकी पास।
मल्लिजिनवरजी पुरो मुज मन आस ॥ २ ॥
मोहन धर करायो षट् मंत्रीके काज।
कनकमय पडिमा थापी छे जिनराज ॥
षट् मंत्री देखी उपनो पूर्व राग।
उपदेशे बुज्या हुवा मल्लि जिन साग (साथे) ॥ ३ ॥
मौन एकादशी तप अखडंत सुर।
उज्जमणो करतों पावे सुख भरपुर ॥
उपकेश गच्छमंडन रत्नप्रभसूरिराय।
तस्स पदपंकज सेवक ज्ञानसुन्दर गुण गाया ॥ ४ ॥

———

५ पक्खीकि स्तुति

श्रीमद्वीरजिनेश श्रौवड कृत श्रीतोरणालकृत ।
प्रासादे वररत्न कीर्ति गुरुणा सस्थापित सौख्यदः ॥
ससिक्त शुभ कामधेनु पयसा नोवेदित केनचित् ।
त वन्दे शुभ कारण दरहर श्रीनैशलेय मुदा ॥ १ ॥
मुक्ति श्री सुरसग लीन मनसो मिथ्यात्व मोहान्तकान् ।
बुद्धान् मानव देवदानव गणेशान् सर्वदानर्हत• ॥
ससारार्णव पारगामि निनतान दुष्टाष्ट कर्म च्छिदः ।
वन्दे भूत भविष्य भाविक भवान् तीर्थाधिपान् सर्वदा ॥ २ ॥
या जीवादि विचारतत्त्व निपुणा तीर्थंकरा स्यात्स्तुता ।
श्रीमद्वीरगणि प्रधान विधृता चीणाष्टकर्म व्रजा ।
यद्दर्थाल्पक वर्णका व्रत फला भावप्रदीपोज्वला ।
सान्निध्य श्रुतदेवता भगवती सघे विधत्तात्सदा ॥ ३ ॥
श्रीरत्नप्रभसूरि सौम्य वचसा तत्त्वेन सबोधिता ।
श्रौपकेश गणेश शासनसुरी दद्यात्पद सपदाम् ॥
या चाष्टादश गौत्रकेषु रचिते सुश्रावकरच्यते ।
सा देवी दुरितौ घनाशन करी सघस्य भूयाच्छुभा ॥ ४ ॥

६ सिद्धचक्रकि स्तुति

चन्दरवो बांधीने श्रीपडे, सिद्धचक्र थापीजेजी ।
पाच वरणको मडल मांडो, स्नात्रमहोत्सव कीजेजी ॥

अखंड ज्योत वाजीत्र वाजा, भावे भक्ति कीजेजी ।
मयणाने श्रीपाल तणीपरे, नवभव शिवसुख लिजेजी ॥१॥
बारहा अरिहंत सिद्ध आठ गुण, सूरी छत्तीस गुण वरियाजी ।
पाठक गुण पचवीस सतावीस, मुनिवर गुणना दरियाजी ॥
सीतसट दर्शन ज्ञान एकावन, चरण सीतर सुखकारीजी ।
तप पचासे सर्व मीलीने, नवपद जग जयकारीजी ॥ २ ॥
शुद्ध सातम आसोज चैतकी, विधिपूर्वक तप झेलेजी ।
नव ओली एकीआसी आंबिल, उजमणो करी मेलोजी ॥
खमासमणा देइ गुणणो कीजे, जिन पूजा तीहु कालो जी ।
प्रति लाभी गुरु वन्दन करीने, निज आतम उज्वालो जी ॥३॥
रूपे रूडी कर कंकण चुडी, रम झम नेपर वाजे जी ।
नवपद सेवी चक्रेश्वरी देवी, संघना संकट भाजे जी ॥
ओंसवंस थापी मिथ्या कापी रत्नप्रभसूरी राया जी ।
तस्सपद दाशा शिवसुख प्यासा, ज्ञानसुन्दर सुख पाया जी ॥ ४ ॥

७ सिद्धाचल स्तुति.

सिद्धाचल मंडन मरू देवीनो नन्द ।
मूर्ति मनमोहन जाणे पुनम चन्द ॥
वृषभनो लच्छन सेवे सुरनर वृन्द ।
मीली मीलीने पूजो नरनारी सुख कन्द ॥ १ ॥
सास्वतो तीर्थ भाख्यो श्री भगवन्त ।
अतित अनागत सिद्धासिद्ध अनन्त ।

गुण निलो गीरित्र आगम महामानन्त ॥
भावे करि नम तो पामे भवनो अन्त ॥ २ ॥
जिनवरकी वाणि अनन्त सुखोंकि खाण ।
कमलेगच्छनायक देवगुप्त सूरी जाण ॥
उपदेशे करायो पन्दरमो उद्धार ।
समरा शाहा श्रावक लीधो लाभ अपार ॥ ३ ॥
चक्रेश्वरी देवी करती सार समाल ।
सहु सघना सकट दुर करे तत्काल ॥
उपकेशगच्छ मडन रत्नप्रभ सूरी राय ।
तस्सपद पकज सेवक ज्ञानसुन्दर गुण गाय ॥ ४ ॥

८ ओशीया तीर्थकी स्तुति

अश्वसेन नरेश्वर वामा देवी माय ।
अहि लन्छन पार्श्व जिनवरण तस्स काय ॥
शुभे हरिदत्ते आयरियं केशी श्रमण कुमार ।
स्वयप्रभे रत्नप्रभं छटे पाट मझार ॥ १ ॥
उपकेशे पटण पधारया गुरु राय ।
ऊँावड दे मत्री वीर प्रासाद कराय ॥
गाउ दुद्ध वेलुथी मूर्त्ति श्री महावीर ।
प्रतिष्टा कीनी नमतो भवजल तीर ॥ २ ॥
गुरु रत्नप्रभसूरी चवदापूर्वके धार ।

एक दिन प्रतिबोध्या तीन लक्ष चौरासी हजार ॥
ओसवंसे थाप्या गौत्र आठारा जाण ।
हु नित्य नित्य वन्दुं श्रीजिनवरकि वाण ॥ ३ ॥
चमुडा साची रही वचन चित्त लाय ।
तेथी सचाइ नाम ठवे गुरुराय ॥
शासन ने गच्छकी करती सार संभाल ।
सुख संपत्त लेसे ज्ञानसुन्दर उज्जमाल ॥ ४ ॥

९ पर्युषणपर्वीकि स्तुति.

त्रिसलानन्दन वीर जिनेश्वर, चौवीसमा जिनराया जी ।
शासन जेहनो आज जयवन्तो, पर्व पर्युषण आया जी ॥
सोहम गणहर वीर पटोधर दुप्पसासूरी राया जी ।
चउ संघ वरते तेहनी आणा, अमर नमे तस्स पाया जी ॥ १ ॥
पर्व परूप्यो अनन्त तीर्थंकर, आराधे भव्य प्राणी जी ।
अनुभव आंगी और भावना, जिनवर पूजे जाणी जी ॥
आरंभ टाले कर्म प्रजाले, सुणे जिनवर कि वाणी जी ।
दीनोद्धारे दया जो पाले, ते वरसे शिवराणी जी ॥ २ ॥
जिनवर वाणि कल्पमे आणी, ओपमा अधिक विराजे जी ।
भक्ति रंगे मोहत्सव संगे, पूजो केवल काजे जी ।
अष्टम कीजे कल्प सुणीजे, नव वाचना चित्त आणी जी ।
पारणे दान सुपात्र दीजे, ए मोक्षतणी निशानि जी ॥ ३ ॥

नन्दीश्वर द्विपे मोहने जीपे, सुरवर कोडा कोडी जी ।
भक्ति राचे नाटिक नाचे, पूजे होडा होडी जी ।
उपकेशगच्छराजे रत्न निराजे गाजे ज्ञान सवायो जी ।
सिद्धायका देवी सान्निधकारी पर्व पर्युषण आया जी ॥ ४ ॥८

(१०)

वीर देव नित्य वन्दे ॥ १ ॥
जैनाः पादा युष्मान् पान्तुः ॥ २ ॥
जैन नान्य भूयाद् भूत्यै ॥ ३ ॥
सिद्धा देवी दद्यात्सौख्यम् ॥ ४ ॥



स्तवन संग्रह.

१ बीजका स्तवन

देशी पीणियारीकि

अजित जिनेश्वर पूजीये । भव प्राणीरे लो, जिन पूज्या जिन थाय, गुणखाणीरे लो । टेर । समोवसरण सुरन रच्यो भव प्राणीरे लो नेठा हे अजित जिनेन्द, गुणखाणीरे लो ॥१॥
अष्ट प्रतिहारज शोभता भ० सेवे इन्द्र नरिन्द, गु० ॥ २ ॥
स्याद्वाद अमृत जीभी भ० मीटडि जिनवर वाण, गु० ॥ ३ ॥
नय निक्षेप परमाणसु भ० कारण कारज जाण, गु० ॥ ४ ॥

कारण दोय भेदे करी, भ० उपादान निमित्त, गु० ॥ ५ ॥ कारण शुद्धाशुद्धसे, भ० भागा किजे च्यार, गु० ॥६॥ आज अजित जिनराजको, भ० कारण मीलीयो शुद्ध, गु० ॥ ७ ॥ कारज शिवसुख पामीये, भ० सामग्री संजोग, गु० ॥ ८ ॥ सर्व व्रत देशव्रत हे भ० क्षम शम दानादि च्यार, गु० ॥ ९ ॥ प्रभुपूजा गुरुवन्दना, भ० शुभ कारण उपचार, गु० ॥ १० ॥ उपादान जो शुद्ध हुवे, भ० कारण सफलो थाय, गु० ॥ ११ ॥ उपादान जाणे अजितजी, भ० कारण शुद्ध व्यवहार, गु० ॥ १२ ॥ दीर्घ काल दुरो वस्यो, भ० आज दीठो दीदार, गु० ॥ १३ ॥ कारज सफलो म्हायरो, भ० ज्ञान तिरियो संसार, गु० ॥ १४ ॥ इति.

२ पंचमिका स्तवन.

देशी नेमजीकि जांनकि.

सुनो श्री सुमतिनाथ भगवान्, दीलादो मुझको केवलज्ञान सुणो० ॥ टेर ॥ सुमतिप्रभु सुमतिके दाता, पूजतों जीव ल्हे साता, मन मेरा आज हुलसाया, प्रभुके चरणोमें आया ॥ दोहा ॥ समौसरण देवों रच्यो, सोहे सुमति जिनन्द, छत्र चमर सिंहासन आदि, सेवे सुरनर इन्द्रदुद्धवी वाज रही असमान ॥ सु० ॥ १ ॥ ज्ञानके भेद वतलावे, मति श्रुति अवधि मन भावे, मुनिके मनःपर्यव जानो, पंचमो केवल पेच्छानो ॥

दोहा ॥ मति अठावीस श्रुति चौदा, अवधि भेद असख्य, दोय भेद मन'पर्यव दाख्या, पचमपद नि कलक, एकलो कहिये केवलज्ञान ॥ सु० ॥२॥ ज्ञान या गुरुनाम गोपे, आगम और अर्थको लोपे, पढतोंकों अन्तराय देवे, अक्षर पद अविनयसे लेवे ॥ दोहा ॥ करे आसातना ज्ञानकि, भगवती अधिकार, ज्ञानी उपर द्वेष मच्छरता, ते रूलिया ससार, आतमा इम पामी अज्ञान ॥ सु० ॥ ३ ॥ आसातना ज्ञानकि करता पशु जिम चौरासी भमता, अहिंस्या सिद्धान्ते भाखी, ज्ञानके पीच्छेही राखी ॥ दोहा ॥ देश आराधि क्रिया कही, सर्व आराधि ज्ञान, ज्ञान आराधन कारणे सरे, इम भाखे भगवान्–वढावो ज्ञानद्रव्य ओर ज्ञान ॥ सु० ॥ ४ ॥ शुक्लपक्ष पचमि माधो, भलीपरे ज्ञान आराधो, ज्ञानसे क्रिया भी शोभे, दर्शनसे कवी नहीं चोभे ॥ दोहा ॥ कर उजमणो भावसे, राखो चित्त उद्धार, सूत्र लिखावो ज्ञान सीखावो,-उपकरण दो श्रीकार= जिन्होंसे पामो निर्मल ज्ञान ।सु०।५। घातकी खड मझारी, सुन्दरी जिनदेवकि नारी ज्ञानके उपकरण दीधा बाल, हुइ गुणमझरी वे हाल ॥ दोहा ॥ आचारज वासुदेवजी दीयो कर्म झकझोर, ज्ञान उपरे द्वेष करतो, बाध्या कर्म कटोर= वरियो वरदत्तजी अज्ञान ॥ सु० ॥ ६ ॥ आराधी पचमि भारी, उपना सर्ग मझारी, विदहमे ओर भी धारी, मोक्ष गया केवल ले लारी, ॥ दोहा ॥ इम अनेके उद्धरया आगममे

परिमाण, जो करसी सो वरसी प्राणी, पंचमि तप निरवाण=
चरणाके सरणे आयो ज्ञान ॥ सु० ॥ ७ ॥ इति ॥

३ अष्टमि स्तवन.

अष्ट प्रकारे पूजा करके, चन्दाप्रभु चित्त धावोगे, जिन-
वर फरमावे, जिन्होंसे और गर्भ नहीं आवोगे ॥ टेर० ॥
(मिलत)। वीस थानक तीजे भवसेवी, तीर्थंकर पद पावे
है । ये-नाम जिन्होंका जिनेश्वर अलग अलग वतलावें है ।
अरिहंत[1] सिद्ध[2] पवयणाकि माता[3] गुरु[4] स्थिवरने[5] वहुज्ञाता[6] वली
तपस्वी[7] ज्ञानी[8] उन्हीकों उपजावे वहु सुख साता । दर्शन[9]
विनय[10] आवश्यक[11] करिये, भवसायर तरिये । व्रतपाले[12] टाल
अतिचार ध्यान[13] तपस्या[14] करिये ॥ (छुट) अभय और सुपात्र-
दान[15] देव अढकल भाव जी । अगिल्याणपणे व्यावच्च[16]करे
यहीज मोक्ष उपाव जी, च्यार संघ[17]कों सात देवे, यह समाधि-
थान जी, विनय भक्तिसे पढे, प्रतिदिन अपूर्व ज्ञान[18] जी ॥
(सेर) या-सूत्र सिद्धान्तकि भक्ति[19] किजे भावे, भलों या-
सूत्र सिद्धान्तकि भक्ति किजे भावे, नहीं रहे मरणका काम
रोग मीट जावे । या-कर पाखंड मत्त दुर मिथ्यामत्तखंडि,
या-कर० करो शासनका उद्योत[20] रोपदोभांडि । (दोड)
वोल वीस कया सार, ज्ञातासूत्र मझार, कोइ सेवे अनगार,
जावे सुरग पूरी, जावे सुरगपुरी । चवन कल्याणक थाय,

उत्तम कुल माहे आय, सुर नन्दिश्वर जाय, पूजे हरप भरी पूजे हरप भरी। (मीलत) चवन कल्याणक काहा जिनेन्दका आगे जनम सुनावेगे। जिन। १। जिनवर जनम्यों तीन लोकमे जीव गणा सुख पावे है। सुरइन्द्र आनी प्रभुकों मेरू-गिरि ले जावे है। चौष्ट इन्द्र मिलि विद्याधर, जिनका मोह-त्सव करावे है, तीर्थसमुद्र, नदीसे निर्मल जल वर लावे है। चन्दन चुरण पुष्प औपधी देवा हर्ष उमावे है। पचामृतसे प्रभुको प्रेम प्रचाल करावे है। (त्रुट) आठ सहस चौष्ट कलसा, आगममे अधिकार जी। पचवीस योजन लम्बा कह्या एक एकनो विस्तारजी, बारा योजन चोडा कह्या, एक योजन नालो लोधारजी, प्रभुकों न्हवण करावतों वागि इन्द्र हरप अपारजी। (सेर) ये गावे नाचे सिंहनाद करे देवा। भलोये गावे०। ज्यारे उछरग दील अपार, मिली प्रभुसेवा। केड सोनो चन्दी रत्न रह्या वरपाई। भलोये केड। केड भूपण लीधा हाथके लो-लो भाई। (दोड) कीयो जनम कल्याण, माता पासे रख्या आण, गया नन्दिश्वर थान, आगी पूजा करे। आगी पूजा करे। शुभ कर्मोके संयोग, प्रभु भोगविया हे भोग, आये लोकान्तिक लोग, प्रभु दीक्षावरे प्रभु दीक्षावरे। (मिलत) तीन कल्याणका हुवे जिनेन्द्रके अब केवल दरसा-वेगे। जिन०। २। जब उपजे है ज्ञान जिनन्दकों सुरनर आवे कोडाकोड। रत्न रजत सुवर्णका देवा समोसरण रेच होडाहोड।

तीन गढ हद रचिया देवों, जल थल पुष्प हे ढींचण मान, प्रथम गढमें रहे असवारी, दुजे तिर्यच सुने व्याख्यान, च्यार जातकी देवी आवे, च्यार देवता लो तुम धार, साधु साध्वी श्रावक श्राविका, इणीपरे हूई परपदा वार। (छुट)। स्फटिक सिंहासन उपरे विराजे जग भांणजी, तीन दिशामें प्रभुकी प्रतिमा थापे व्यंतर आणजी, देव दुंदुभी आकाशमें, ध्वजा रही फरकायजी, भामंडल अशोक वृत्त हे शीतल जिन्हाकि छायजी। (सेर) ये चौष्ट इन्द्र चमर प्रभुके ढोले। भलोये चौष्ट०। तीन छत्र शिर उपर आगम वोले, या वाणी योजन-गामीनि घन जीम गाजे। भलोया वाणी०। वादी मानी ओर पाखंडी लाजे। (दोड) प्रभुके चौतीस अतिशय छाजे, वाणी गुण पैतीस विराजे, आनन्द वर्ते सरव समाजे, आज हरष गणो आज हरष गणो। नाटक वतीस प्रकार, वाजा वाज रह्या भणकार, पूजा विविध प्रकार सुरभक्ति करे २। मिलत। विचर रह्या भूमंडल आगे।निर्वाण कल्याण सुनायेगा। जिन।३। अष्टमि अष्ट कर्म करी दुरा शिवपुर आप सिधावे है सुरनर करी महोत्सव द्विप नंदिश्वर जावे है। तीन लोकमें प्रभुकि प्रतिमा जिन्हसे ध्यान लगावे है, जिन प्रतिमा पूजी, आप वह जिनवर पदकों पावे है। ज्ञातासूत्र अध्ययन आठमे भगवती इम गावे है, जिन्हकों जो लोपे वह भवभवमें दुःख पावे है। (छुट) तीर्थंकर तेवीसमा सुभदत्त हुवे गणधारजी हरिदत्त हुवे पट

दुसरे ज्यारों नाम लियों निस्तारजी, आर्यमसुद्र समुद्र जीसा तीजे पट मझारजी, राजकुमर दीक्षा लीनी वह केशी श्रमण कुमारजी। (सेर) श्रीमाली और पोरवालके कर्ता। भलोये श्रीमाली०। सयप्रभसूरीश्वर पट पचमे धरता। ये रत्नप्रभसूरी हूवे रत्न अवतारी। भलोये रत्न०। वीर निर्वाणसे वर्ष बावन पट धारी। (दोड) हुवे चौदा पूर्वके धार, आये उपकेश पटण मझार, तीनलक्ष चौरासीहजार, सबकों जैनी कीया–सबकों जैनी कीया। गुरुकि परम्परा पट धारी, हूवे बढे बढे आचारी, जिन्हाका नाम लेवे नरनारी, ज्याके आनन्द गडी–ज्याके मगल गडी। (मिलत) ज्ञान कहे शिव सुखके दाता प्रभु गुण मिलके गावेगा। जिन ।४। इति।

४ एकादशीका स्तवन

मल्लिजिन मन मेरो मोह्यो मूर्ति देखी नाथ तुमारी पातिक सब खोयोरे मल्लिजिन०। टेर। मथीला नगरी कुंभरायकी, प्रभावतीराणी, मिगसर शुद्धि एकादशी जनम्या, सुख पायो प्राणीरे मल्लि। १। तीन लोकमें रूप अनुपम, प्रभु अतिशय धारी, तो पण पूर्व कर्म सयोगे, वेद धरयो नारीरे म०। २। षट् मत्री प्रतिबोधन काजे, अवधिसे जाणी, मोहन घर कनकमय प्रतिमा, आप रूप ठाणीरे म०। ३। सुन्दर रूप बनी जो पुतली, थोथा ढकनाली, भोजन ग्रास एक

जिन्ही माहे, नित्य रह्या डालीरे म० ।४। एक एक कारण षट् मंत्री सुन, मनमे लोभाया, पूर्व राग परणवा काजे, जान लेइ आयारे म० । ५ । मथिलानगरी घेर लीवी, जदराजा गवरायो, श्रीमुख धीरप दीवी पीताने, भेद वतलायोरे म० । ६ । भूपति षट् बोलाय लिया प्रभु, मोहन घर माही, पुतली देख छेओ नृप मनमे, रह्या हरखाईरे म० । ७ । ढक उघाड लीयो पुतलिनकों, वासना बहु आइ, श्वान मडा सम दुर्गन्ध आवे, बेठीयो नही जाइरे म० । ८ । प्रभु उपदेश दीयो भूपतने, विषय छाक वारी, मिगसर शुद्ध एकादश दीक्षा, हुवे भूप लारीरे म० ।९। एक पेहरमे केवल लीनो, सुरमोहत्सव कीनो, स्फटक सिंहासन वेठ प्रभुजी, ज्ञान दान दीनोरे म० । १० । मौन एकादशी वर्ष इग्यारे, उज्जमणो कीजे, ज्ञान कहे उपगरण ज्ञानका, देतो शिव लिजेरे म० । ११ । इति ॥



श्रीमदुपाध्याय मेरुनन्दनजी कृत.

(श्री अजितशान्ति स्तव.)

श्री मंगल कमला कंदए । सुखसागर पुनमचन्दए ॥ जग गुरु अजिय जिनन्दए । शान्तिश्वर नयनानन्दए ॥ १ ॥ वेहुं जिनवर प्रणमेवए । वेहु गुण गाऊं संक्षेवए ॥ पुन्नेव भंडार भरेसए । मानव भव सफल करेसए ॥ २ ॥ कोडही

लाक्ख पचासए । सागर जिन शासन वासए ॥ ऋषभ जिनेश्वर वसए । उवभ्भाय सरोवर हसए ॥ ३ ॥ तिण अवसर तीहां राम्नीयोए । राजा जयशत्रु जिहा गाजीयोए ॥ विजिया तस्स घर नारए । वेहु रमत पासा सारए ॥ ४ ॥ कूखे जिण अवतारए । तिण राय मनायो हारए ॥ उदर वस्या दश मामए । प्रभु पूरीजननी नी आसए ॥५॥ बहु जन मन अनन्दीयोए । सुत नाम अजियजीण तां दियोए ॥ तिहुअण सयल उत्साहए । क्रम २ वधे जगनाहयए ॥ ६ ॥ हस धवल सारस तणीए । गति सुललितनि जगत रजणीए ॥ मलपति चाले गेलए । जाणे नैण अमीयरस रेलए ॥ ७ ॥ अवर न समो ससार ए । चले ज्ञान निवेक विचारए ॥ गुण देखी गज गह गयोए । लछण मिसी पगलागी रयोए ॥८॥ जोवनमें जब आवीयोए । तब वर रमणी परणावीयोए ॥ प्रिय साधे सहु काजए । प्रभु पाळे पुहेवी राजए ॥ ६ ॥ हिने हथनापुर ठामए । विश्वसेन नरेसर नामए ॥ राणी अचलादेवए । मनोहर सुख माणे मेवए ॥१०॥ चउ दह सुमा परवर्याए । अचिराकूखे सुत अवतर्याए॥ मानव देव नरा।यीयोए । चक्रीश्वर जिनवर जाणीयोए ॥११॥ देश नगर हुई शान्तए। तिणे नाम दियो श्री शान्तए॥ निन गुण इण जाणे दहीए। त्रिभुवनमें तसु ओपमा नहींए ॥१२॥ नंग मलुणो हिरण लाए । वन सिंहऽनीए एकलोए ॥ नंग

संवधी निरुद्धए। इण नैणा नार विरुद्धए ॥ १३ ॥ गीतही राग सुरंगए। तिहां पभणे लोक कुरंगए ॥ तो उलंघीयो शशि संकए। तिण पाम्यो नाम कलंकए ॥ १४ ॥ इण पर मृग अति खलभल्योए। भवभंजण स्वामी सांभल्योए ॥ आणंन्दीयो मन आपणोए। पाय सेवे मृग लंछण तणोए ॥ १५ ॥ लीलावती परणे घणीए। नवी २ कुमरी राजा तणीए ॥ छलवल अरियण जोगवेए। प्रिय राज भलीपरे भोगवेए ॥ १६ ॥ कुमारपद मंडलीक समेए। पचास सहस वर्ष गमेए ॥ तव तेज दिनकर जिसोए। उपनो चक्री रयण तीसोए ॥ १७ ॥ साधीय भरह छे खंडए। वरतावी आणा अखंडए ॥ चउदह रयण नव निधि सहिए । वशु सोले सहस जक्ष २ सहिए ॥ १८ ॥ सहस वहोत्तर पुरवराए। बत्तीस सहस मुगट बंध नरवरा ए ॥ पायक ग्राम कोडए । छीनुव नमें कर जोडए ॥ १९ ॥ हय गय रहवर जुवा २ ए। लक्ष चोरासी महिधर हुवाए ॥ लक्षत्र वाजंत्र घमघमेए। वतीस सहस नाटक रमेए ॥ २० ॥ रुपजीसी सुर सुन्दरीए। लक्षण लावण्य लीला भरीए ॥ जंगम सोहग देहरीए। ऐसी चौसठ सहस अन्तेवरीए ॥ २१ ॥ अवरज ऋद्धि प्रकारए । मणी कंचण रयण भंडारए ॥ तेतो कहो किम जाणए। प्रभु पूर्व पुन्य प्रभाणए ॥ २२ ॥ इम चक्रीश्वर पांचमोए। चौथो दुसम सुसम समोए ॥ वर्ष सहस पचवीसए। प्रभु पूरी मनरी जगीसए ॥ २३ ॥

इणपर वेहु तीर्थंकराए। चिर पाली राज भली पराए॥ जाणी अवसर सारए। वेहु लीधो सयम भारए॥ २४॥ वेहु चम शम दम धीरम धरीए। वेहु मोह माया मद परिहरीए॥ वेहु जिन जाण समानए। वेहु पाम्या केवल ज्ञानए॥ २५॥ वेहु देव कोडे महीए। वेहु चोतीस अतीसय सहीए॥ समोसरण वेहु ठाणए। वेहु जोजन वाणी वखाणए॥ २६॥ नाचत रणकत नेवरीए। वेहु आगल इन्द्र अन्तेवरीए॥ टिगमिग जोवे जग सहुए। रगे गुण गावे सुरवहुए॥ २७॥ वेहु शीर छत्र चामर वीमला। वेहु पगतल नवसोवन कमला॥ वेहु निन तणो निहारए। तिहा रोगने सोग निवारए॥ २८॥ वेहु उनयर भुवण धरीए। वेहु सिद्ध रमणी सधरीए॥ वेहु भजीयो भव कन्दए। वेहु उदय परमानन्दए॥ २९॥ इम वीजोने सोलमोए। जाणे चिन्तामणी सुरतरु समोए॥ थुणीये ती साफ वीहाणए। तिहा न पडे भवनो वीहाणए॥ ३०॥ वेहु उत्मन मगल करणा। वेहु सध सयल दु ख दूरहरणा॥ वेहु वर कमल वयणा नयणा। वेहु श्री जिन राज भुवण रयणा॥ ३१॥ इम भक्ति वालम थुईए। श्री अनिथ शान्ति जिन थुई भणीए॥ सरणवेहु निन पायए। श्री मेर नन्दन उवभ्भायए॥ ३२॥ इति

—•(◎)•—

६ श्री आदेश्वर भगवान् स्तवन.

ओलभडे मत खीजोहो जिनजी । खीजोतो वली वली रीझोंहो जिनजी ॥ रीझोतो शिव सुख दीजोहो जिनजी । दीजोने ओ जस लीजोहो जिनजी ॥ ओलभडे० ॥ १ ॥ बालपणे आपण ससनेही । रमता नवनव वेसे ॥ आज तमे पाम्या प्रभुताई । अमेतो संसारीने वेसे ॥ हो जिन० ॥ २ ॥ जो तम ध्यातां शिवसुख लहिये । तो तमने केई ध्यावे ॥ पण भव स्थिति पर पक थयर विन । कोई यन मुक्ति जावे ॥ हो जिन० ॥ ३ ॥ सिद्धि निवास लहे भव सिद्धि । तेमां सुं पाड तमारो ॥ जो उपकार तमारो वहिये । अभव्य सिद्धने तारो ॥ हो जिन० ॥ ४ ॥ नाण रयण पामी एकान्ते । थई बेठा मेवासी ॥ ते माहिलो एक अंश जो आपो । तो तमने साबासी ॥ हो जिन० ॥ ५ ॥ सेवा गुण रंझा भवीजनने । जो तमे करो वड भागी ॥ करुणासागर केम कहावो । निरमम ने निरागी ॥ हो जिन० ॥ ६ ॥ अक्षय सुख देतां भवीजनने । संकीर्णता नवी थाय ॥ जो शिवसुख देवा समरथ छो । तो यश लेतां सू जाय ॥ हो जिन० ॥ ७ ॥ नाभिनन्दन जन वन्दन प्यारो । जग गुरु जग जयकारी । रुपविबुधनो मोहन पभणे । वृषभ लंछन बलिहारी ॥ हो जिन० ॥ ८ ॥

७ श्री आदेश्वर भगवान् स्तवन

म्हासू मूंडे बोल, बोल बोल आदेश्वरवाला। काइ थारी मरजीरे ॥ म्हासू० ॥ टेर ॥ माता मरुदेवी वाट जोवतां, इत्तने बधाई आई रे। आज ऋषभजी उतर्या बागमें, सुण हरखाईरे ॥ म्हा० १ ॥ नाय धोयने गज असवारी, करी मरुदेवी मातारे। जाय बागमें नन्दन निरख्यो, पाई सातारे ॥ म्हा० २॥ राज छोडने निकल्यो ऋषभा, आ लीला अद्भुतीरे। चमर छत्र ने और सिंहासण, मोहनी मूर्त्तिरे ॥ म्हा० ३ ॥ दिनभर बैठी बाट जोवतीं, कदम्हारो ऋषभा आवेरे, केहती भरतने आदिनाथकी, खबरा लावोरे ॥ म्हा० ४ ॥ किसा देशमें गयो बालेश्वर, तुज विन वनिता सुनीरे। बात कहो दिल खोल लालजी, क्यू बण्या मूनीरे ॥ म्हा० ५ ॥ रह्या मजामें है सुखसाता, खून किया दिल चाहायारे। अब तो बोल आदेश्वर म्हासू, कम्पे कायारे ॥ म्हा० ६ ॥ खैर हुई सो होगई वाला, बात भली नहीं कीनी रे। गया पीछे कागद नहीं दीनो, म्हारी खबर न लीनीरे ॥ म्हा० ७ ॥ श्रोलभा मैं देवू कठा लग, पाछो क्यों नहीं बोलेरे। दु ख जननीको देख आदेश्वर, हिवडे तोलेरे ॥ म्हा० ८ ॥ अनित्य भावना भाई माता, निज आतमने तारीरे। केवल पामी मोक्ष सिधाया, ज्याने वदणा हमारी रे ॥ म्हा० ९ ॥ मुक्ति का दरवाजा खोल्या, मरुदेवी मातारे। काल असख्या रह्या उगाडा, जरू जड गया जातां रे

॥ म्हां० १० ॥ साल वहोत्तर तीर्थ ओसीयां, गयवर प्रभु गुण गायारे । मूरति मोहन प्रथम जिनन्द की, प्रणमुं पायारे ॥ म्हां० ११ ॥ इति पदम् ॥

८ श्री राणपुरे आदेश्वर भगवान्.

लडवाने आयो दुरो क्यों राख्यो तोरा दाशकों, लड० टेर. लक्षचोरासी मोहे सायब, रमता नव नव रंगः थारे मारे पीत्त पुरांणी, क्युं छोड्यो म्हारो संग हो ॥ ल० ॥ १ ॥ सुमती नारसे प्रीत करी तुम, में कुंमतिके साथ; इतना अन्तर कारणे सतुं, छोड भयो जगनाथ हो ॥ ल० २ ॥ मोहराजाके राजमे सरे, वधीयो म्हारो मान; चार गतिको भयो पावणो, भुल्यो आतमज्ञान हो ॥ ल० ३ ॥ नाटक ज्यूंमें नाचियो सरे, भवमंडलके वीच; मुज सरिषो जगमें नहीं सरे, नीचनीचसे नीच हो ॥ ल० ४ ॥ ज्यूं ज्यूं दुख संभारु सायब, नैणा टपके नीर; थारी मारी देख अवस्था, लगे कलेजे तीर हो ॥ ल० ॥ ५ ॥ सुत्तो जाणी मोहरायकों, छाने आयो भागी; राणपुरे रिसहेश्वर भेट्या, प्रीत पूराणी जागी हो ॥ ल० ॥ ६ ॥ कहांलग कहूं दर्दकी वतीया, सुणीये मित्र मेरा; सौ वातांकी एक वात है, रंग लगादे तेरा हो ॥ ल० ॥ ७ ॥ तेरा ओलम्बा मेरे शिरपे, माफी करदो मुजको; सर्व वात को जाणो सायब, केहना पडे न तुजको हो ॥ ल० ॥ ८ ॥ श्रद्धा खडग

हाथमें लीनो, मिथ्या मोह निदारी, भाग गई सब फोज मो हकी, मिलगई सुमति नारी हो ॥ ल० ॥ ६ ॥ लोक लडाई करे जगतमा, निकले नहि कछु सार, मेरा प्रभुमे करी लडाई, हाथ पकड दीयो तार हो ॥ ल० ॥ १० ॥ पोष सुदी आठम चोमोतर, सब चतुर्विध आयो, ज्ञानसुन्दर जिनभक्तिको रग, राणपुरे बरपायो हो ॥ ल० ॥ ११ ॥

९ श्री समीनाखेडा पार्श्वनाथ

हा पाम मन लागे प्यारो, ज्ञानसुन्दरको जल्दी तारो, उदयापुरके पाममे समीनावालोरे टेर सेहर मादडीसे मे आया, मघ चतुर्विध माथे लाया, जाता केशरीयानाथके. स- मीने आयारे ॥ पाम ॥ १ ॥ सम्प्रतिराजा मन्दिर करायो पू- रण पुण्यभडार भारायो, यात्रा कीनी नाथकी मन आनन्द आयोरे ॥ पाम ॥ २ ॥ शान्तमुद्रा मोहनगारी, आगी रचाई श्रावक भारी, एक नाथके मायन तार्या नरनारीरे ॥ पाम ॥ ३ ॥ आतमअनुभव चगोपमम जागी, कुमतिनार गइ जद भागी, सुमति सखीकी सेजमे पीतढली लागीरे ॥ पाम ॥ ४ ॥ सिद्धचक्रकी पूजा भणीने आनन्द रगमंगल वरतीजे, ज्ञानसुन्दर रसप्रेमका भरप्याला पीनेरे ॥ पाम ॥ ५ ॥ इति

१० श्री धुलेवा केशरीयानाथ

हा केशरीयो कामणगारो, मनडो मोयो नाथ हमारो,

धूरण लागी प्रीतडी धुलेवावालो रे ॥ केश० ॥ टेर. जंगल झाडी पर्वत गेहरा, जिस विच आप किया है डेरा; तीन लोकमे वाज रह्या प्रभु डंका तेरारे ॥ केश० ॥ १ ॥ देश देशका यात्रु आवे, दर्शन करके आनन्द पावे; देखी मुद्रा नाथकी मनडो ललचावे रे ॥ केश० ॥ २ ॥ केशर कीच मचे अति भारी, आंगी रचावे सम्मकितधारी; जगतारण जिनराजने, पूजे नरनारीरे ॥ केश० ॥ ३ ॥ मयूर मग्न ज्यूं घनको रसीयो पुष्पअलिके ज्यूं चित धसीयो, कामणगारो सायबो, मुज मनमें वसीयोरे ॥ केश० ॥ ४ ॥ ओर कामण तो विषसे भरीयो, तूं मुज कामण कबुअ न करीयो; अबके करीयो नाथजी म्हे दरीयो तरीयोरे ॥ केश० ॥ ५ ॥ कामणको फल पूरो पायो, सेहजे नाथ हाथमें आयो; अब नहीं छोडू बापजी, क्यूं रंग लगायोरे ॥ केश० ॥ ६ ॥ फागण सुद एकम रंग वरसे, धुलेवाकि यात्र करसे; ज्ञानसुन्दर सुखसेजमें, शिवनारी वरसेरे ॥ केश० ॥ ७ ॥

११ श्री धुलेवा केशरीयानाथ.

केशरीयो मारो राज विराजे पाहडीदेशमें ॥ केश ॥ टेर. लक्षचोराशीमें भम्यों सरे दुख पायो छू पूरो, आण वहि नहि ताहरी सरे, जीणसे रहगये दूरो हो ॥ केश० ॥ १ ॥ इतना दिन तो उदेय कर्मके, अन्तराय फीरी आडि, कृपा आज आपकि सायब कूटपीटके काढी हो ॥ केश० ॥ २ ॥

सेहर सादडी गोडवाडमें, सघ चतुर्विध साथ, माघ सुद तेरसने भेव्या, राणपुरे जगनाथ हो ॥ केश० ॥ ३ ॥ भाणपुरे सायरे भेव्या, नदामामे नाथ, तीन मन्दिर घोगुदे भेव्या, उदयपुर आदि नाथ हो ॥ केश० ॥ ४ ॥ भव्य तीर्थंकर पद्मनाभादि, घोगान्यो मन्दिर वाजे, समीनेखेडे आगीपूजा, भेव्या पार्श्व मुक्ति काजे हो ॥ केश० ॥ ५ ॥ गौरघन विलास स्वामिवात्सल, कायाचौंकी माया, तीडी और प्रसाद होके, धुलेवे दशन पाया हो ॥ केश० ॥ ६ ॥ शान्त मुद्रा श्याम वर्णकी, मूर्ति लागे प्यारी, रोम रोम हरखायो मारो, अद्भुत रचना धारी हो ॥ केश० ॥ ७ ॥ पूजा माहे पाप बतावे, गई ही यारी फूट, एक न्हेरमें क्रोड भनाका, पातक जावे छूट हो ॥ केश० ॥ ८ ॥ पार्श्व सतानीया रत्नप्रभसूरि, कमला पती निविराजे, ज्ञानसुन्दर जिनभक्ति करता, जीत नगारा वाजे हो ॥ केश० ॥ ९ ॥

१२ श्री धुलेवा केशरीयानाथ

मनमोहन ओलूआरही, फद भेद् हे सखी केशरीयो आय ॥ म० ॥ १ ॥ में तो अती उमगे आवीयो, कीधी कीधी हे सखी यात्रा एह, प्रभु पूजी चित हरखीयो, वूठा २ हे सखी दूधां मेह ॥ म० ॥ १ ॥ दादारा दरबारमें, रयारया हे सखी दीवस पे च्यार, काल गयो जाण्यो नही, लागोलागो हे सखी

अधिको प्यार ॥ म० ॥ २ ॥ वलतां पग पाछो पडे, नही नही हे सखी जाणो सूहाय; छाति फाटे हीयो; हूबके, डवडव हे सखी नैण भराय ॥ म० ॥ ३ ॥ मैं तो क्षणभर जूदो नही रहूं, रहूं रहूं हे सखी दादाको दाश; हाथ जोडी करुं वीनती वेगी वेगी हो प्रभु पूरजो आस ॥ म० ॥ ४ ॥ बालक जाणी तेडजो, कृपा कृपा हो प्रभु कीजो नाथ; ज्ञानसुन्दर जिन चरणमें, माथे माथे हो प्रभु फेरजो हाथ ॥ म० ॥ ५ ॥

१३ श्री पर्युषण स्तवन.

पर्व पर्युषण आये मेरे प्यारे २ सब संघ मीली हरखाये मेरे प्यारे पर्व० टेर. सूरवर गण मीली मीलीके सारा, द्विप नन्दिश्वर जावे; नृत्य करे जिनवरके आगे, आंगी पूजा रचावे मेरे ॥ प्यारे ॥ १ ॥ जे सूरवर वंच्छे नरभवने, ते अवसर मुज लाधो; पर्वपर्युषण आया जांणी, निज आत्मने साधो मेरे ॥ प्यारे ॥ २ ॥ आठ दिवस अठाईमोहत्सव, आरंभ सहु परिहरीये; खंडण पीसण धोवण सारा, वीणज वेपार न करीये मेरे ॥ प्यारे ॥ ३ ॥ प्रातः उठीने जिनवर पूजो गुरुमुख वाणी सुणीये; प्रभावना प्रमौद सूकीजे दांन देईने भव तीरीये मेरे ॥ प्यारे ॥ ४ ॥ दोनू काल प्रतिक्रमणो कीजे, वैरभाव परिहरीये; अष्टम करके कल्पसूत्रकी, नव वाचना चित सुणीये मेरे ॥ प्यारे ॥ ५ ॥ चैत्य परिवाटी सहुसंघ मीलके,

देन जूहरवा जावे, सनत्सरी प्रतिक्रमणो करके, सर्व जीव खमाने मेरे ॥ प्यारे ॥ ६ ॥ इण विध पर्व आराधो प्यारे, आछो मेलो मीलीयो, सगपण मोटो साधर्मीको, ज्ञान कल्पतरु फलीयो मेरे ॥ प्यारे ॥ ७ ॥

१४ श्री पर्युषण स्तवन

हां पर्व पर्युषण आया, जैनाके दिल हरख सवाया, द्विप नन्दिश्वर जायके, सुर आनन्द पायारे ॥ पर्व ॥ टेर ॥ आठ दिवस समतारस चाखो, जूठ वचन मुखसे मत भाखो, पालो शील अगड जीनकी यत्ना राखोरे ॥ पर्व ॥ १ ॥ जिन मन्दिरमें ओत्सव कीजे, मुनिको दान सुपात्र दीजे, चचल माया जाणके नरभव फल लीजेरे ॥ पर्व ॥ २ ॥ कल्पसूत्रको घर लेजावो, ज्ञानजागरणा रात जगावो, मोटो महोत्सव माडके, वरघोडो लावोरे ॥ पर्व ॥ ३ ॥ अष्टम भक्त सुभ भावे कीजे, नववाचना कल्प सूणीजे, जन्ममहोत्सव वीरको, करतां सिव लीजेरे ॥ पर्व ॥ ४ ॥ समत्सरी प्रतिक्रमणो कीजे, लच्छ चोरासी जीव खमीजे, राखो उज्वल भावना, निम कारज सीजेरे ॥ पर्व ॥ ५ ॥ एक स्थान मीलीये सघचारों चैत्य परिवाडी देव जुहारो सामीवत्सल प्रभावना करी आतम तारोरे ॥ पर्व ॥ ६ ॥ रुडी रीते पर्व आराधो, नीठ नीठ मानव भव लाधो, ज्ञानचिंतामण पायके निज आतम साधोरे ॥ पर्व ॥ ॥ ७ ॥ इति

१५ धर्म महात्म स्तवन.

जगमे मीठोरे मीठो मीठो केवलीयोंरो धर्म, जगमें मीठोरे ॥ टेर ॥ कल्पवृक्ष मनःवंच्छितपुरे, चिंतामणि सवचिंताचुरे, पुरे मनोरथ माल जगमे मीठोरे ॥ १ ॥ कामकुंभ जिम कामनापुरे, चित्रावेल्लि रहे नही दुरे, सुखसंपात्ति श्रीकार, जगमें मीठोरे ॥ २ ॥ तीन दिवसको भुखो प्राणी, खीरखंड जीमे आनन्द आणी, प्यासाने सुधारस पान, जगमें मीठोरे ॥ ३ ॥ अनन्तकालको चउगति भमतो, दंडक माहे नाटक करतो, आज मील्यो शुद्ध धर्म, जगमें मीठोरे ॥ ४ ॥ शुद्ध देवगुरु धर्म परखीयों आगम कसोटीकर ओलखीयो, ज्ञान सदा जयकार, जगमे मीठोरे, मीठो मीठो केवलीयोंरो धर्म जगमें मीठोरे ॥ ५ ॥ इति

जयवीयराय.

जय वीयराय जगगुरु, होउममं तुह पभावओभयवं ।
भव निव्वेऊ मग्गणु–सारिया इठ फल सिद्धी ॥ १ ॥
लोग विरुद्धचाऊ गुरुजण पूआ परत्थ करणंच ।
सुहगुरु जोगो तव्वय–णसेवणा आभवमखंडा ॥ २ ॥
वारिज्जइ जइवि निया–णवंधणं वीयराय तुहसमए ।
तहवि ममहुज्ज सेवा, भवे भवे तुम्ह चलणाणं ॥ ३ ॥

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ समाहि मरणंच बोहिलाभोअ।
सपज्जाऊ महएअ, तुहनाउ पणाम करणेअ
सर्व मंगल मांगल्य, सर्व कल्याण कारणम्
प्रधान सर्व धर्म्माण, जैन जयति शासनम् ॥ ५ ॥

अरिहंत चेइयाणं करेमि काउस्सग्गं–वन्दनवत्तियाए पूयणवत्तियाए सकारवत्तियाए सम्माणवत्तियाए बोहिलाभ-वत्तियाए निरुवसग्गवत्तियाए सद्धाए मेहाए धिइए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं अन्नत्थ०। यहां एक नवकारका काउस्सग्ग करके नमो अरिहंताणं कहके काउस्सग्ग पारके नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः केहके एक स्तुति बोलना।

स्तुति.

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमतिपद्म सुपासजी
चन्द सुवधि शीतल श्रीयंस, वासविमल पुरो आसजी
धर्म शान्ति कुंथु अरिमल्लि, मुनिसुव्रत नमि नेमि पासजी
वीर जिनेश्वर रंगे पूजो, पुरे मनोरथ आसजी ॥ २ ॥

खमासमणा देके यथाशक्ति पच्चक्खाण करना।

॥ इति ॥

अथश्री

जैननियमावली

और

सुबोधनियमावली.

जैन-राग और द्वेष रूपि जो शत्रुहे जिन्होंको जितेहै उन्होंको जिन केहते है और सामान्य जिनके अन्दर भी अष्ट प्रतिहार चौतिस अतिश्यादि विभूतिवाले तीर्थकरोंको जिनेन्द्र कहेते है उन्होंके निर्देश कियेहूवे रहस्तेपर चलनेवालोंको जैन केहते है. अन्तराय [illegible] जीवोंको जैनधर्म [illegible]तकाल-परिभ्रमण [illegible] जीवोंको जैनधर्म कि प्राप्ती होना अति दुष्कर है परन्तु इस समय अच्छी सामग्री मीली है वास्ते प्रथम निम्न लिखीत गुणोंको प्राप्त करना खास जरूरीका काम है।



धर्मके सन्मुख होनेवालोंमें १५ गुण होना चाहिये।

१ नितीवान हो, कारण निती धर्मकी माता है।
२ हीम्मत बाहादुर हो, कायरोंसे धर्म नही होता है।
३ धीर्यवान् हो, हरेक कार्योंमें आतुरता न करे।
४ बुद्धिवान् हो, हरेक कार्य स्वमति विचारके करे।
५ असत्यकों धीकारनेवाला हो।
६ निष्कपटी हो, हृदय साफ स्फटक माफिक हो।
७ विनयवान, और मधुर भाषाका बोलनेवाला हो।
८ गुणग्रहाइहो, और स्वात्म श्लाघा न करे।
९ सत्यवान प्रतज्ञा पालक हो।
१० दयावान हो, और परोपकार कि बुद्धि हो।
११ सत्य धर्मका अर्थी हो।
१२ जितेन्द्रियहो। कषायकि मदताहो
१३ आत्म कल्याण कि द्रढ इच्छा हो।
१४ तत्त्व विचारमें निपुण हो।
१५ जिन्होंके पास धर्म पाया हो उन्होंका उपकार कभी भुले नहीं समयपाके प्रति उपकार करे।



जैनधर्मके रहस्तेपर चढनेवालोंमें निम्न लिखत ३५ बोल आवश्य होना चाहिये।

मार्गानुसारीके ३५ बोल ।

(१) न्यायसंपन्न विभव–न्यायसे द्रव्य उपार्जन करना परन्तु विसवासघात, स्वामिद्रोही, मित्रद्रोही चौरी कुड तोल, कुड माप आदि न करे । किसीकी थापण न रखे खोटा लेख न बनावे महान् आरंभवाले कर्मादानादि न करे । अर्थात् लोक विरूद्ध कार्य न करे ।

(२) शिष्टाचार–धर्मीक नीतिक और अपने कुलकि मर्यादा माफिक आचार व्यवहार रखना । अच्छे आचारवालोंका संग और तारीफ करना ।

(३) सरिखे धर्म और आचार व्यवहारवाले अन्य गोत्रीके साथ अपने फर्जनका विवहा (लग्न) करना दम्पतिके आयुष्यादिका अवश्य विचार करना अर्थात् बाललग्न, वृद्धलग्नसे बचना और दम्पतिका धर्म–जीवन सामान्य धर्मसे ही सुखपूर्वक होता है । वास्ते सामान्यधर्म आवश्य देखना ।

(४) पापके कार्य न करना अर्थात् जिस्में मिथ्यात्वादिसे चिकने कर्मबन्ध होताहे या अनर्था दंडपाप न करना और उपदेश भी नही देना ।

(५) प्रसिद्ध देशाचार माफिक वर्तान रखना उद्भट वेष या खरचा न करना ताके भविष्यमें समाधि रहै । आवाक्षनी माफीक खरचा रखना ।

(६) कीसीका भी अवगुन वाद न बोलना जो अवगुनवाला हो तो उन्हीकि सगत न करना तारीफ भी न करना परन्तु अवगुण बोलके अपनि आत्माकों मलीन न करे।

(७) जिस मकानके आसपासमें अच्छे लोकोंका मकानहो और दरवाजे अपने कब्जेमेंहो मन्दिर, उपासरा या साधर्मीभाइयों नजीक हो एसे मकानमें निवास करना चाहिये। ताके सुखसे धर्मसाधन करशके।

(८) धर्म, निति, आचारवन्त और अच्छी सलाहके देनेवालोंकी सगत करना चाहिये ताके चित्तमें हमेशों समाधी बनी रहै।

(९) मातापिता तथा वृद्ध सज्जनों कि सेवाभक्ति विनय करना, आपसे छोटा भी होतो उन्हीका भी आदर करना और सबसे मधुर वचनोंसि बोलना।

(१०) उपद्रववाले देश, ग्राम या मकान हो उन्हीका परित्याग करना चाहिये जेसे रोग मरकी, दुष्काल आदिसे तकलीफ हो। ऐसे देशमें नही रेहना।

(११) लोक निंदने योग्य कार्य न करना और अपने स्त्रि-पुत्र और नोकरोंको पेहलेसे ही अपने कब्जेमें रखना अच्छा आचार व्यवहार सीखाना।

(१२) जेसे अपनी स्थिति है या पेदास हो इसी माफिक खरचा रखना शिरपर करजा करके संसार या धर्म-कार्य में नामून हासल करनेके इरादेसे वेभान होके खरचा न करदेना, खरचा करनेके पेहला अपनिहासयत देखना।

(१३) अपने पूर्वजोंके चलाइ हूइ अच्छी मर्यादाकों या वेषकों ठीक तरहेसे पालन करना कीसीके देखादेख प्रवृती या वेष नही बदलादेना।

(१४) आठ प्रकारके गुणोंकों प्रतिदिन सेवन करते रहना यथा (१) धर्मशास्त्र श्रवण करनेकि इच्छा रखना (२) योग मीलनेपर शास्त्र श्रवणमें प्रमाद न करना (३) सुनेहूवे शास्त्रके अर्थकों समझना (४) समझेहूवे अर्थकों याद रखना (५) उन्हीसे भी तर्क करना (६) तर्कका समाधान करना (७) अनुपेक्षा उपयोगमें लेना या उपयोग लगाना (८) तत्त्वज्ञानमे तल्लीन होजाना शुद्ध श्रद्धा रखना दुसरेकों भी तत्त्वज्ञानमे प्रवेश करादेना।

(१५) प्रतिदिन करने योग धर्मकार्यकों संभालते रेहना, अर्थात् टईमसर धर्मक्रिया करते रहना। धर्महीकों सार समझना।

(१६) पेहले कियेहूवे भोजनके पचजानेसे फिर भोजन करना इसीसे शरीर आरोग्य रेहता है। और चित्तमें समाधी रेहतीहै।

(१७) अपच अजिर्ण आदि रोग होनेपर तुरत आहारका त्याग करना, अर्थात् खरी भूख लागनेपर ही आहार करना परन्तु लोलुपता होके भोजन करलेनेके बाद मीठानादि न खाना और प्रकृतिसे प्रतिकुल भोजनभि नही करना, रोग आनेपर औषदीके लिये प्रमाद न करना।

(१८) संसारमें धर्म, अर्थ, कामको साधतेहूवे भी मोक्षवर्गको भूलना न चाहिये। सारवस्तु धर्मही समझना। और समय पाकर धर्मकार्यामे पुरुषार्थ भी करना।

(१९) अतिथ अभियागत गरीब रांक आदिको दु खी देखके करूणाभावलाना यथाशक्ति उन्हीको समाधीका उपाय करना।

(२०) कीसीका पराजय करनेके इरादेसे अनितिका कार्यको आरंभ नही करना, विनो अपराद किसीको तकलीफ न पहूचाना।

(२१) गुणीजनोंका पक्षपात करना उन्होंको बहू मान देना सेवाभक्ति करना।

(२२) अपने फायदेकारी भी क्युनहो परन्तु लोकों तथा राजा निषेद्ध कीयेहूवे कार्यमे प्रवृति न करना।

(२३) अपनी शक्ति देखके कार्यको प्रारम्भ करना प्रारम्भ कियेहूवे कार्यको पार पहूचादेना।

(२४) अपने अश्रितमे रहेहूवे मातापिता, स्त्रि, पुंत्र, नोकरादिका पोषण ठीक तरहेसे करना। कीसीकों भी तकलीफ नहो एसा वर्ताव रखना।

(२५) जो पुरुष वृत तथा ज्ञानमें अपनेसे वढाहो उन्हीकों पूज्य तरीके वहूमान देना, और विनय करना। तथा गुणलेनेकि कोषीस करना।

(२६) दीर्घदर्शी–जो कार्य करना हो उन्हीमे पेहला दीर्घद्रष्टीसे भविष्यके लाभालाभका विचार करना चाहिये।

(२७) विशेषज्ञ कोइभी वस्तु पदार्थ या कार्य होतो उन्हीके अन्दर कोनसा तत्त्व है वह मेरी आत्माकों हितकर्ता है या अहितकर्ता है उन्हीका विचार पेहले करना चाहिये।

(२८) कृतज्ञ–अपने उपर जिस्का उपकार है उन्हीकों कबी भूलना नहीं, जहाँतक वने वहांतक प्रतिउपकार करना चाहिये।

(२९) लोकप्रीय–सदाचारसे एसी प्रवृति अपनी रखनि चाहियेकि वह सब लोकोंको प्रीय हों अर्थात् परोपकारके लिये अपना कार्य छोडके दुसरेके कार्यकों पेहले करदेना चाहिये।

(३०) लज्जावन्त–लौकीक और लौकोत्तर दोनों प्रकारकि लज्जा रखना चाहिये कारण लज्जाहै सो नितिकि माता

है लज्जावन्तकि लोक तारीफ करते है बहूतसी बखत अकार्यसे बचजाते है ।

(३१) दयालुहो=सब जीवोंपर दयाभाव रखना, अपने प्राणके माफीक सब आत्मावोंकों समझके कीसीकों भी नुकशान न पहूचाना ।

(३२) सुन्दर आकृतिवाला अर्थात् आप हमेशो हस्तवदन आनन्दमे रेहना अर्थात् क्रुर प्रकृति या चीण चीण प्रत्य क्रोधमानादिकि वृति न रखना । शान्त प्रकृति रखनेसे अनेक गुणोंकि प्राप्ती होतीहै ।

(३३) उन्मार्ग जातेहूवे जीवोंको हितबोध देके अच्छे रहस्तेका बोध करना उन्मार्गका फल केहतेहूवे मधुर वचनोंसे समझाना ।

(३४) अन्तरग वैरी क्रोध, मान, माय, लोभ, हर्ष, शोक इन्होंके पराजय करनेका उपाय या साधनों तैयार करतेहूवे वैरीयोंको अपने कब्जे करना ।

(३५) जीवकों अधिक भ्रमन करानेवाले विषय (पाचेन्द्रिय) और कषाय है उन्हीकों दमन करना, अच्छे महात्मावोंकी सत्सग करते रेहना, अर्थात् मोक्षमार्ग बतलानेवाले महात्माही होतेहै सद्मार्गका प्रथम उपाय सत्सग है ।

यह पंतीस बोल सक्षेपसेही लिखा है कारण कठस्थ

करनेवालोंको अधिक विस्तार कीतनी वखत वोजारूप होजा- तेहै वास्ते यह २५ बोल कंठस्थ करके फीर विद्वानोंसे वि- स्तारपूर्वक समझके अपनि आत्माका कल्याण आवश्य करना चाहिये । शम् ।



सम्यक्त्वमूल १२ व्रत.

। गतकालकि आलोचना ।

यह मेरा जीव गतानन्तकालसे भवभ्रमण करतेहूवे कुदेव, कुगुरु, कुधर्म, कुशास्त्र मानाहो श्रद्धाहो परूपना करीहो प्रवृति करीहो स्वपरात्मवोंको सद्रहस्तेसे छोडाके मिथ्यात्वमे डालेहो और २५ प्रकारका मिथ्यात्व सेवन कियाहो उन्हीकों आज म्हे मन, वचन, कायसे वोसिराताहु ।

यह मेरा जीव गतानन्तकालसे भवभ्रमण करतेहूवे जो नया नया शरीर धारणकरके उन्हीको छोडआया है उन्ही शरी- रोंसे बनाहुवा अनेक प्रकारके शस्त्रादिसे अनेक आरंभसारंभ समारंभ होताहो उन्हीकि आतीहूइ क्रियावोंकों म्हे आज देव- गुरु सन्मुख मन, वचन, कायासे वोसिराताहू ।

यह मेरा जीव गतानन्तकालसे भवभ्रमण करताहूवा

प्रणातिपातादि १८ पापकर्म सेवन किया काराया करतेहुवे कोंसा हितादिहो उन्हीकों आज म्हे देवगुरु सन्मुख मन, वचन, कायासे वोसिराताहू ।

। सम्यक्त्वकि शुद्ध अधना ।

(१) देव=अरिहत-वीतराग-सर्वज्ञ-केवली, अठारा दोष[१] रहित और वारहगुण[२] सहित, चौतीस अतिश्य पैंतीस वाणिगुण सयुक्त केवलज्ञान केवलदर्शनमे लोकालोकके सर्व भावोंका एक समयमें जाणे देखे एसे म्हारे देवहै । उन्ही देव और देवकी शान्त मुद्रा मूर्ति उन्होंका वन्दन पूजन उपासना मोक्षार्थे करना । इन्हीके सिवाय जगत्मे अनेक देव केहलातेहै वह रागी द्वेषी मानी मायि जिन्होंका चन्ह या मुद्रामे रहाहूवा राग द्वेष भय क्रुरता एसा लौकीक देवमे मेरी देवबुद्धि नही हैं न देव समझके उपासना करू ।

गुरू-पचमहाव्रत पचसमिति तीनगुप्तीका पालक सताधीस गुणोके धारक दशप्रकारे यति धर्माराधक कनककामणि

---

१ १८ दोष-मिथ्यात्व, अज्ञान, अव्रत, राग, द्वेष, निंद्रा, मोह, दानान्तराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय, वीर्यान्तराय, हास्य, भय, शोक, जुगप्सा, रति, अरति, एव १८ दोष ।

२ अनन्त चतुष्ट और अष्ट प्रतिहार एव १२ गुण ।

के त्यागी रागद्वेषकों जीतनेवाले यथाशक्ति भगवानकि आ-ज्ञासे उद्यम करनेवाले ऐसे मेरे गुरु है इन्हींके सिवाय जो दु-नीयोंके अन्दर गुरु नाम धरानेवाले सारंभी सपरिगृही भंग, गांजा, चडसके पिनेवाले कनककामानिके लालची उन्होंको गुरु बुद्धिकर गुरु नही मानणा ।

(३) धर्म–वीतरागदेवोंकि आज्ञा परिमाणे अहिंस्या-मय धर्म है तथा साधुधर्म और श्रावकधर्म जिस्मे पूजाप्रभाव-ना स्वामिवत्सल सामायिक पोंपद आदि करना यह शुद्ध धर्म है परन्तु लौकीकमें जो यज्ञ, होम, पंड, वलीदान, ऋतुदांन आदि अधर्मकों धर्म मानरखा है उन्हीकों म्हे धर्म नही मानु ।

(४) शास्त्र–जो श्रीअरिहंतदेवोंने अर्थरूप फरमाया और गणधरदेवोंने सूत्ररूप शंकालित कयेहूवे द्वादशांग तथा वर्तमानकालेमे जो वीतरागप्रणित् सूत्रासिद्धान्त है और भी उन्होंकी आज्ञानुस्वार पूर्व महाऋषियोंने प्रकरणादि रचे है जिस्मे भी श्री वीतरागवाणीकों आगे रखी है वह शास्त्र मेरे मनना योग्य है । शेष कुराणपुरणादिकि जिस्मे परस्पर वृरू-द्धता है स्वस्वार्थ साद्य प्रमाणवद्धादि हो यह मेरे मानने लायक नही है

यह सम्यक्त्वकि शुद्ध श्रद्धारखनेवाले भवात्मा-योंको निम्न लिखत नियम आवश्य रखना चाहिये ।

(१) मांस (२) मदिरा (३) वैश्यागमन (४) चौरीकर्मका करना (५) शिकार खेलना (६) परस्त्रिगमन (७) जुवाका खेलना एव ७ कुविशन लोक निंदनिक होनेसे परित्याग करना, तथा विसवासघात करनेका, राजविरूद्ध करनेका परित्याग करना ।

१ वासीविद्दल अनन्तकाय अभद्यादि जोकि प्रचुर जीवोंके पिंड होताहे उन्हीका सदैव त्याग रखना ।

२ महा आरभ महा परिग्रह और कर्मादानादि वैपार जहाँतक वचे वहातक वचाना चाहिये ।

३ जहापर जिनेन्द्रदेवोंका मन्दिर हो वहापर प्रतिदिन भगवानका दर्शन करना ।

४ साधु मुनियोंका योगहो तो मुनियोंके दर्शनकर व्याख्यान श्रवण करना चाहिये ।

५ शालभरमें कमसेकम एक नये तीर्थकि यात्रा करना ।

६ शालभरमें कमसेकम एक स्वामिवात्सल करना ।

७ शालभरमें कमसेकम एक वडी पूजा कराना ।

८ शालभरमें स्वइच्छा न्याय द्रव्यज्ञानखातामे लगाना

सम्यक्त्वके पाच अतिचार

(१) शका–जिनवचनोंमे ससय शकाका रखना

(२) कचा–अन्यमत्तकि इच्छा अनुमोदनका करना

(३) वितगीच्छा करनीका फलके अन्दर शसय रखना

(४) पर पाखंडियोंकि प्रशंस्याका करना

(५) पर पाखंडियोंका अधिक परिचयका करना

इन्ही पांचों अतिचारोंको दूर करना चाहिये

। बारहव्रताकि संक्षिप्त टीप ।

पांचाणुव्रत–मुनिमहाराजोंके महाव्रत होतेहै उन्होंकि अपेक्षा श्रावकोंके अनुव्रत अर्थात् छोटे व्रत है ।

। पेहला व्रत स्थुलप्रणातिपात ।

हलते चलते त्रस जीवोंकों मारनेका पच्चखांण जिस्मे आगर ।

(१) विना जाने (अज्ञानपणे) मरजावेतो आगार

(२) विना देखे मरजावे तो आगार

(३) अनोद्धेरित उदेरणा न करतोंभी मरजावे तो आगार ।

(४) हितकारी बुद्धिसे जीवोंकों बचातेंहूवे मरजावेतो०

(५) अपराधी होतों सामना करनेका आगार है ।

पेहले व्रताकि रक्षणके लिये पांच अतिचार वर्जना

(१) रोसकेवसहो गाडा प्रहारकरना

(२) रोसकेवसहो गाडा बन्धन बांधना

(३) रोसकेवसहो चर्मका छेद करना

(४) रोसकेनसहो भात्तपाणी वन्ध करदेना

(५) लोभकेनसहो अति भार भरदेना

इन्हीं पाचों अतिचारोंकों सदैव वर्जना चाहिये ।

। दुसरा व्रत स्थुल मृषावाद ।

राजदडे, लोकभडे जिसीसे श्रावकोंकि प्रतित न रहै एसा मोटका मृषावाद बोलनेका पचखान ।

(१) कन्याके निमत्त अच्छीकों वुरी और वुरीकों अच्छी छोटीको वडी और वडीको छोटी केहना या निप कन्याकों निर्निप केहदेना २ । इत्यादि

(२) गाय प्रमुख पशुके निमत्त पूर्ववत् ।

(३) भूमिकाके निमत्त-मकान या भूमिका दुसरेकि हो उन्हीकों अपनी करलेना इत्यादि

(४) स्थापीत द्रव्य-थापण रखीहूइकों नटजाना

(५) रीशवत् लेके असत्य गवाइयों भरदेना

। दुसरेव्रतके पांच अतिचार है ।

(१) कीसीपर कुडा कलक देदेना

(२) कीसीकि गुप्तवार्तायोंकों प्रगट करना

(३) कीसीकों असत्य शलाहाकादेना

(४) स्त्रि आदिका मर्मकों प्रगट करना

(५) कीसीपर कुडा लेखका लिखना

इन्ही पाचों अतिचारको सदैव वर्जना चाहिये ।

तीसरा व्रत स्थुल अदत्तादान

राजदंडे, लौकभंडे, जिसीसे जैनधर्मकि लौकोंमे निंद्या हो एसी चौरी करनेका पच्चखांन।

(१) खात्रखीणी–कीसीकीभी तछपत फाडके चौरी करना।

(२) कीसीकी गांट छोडके द्रव्य लेलेना।

(३) कीसीके दीयेहूवे तालेपर दुसरी चावी लगाके द्रव्य लेना।

(४) आते जातेको रहस्तेमे लुटलेना।

(५) चौरी करना तो दुररहा परन्तु रहस्तेमे पडीहूई कोइभी वस्तु धनी होनापर अपने छीपाके रखलेना० वहभी चौरीही कहीजाती है।

। तीसरे व्रतके पांच अतिचार है।

(१) चौरके लायाहूवे कि वस्तु मूल्यलेना।

(२) चौरोंको साहिता (मदद) देना।

(३) वस्तुमे भेल संभेल करना (दीखानाअच्छा देना खराब)

(४) राजविरुद्ध वैपार करना (राजाका हांसलादि चौरना)

(५) कुडा तोला कुडा मापाका करना ।
इन्ही पांचों अतिचारोंकों सदैव वर्जना ।

। चौथाव्रत स्थुल मैथुन ।

राजदंडे, लौकभडे दुःखके देनेवाली एसी परस्त्रिसेवन करनेका पचखान ।

(१) परस्त्रिका पचखान ।
(२) वैश्यादिका पचखान ।
(३) स्वस्त्रिकि भी मर्यादा ।
(४) दिनका मैथुनका त्याग करना ।
(५) अष्टमि चतुर्दशी पुर्णमादि दिनका नियम करना ।

। चौथ व्रतके पाच अतिचार ।

(१) कोइभी ग्रहन न करी एसे कुमारी तथा वेश्यासे
(२) स्वल्पकालके लिये रखीहुइ नोकरादिसे गमन
(३) अनङ्ग क्रीडा वैश्या विधवादिसे गमन करना
(४) स्वसबन्धी सिवाय पारके विवहा नाता करना
(५) कामभोगकि तीव्र अभिलाषा रखना
इन्ही पाचों अतिचारकों सदैव वर्जना चाहिये ।

। पाचवा व्रत स्थुल परिग्रह ।

(१) घर-हाट-हवेली नोरा गाडा मकानातकि सख्या (   ) तथा किंमत र

(२) क्षेत्र जमीन बागबगेचाकि संख्या (   ) किं रु
(३) धन-गीणमों तोलमों मापमों परखमों रु
(४) धान्य, अनाज प्रतिवर्षमें मण
(५) द्विपदजीव-दाशदाशी नौकरादि
(६) चौपद-हस्ती अश्व गाय भेस ऊंठ आदि सरव्या
(७) सूवर्ण-गटीत अघटीत तथा वैपार
(८) चान्दी ,, ,, ,, ,,
(९) कुंभीधात उपर लिखा तथा इन्ही के सिवाय घर विखरी कुंल स्टेट स्वइच्छा मर्यादा करना।

। पंचसे व्रतका पांच अतिचार ।

(१) घर क्षेत्र के परिमाणसे अधिक रखना
(२) धनधान्यके परिमाणसे अधिक रखना
(३) द्विपद चतुष्पदके परिमाणसे अधिक रखना
(४) सुवर्ण चान्दीके परिमाणसे अधिक रखना
(५) कुंभीधातके परिमाणसे अधिक रखना

इन्ही पांचो अतिचारोंको सदैव वर्जना

तीनगुणव्रत-पांचानुव्रत जावजीवतक लियेथे उन्होंके अन्दर भी संक्षेप करनेके लिये यह तीन गुणाव्रत है।

। छटा दिशाव्रत ।

(१) पूर्व दिशामें कोष   (२) पश्चिम दिशामें कोष

(३) उत्तर दिशामें कोप (४) दक्षिण दिशामें कोप
(५) उर्ध्व दिश तथा अधो दिशामें कोप

छटा व्रतका पांच अतिचार

(१) उर्ध्वदिशाके परिमाणसे अधिक जाना
(२) अधो ,, ,, ,,
(३) तीरच्छी ,, ,, ,,
(४) एक दिशाकों कमकर दुसरी दिशामें अधिकजाना
(५) परिमाणसे ज्यादा होनेकि शका होनेपर आगेजाने
इन्ही पाचो अतिचारोंकों सदैव वर्जना

सातमा उपभोग परिभोग व्रत

उपभोग अपने उपभोगमें एक दफे भोगनेमे आवे जो द्रव्यादि खानेमें आने वह पदार्थ, और परिभोग वारवार भोगमें आवे वस्त्रभूषण स्त्रिआदि इन्ही पदार्थोका परिमाण करे जेसे जावजीव तक इतने द्रव्यसे जादा नही खाना एवनिगड, वस्त्रभूषण पेहर-नेका गन्ध, पुष्प, चन्दन आदि विलेपनका परिमाण और भक्षाभक्ष वासी विद्दल मखन मधु और भी वस्तुवोंका काल आदिका विचारपूर्वक व्रत लेना तथा विस्तार गुरुमुखसे सुनना

आठवा व्रत अनर्थादंड

(१) आरतध्यान नही करना जो कार्य होताहै वह पूर्वकृत कर्मोसेही होताहै अगर चोकडीके उदयसे आ भी जावे तोभी अनर्थादंडतो नहीज करना चाहिये, " जं जं भगवया-दीट्ठा तं तं परणंमिसन्ति "

(२) प्रमादके वस होके तेल, घृत, गुल, पाणी आ-दिका भाजन खुल नरखे करण इन्हीमें पंचेन्द्रि मूषादि पडके मरजाते है ।

(३) हिंस्यकारी शस्त्रोंका तथा घरविखरागटी मूप-लादि अनर्था संग्रह न करना कारण उन्होंसे होगा तब हिं-स्याही होगा परन्तु दुसरे काममे नही आतेहै ।

(४) पापोपदेश-अनर्थ कोइको पापकारी कार्यमें प्रेरण नही करनी ।

आठवा व्रतका पांच अतिचार

(१) कदर्प उत्पन्नहो इसी कथाका करना
(२) कुचेष्टा कामविकारवाली चेष्टाका करना
(३) वाचालपणा दिनभर असंबन्ध बकता रहेना
(४ शस्त्रोंकि सजावट तैयार कराना
(५) उपभोगसे अधिक उपकरन संग्रह करना
यह पांचों अतिचार सदैव वर्जना चाहिये

च्यार शिक्षाव्रत प्रतिदिन करनेका है

नौवा सामायिकव्रत ।

(१) द्रव्यशुद्धि–शरीर तथा सामायिकके उपकरणशुद्ध
(२) क्षेत्रशुद्धि–मकान रागद्वेषके कारणवाला नहो।
(३) कालशुद्धि–निवृतिभावका कालहो
(४) भावशुद्धि–दोय करण तीन योग शुद्धहोना
(५) सर्व सावद्ययोगोंका निरूध होना

नौवा व्रतका पाच अतिचार

(१) मनकों सावद्य योगोंका विचारमे वरतायाहो
(२) वचनकों „ „ „ „
(३) कायकों , „ „ „
(४) कम टैममे सामायिक पारिहो
(५) स्मरती न रखीहो तथा ३२ दोप न टालाहो

यह पाचों अतिचारोंका सदैव वर्जना चाहिये

दशवा व्रत दिशाविगासी

जो छठा व्रतमें दिशका तथा सातवा व्रतमें द्रव्यादिकि जावजीव मर्यादा करीथी उन्हांकों संक्षिप करनेके लिये प्रतिदिन १४ नियमका परिमाण करना तथा तीन महूर्त या दश महूर्तकि दिश विगासी करना



दशवा व्रतके पांच अतिचार है।

(१) मर्यादा वहारके क्षेत्रकि वस्तु मगानि
(२) मर्यादाके वहार क्षेत्रमें वस्तु भेजना
(३) शब्दकरके आम्नाय जनाना
(४) रूपकरके आम्नाय जनाना
(५) कंकारादि पुदगलोसें संकेत करना
यह पंचो अतिचारोंको सदैव वर्जना चाहिये

इग्यारवा पौषदव्रत

वर्षभरमें कमसेकम एक पौषद आवश्य करना चाहिये।
(१) आहारका त्याग करना
(२) शरीरकि विभूषा स्नानादिका त्याग करना
(३) ब्रह्मचार्यका पालन करना
(४) वैपारआदि सावद्य वैपारसे निवृतना
(५) आत्माकों धर्मकार्यसे पुष्टवनाना

इग्यारवा व्रतका पांच अतिचार

(१) शय्या संथारेकों ठीक तरहसे प्रतिलेखन नकरे
(२) लघुनित वडिनित भूमिकांकों प्रतिलेखन नकरे
(३) निद्रा विकथादि प्रमाद करे।
(४) पौषदमें आहारादिकि विचारना करे
(५) कालपूर्ण न होनेपरभी पौषद पारे।
यह पांचो अतिचार सदैव वर्जना चाहिये

बारहवा आतिथी सविभागव्रत

मुनिमहाराज तथा साध्वीजीका योग मीलनेपर उत्साव भावसे दानदेना, अन्यथा भावना करना, तथा श्रावक या सम्यग्द्रष्टीको भी अपने घरपर भोजन कराना

(१) मुनिमहाराज पधारनेपर सामनेजाना

(२) आदरपूर्वक आपने घरपर लाना

(३) साधुवोंके योग्य वस्तुकि आमन्त्रण करना

(४) उद्धारभावसे दान अनिलभसे देना

(५) जातेहूवेकों पहूचानेकों जाना, और पधारनेकि विनन्ती करना

बारहवा व्रतके पांच अतिचार

(१) सचितवस्तु करके देनेकी वस्तु ढाकीहो

(२) देनेकीवस्तु सचितपर रखदीहो

(३) वस्तुके धणीकी मालकी फेरीहों

(४) मत्सरभावसे दानका देना

(५) काल अतिक्रमनके वाद--आमन्त्रण करना

यह पाचो अतिचारकों सदैव वर्जना चाहिये

यह संक्षेपसे १२ व्रतकि टीप लिखी है कि कोइभी श्रावक सुखपूर्वक व्रत लेशके। जिस रीतीसे व्रत लेतेहै उसी रीतीसे व्रत पालन करना चाहिये व्रतोंके अतिचारभी साथमे लिखदीयाहै कारण व्रतपालनमे अतिचार टालना पुष्टीकारक

है वास्ते अतिचारपर पुरापुरा ध्यान रखना चाहीये । इस व्रतोंमें औरभी न्युनाधिक मर्यादा करनाहो या विस्तारसे लेना हो वह गुरुमहाराजके सन्मुख लेशक्तेहैं

इन्ही बारह व्रतोंके अतिचारके सिवाय तप तथा वीर्यादिका अतिचारभी है उन्होंपरभी श्रावकवर्गकों ध्यान रखना चाहिये ।

श्रावकोंके १२४ अतिचार

५ सम्यक्त्वके पांच अतिचार है
६० बारहव्रतोंके प्रतिव्रतके पाचपंच अति०
१५ कर्मादानके अतिचार पन्दर
२४ ज्ञानके ८ दर्शनके ८ चारित्रके ८ एवं
२० तपके १२ वीर्यके ३ सलेखनाके ५
____
१२४ अतिचारोंकों टालना जरूरत है

श्रावकवर्गकों निम्नलिखत नियम प्रतिदिन चितारणा चहिये ।

। चौदह नियमोंकी गाथा ।

सचित्त[1] दव्व[2] विग्गइ[3] पणहा[4] तंबोल[5] वथ्थ[6] कुसुमेसु[7] ।
वाहण[8] सयण[9] विलेवण[10] बंभ[11] दिसि[12] न्हाण[13] भत्तेसु[14] ।

॥ गाथाका संक्षिप्त अर्थ ॥

१ 'सचित्त' (जिसमें जीव सत्ता हो, बोनेसे उगे बीजादि) कच्चापानी, हरीशाक फल, पान, हरादातन, निमक आदि ।

२ 'द्रव्य' जितनी चीज मुखमें जावे उतने द्रव्य—जल, मंजन, दातन, रोटी, दाल, चावल, कढी, साग, मिठाई, पूरी, घी, पापड, पान सुपारी, चूरन मसाला आदि ।

३ 'विगय'—६ जिनमेंसे मधु, मांस, मक्खन और मदिरा ये ४ महाविगय अभक्ष्य होनेसे श्रावकको अवश्य त्याग करना चाहिये और शेष (५) घी, तेल, दूध, दही, गुड, खांड अथवा मीठा पक्वान ।

४ 'उपानह'—जूता, बूट, सिलीपर, मोजा आदि जो पावमें पहना जाय ।

५ 'तंबोल'—पान, सुपारी, इलायची, लौंग, पानका मसाला आदि ।

६ 'वत्थ'—वस्त्र (आभूषण 'जेवर' की संख्या भी इसी नियममें धारलेना चाहिये) पगडी, टोपी, साफा, अंग रखा, चोगा, कुडता, धोती, पायजामा, दुपट्टा, चद्दर, अंगोछा, रुमाल आदि मरदाना और जनाना कपडा जो ओढने पहेरनेमें आवे ।

७ 'कुसुमेसु'—फूल, फूलनकी चीजें जैसे—शय्या, पखा, सेहरा, तुरा, हार, गजरा, अत्तर जो चीज सूंघनेमें आवे ।

८ 'वाहन'—सवारी—गाडी, फिटीन, सिगराम, हाथी, घोडा, रथ, पालखी, डोली, मोटर, साईकल, रेल, नाव, जहाज, स्टीमर आदि 'याने चलता—फिरता, चरता, और उडता'।

९ 'शयन'–कुरसी, टेबल, पट्टा, पलंग, गद्दी, तकिया, बिछोना, तखत, मेज, सुखासन आदि सोने वा बैठनेकी चीजे।

१० 'विलेपन'–तेल, केशर, चंदन, तिलक, सुरमा, काजल, उबटना, हजामत, बुरश, कंगा, काच देखना, दवाई आदि जो चीज शरीरमें लगाई जावे।

११ 'बंभ' [ब्रह्मचर्य] स्त्री, पुरुष सुइ दोरेके न्यायसे श्रावक परदारा त्याग और स्वदारासे ही संतोष रखें. उसकाभी प्रमाण करे. इसी प्रकार स्त्रीयोंकाभी समझलेना चाहिये।

१२ 'दिसि' [१० दिशा] शरीरसे इतने कोश (लंबा, चौडा, ऊंचा, नीचा) जाना आना, चिठ्ठी, तार इतने कोस भेजना, माल और आदमी इतने कोश भेजना तथा मंगाना।

१३ 'न्हाण' [स्नान] शरीरसें मोटा स्नान इतनी वेर करना (छोटास्नान) हाथ पैर इतनी वेर धोना।

१४ 'भत्तेसु'–अशन (अन्न), पान (पाणी), खादिम (मेवा–दूध), स्वादिम (पान–सोपारी आदि), ये चारो आहारमेंसे, खानेमें जितनी चीजें आवें सबका कुल वजन करना।

इन चौदह नियमोंके अलावा छकाय और तीन कर्म ये भी बडे उपयोगी होनेसे यहां लिखे जाते है. अतः पूर्वोक्त

नियमोंके साथ इनकीभी मर्यादा करली जावे ताकि इनसेभी बहुतसे पाप रुकजाते हैं

६ काय

१ पृथ्वीकाय–मटी निमक आदि (खानेमें या उप-भोगमें आवे) उसका वजन ।

२ अपकाय–जो पानी पीनेमें या दूसरे उपयोगमें आवे उसका वजन पानीकी जात कूवा, बावडी, तलाव, नदी, नल और मेघ आदिका प्रमाण सख्या भी करना अच्छा है, पानीविना छाना कोइभी काममें न लाना तथा जीवानीका यत्न करना अत्यावश्यकीय है ।

३ तेउकाय-चूल्हा, अगीठा, भट्टी, चिराक आदिका प्रमाण ।

४ वायुकाय–हिंडोले पखे [अपने हाथसे या हुकमसे] जितने चलते होवें उनकी सख्याका प्रमाण 'रुमालसें या कागजसे हवा लेनी यह भी पखेमें गिनी जाती है उसकी जयणा' ।

५ वनस्पतिकाय–हराशाक तथा फलादि इवनी जातके खाने घर सबधी मगाने जीमकी गिनती तथा वजन ।

६ त्रसकाय–त्रसजीव अपराधी, विनापराधीका विचार करना । यह ६ कायका परिमाण करलेना ।

३ कर्म.

१ असी (शस्त्र और औजार) तलवार, बंदूक, तमंचा, बरछी, भाला आदि छुरी, कैंची, चक्कू और सरोता चिमटी आदि औजार।

२ मसी (लिखने पढनेका) कागज, कलम, दावात, पेंसील, वही, पुस्तक, छापा, टाइप आदि।

३ कृषी (कसी) खेती, वगीचे आदिका परिमाण, यह रोजके नियम धारनेकी विधि संक्षेपसें लिखी हैं विस्तार जितना अधिक करिये यांने नाम खोल खोलकर रखिये उतनाही जादा फायदा है.

उपरोक्त चौदह १४ नियम प्रतिदिन चितारणेवालोंके मेरु जितना पाप छुटकर सरसव जितना रहजाता है।

उक्त चौदह नियमोंमेंसे अपने चाहिये उतनी वस्तु रखकर श्रीसुगुरुके मुखारविन्दसें पच्चखाण करले। यदि कभी गुरुमहाराजका योग नहीं हो तो निम्नलिखितानुसार पच्चखाण करलें।

॥ पच्चक्खाणका पाठ ॥

॥ नवकारसी ॥

उग्गएसूरे नमुकारसहियं मुट्ठिसहियं पच्चख्खाइ चउव्विहंपि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नथ्थणाभोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं,-विगइओ

पचक्खाइ अन्नत्थणा भोगेण सहसागारेण लेवालेवेणं गिह-त्थसंसट्टेण उक्खित्तविवेगेण पडुच्चमक्खियेण महत्तरागारेण सव्वसमाहिवत्तियागारेण, देसावगासिय उवभोगपरिभोग पच्चक्खाइ अनत्थणाभोगेण सहसागारेण महत्तरागारेण सव्वस-माहिवत्तियागारेण वोसिरे ।

॥ पच्चक्खाण पारनेका पाठ ॥

उग्गएसूरे नमुक्कारसहिय पोरिसिय मुट्ठिसहिय पचक्खा-ण किया चउव्विहपि आहार पचक्खाण फासिअ पालिअ सोहिअ । तीरिअ किट्टिअ आराहिअ ज च न आराहिअ तस्स मिच्छामि दुक्कड । पीछे एक नमस्कार मंत्र पढे । शम् ।

१ विदल॰ जिस अन्नकी दो दाल (द्विदल) होजाय, और जिसमेंसे तेल नहीं निकले, उस अन्नको कचे दूध, दहीं, छाशके साथ अर्थात् मिलायके खाना बडा दोष कहा है दहीं वगैरह खुन गरम करके खानेमें विदलका दोष नहीं है ।

२ आचार मंत्र तरहका (संधान) ३ रोज बाद अ भक्ष्य होजाता है ।

३ कंदमूल ३२ अनन्तकाय यह सबसें ज्यादे दोषकी चीज होनेसें बिलकुल छोडने लायक है ।

४ ऋतुधर्मवाली औरतोंको २४ पहर गृहकार्य न करना चाहिये ।

५ विवाह, सादीमें वैश्या, आतशबाजी आदि कुरि-वाजका त्याग करना चाहिये ।

६ खराब गालीयोंको गानेका कितनेही लोगोमें बहुत प्रचार है उसका भी त्याग करना चाहिये ।

७ बाळ लग्न और वृद्ध विवाह वा कन्याविक्रय आदि कुरीतीयांको मिटादेना चाहिये याने उपरोक्त प्रवृत्तिसे बहुत हानी होती है ।

८ अपने बच्चे और कन्याओंको नीति और धर्मशास्त्र-की शिक्षाके लिये पाठशाला आदिका प्रबन्ध करना चाहिये।

प्यारे जैनी भाइयों ! इस लघु किताब द्वारा नित्य देव-गुरु वंदन या १४ नियम चितारके अवश्य लाभ लेना चा-हिये । इति शम्.



अथश्री

जिनमन्दिरोंकि ८४ आशातना



शास्त्रकारोंने २५ प्रकारका मिथ्यात्व बतलायेहैं जिस्में आशातनाकोंभि मिथ्यात्व मानाहै वास्ते जिनेन्द्रदेवोंके भक्त जिनमन्दिरमे जाते समय निम्न लिखत आशातनाओंको आवश्य वर्जना चाहिये, आशातना उन्हीका नाम है कि जो पूर्वाचार्योंने जो जो कायदा बान्धा है उन्हीमे खीलाप वर्तन करना या बेअदबी, बेदरकारी रखना इन्ही आशातनाओंसे भवान्तरमे जीव दुर्लभबोधी होताहै वास्ते भवभिरू आत्मावोंको आशातना टालके बहु मानपूर्वक जिनभक्ति करना चाहिये जिनभक्तिका फल शास्त्रकारोंने यावत् मोक्षका बतलायेहै ।

८४ आशातना

(१) जिनमन्दिरमें मुहका खेल खंखारटालना
(२) ,, जुवे पत्ता चोपट सतरंजादिका रमना
(३) ,, आपसमे क्लेश कदाग्रह गलीगुसा देना
(४) ,, धनुषादि कलारीक करना सीखना सीखाना

(५) ,, मुह धोना दान्तण करना पचकारी माफीक कुरला करना
(६) ,, पान-सोपारी आदि तंबोलका खाना
(७) ,, खायेहूवे तंबोलका कचरा (चुशा) डालना
(८) ,, टंटा-फीसादका करना
(९) ,, टटी पैसावका करना (चैत्यके आसपासमे)
(१०) ,, हाथ-पगका प्रक्षालन करना (धोना)
(११) ,, दाडीमुन्छके केशोंकों समारना जमाना
(१२) ,, नख रोमका समारना वहापर डालदेना
(१३) ,, रूद्र (लोही) डालदेना सांफ नकरनादि
(१४) ,, मेवा पकवानादिका खाना, वंटना
(१५) ,, गडगुम्बडके सडाहूवा चर्म डालना
(१६) ,, औषधि खाके पितआदि डालना
(१७) ,, वमन (उलटी) का करना तथा साफ नकरना
(१८) ,, दान्त तुटाहूवा डालना
(१९) ,, हास्तपावोंका धोना मालसका करना
(२०) ,, अश्वादिको मन्दिरमें वन्धना खीलाना
(२१) ,, दान्तोंका मेल (कचरा) डालना
(२२) ,, आखोंका मैल मन्दिरमें डालना
(२३) ,, नख या नखोंका मैल डालना
(२४) ,, नाकका मैल मन्दिरमें डालना

(२५) ,, गलाका मैल ,, ,,
(२६) ,, मस्तकका मैल ,, ,,
(२७) ,, शरीरका मैल ,, ,,
(२८) ,, कानका मैल ,, ,,
(२९) ,, भुतपिशाचादिकका मत्रसाधन करना
(३०) ,, राजादिकके कार्यका निचार करना
(३१) ,, लग्नादि कार्यकि पांचायतीका करना
(३२) ,, व्यापारादिका हीमावका करना
(३३) ,, भाई या पातीदारों धनादिका विभाग करना
(३४) ,, अपने घरका भडारहो वहा मन्दिरजीमें रखना
(३५) ,, एक पगपर दुसरा पग छडाके बैठना
(३६) ,, मन्दिरजीकी भीतपर छाणा थापे तथा डेर लगावे
(३७) ,, अपना वस्त्रादि मन्दिरजीमें सुकावे
(३८) दालका दलना–मन्दिरजीका पत्थरले दालदले
(३९) पापड वडीयों मन्दिरजीमें या डागले सुकावे
(४०) ,, कयर सगरी आदि शाक सुकावे
(४१) ,, राजा आदि लेनदारके भयसे मूल गुभारादिमे छीपे
(४२) ,, पुत्रकलित्रा आदिके मरणासे मन्दिरजीमे रेवे
(४३) ,, चारप्रकारकी निकथा करे गप्पोमारे

(४४) ,, वाण इक्षु आदिका वडना समारना वन्धना
(४५) ,, गाय वेहल आदिको अन्दर वन्धे
(४६) ,, शीत निवार्णको अग्नितापना, तापमें वेठना
(४७) ,, धान्यादिका पचाना, रांधना, वेठना
(४८) ,, रूपइये या झवरायत परखे लेनादेना करे
(४९) ,, विधिसे नैषेधं करीहूइ क्रियाका करना
(५०) ,, जुता वुट आदिको मन्दिरजीमें लेजाना
(५१) ,, छत्र छत्री आदिको ,, ,,
(५२) ,, शस्त्रादि ,, ,,
(५३) ,, अपने रखनेका चमर ,, ,,
(५४) ,, मनकों चपल विषय कषायमे प्रवृति कराना
(५५) ,, तेलादिंसे शरीरका मर्दन करना
(५६) ,, अपने शरीरके भोगका पुष्पादि अन्दर लेजाना
(५७) ,, अपने धारन करने योग्य जो भूषण—कुंडल-
हार कडे आदि है उन्हीकों वाहार छोडके
निर्धनके माफिक मन्दिरजीमें जाना इन्हीसे
शासनकि लघुता होतीहै वास्ते यथायोग्य
भूषीत होके ही मन्दिर जावे अगर एसा न
करे तो आसातना होतीहै
(५८) ,, भगवान्‌कि शान्त मुद्रा देखतेहि हाथ नजोडेतो
(५९) ,, एक साटिकाके उत्तरासन न करेतों

(६०) ,, मस्तकमे मुकुट पेहरके जावेतों
(६१) ,, शिरपर पागके उपर लपेटा या जाडीयो बन्धके जावेतो ,, देशाचारकि बात अलगहै
(६२) ,, पुष्पोंका सेहरा शिरपे पेहरके जावेतों
(६३) ,, नालेयर आदिका छाव डालेतों
(६४) ,, गेंदडी आदिसे खेलेतो
(६५) , पिता आदि सज्जनोंमे जुहार करेतों
(६६) ,, भाड कुचेष्टा आदि करनेसे
(६७) ,, किसीका तीरस्कार करे, रेकारा, तुकारादेवेतो
(६८) ,, लेहने, देनेके लिये मन्दिरजीमे धरणादेवेतो
(६९) ,, सग्रामकरे-मारामारी आदि करेतो
(७०) ,, मस्तकका केशादि सुकाने कांगसीयासे समारेतो
(७१) ,, पालटीमारी बेसे तथा शय्याकर शयन करेतो
(७२) ,, कष्टादिकि पादुका पगोंमें पेहरके जावेतों
(७३) ,, पग पसारे पथारे चपाने घनकी दीरावेतो
(७४) ,, सुगन्धद्रव्ये स्नानमज्जन करना
(७५) ,, हस्त मुख पगादिधोके किचड करेतो
(७६) ,, पगोंकि लगीहुइ मटीधुल मन्दिरमें खेरेतों
(७७) , विषयकारी वार्ताकरे औरतोंको गरागर देखेतो
(७८) , मैथुन सम्बन्धी वार्तायों करे या मैथुन सेवेतो

(७९) ,, कांटा भुरंट जुवे आदि डालदेवेतो
(८०) ,, भोजन करना पाणीपीना तमाकु सुघनादिसे
(८१) ,, वीगर अदवीसे वस्त्रादिका पेहरना कि जिन्होंसे दुसरेको सरमानापडे
(८२) ,, क्रियवि.क्रियकरे वैद्यक ज्योतीपादिका कामकरे
(८३) ,, मन्दिरजीके पाटपाटलादिपर सेवेतो
(८४) ,, पाणी पीनेकेलिये मटका रखे या मन्दिरजीके पनालसे पानी जलके अपने घरके काममे लेवे तथा मन्दिरजीमे स्नान करनेकी जगा वनावे

इत्यादि आसातना होतीहै इन्हीको मोक्षार्थी भव्यात्मा आवश्य ख्यालमे लेके आप आसातना न करे और दुसरा करताहो तो मधुर वचनोसे समझाके आसातना टलावेगा तो वहूत लाभका करन और भवान्तरमे सुलभवोधी होगा

कितनेक लोक सामान्य आसातनावोंको टालते है परन्तु महान् आसातना जेसे भगवान्के नामसे भाडासके लिये मकान वनाना वाग वगेचे ऊंट गाडीयो आदिका कारखाना खोल देतेहै । और मन्दिरजीका मकांन भी कीतनेक स्थानपर तो एसे लोगोंको भाडे दीये जातेहै की जैनोंको नकरनेयोग कार्य उन्ही मकांनोंमे होतेहै तो क्या यह आसातना नहीहै नजाने उन्हीं लोकोंको क्या लोभाग्नि जागृत हूइहै, शास्त्रकारोंका

फरमान है कि मन्दिर मूर्ति मोक्षार्थीयोंकों एक मोक्षमार्गका साधनभूतहै परन्तु लोभानन्दीयोंके हाथमे ममत्त्व भावमे उलटी बादक होजाते है वास्ते आत्मार्थी भाइयोंकों लोभवृति त्यागकर आसातनागोंसे बचना चाहिये ।

कीतनेक स्थानपर श्रावकलोक बीलकुल आलसी और प्रमादी पुरुषार्थ हीनबन बेठहै और मन्दिरजी ननाने सेवक भोजक ब्राह्मण माध रावल लोकोंको रजिष्टर ही करदीयाहो नह मिथ्यात्वी लोक अपने मनमाने वरताव मन्दिरजीमें करते है सेठजीतों दर्शन करनेको भी नासते भागते आतेंहै अगर पूजाभी करनीहोतों केशर चन्दन तैयार रेहतेहै झट एक टीकी इदर दुसरी उदर देके अपनी वेगर निकालदेते है जहा देखा जावे वहा मिथ्यात्वी पूजेरोंका इतनातो फेल बदगयाहै की कीसी प्रकारकी आसातना करनेपरभी कोइ कहेनेवाले नही मीलतेहै अगर कोइ कहेतोभी दुसरेभाइ कहदेतेहैकि यह पूजारी नाराज होजायगातो मन्दिरजी कोनपूजेगा क्या जैनोंकी बाहदुरीहै जिन्हीके जरिये अपनी आत्माका कल्याण मनतेहै और उन्ही मन्दिरोंकी कुच्छभी सार नही करना क्या यह इसभव और परभवमें हितकारीहोगा ? आत्मबन्धुवों यह काम नोकरोंसे लेनेका नहीं है किन्तु इसमे आत्मकल्याण समझके अपने हाथमे करनेकाहै नोकरोंसेतों कचरा नीकलाना बरतन गमाना या बाहारका कामलो मूल गुभारामें अपने हाथमे सब काम करना चाहिये किमधिकम् ।

भगवानके समोंसरण या मन्दिर तथा साधुवोंके व्याख्यानमें जानेवाले भाइयोंको अव्वल पांच अभिगम और दश त्रिकको ध्यानमें रखना चाहिये।

पांच अभिगम

(१) सचितपदार्थ–अर्थात् अपने उपभोगकी सचित वस्तुवें पुष्पोंका हार गजरा, गुच्छा, मालादि तथा खानेका पान औरभी कोइप्रकारका सचित द्रव्यहो उन्हींकों बाहार रखना चाहिये।

(२) अचितपदार्थ–अपनेपासमें जो अचित्त पदार्थ है वहभी अन्दर लेजाने योग्यहो वह अन्दर लेजावे और बाहाररखने योग्य जो मुकट चमर छत्र जूता तलवारादि शस्त्रकों बाहर रखदे जो पास्मे वस्त्रादि रहे वहभी देशचाल माफीक जेसे राजादिपास जातीवखत शोभनिय वस्त्रभूषण पेहरेजातेहैं वैसे उन्सकोभी ठीक संभालके रखे।

(३) एक शाहिका उत्रासन–द्रव्यभावसे शौचहोके मन्दिर जावे उन्सीवखत अच्छे वस्त्र जोकी वीचमे खीलाहूवा नहो उन्सीका उत्रासन करे।

(४) प्रभुकि शान्तमुद्रा देखतेही दोनोहस्त जोडके मस्तकपर चडाना और नमस्कारकर अच्छगुणोंयुक्त भगवानकि स्तुति करे।

(५) मन, वचन, कायाके योग्योंकों सावद्य वैपारसे रोकके भगवानकि भक्तिमे तल्लीन बनादेवे ।

। दशत्रिक–मन्दिरजीमें रखनेकाहै ।

(१) निस्सिहीत्रिक–जिनमन्दिरमें जानेवाले आत्मबन्धुवोंकों तीन स्थानपर निस्सिही शब्दका उच्चारण करना चाहिये यत् (१) मन्दिरजीके द्वारपर पहूचतेंही " निस्सिही " कहना मतलबकि अबमे ससारसबन्धी कार्यसे निवृतिहूवाहू फिर कीतनाही काम क्यु नहो परन्तु ससारसबन्धी कुच्छभी वार्तालाप नकरना (२) प्रदिक्षणा देनेकेबाद " निस्सिही " कहना कारण पहले निस्सिहीमें ससारकार्य छोडाथा परन्तु मन्दिरजीकी फूटटूट कचारादि आसातना टलाना श्रावकका फर्जहै यह सब करना या देखना राहाथा वहकरके अब दुसरीदफे " निस्सिही " मे उन्हीसें भी निवृतताहू (३) द्रव्यपूजा करनेकेबाद " तीसरी निस्सिही " जो दुसरी निस्सिहीमें घर और मन्दिरजीके कार्यसे निवृतिहूवाथा परन्तु द्रव्यपूजा करनाथा वहभी होजानेके बाद निस्सिही कहके अबमें द्रव्यपूजासेंभी निवृततांहू फिर भावपूजाकरे यह निस्सिहीत्रिकके माफीक वर्त्ताव रखना चाहिये।

---

१ आचार्योंका मतहैकी घरसे निकलतेंही " निस्सिही ' कहना चाहिये फिर रहस्तेमे भी समार सबन्धी वार्ता न करना चाहिये ।

(२) प्रदिक्षणात्रिक—मन्दिरजीमे प्रवेशहोंतेंही भगवानको नमस्कारकर स्तुति करना बादमे ज्ञान दर्शन चारित्रपद आराधनार्थे प्रभुके दक्षाणावृतन तीन प्रदिक्षणादेवे मतलब तीनलोकका भवभ्रमण मीटाके ज्ञानादिकी प्राप्तीहो । एसी भावना रखे ।

(३) नमस्कारत्रिक—नम्रतापूर्वक पंचांग नमाके तीन दफे नमस्कार करें इन्हींसे निच गौत्रका नास और उच्च गौत्रकी प्राप्ती होतीहै ।

(४) पूजात्रिक—“ अंगपूजा ” सुगन्ध द्रव्यसे विवध प्रकारसे प्रभुकि नवांग पूजा करे “ अग्रपूजा ” अच्छे स्वच्छ प्रभुयोग्य पुष्प फल नैवद्य धूप आदि प्रभुकों चडाना ‘ भावपूजा ” चैत्यवन्दन स्तवनादिक प्रभुके गुणोंका समरणकर अपनि आत्माकों पवित्र बनाना ।

(५) अवस्थात्रिक—प्रभुकि तीन अवस्थाका ध्यान (१) पिंडस्थावस्था० (२) पदस्थ० (३) रूपातीत० जिस्मे पिंडस्थावस्थाके तीन भेदहै (१) जन्मावस्था (२ राज्यावस्था (३) श्रमणावस्था इन्होंका विचार करना और पदस्थावस्था जोकी केवलज्ञानोत्पन्न होनेपर समौसरनमें देशना देतेहुवेका ध्यान और सिद्धपद निरंजननिराकारका ध्यान करना उन्होंको रूपातीतावस्था कहतेहै इन्होंका भिन्न भिन्न ध्यान करना ;

(६) दिशात्रिक–उर्ध्व, अधो, तीच्छीदिशा इन्ही तीनों दशावोंको छोडके केवल प्रभुसन्मुखही देखना और ध्यान करना यहापर इतना विचार आवश्य करना चाहिये कि जिन्हीं जिनालयोंमे इन्द्रिय पोषक पदार्थ जैसे मनोहर स्वरूप वाली पुतलीयों और भी पदार्थोंसे चकचकाट करताहो वहांपर यह त्रिक पालनहोना मुशक्लि है अगर श्वेत साफ स्थानहोतो यह त्रिक पालन करनेवालोंको अच्छा सुभिता रहताहै ।

(७) प्रमार्जनत्रिक–जहाँपर चैत्यवन्दन कियाजाताहै वहापर भूमिकाको तीनदफे प्रमार्जन करना चाहिये जिन्होंमे जीवयत्ना और शुद्धोपयोग रहेशके ।

(८) वर्णत्रिक–चैत्यवन्दनादि बोलते वखत अक्षरका शुद्धोचारण करना (१) वर्णशुद्धि–शुद्ध अक्षरका उच्चारण करना (२) अर्थशुद्धि–कियेहूवे उच्चारणका शुद्ध अर्थपर उपयोग रखना (३) मनशुद्धि–मनका आलम्बन एक जिनप्रतिमापरही रखे अर्थात् अर्थ सहित स्तवना करतेहुवे आत्माको भगवानके गुणोंमे तल्लीन बनादे ।

(९) मुद्रात्रिक–(१) योगमुद्रा–पद्मकोशाकारे दोनों हाथ परस्पर अगुली मीलाके मुद्रा करना (२) जिनमुद्रा–काउस्सगमें उभारेहना (३) मुक्ताशुक्तिमुद्रा–सीपके माफिक दोनों हाथ जोडना इस मुद्रासे प्रणिधान जयवीयरायादि करना इन्हींके सिवायभी ३६ मुद्रा होतीहै ।

(१०) प्रणिधानत्रिक– १) जिनवन्दन० जावंति चेइ-आई दि (२) मुनिवन्दन० जावंतिकेविसाहुंदि (३) प्रार्थना० जयवीयराय यावत् आभवमखंडा तक केहना ।

जिनमन्दिरमें पुरुष जीमणेपासे वैठके प्रभुकोवन्दे और स्त्रियों डावेपासे बेठकेवन्दे । दोनों भगवानसें जघन्य ६ हाथ उत्कृष्ट ६० हाथ दुर बैठकेवन्दे । वन्दन भी तीन प्रकारके हैं जघन्य एकाद स्तुति कहके शक्रस्तव कहै या अरिहंत चेइआणीवा कहके एक स्तुति कहना । उत्कृष्ट पांच दंडक सहित जयवीयरायतक और जघन्य तथा उत्कृष्टके अन्दरका वन्दनहै उसे मध्यम चैत्यवन्दन कहतेहै ।

इस लघू कीताबके अन्दर लिखीहूइ ८४ आसातना टालके पंचाभिगम धारनकरे और दशत्रिककों अमलमेंलाके प्रभुपूजा करनेवाला भव्यात्मा जघन्य तीन और उत्कृष्ट पन्दरा भवमें अक्षय सुखको प्राप्त करताहै प्रभुपूजाकेलिये भी एक लघु कीताब लिखीगइहै उन्हीकोभी आवश्य पढना चाहिये इत्यलम् ॥

। समाप्तम् ।



अथश्री

॥ जिनस्तुति ॥

—⊰(◎)⊱—

(१)

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिता सिद्धिश्चसिद्धिस्थिता,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकरा. पूज्या उपाध्यायका: ।
श्रीसिद्धान्त सुपाठकामुनिवरा' रत्नत्रयाराधका ।
पञ्चैते परमेष्टिन प्रतिदिन, कुर्वन्तुवोमङ्गलम् ॥ १ ॥

(२)

किंकर्पूरमय सुधारसमय किं चन्द्ररोचिर्मय
किं लावण्यमय महामणिमय कारुण्य केनलीमय
विश्वानन्दमय महोदयमय शोभामय चिन्मय
शुक्लध्यानमय निपुर्जिनपते. भूयाद्भवालम्बनम् ॥

(३)

पूर्णानन्दमय महोदयमय कैवल्यचदङ्मय
रूपातीतमय स्वरूपरमण स्वाभाविकीश्रीमय ।
ज्ञानोद्योतमय कृपारसमय स्याद्वाद् नियालय
श्रीसिद्धाचलतीर्थराजमनिश वन्देऽहमादीश्वरम्

(४)

नेत्रानन्दकरी भवोदधितरी, श्रेयस्तरोमञ्जरी
श्रीमद्धर्ममहानरेंद्रनगरी व्यापल्लताधूमरी ।
हर्षोत्कर्षशुभप्रभावलहरी रागद्वेषांजित्वरी
मूर्तिः श्रीजिनपुंगवस्यभवतु श्रेयस्करीदेहिनाम्

(५)

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधाःसंश्रिता
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो, वीरायनित्यंनमः ।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्यघोरंतपो
वीरेश्रीधृति कीर्तिकान्ति निचयश्रीवीरभद्रंदिशः ॥

(६)

देवोऽनेक भवार्जितोर्जित महापाप प्रदीपानलो
देवः सिद्धि वधू विशाल हृदयाऽलंकारहारोपमः ।
देवोऽष्टा दशदोष सिंधुर घटानिर्भेद पंचाननो
भव्यानां विदधातु वांछितफलं श्रीवीतरागोजिनः

(७)

ख्यातोऽष्टापद पर्वतो गजपद सम्मेत शैलाभिधः
श्रीमान् रैवतकः प्रसिद्ध महिमा शत्रुंजयो मंडपः ।
वैभार कनकाचलोऽर्बुदगिरिः श्रीचित्रकूटादय
स्तत्रश्रीऋषभादयो जिनवराः कुर्वन्तुवो मंगलम्

(८)

विश्वव्यापीयश' प्रभाव निभव सद्भूतभक्त्यानता,
प्र।तानल्प निकल्पजल्पकमला, सकल्पकल्पद्रुमम् ।
स्फूर्जत्कजल मच्छुलच्छवितन श्रीपार्श्वदेवस्तवे
जीरापल्लिपयोधिनेमिमहिला भालस्थलालङ्कृति. ।

(९)

ग्रामस्वाम्यमरो मरीचिरमृताहार परिव्राजक
षोढाचामृतभुक्भवोऽतिबहुल श्रीविश्वभूतिर्मरुम्
विष्णुर्नरयिको हरिश्चनरके भ्रान्तिर्भवान्तेनहु
श्चक्री।नाकिनरोऽथनन्दननृपःस्वर्गेऽवतात् त्रैशल

(१०)

जगत्रयाधार कृपावतार दुर्वार ससार विकारवैद्य
श्रीवीतरागत्त्वयिमुग्धभावाद्विज्ञप्रभोविज्ञापयामिकिंचित् ।

(११)

किं बाललीला कलितोनबालः पित्रो'पुरो जल्पति निर्विकल्पः।
तथा यथार्थ कथयामिनाथ निजाशय सानुशयस्तवाग्रे ॥

(१२)

दत्त नदान परिशीलितच नशालिशील नतपोऽभितप्त ।
शुभो नभावोऽप्यभवद्भवेऽस्मिन् विभोमया भ्रात महोमुधैव

(१३)

वैराग्यरगः परवचनाय, धर्मोपदेशो जनरजनाय

वादाय विद्याऽध्ययनंचमेऽभूत् कियद्ब्रुवेहास्यकरं स्वामीश ॥

(१४)

परापवादेन मुखं सदोषं, नेत्रं परस्त्री जनवीक्षणेन ।
चेतःपरापाय विचिंतनेन, कृतं भविष्यामिकथं विभोऽहम् ॥

(१५)

किं भावी नरकोऽहं किमुत बहुभवो दुरभव्योनभव्यः
किंवाहं कृष्णपक्षी किमुचरमगुणस्थानकः कर्मदोषात् ।
वन्हि ज्वालेवशिक्षा व्रतमपिविपवत् खड्गधारा तपस्या
स्वध्यायःकर्णशूची यमइव विषमः संयमो यद्विभाति ॥

(१६)

तुभ्यं नमस्त्रि भुवनार्तिहरायनाथ
तुभ्यंनमः क्षितितलामलभूषणाय
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमोजिन भवोदधि शोषणाय

(१७)

श्रीसर्वज्ञ ज्योतीरूपं विश्वाधीशंदेवेन्द्रं
काम्यागारं लीलागारं साध्वाचारंश्रीतारम् ।
ज्ञानोद्धारं विद्यासारं कीर्तिस्फारं श्रीकारं
गीर्वाणैर्वन्द्यांसानन्दंभक्त्यावन्देश्रीपार्श्वम् ॥

(१८)

सरसशान्ति सुधारस सागर शुचितरं गुणरत्नमहाकरम् ।

(१३)

भविकपङ्कज बोधदिवाकर प्रतिदिन प्रणमामिजिनेश्वरम् ॥

(१६)

यदीय सम्यक्त्वबलात्प्रतीमो भवादशानां परम स्वभाव।
कुवासनापाशनिनाशनाय नमोऽस्तुतस्मै तवशासनाय ॥

(२०)

भव्याम्भोज विबोधनैकतरणे विस्तारिकर्मावली
रम्भासमाज नाभिनन्दन महानष्टापदाभासुरै.।
भक्त्या वन्दितपादपद्मविदुषासपादय प्रोज्झिता
रम्भासामननाभिनन्दनमहानष्टापदभासुरै' ॥

(२१)

विपुलनिर्मलकीर्तिभरान्वितो, जयति निर्जरनाथनमस्कृत.।
लघुविनिर्जितमोहधराधिपो जगतिय प्रभुशान्तिजिनाधिप ॥

(२२)

विहित शान्तसुधारसमज्जन, निखिलदुर्जयदोष विवर्जितम्।
परमपुण्यवता भजनीयता गतमनन्तगुणै सहितसताम् ॥

(२३)

सुवर्णवर्ण गजराज गामिन प्रलम्बबाहु सुविशाललोचनम्।
नरामरेन्द्रैःस्तुतपादपङ्कज नमामिभक्त्यावृषभजिनोत्तमम् ॥

(२४)

अशोकवृक्ष सुरपुष्पवृष्टि र्दिव्यध्वनिश्चामरमासनच।
भामण्डलदुन्दुभिरातपत्र सत्प्रातिहार्याणि जिनेश्वराणाम् ॥

(२५)

अनन्त विज्ञान विशुद्धरूपं निरस्तमोहादि परस्वरूपम् ।
नरामरेन्द्रैः कृतचारुभक्तिं नमामि तीर्थेशमनन्तशक्तिम् ॥

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमः प्रभुः
मंगलं स्थूल भद्राद्या, जैनोधर्मोऽस्तु मगलं । १
भवबीङ्कुरजनना, रागाद्याः क्षयमुपागता
यस्यः ब्रह्मावा विष्णुर्वा, हरो जिनोवा नमस्तस्मै । २
अद्यमेसफलं जन्म, अद्यमे सफलाक्रिया ।
शुद्धोदिनोदयोदेव. जिनेन्द्र तवदर्शनात् ॥ ३ ॥
अद्यमेक्षालितंगात्रं, नेत्रेच विमलेकृते
स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु, जिनेन्द्र तवदर्शनात् ॥ ४ ॥
अद्य मिथ्याअन्धकारश्च, हतोज्ञान दिवाकरः ।
उदेतिस्म शरीरेऽस्मिन्, जिनेन्द्र तवदर्शनात् ॥ ५ ॥
युगादि पुरुषेन्द्राय, युगादि स्थितिहेतवे ।
युगादि शुद्ध धर्माय, युगादि मुनयनमः ॥ ६ ॥
दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनं ।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥ ७ ॥
दर्शनेन जिनेद्राणाम्, मुनिनापाद सेवया ।
नतिष्टते चिरंपापं, मामपात्रमिवांभसा ॥ ८ ॥
पाताले यानि विंवानि, यानि विंवानि भूतले ।

स्वर्गेच यानि बिंबानि, तानि वन्दे निरन्तरम् ॥ ९ ॥
जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति दिने दिने ।
सदामेस्तु सदामेस्तु, सदामेस्तु भवेभवे ॥ १० ॥
नहित्राता नहित्राता, नहित्राता जगत्रये ।
वीतराग समो देवो, नभूतो न भविष्यति ॥ ११ ॥
नमस्कार समो मन्त्र, शत्रुंजय समोगिरि ।
वीतराग समो देवो नभूतो न भविष्यति ॥ १२ ॥
ॐकार विंदु सयुक्त, नित्य ध्यायन्ति योगिनः ।
कामद मोक्षद चैव, ॐकाराय नमोनम ॥ १३ ॥
इन्द्रोपन्द्रौ पुनर्नत्वा, जिनेन्द्रमथ नेमिनम् ।
प्रारेभाते स्तोतुमेव, गिराभक्ति पवित्रया ॥ १४ ॥
सर्वारिष्ट प्रणाशाय, सर्वाभीष्टार्थदायिने ।
सर्वलब्धि निधानाय, गौतमस्वामिनेनमः ॥ १५ ॥
पार्श्वनाथ नमस्तुभ्य, विघ्न विध्यकारिणे ।
निर्मल सुप्रभाततते, परमानन्ददायिनः ॥ १६ ॥
अश्वसेनावनीपाल, कुक्षि चूडामणे प्रभो ।
वामासुनो नमस्तुभ्य, श्रीमत्पार्श्व जिनेश्वर ॥ १७ ॥
नमो दुर्वार रागादि, वैरि वार निवारिणे ।
अर्हते योगिनाथाय, महावीराय तायिने ॥ १८ ॥
ॐनमो विश्वनाथाय, जन्मतो ब्रह्मचारिणे ।
कर्मवल्लीवनच्छेदनेमयेऽरिष्टनेमय ॥ १९ ॥

कल्याणपादपारामं, श्रुतगङ्गा हिमाचलम् ।
विश्वत्रयेशितारंच तं वन्दे श्रीज्ञातनन्दनम् ॥ २० ॥
श्रीमान्नाभि कुलादित्य, मरुदेव्यङ्गजप्रभो ।
संसाराब्धि महापोत, जयत्वं वृषभ ध्वज ॥ २१ ॥
पान्तुवः श्रीमहावीर, स्वामिनो देशनागिरः ।
भव्यान मान्तरमल, प्रक्षालन जलोपमाः ॥ २२ ॥
पन्नगेच सुरेंद्रेच, कौशिके पादसंस्पृशि ।
निर्विशेष मनस्काय, श्रीवीरस्वामिनेनमः ॥ २३ ॥
वीरंदेवं नित्यंवन्दे, जैनाःपादायुष्मान् पान्तुः ।
जैनं वाक्यंभूयाद्भूत्यै, सिद्धादेवीदद्यात्सौख्यम् ॥२४॥
सर्व मंगलं मांगल्यं, सर्व कल्याण कारकम् ।
प्रधानं सर्व धर्माणाम् जैनं जयति शासनम् ॥ २५ ॥



प्रभु दरसन सुखसंपदा, प्रभु दरसन नवनिध ।
प्रभु दरसनसे पामीए, सकल पदारथ सिद्ध ॥ १ ॥
भावे जिनवर पूजीए, भावे दीजे दान ।
भावे भावना भावीए, भावे केवलज्ञान ॥ २ ॥
जीवडा जिनवर पूजीए, पूजाना फल जोय ।
राजा नमे प्रजा नमे, आणन लोपे कोय ॥ ३ ॥
प्रभु नामकी औषधी, सचे दीलसे खाय ।
रोग शोक व्यापे नही, महा दोष मीटजाय ॥ ४ ॥

जे दर्शन दर्शन विनों, ते दर्शन निर्पेच्च ।
जे दर्शन दर्शन हुवे, ते दर्शन सापेच्च ॥ ५ ॥
प्रभु पूजनकों म्हें चल्यो, चोवा चदन घनसार ।
नव अगे पूजा करी, मफल करू अवतार ॥ ६ ॥
पांच कोडीके पुष्पसे, पाम्या देश अठार ।
कुमारपाल राजा थयो, वरत्यो जयजयकार ॥ ७ ॥
श्रीजिनवरके चरणमें, उत्कृष्टे परिणाम ।
करतां पूजा पामीए, मोच्च सर्गकों धाम ॥ ८ ॥
भवदव दहन निवारना, जलद घटासम जेह ।
जिनपूजा युक्ते करी, पामींजे भवछेह ॥ ९ ॥
पूजा कुगतिनी अर्गला, पुन्य सरोवरपाल ।
शिवगतिनी साहेलडी, आपे मगल माल ॥ १० ॥
जलभरी सपुट पत्रमें, युगलीक नरपूजत ।
ऋषभ चरण अगुटडे, दायक भवजल अन्त ॥ ११ ॥
तीर्थंकरपद पुन्यथी, त्रीभुवनजन सेवत ।
त्रीभुवन तिलकसमा प्रभु, भाल तिलक जयवन्त॥१२॥
उपदेशक नवतत्त्वना, तिणे नव अग जिनेन्द्र ।
पूजो वहु विधरागमे, कहे शुभवीर मुनेन्द्र ॥ १३ ॥
काल अनादि अनन्तमे, भवभ्रमन नहींपार ।
ते भ्रमन निवारना, प्रदच्चिण त्रीणसार ॥ १४ ॥
भमतिमें भमतांथकों, भवभावठ दुर पलाय ।
दर्शन ज्ञान चारित्ररूप, प्रदच्चिणा तीन देवाय ॥१५॥

दर्शन ज्ञान चारित्रका, आराधन करो मार ।
सिद्ध शिलाके उपरे, होमुझ वास श्रीकार ॥ १६ ॥
वाडी चंपो मोगरो, सोवन कुंपलीयो ।
पार्श्व जिनेश्वर पूजसो, पांचों अंगुलीयो ॥ १७ ॥
प्रभुका नाम अमूल्यहै, वहामे लगतन मूल्य ।
नफा वहुत तोटानही, भरभर मुखसे वोल्य ॥ १८ ॥
कुंभे वांध्यो जलरहे, जलविन कुंभ नहोय ।
ज्ञाने वान्ध्यो मन रहे, गुरुविन ज्ञान नहोय ॥ १६ ॥
गुरुदीवो गुरुदेवता, गुरुविना घोर अन्धकार ।
जेगुरु वाणी वेगला, ते रडवडीया संसार ॥ २० ॥
ज्ञानसमो कोइ धननही, समत्तासम नही सुख ।
जीवतसम आसा नही, लोभसमो नही दुःख ॥ २१ ॥
ज्ञान वडो संसारमें, ज्ञान परमसुख हेत ।
ज्ञानविनो जगजीवडा, नल्है तत्त्व संकेत ॥ २२ ॥
तुजविनो इण संसारमें, सरणो नही कोइ स्वाम ।
तुज चरणोंथी पामीये, अनन्तसुखोको धाम ॥ २३ ॥
जगतारण जगवालहो, तुजग जयजयकार ।
जो तुजसरणे नित्यरहे, ते तरीया संसार । २४ ॥
डुगरजी अरजी करू, तुझे दीनदयाल ।
मुझ अधम्मने तारवा, कर कृपा कृपाल ॥ २५ ॥
त्रिजगनायक तु धणी, महामोटो महाराज ।
महा पुण्यथी पामीयो, तुम दरसन हुं आज ॥ २६ ॥

आज मनोरथ सहु फल्या, प्रगटियो पुन्य कीलोल ।
पापकर्म दुरे टल्यो, नाठा दुःख ददोल ॥ २७ ॥
सुखदाता प्रभु तु वडो, तुम सम अवरन कोय ।
करम मल दूरे कर्या, पाम्या शिवपद सोय ॥ २८ ॥
ज्ञानावर्णिय चय करी, दरसनावर्णिय कर्म ।
वेदनियकर्म दुरो करी, टाल्यो मोहनि भर्म ॥ २९ ॥
आयुष्यकर्म ने नामकर्म, गौत्र अने अन्तराय ।
अष्ट करम इणीपरे, दुर कर्या महाराय ॥ ३० ॥
दोष अठारा चय गया, प्रगट्या पुन्य अनन्त ।
अन्तरग सुख भोगवे, निश्चल धीर महन्त ॥ ३१ ॥
कल्पवृक्षने कामकुम, पुरे मनना कोड ।
प्रभुसेवाथी ज्हे मीले, जो वच्छा होय अडोल ॥ ३२ ॥
त्रिभुवनमे तु वडो, तुम सम अवरन कोय ।
इन्द्र चन्द्र चक्री हरि, तुजपद सेवे सोय ॥ ३३ ॥
प्रभुसेवा भावे करे, प्रेमधरी मन रग ।
दुःख दोहग दुरे टले, पामे सुख मनचग ॥ ३४ ॥
पूजा करतॉं प्राणीया, पोते पूजनिक होय ।
इणभव परभव सुख घणा, तसम तोले नही कोय ॥ ३५ ॥
जीवडा जिनवर पूजिये, जिन पूज्या सुख थाय ।
दुःख दोहग दूरे टले, मनवच्छित सुखपाय ॥ ३६ ॥
द्रव्यभावथी अतिघणो, हेडे हरप न माय ।
इण विध जिनवर पूजतॉं, शिवमपद सुख थाय ॥ ३७ ॥

। श्रीरस्तु कल्याणमस्तु इति समाप्त ।

श्रीरत्नप्रभाकरज्ञानपुष्पमाला पुष्प नं. २३.

अथश्री

प्रभुपूजा.



प्रभुपूजाकाहेतु.

प्रभुपूजा करना जैनसिद्धान्तोसे मोक्षका कारणहै और जितने जीव मोक्षमे गयेहै वह सब प्रभुपूजा करकेही गयेहै चाहे मनुष्यके भवमे करीहो चाहे देवतोंके भवमें करीहो परन्तु प्रभपूजा आवश्यकरीहै वास्ते मोक्षार्थी भाइयोंको अपना मनुष्यजन्म पवित्र वनानाहों तो प्रभुपूजा आवश्य करना चाहिये। प्रभुपूजाके फलकेलिये शास्त्रकार क्या फरमा रहेहै जरा इधर भी देखीये।

सूत्रश्री रायपसेनजी और जीवाभिगमका पाठः

" पुव्वंपच्छा " इसभवमे या परभवमे फल
" हियाए " हितकारक फल होगा दोनोंभवोंमे
" सुहाए " सुखकारक फल होगा दोनोंभवोंमे
" खमाए " कल्याणकारक फलहोगा "
" निस्सेसियए " यावत् मोक्षप्राप्ती होगा
" आणुगामिताए " प्रभुपूजाका फल भवोभवसाथ चलेग

इस तीर्थकरोंके महा वाक्यसे निशक सिद्ध होताहैकि प्रभुपूजा अक्षय सुखरूपी फलदेनेमें कल्पवृक्ष सामानहे। किन्तु सुख कब मीलताहे कि जेसे कोइ वेमार मनुष्य अपनि विमारी दूर करनेके हेतुमे कुच्छ औषधी लेनाचाहे तव वह डाक्टरके पास जावे वह डक्टर योग्य दवादेवे और उसीपर परेज रखना वतलावे और विमार डाकटरकी दीहुइ दवालेवे और केहना माफीक परेज रखेतो रोगकि चिकीत्साहोवे परन्तु विमार पूर्णतय परेज नरखेतो वह अच्छी दवा रोगमीटानेकि निष्पत् रोगकि वृद्धिदाता होतीहै। इस उपनय अर्थात् रोगी–ससारी-जीवोंके अनादिकालसे कर्मोंका रोग लगाहै। डक्टर सद्गुरु-महाराजने प्रभुपूजारूपी दवा दीनीहे साथमे दवा लेनेकि (प्रभुपूजाकरनेकि) विधि वतलाईहै और दवालेनेपर परजे (अविधि आसातना अतिचारादि) रखना–अयोग्याचरना न करना इत्यादि हितशिक्षाके माफीक वर्तान करनेसे भावरोग (कर्मो) का शीघ्रही क्षय होजाताहै वास्ते भव्यात्माओंको विधिपूर्वक प्रभुपूजा करनेमे विशेष पुरुषार्थ करना चाहिये भगवानने फरमायाहै कि " यत् "

विहिकुज्जाकिरियाओ अविहिम हउ

आजकाल कीतनेहि देशोमें मुनिमहाराजोंका विहार कमहोनेमे कितनेकलोक प्रभुपूजादि धर्मकृत्यकि विधिमे अज्ञातहै उन्हीं भाइयोंको एक लघु कितावकि आवश्यताहै इसी

हेतुसे यह लघु किताब लिखीजातीहै आसाहै कि हमारे आत्म-बन्धु स्वल्प परिश्रमद्वारा महान् लाभ आवश्य प्राप्त करेगा।

प्रभुपूजामे शुद्धिकि आवश्यक्ता

प्रभुपूजाकरनेवाले सज्जनोंको प्रथम चार प्रकारकि शुद्धि-कि खासावश्यक्ताहै यथा—(१) द्रव्यशुद्धि (२) क्षेत्रशुद्धि (३) कालशुद्धि (४) भावशुद्धि।

(१) द्रव्यशुद्धिके तीन भेदहै (१) शरीरशुद्धि (२) पूजाकी सामग्रीशुद्धि (३) पूजामे जो द्रव्य खरच कियाजाताहै वह (धन) शुद्ध

जिस्मे प्रथम शरीरशुद्धि—प्रभुपूजाकरनेवालों सज्जनोंकों पेस्तर यह भावना रखनिचाहियेकि आज मेरा अहोभाग्यहै कि जगतोद्धारक परमेश्वरोकि पूजाकरनेका समय मुझे मीलाहै परन्तु मेरा शरीर मलमूत्र या स्त्रियोंदिके परिचयसे अशौचहै और गृहस्थाचारभी है कि पवित्रकार्य पवित्रतासेही कियाजाताहै तों त्रीलोक्य पूजनिय प्रभुपूजामें तों पवित्रताकि खासावश्यक्ताहै इत्यादि भावनासे श्रावकवर्ग उपयोगसंयुक्त एक प्रकाशवाला भाजनकों दृष्टीसे वह वस्त्रसे प्रतिलेखनकरके घट कपडासे गलाहूवा निर्मलजल वहभी अधिकनही किन्तु कीसी अच्छे गृहस्थोंके वहा पावणा (मेहमान) आयाहूवेकों

१ उत्सर्गमार्गमें प्रभुपूजाकरनेवाला गरम जलसे स्नान करतेहै और अपवादमे शीतलजलसेभी करशक्तेहै।

खुले दीलसे गृतपुरसे, तात्पर्य यहहै कि जल इतनाहो कि जिससे साफ–स्वच्छ होजानेपर वेफायदे पाणी नजाना चाहिये। स्नानकरनेकास्थान नीलफुल शूकाहूवा जहापर सूर्यकि आताप पडतीहो एसास्थानमें या उन्ही स्थानपर एक चौकी (बाजोट) जिसके चोतर्फ वेदिक और विचमें एक नालीहो उन्ही नालीके नीचे एक भाजन रखदियाजायकि वह स्नानकापाणी उन्ही भाजनमे एकनहोजाय वह पाणी साफ निर्जीवभूमिकापर यत्नासे परठदियाजायकि तत्काल शूकजावे ताकेजीवोकि उत्पतिनहों कारण श्रावकवर्ग हमेशों यत्नासेही प्रवृतिकरनेवाले होतेहै " जयणा धम्मस्स जणणीओ "

स्नानकरतेसमय पएडपोपकवृति नरखनी चाहिये किन्तु आत्मकल्याण भावना रखनिचाहिये यथा–आज मेरा सफल दिनघडीहै कि मुझे जगतारक जिनेश्वरोके चरणकमल भेटने का समय मीलाहै कि।

" जे आस०वातेपारिस०वा " भगवतीवचनात्

इन्द्रादिकतों भगवानका न्हवण (प्रक्षाल) मेरुसीखरपर कराके अपनी जन्म पवित्र करतेहै क्याकरु मेरी इतनी शक्ति नहीहै न्हे आज यहापरही मेरुसीखर समझके मेरा जन्म सफल करूगा। प्रभुपूजा करनेवाले अच्छे साफ स्वच्छ पुरुषोंकों दोय वस्त्र स्त्रीयोंकों तीन वस्त्र नित्य धोयेहुवे रखना चाहिये और मुखकोश आठ पडवाला रखना चाहिये कारण

अपने शरीरकि वायु भगवानके नलगनी चाहिये । कितनेक लोग रेस्मी मुगटादि पूजाके अन्दर उपभोगमे लेतेहै उन्ही आत्मबन्धुवोंकों विचार करनाचाहियेकि । रेस्म केसा अपवित्र है और किस घौर अत्याचारसे पेदा होताहै उन्हीकों अपनके सा पवित्रकार्यमें लेतेहै हे सज्जनो त्रसजीवोंकों अग्निपर पचाके उन्होका तार बनातेहै उन्ही तारोंका रेस्मी वस्त्र बनायाजातेहै तो क्या वीरपुत्रोको सुनतेही घृणा नआवेगा ? इस समय लोक अपने संसारीक कार्योंमेंभी रेस्मीवस्त्रोंकों देशोटन देदीयेहै तों अहिंस्या पालनकरनेवाले वीरपुत्र प्रभुपूजा समय एसा अपवित्र रेस्मीवस्त्रकों क्युकाममें लेतेहै अर्थात् रेस्मीवस्त्र काममे नहीलेनाचाहिये । साफ सूत–कपासका पवित्र वस्त्रही पूजासमय वापरना चाहिये ।

जब कबी पूजाकरनेवालोंके स्नानका स्थान देखाजाताहै तों असंख्य त्रसजीव कलवलाट करतेहै और निलणफुलनकातो पूछनाहीक्या तों परमेश्वरके भक्त पूजाकरनेवालेको इतनाही ख्याल नही होताहैकि हमलोकोंका कितना प्रमादहै कि जिन्होंके जरिये अनन्ते जीवोंका निर्थक प्राणनाश होजातेहै जब पूजाकरनेवालोंके कर्तव्यपर दृष्टीपात करतेहै जब मालम होतेहै कि नामतो प्रभुपूजाका और पौषण स्वइन्द्रियोंका क्युकि स्नानके साथ तेल मेट साबुका लगाना दाढ़ीमुच्छोंका जमाना इतनाही नही बल्कि दाढीमुच्छ जमानेमें और तीलकादि करनेमें अर्द्धघंटा पुरा होताहै और प्रभुपूजा पांचसात

मीन्टमे एक टीकी इदर दुसरी उदरदेके अपनि वेगार निकाल-देतेहै इतनेमें जो घडीकि टैम दिखपडेतो यहही भावना होती है कि अहो टैमतो बहुत होगइहै आजतों दुकान जलदीजानाहै कोन पाचाभिगम करतेहै कोन दशत्रीकको जानतेहै कोन चौरासी आसातना टालतेहै कोन भावना सहित चैत्यवन्दन करतेहै क्या भगवानकेभक्त श्रावकों एसाही होताहोगा ? नही ! नही । कभीनही । यह हमारा लिखना सर्व जिन्होंकों नहीहै परन्तु प्रमाद करनेवालोंकोंहीहै ।

(प्रश्न) तोंक्या पूजा नही करना चाहिये ?

(उ) वस काटीका और आगडातकहीहै । प्यारे आत्मबन्धुवों श्रावकलोगोंका कृतव्यहै कि यथाशक्ति प्रभुपूजा किये सिवाय अन्न जलभी लेना उचित नहीहै कारण प्रभुपूजा करनेसे चित्तवृति निर्मलहोती शासनपर दृढश्रद्धा रेहतीहै शकाकच्चादि दोषणोंसे बचजातेहै यावत् परम्पदकि प्राप्ती होतीहै आपहीं विचारेकि हमने उपदेश कियाहै वह पूजा न करनेकाहै या विधिपूर्वककर अक्षय सुखप्राप्ती करनेकाहै देखिये शास्त्रकार क्या फरमातेहै ।

यथा—आणाइतवो आणाइसंजमो, तहदाणपूयाओ
आणाराहियोधम्मो, पलालपुलव्व परिहर्ड ॥१॥

भावार्थ—वीतरागकि आज्ञा सयुक्त तपजप सयम दान

शील भावनापूजा प्रभावनादि किजातीहै वह निर्ज्जराका हेतुहै और सिवायाज्ञाके क्रियापलालवत्है ।

यत् " आणाए एगे सोवठ्ठणाए, आणाय एगे निरुवठ्ठणे एवंते माहेऊ " श्रीआचारांगसूत्र वचनात् ।

भावार्थ—आज्ञाके अन्दर प्रमाद और आज्ञाके सिवाय उद्यम यह दोनों मुझे नहो अर्थात् यह दोनों कर्मबन्धके हेतुहै वास्ते जिनाज्ञाही प्रधानहै और मोक्षार्थीयोंकों जिनाज्ञामाफीक श्रद्धा और यथाशक्ति प्रवृति करनाही मोक्षका कारणहोगा ।

(प्र) क्या आप हमको छोटे ग्रामके समझकेही उपदेश करतेहो किन्तु हम वडेवडे नगरोंके हाल देखतेहै तों हमारी अविधि कोनसीगीनतिमें गीनीजातीहै कारण वहापरतों श्रावकलोक वडेवडे व्याख्यान सुनतेहै और सुन्दर टइटलवाले पुस्तकोंभी पढतेहै एसे जानकार होनेपरभी स्नानका स्थानादि हमारेसेभी अधिक मीलेगे तोक्या वह सवलोक अविधिसेही क्रिया करतेहोगे.।

(उ) हेभव्य वडेवडे नगरोंवालोंको भगवानने फरमान नही लिखदीयाहै कि तुम विचारे अनाथ जीवोंकि वेदरकारी तथा अनुकम्पा रहित धर्मकरणी करते रेहेना । भगवानके शासनमे एसी पोल नहीहै देखिये भगवानका फरमान । यथा " जयंचरे जयंचीठ्ठे " दश वैकालिक वचनात् तथाच

जयणाधम्मस्सजणणी, जयणाधम्मस्सपालणीचेव ।
तहवुड्डिकारि जयणा, एगन्तसुहावाहा जयणा ॥१॥

भावार्थ—यत्नासे चाले बेठे और सर्व धर्मक्रिया यत्ना सेकरे क्युंकि यत्नाहे सो धर्मकि माताहैं माता विगर पुत्र रहे-नही शक्ताहैं धर्मकों पालके वृद्धिकरनेवाली यत्नाहें और एकान्तसुखकि देनेवाली यत्नाहें सिवाय यत्नाके धर्महोही नहीशक्ताहै बहुतसे लोक तत्त्वज्ञानसे अज्ञात होतेहुवे मात्र एक धर्म एसा शब्दही कि रटना करतेहैं परन्तु धर्मकि रह-स्यकों नही जानतेहैं वास्ते उन्होंको शास्त्रकार क्या फरमातेहैं तथाच—

जीवदयारमिज्जाई, इंदिय वग्ग दम्मिज्जइ ।
सच्चोसच्च च जणेज्जा, धम्मस्स रहस्यभणिओ ॥१॥

भावार्थ—हे श्रावकवर्ग जीवदयामे रमणकरों इन्द्रिय-वर्ग (पांचो इन्द्रियोंकों) को दमनकरो अर्थात् विषयकषायमें वृतति इन्द्रियोंकों अपने कब्जे रखों हे श्रमणवर्ग यहही धर्म-कि सत्य रहस्यहैं वास्ते जहा अयत्नाहैं वहा कबीभी धर्म नही होताहैं ।

उक्तच—

आरंभे नथीदया, महिलासगेण नासएवभ ।
सकाए सम्मत्तनथी, दव्वज्ज अरथगहाणेण ॥१॥

मीलतोंभी मुजे क्या नुकशान होगा मेरा नामतो वैपारीयोंमे दाखलहोही गयातो क्या उन्हीका केहना ठीक समझोगे ? " नही साहिब " इसी माफीक आपकों यत्ना और जिनाज्ञा संयुक्तपूजाकरनेसे अनन्त कर्मअंसोकि निर्ज्जराहोतीथी उन्होंकि कितनी वडी नुकशानी पहूंचिहै इन्होंको विचारिये और लौकमें नामकी अभिलाषा रखनातों विलकुल विपक्रियाहै कारण इस लोकके पौदगलीक सुखों या नामूनकेलिये लौकोन्तरपक्ष-कि धर्मक्रिया करनेवालोंकोतों शास्त्रकरोने तुच्छबुद्धिवालाका-हाहै देखिये सम्यग्द्रष्टीयोंकि केसी श्रद्धा होतीहै ।

उक्तंच—" नो इह लोगठयाए नोपरलोगठयाए नो-कीत्तिवएणसद्ध सिलोगठयाए ननत्थ निज्जराठयाए " दश०व०

भावार्थ—धर्मकरणी– तपश्चर्य संयम सामायक पूजा-प्रभावनादि कियेजातेहै वह इसलोक परलोक कीर्त्ति यश मान अहंकार श्लाघा आदिके लिये नही किजातीहै किन्तु एकान्त कर्मनिर्ज्जराके लिये । धर्मक्रिया किजातीहै ।

(प्र) यह शास्त्रकारोंका फरमान हमकों मंजुरहै परन्तु इस विधिसे प्रभुपूजा नहोतो क्या करना चाहिये । क्या पूजा-करना छोडदे ?

(उ) हे पुरुषार्थी भाइयों वीरपुत्रोंके मुहसे एसे काय-रताका वचना वोलना उचित्त नहीहै विचारकरों एसे अविधि करतेहूवे यह जीव च्यारगति चौवीस दंडक चौरासीलक्षयोनिमें

परिभ्रमन कररहाहै कोइ पुन्योदयही इस नरतत यह सामग्री मीलीहैतों अनपुरुपार्थ रखों और विचारकरोंकि जितनी टैम पूजामे लगतीहै उन्हीमे गृहकार्यतों कुच्छकरभी नहीशक्तेहो चाहे विधि यत्नापूर्नक करो चाहे अविधि अयत्नासे करो टैमतों आपकों लगहीजावेगातो फीर प्रमाद क्यू करना चाहिये । जरा इसवातके लाभको सोचो ससारीककार्यमे एक पैसाकाभी लाभ मीलताहै उसीके लिये कितना पुरुपार्थ करतेहोतो यहतो आत्माकों अमूल्य लाभहै इस्केलिये पुरुपार्थ क्यु नकीयाजाय देखिये—

यत् जहणेण दसण आरहाणेण भवे केइभव गहणेण सज्जइ ? गोयमा जहणेण दसण आराहणेण जहाण तीनी-भव, उकोमणसत्तठभव गहणेण सज्जइ । भगवतीसूत्र वचनात्

भावार्थ—हे भगवान् अगर जीव जघन्यही दर्शनाराधनाकरेतो कीतनेभवोंसे मोक्ष जाताहै ? हे गौतम जघन्य दर्शन आराधना करनेवाले भव्य जघन्य तीन भव और उत्कृष्टा सात आठ-पन्दरा भवकर मोक्ष जातेहै ॥

लो अब आप क्या चाहातेहै प्रभुपूजाआदि दर्शन विशुद्धकरनेवाली क्रियावों कर जघन्य आराधनही करोगेतो १५ भवसे अधिक नकरोंगे । अबतो पुरुपार्थकर विधिसेही क्रियाकर यह मनुष्यजन्मकों सफल करीय ।

(प्र) अच्छा साहिब हमसे बनेगा यहांतक हम यत्नापूर्वक विधिसेही करनेकि कोपीश करंगे परन्तु आप इस लेखमे ॥ स्नानकरनेकि विधि बतलाइहै तो क्या साधुवोंको एसा उपदेश करनाभी काहांपर लिखाहै ?

(उ) हे महानुभाव–उपदेशके तीन विकल्प होतेहै (१) विधिप्रदर्शक (२) कल्पप्रदर्शक (३) आदेशप्रदर्शक जिस्मे पूर्व महाऋषियोंके कथनानुस्वार मेने स्नानकि विधि बतलाइ है उन्हीमे हेतुहै कि अविधिसे अधिक पापका भागी होताहै उन्होंसे वचनेकि विधि बतलाना साधुका फर्जहै देखिये प्रज्ञापनासूत्रके पेहलेपदमें आर्य वैपार आर्यकलावोंका प्रतिपादन कीयाहै तों उन्होका हेतुहैकि आनार्य वैपार व कलावोंमे अधिकपापहै उन्होंसे वचना कारण सिवाय शास्त्रोंके विधिका जानना असंभवहै वास्ते यह मेरा आदेश नही किन्तु विधिदर्शक उपदेशहै इत्यादि उपयोग संयुक्त यत्नापूर्वक शरीरशुद्धिकि आवश्यकताहै ।

(२) पूजाकिसामग्री शुद्ध–पूजाके उपभोगमे आतेहुवे पदार्थ

(१) जलशुद्ध–घटवस्त्रसे गलाहुवा निर्मलजल

(२) चन्दन–शुद्ध सुगन्धी साफ औरीसेपर घसाहुवा चन्दन

(३) पुष्प–चम्पा चमेली गुलाब मोगरादि तत्कालके लाये हुवे

(४) फल–भगवानको चडने योग्य आम्र नालेयर बदामादिफल

(५) नैवद्य–तत्काल बनाया हुवा उत्तम मिष्टान्न या मेवा

(६) धूप–अगर तगरादि दशांगधूप सौगन्धीकधूप

(७) दीप–पूजा समय अच्छा घृतका दीपक

(८) अक्षत–शुद्ध पवित्र अखंडित अक्षत

और भी जो वस्त्रके अगलुणे आदि सब सामग्री साफ– शुद्ध होनेकी जरूरत है।

(३) द्रव्यशुद्धि–न्यायोपार्जित द्रव्य प्रभुभक्तिमें वापरना जरूरी है हालके जमानेमें कितनेक भाइयोंका कर्त्तव्य और वे- पारादि देखा जावे तो इन्ही प्रतिज्ञाका पालन होना दुष्कर है उन्ही आत्मबन्धुओंको एक खाना ऐसा रखना चाहिये कि जो न्यायसे पैसा पैदा होता है वह उन्ही खानेमें अलग रखें धर्मकार्यमें पैसा वापरना हो वह उस न्यायोपार्जित द्रव्य काममें लगावें एसे या कीसी अन्य प्रकारसे हो परन्तु जहांतक बन सके शुद्ध न्यायोपार्जित द्रव्य ही धर्मकार्यमें लगाना चाहिये। यह तीनों प्रकारकी द्रव्यशुद्धि है यह भावशुद्धिका कारण है इति द्रव्यशुद्धि।

(२) क्षेत्रशुद्धि—जिस क्षेत्रमें वीतरागकी मूर्ति हो उन्हीको क्षेत्र कहाजाता है, जिस्में भी वीतरागकी मूर्ति अगर अन्यमति लोग अपने देवालयमें स्थापन कर ली हो तथा अपने कब्जे कर ली हो वह क्षेत्र अशुद्ध है. यथा—

" नोकप्पइ अन्नतित्थियाणं अन्नतित्थिय देवीयाणं अन्नत्थी परिग्गहिय अरिहंत चेइयाणीवा " उपासकदशांग वचनात् ।

भावार्थ—नहीं कल्पे अन्य तीर्थी तथा अन्य तीर्थीयोंके देव हरि हलधरादि और जो अरिहंतोंकी मूर्ति है किन्तु अन्यतीर्थी लोकोंने अपने देव तरीके अपने कब्जेमें कर ली हों वास्ते एसा स्थानोंकों क्षेत्राशुद्धि कहते है।

स्वतीर्थीयोंके जो चैत्य (मन्दिर मूर्ति) है वह भी दो प्रकारके होते है (१) विधिचैत्य (२) अविधिचैत्य । जिस्में अविधिचैत्य यथा—

(१) अभिमानके लिये चैत्य बनाया हो

(२) यश कीर्तिके लिये ही चैत्य बनाया हो

(३) इर्षा द्वेषादिके लिये चैत्य बनाया हो

(४) अन्यायादि अकृत्य कर द्रव्योपार्जनसे चैत्य बनाया हो

(५) पासत्था द्रव्यलिंगीयोंके द्रव्यसे चैत्य बनाया हो ।

यह पांच प्रकारके चैत्य चतुर्विध संघको अवन्दनीय हैं और भी जहांपर लोकव्यवहार अशुद्ध हो ममत्व कदाग्रहादि हो

यह भी क्षेत्र अशुद्ध है। और पाच प्रकारके चैत्योंको क्षेत्रशुद्ध कहते हैं, यथा—

(१) एक गच्छकी निश्रायके बनाये हुवे चैत्य

(२) सर्व नगरके सघकी निश्राय बनाये हुवे चैत्य

(३) मगलचैत्य–मन्दिरजीके दरवाजेपर मूर्ति होती है

(४) भक्तिचैत्य–अपने घरके अन्दर देरासर होता है

(५) शास्वत चैत्य–देवलोकोंमें तथा द्विप या पर्वतों पर है।

यह पाचो प्रकारके चैत्य चतुर्विध सघको वन्दनपूजन करने योग्य हैं इन्होंको क्षेत्रशुद्धि कहते हैं। इति क्षेत्रशुद्धि।

(३) कालशुद्धि–अपने शरीरकी कायचिंता टट्टी पेसाब आदिसे नही निवृत्त, लेनदेनवालोंका टटाफीसाद पीछे घूमताही रहै, राजका तथा नियातका नोलवा फीरता ही रहै यह सब काल अशुद्धि है क्योंकि पीछला विकल्प बना रहनेसे प्रभु पूजामें बरोबर ध्यान नहीं लगता है एक तरेहाकि वेगारके माफीक आतुरता रहती है वास्ते उक्त कार्योंसे निवृति होना यह कालशुद्धि है इतना अवश्य ख्याल रखना चाहिये कि यह ससारिक कार्य तो मैंने अनतिवार किया है वह सब परकार्य है परन्तु मेरी आत्माके हितकारीतो एक प्रभु पूजाही है तो इस टाइम पहिलेसेही कोइ तरेहका विघ्नभूत कार्य रखनाही नहीं चाहिये।

सूर्योदय होनेके पहिले तथा सूर्यास्त होनेके बाद पूजा पत्तालन कराना भी कालअशुद्धि है। शास्त्रकारोंका फरमान है कि परमेश्वरके भक्त त्रीकाल पूजा करते है जिसमें सूर्योदय होनेके बादमें धूप वासत्तेप फल नैवद्य और अत्ततपूजा करते हैं और पहिले दिन जो भगवानकी पूजा अंगी मुकुट आदि धारण कराये हैं वह ठीक मर्यादा माफीक नगर निवासी चतुर्विध संघ भगवानके दर्शन करे वहांतक रखना चाहिये कि परमेश्वरों के दर्शनाभीलाषीयोंका दर्शन कर हृदय हर्षीत हो । परन्तु कितनेक लोग अपने स्वार्थ के लिये बहुत ही जल्दी प्रभुप्रत्तालन करा देते है जब साधु साध्वी श्रावक श्राविकादि भगवानके दर्शन करनेको आते हे उस समय नोकर–पूजारीलोक बेदरकारीसे इधर उधर भगवानके पास फीरते ही रहते और अंगलुणादि करते है वह लोगोंको बताते हैं कि हम भगवानकी पूजा करनेवाले है परन्तु यह ख्याल नहीं कि दर्शनार्थीयोंको भगवानकी मुद्राके बदले हमारी पूंठका ही दर्शन होते है यहां पर कुच्छ विचारना चाहिये कि यह भगवानकी आशातना और दर्शनार्थीयोंकी अन्तराय के नमा कर्मकों पुष्ट बनाती है अर्थात् मोहनीय कर्म और अन्तराय कर्मका बन्ध होता है। जब महान् लाभका कार्यमें इतना नुकशान क्यों उठाना चाहिये वास्ते जिन्ही प्रभुभक्तोंकों जलदि हो वह वासत्तेप धूप अत्ततादिकि पूजा करे और पीछे यथासमयपर अंग और अग्र पूजादि करके अपना कालको शुद्ध बनाने

दुसरी अग्रपूजा जो नगर निवासी चतुर्विधसंघ दर्शन कर लिया हो बादमें भगवानकी अग्रपूजा अगपूजा करना वह विधि आगे चलके लिखगे ।

तीसरी कल्याणआरति—जोकि कुच्छ सूर्य दीखता है एसा सायकालमें धूपादिसे आरति करना और देववन्दन चत्यवन्दनसे भावपूजा करना श्रावकोंका कर्तव्य है तत्पश्चात् मन्दिरजीका पटमगल होना चाहिये ।

(प्र०) सायकालमें अगर मन्दिरजीके पटमगल कर दिया जावे तो भगवानकी भक्ति किस समय करनी चाहिये ?

(उ) भगवानकी आज्ञा हो उस समय भक्ति करना चाहिये

(प्र०) सूर्यास्त होनेके बाद रोशनाइ करके भगवानकी भक्ति करनेकी शास्त्रकारोंकी आज्ञा हे या नही ?

(उ) शास्त्रकारोंकी तो आज्ञा है कि सायकाल कल्याण आरति कर देववन्दन करके गुरुमहाराजके पास जाके अपने दिनके अन्दर लगे हूवे व्रतोंके अतिचार या कीया हुवे पापारंभकी आलोचना करनेको प्रतिक्रमण करना चाहिये तत्पश्चात् गुरुमहाराजोंसे आत्मकल्याणके लिये तत्त्वज्ञान प्राप्त करना चाहिये यह आज्ञा है । परन्तु रात्री समय रोशनाइ करना कि जिससे असख्य त्रस प्राणीयोंका बलीदान होता है इतना ही

नही बल्कि कितने ही लोक तों इतने विवेकशुन्य होते हैं कि खास धर्मसाधन करनेके चतुर्मासके दिनोंमे खुब रोशनाइ करते हैं कि जिन्होंसे छाब छाब भरे त्रसजीवोंका बलिदान हो जाता है ! तो क्या भगवानने एसी आज्ञा दी है? हे भव्य भगवानने तो अहिंसामय धर्म फरमाया है हां, भगवानकी भक्ति करना चतुर्विध संघका कल्याण है परन्तु यत्नके साथ करना कल्याण है। प्रतिक्रमण और नवा नवा ज्ञान करना यह उन्ही भक्तिरूप वृक्षकी मजबूत जडों है पूर्व महा ऋषियोंने भी रात्रीको मन्दिरजीमें दीवा करना मना लिखा है परन्तु अन्यमतियोंके देखादेख जैनोंमे भी चैत्यवासी लोकोंने यह पृथा शरु करी है.

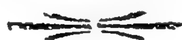
(प्र०) कीतनेक लोग प्रतिक्रमण नही करते हैं रात्रीको गुरुके पास भी नही जाते हैं और अनेक प्रकारकी विकथा परनिंदामें अपना समय क्षय कर देते हैं ऐसे लोग रात्रीको मन्दिरजीमें भक्ति करे तो हरजा है?

(उ०) एसे मनुष्योंको प्रथम तो आत्मकल्याणके स्वरूप समझाना और भगवानकी आज्ञाधर्म पर लाना, कारण एकके देखादेखी दुसरे भी आलसी बनजाते हैं इतनेपर भी आत्मज्ञानपर रूचि नहीं होती हो तो हालके जमानेमें शास्त्रोंकी और मुनियोंकी तो आज्ञा नहीं है परन्तु अपवादरूपसे अगर शुद्धोपयोगसे यत्ना करता हूवा भक्ति करता हो तो हमकों

यहांपर मौनव्रतका ही स्वीकार करना अच्छा है। अगर कालको शुद्ध बनाना हो तो भगवानकी आज्ञा हम उपर लिख आये हैं इति कालशुद्धि।

(४) भावशुद्धि—प्रभुपूजा करनेवालोंका अन्तःकरण निर्मल और निःस्पृही और केवल मोक्षके लिये ही होना चाहिये। परन्तु इस लोकमें राजऋद्धि पुत्र कलत्र धनधान्यादि पौद्गलीक सुखोंकी तथा परलोकमें देवादिकी ऋद्धिकी इच्छा न रखनी चाहिये। कितनेक लोक ज्ञानशुन्य होते हैं कि व्यापारमें भगवानका भाग रखते है तथा कष्ट आनेपर पूजा, शान्तिस्नात्र तथा तीर्थयात्राकी बोलावा और घृत तेलकी अखंड ज्योत करना तथा अपना यश कीर्ति नमूनादिके लिये भी कराते हैं इत्यादि महान् लाभका कार्य था उन्हीकों तुच्छ सुखोंके लिये वह महान् लाभको खो बैठते है शास्त्रकारोंने तो इन्हीको विषक्रिया कही है अर्थात् नफेके बदले नुकशान उठाना पडता है कारणके लोकोत्तरपक्षकी क्रिया करके लौकीक सुखकी अभिलाषा रखना यही तो प्रगट ही विपरीत श्रद्धा है और विपरीत श्रद्धावालोंको सिद्धान्तकारोंने मिथ्यात्वी कहा है तो दीर्घद्रष्टीसे विचारीये कि यह तुच्छ सुखोंका निदान करनेसे भवान्तरमें आराधक कैसे हो सक्ता है। दशश्रुतस्कन्धमें कहा है कि मोक्षपक्षकी क्रिया करके इस लोकके सुखका निदान करते हैं उन्होंको भवान्तरमें वीतरागके धर्मका श्रवण भी नहीं मीले।

हे भव्य! सुख और दुःख तो पूर्वकृत कर्मोंके अनुसार ही मीलता है परन्तु अशुभ कर्मोदयके समय भी धर्मकी तीव्र भावना होनेसे कर्मोंमें परावर्तन अर्थात् अशुभ कर्म भी शुभपणे परिणमते है परन्तु अशुभ कर्मोदयके समय उक्त अशुभ भावना अभिलाप करनेसे तो अग्निमें घृत जैसा हो जाता है वास्ते कभी भूलचूकके भी लोकत्तर क्रियासे लौकीक सुखोंकी अभिलाषा नहीं करनी चाहिये। क्योंकि शुभ भावनासे अशुभ कर्म अपने आपसे ही नष्ट हो जायगा तब शुभ ही शुभ कर्मोदय होगा अगर कोइ आफत न सहन करते हूवे अपवादका अवलंबन किया भी हो तोभी सेवन करने योग्य नहीं है क्योंकि भगवानकी पूजादि भक्ति मोक्षके लिये करनेसे मोक्षकी प्राप्ति होती है और संसारके लिये करनेसे संसारकी वृद्धि होती है "यादृश भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी" वास्ते बुद्धिमानोंको चाहिये कि एकान्त कर्मनिर्जराके लिये ही भगवानकी पूजादि भक्ति करे " नन्नत्थनिज्जराठयाए " इति भावशुद्धि।



प्रभुपूजा स्वहस्तोंसे ही करनी चाहिये।

प्रभुपूजा करनेवाले अपने घरसे निकले तथा मन्दिरजीके प्रथम पागोतीये पग देनेके पहिला " निस्सिही " तीन दफे कहे और भावना रखे कि अब मैं संसारीक कार्योंसे नि-

वृत्त होता हू अर्थात् अब मे ससारव्यवहारकी किसी किस्मकी बात न करूगा। तत्पश्चात् मन्दिरजीके अन्दर कोइ भी फुटतुट कचरा आदि और भी कार्य करना हो तो आप करे और दुसरोंसे कराये बादमें रगमडपमें जाके दुसरीवार "निस्सिही" तीन दफे कहे अब मन्दिरजीके कार्यमे निवृत हुवा हू। रग-मडपमें जानेपर श्री त्रिलोक्य पूजनीय जगतारक परमेश्वरकी शान्तमुद्राके दर्शन करते ही हृदयकमलमें आह्लाद आनन्द लाते हुवे अहोभाग्य समझना और खडे खडे दोय च्यार यावत् १०८ स्तुतियोंसे स्तवना करना बादमें तीन प्रदक्षिणा देना और भावना रखना कि मे आज तीन लोकका भवभ्रमणका विध्वस करता हुवा ज्ञान दर्शन चारित्र यह रत्नत्रयिकी आराधना करता हू। तत्पश्चात् द्रव्यशुद्धिमें कहे माफीक (१) शरीर (२) वस्त्र (३) पूजाकी सामग्री (४) मन (५) वचन (६) कायाके योग (७) न्यायोपार्जित द्रव्य यह सातों प्रकारसे शुद्ध होके आप स्वय ही पूजाप्रक्षालन अगलोणा करे किन्तु आप भगवानके आगेही सेठजी बनके नोकरों पर हुकुम न लगादे "स्यारे पखाल होगइ" एसा न करना चाहिये कारण पूर्वभवोंमे पूर्वोक्त पूजा न करनेसे ही तो भव-भ्रमण करना पडता है कारण नोकरलोगोंको तो मात्र पैसोंका ही लोभ है वह भगवानकी भक्ति या आशातना क्या क्या समझते है वास्ते उन्होंसे तो बाहारका ही कार्य लेना चाहिये।

और प्रभुपूजा तो अपने ही हाथोंसे कर जन्म पवित्र करना चाहिये। भगवानके पास जाते समय आठ पडवाला मुख-कोश रखना चाहिये।

प्रभुपूजाकी विधि।

प्रथम मयूरपीच्छीसे प्रभुप्रतिमाको प्रमार्जन करना, वादमें निर्मल तत्कालका लाया हूवा जल वह भी घट वस्त्रसे गला हूवा सुगन्धी मिश्रित जलसे प्रभुपक्षाल करावे उन्ही समय भावना कि आज मैं मेरा अनादि कालका कर्ममलको धो रहा हूं और भगवानकी जन्मावस्थाकी भावना रखना बाद अच्छे श्वेत निर्मल सुकुमाल वस्त्रसे प्र-भुके अंगलोणा करना भावना और मेरे चैतन्य जी को आज मैं निर्मल बनाता हूं एसा कहते ध्यान रखना कि गतकालका लेप कहींपर भी रह नही जावे।"

नोट–कितनेक लोग पुरुषार्थहीन वनजाते है या पूजा-रीयोंके वीश्वासपर रह जाते है वहां पर एकादिन जलका कलश लाते है उन्होंसे ३–४–८ दिनतक पक्षाल करतें है तो उन्ही महान् आशातनाको खास मीटा देना चाहिये जहां हो वहांसे।

(२) वादमें सुगन्धी चन्दन साफ शीलापर स्वच्छ घ-सके अच्छी कटोरीमे लेके भगवानके नव अंग (चरण अंगुष्ट

ढीचण, हस्त, स्कन्ध, मस्तक, ललाट, कण्ठ, हृदय, उदर)× का पूजन और भावना सहित काव्य बोलना ।

नोट—हालमें विदेशी केसरका प्रचार बहुतसा बढ गया है अगर उन्होंकी तलास कि जाय तो पशुओंका रुधीर और दारू मिश्रत है एसा बिलकुल अपवित्र द्रव्यसे त्रीलोक्य पूजनिक परमेश्वरोंको स्पर्श होना कितनी बडी आशातना है जैनागमोंमें (रायपसेणी, जीवाभिगम, ज्ञाता, महानिसिथादि) चन्दनही की पूजाका लेख है बात भी ठीक है कि मैं कषाय रुपी अग्नि से जल रहा हू हे प्रभु ! आपको यह शीतल चन्दनसे अर्चन कर के मैं शीतलता चाहता हू यह भावना पूजकोंकी होती है परन्तु केसर तो स्वय ही गरमागरम है जो पाषाण के बिंब है वह गल जाते है धातु के बिंबों को काले काले छाटा लग जाते है इसी से भगवान को नव अगो पर धातुकी वाटकीयो चाडी जाती है इन्होंसे पूजारीयोंको नव अग भेटनेसे वचत रहना पडता है वास्ते सुज्ञ पुरुषोंको जिनाज्ञा माफीक चन्दनकी पूजा करना चाहिये न कि केसर क्यों कि विद्वान लोगोने तो अपने घरकार्यमें भी केसर वापरना बन्ध कर दीया है तो भगवानको तो चडा ही कैसे सक्ते है अर्थात् नहीज चडे । " अस्तु "

× पूजकोंके चार अग ललाट कण्ठ हृदय उदर पर पहले बींदि (टीक) करना चाहिये

(३) फलपूजा—नालयेर, सुपारी, बदाम, आम्र आदि उच्च फल जो कि भगवतके चडने योग हो वेसा फल चडाके भावना. हे प्रभु! मैं विष फलोंको भोगवता हुवा अनादि काल से भव भ्रमण कर रहा हूं आज मैं यह फल चडाके मोक्षका फल कि याचना करता हू।

नोट—कितनेक गामडेके अज्ञात लोक जो काकडी, मतीरा, पुंकफली, तीसंडी, तौरू आदि फल भी ठाकुरजी के माफीक भगवानको चडा देते हैं यह भक्ति नहीं किन्तु एक कीस्मकी आशातना है।

(४) पुष्पपूजा—चंपा चमेली गुलाबादि के स्वच्छ तत्कालके यत्नपूर्वक लाये हुवे पुष्प भगवानको चडाके भावना रखनी कि हे भगवान यह सुगन्धी पुष्प चडाके मैं आपसे रत्नत्रयी रूप पुष्पोंकी याचना करता हूं।

नोट—कितनेक अज्ञात लोक मजुरोंसे मालनोंसे मूल्य दे कर पुष्प लेते हैं जिस्में भी वह औरतें शुद्धि अशुद्धिका ख्याल तो दूर रहा परन्तु ऋतुधर्मादिका भी परेज नहीं रखती हैं तो एसे अपवित्र पुष्प भगवानको चडाना लाभके बदले कितनीं नुकशानी है अगर मूल्यका ही लेना हो तो पुरण खातरी करलेना चाहिये कि इतनी टैमका लाये हुवे यह शुद्ध पुष्प है एसा योग न हो तो लवंगादिको भी शास्त्रकारोंने पुष्प माना है शुद्ध पुष्प खातरीबन्ध चडानेका निषेध नहीं है।

(५) नैवेद्यपूजा—अच्छे सुगन्धवाले मेवा मिष्टान मोदकादिसे नवेद्यपूजा करते भावना रखनी कि हे भगवान मैं अनन्तकालसे इन्ही लोकमें परम् अशुची पौद्‌गलोंका आहार करता हू आज आपकी यह नैवेद्यपूजा कर आपसे अनाहारी पदकी याचना करता हू ।

नोट—कितनेक अनान लोक जो कि रोटी शाक तो क्या परन्तु मृत्युके पीछे किया हूवा भोजन जो अच्छे समझदार मनुष्य भी नहीं खाते हैं वह सीरा पुरी आदि, पवित्र भगवानके मन्दिर चडाते ह क्या यह महान् आशातना नही है। यह खराब रीवाज अन्य लोकोंके देखादेख जनमें भी घुस गयी हैं परन्तु अब तो इनका परित्याग करना चाहिये ।

(६) दीपपूजा—अच्छा सुगन्धीत घृतका दीपकसे पूजा करते हुए भावना रखना कि हे भगवान मैं अनादि कालसे मिथ्यात्व रुप अन्धकारमें गोता खा रहा था आज आपकी यह दीपकपूजा कर ज्ञानउद्योत चाहता हू-याचना करता हू ।

नोट—कितनेक लोभान्धतृष्णाप्रेरीत अपने ममारीक पुत्र कलत्र धन सन्मानादिके लिये मूल गुभारेमें अखडित ज्योत कराते हैं जिन्होंसे मूल गुभारा धुवासे श्याम पडजाता है गृष्मऋतुमें जब गुभारेके कमाड बन्ध कर दीये जाते हैं तब खुब गरमी हो जाती है तो क्या यह भक्ति है या महान आशा-

तना, यह तो चैत्यवासी लोगोंने अपनी स्वार्थवृत्तिसे प्रवृतियां करी है शास्त्र और पूर्व महाऋषियों पुकार कर रहे है कि रात्रीमें दीपक मन्दिरमें नहीं रखना।

(७) धूपपूजा—सुगन्धी दशाङ्गी धूपपूजा करते भावना रखनी कि हे प्रभो मेरे अन्दर अनेक खराब वासनायें अनादि कालसे भरी हूई है उन्होंको दुर कर आपके गुणरूपी वासनाकी याचना मैं करता हूं।

नोट—कितनेक लोभानन्दी घरखरचा विवाहसादिमें हजारोंका पाणी कर देते है और मन्दिरजीमें धूपादिका काम पडता है तब स्वल्प मूल्यवाला धूप वापरते है तो क्या इसीको उदारता कही जाती है।

(८) अक्षतपूजा—सुपेत अच्छा अखंडत अक्षतसे साथीया करतों भावना रखनी, हे भगवान मैं कारमा असाश्वत सुखोंमे मुग्ध बन चौरासीकी सहेल करता परम दुःखका अनुभव कीया है आज आपकी यह अक्षतपूजा कर मैं अक्षय सुखोंकी याचना करता हूं।

नोट—कितनेक सेठजी अपने खानेके लिये किमति चावल खरीद करते है और मन्दिर चडानेको हलके भावके। वाजे वाजे तो मन्दिरजीके पाटेपर कितनेक त्रस जीवोंका भी कल्याण हो जाता है।

इत्यादि जो जो पूजाकी सामग्री चाहिये वह उदारता पूर्वक आत्मकल्याण समझके भावना पूर्वकही पूजन करना चाहिये ।

जब द्रव्य पूजा होजावे तब बादमें तीसरी "निस्सिहि" कहते भावना रखना किअब मैं द्रव्यपूजामें विराम होता हू द्रव्य-पूजा करते अगर कीसी प्रकारसे अयत्ना प्रवृत्तिमें जीवोंको तकलीफ हुइ हो तो शुद्धोपयोग सयुक्त इरियावही पडिक्कमना बादमें चैत्यवन्दन रूप भाव पूजा करना और भावपूजा हो जाने तब भगवानसे प्रार्थनारूप भावना रखना कि आज मेरा अहो-भाग्य है कि मेरे निर्विघ्नपणे प्रभु पूजा हुई है एसा दिन हमेशा हो कि मेरे प्रभुपूजा होती रहे ।

पूजा करके गुरुमहाराजके पास जाके धर्मदेशना या मगलीक सुने और भोजनके समय भावना रखे कि धन्य है जो महानुभाव मुनिमहाराजोंको या साध्वीजीको सुपात्रदान देते है अपने घरपर पधार जावे तो आदर सत्कार पूर्वक दान दे के अपना जन्म सफल करे । भोजनादिके समय भक्ष्याभक्ष्य का अवश्य विचार करे परन्तु लोलुप्ताके वश नहि पडजाना चाहिये । बादमें न्यायपक्षमें गृहकार्यके निमित्त द्रव्योपार्जन करे यह गृहस्थाचार है

बादमें सायकाल भगवानकी कल्याणारतिकर गुरुमहा राजके समीप प्रतिक्रमण करके तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति करता अवना

मनुष्य जन्मको पवित्र बनाते हूवे जिनाज्ञाका आराधक बने इ-न्होंसे जघन्य तीनभव उत्कृष्ट १५भवोंमें अवश्य मोक्ष होता है

हे भव्यात्मा! इस कलीकालमें प्रभुप्रतिमा और प्रभुपूजा मानो एक कल्पतरूके माफीक मनोवांच्छित फलदाता है अन्य पदार्थोंसे कोइ समय परिणामोंकी हानि वृद्धि होती है परन्तु प्रभुप्रतिमा और प्रभुपूजा पांचमाराके अन्त तक अमोघ शासन अवस्थीत भावसे चलेगा और अनेक प्राणीयोंका कल्याण होगा वास्ते शुद्ध अन्तःकरण भावोंसे प्रभुपूजा करके शीघ्र मोक्ष प्राप्त करो यह हमारी भावना है न्युनाधिक मतिदोपकी सज्जन पुरुषोंसे क्षमाकी याचना करता हूं ॥

मुनि ज्ञानसुन्दर.

॥ श्रीरस्तु कल्याण मस्तु ॥ शम् । इति ॥

अथ श्री

तीर्थयात्रा स्तवन.

(दशी–ख्यालकि)

जिन यात्रा करता, हुइ पवित्र म्हारी आत्मा । ऐ टेर । जिनवर जीत्या रागद्वेषने, जिनके निक्षेपाचार; विशेष उपगारी आगम बोले, स्थापना निक्षेप विचारहो ॥ जि० ॥ १ ॥ भाव निक्षेपे जिनवर बैठा, स्थापना रुप शरीर, देखीने प्रतिबोधे प्राणी, वाणी वदे महावीर हो ॥ जि० ॥ २ ॥ जिनप्रतीमाने जिनवर जाणी, यात्रा करे भविप्राणी, कर्म वापडा फिरे भागता, जीव वरे शिवराणी हो ॥ जि० ॥ ३ ॥ अन्तरायको पाटो मूडे, वाधी भवमें भमीयां, दूरो कीनो तीर्थ ओसीया, महावीर मेरे मन गमीयो हो ॥ जि० ॥ ४ ॥ नगर ओसीया वीर भेटीया, तिवरी मदिर दोय, दोय मदिर लोहावटमाहे, भेट्या आनन्द होय हो ॥ जि० ॥ ५ ॥ पांच मदिर फलोधी चोमासे, जेसलमेर किलेमें आठ, दोय मदिर है सहर माहिने, लगे पूजाका थाट हो ॥ जि० ॥ ६ ॥ अमरतसरमें तीन

१ स १९७३ का चातुर्मास फलोधीमें हुवा था.

मंदिर है, लोदरवे पार्श्वनाथ; तीन मंदिर पोकरणमें भेट्या, खीचंदमें जगनाथ हो ॥ जि० ॥ ७ ॥ मंडार मांहे तीन जिनालय, जोधाणेमें आठ; तीन मंदिर हे शहरवारने, चौमासो[1] गेघाट हो ॥ जि० ॥ ८ ॥ रोयीटभेट पालीमें आये, पांच मंदिर मन मोहे; भाखरीपर भगवान भेटीया, तीन भुवन जग सोहे हो ॥ जि० ॥ ९ ॥ वुसी भेट नाडोलमें आया, जिन मन्दिर तीन विराजे; वीजावा वरकाणा मांहे, मेलाका वाजा वाजे हो ॥ जि० ॥ १० ॥ एक राणी एक स्टेशन उपर, खिमेल मन्दिर दोय; धर्म तीर्थकर देख धणीमें, आणंद वर्त्यो मोय हो ॥ जि० ॥ ११ ॥ मूंडारामें दोय मन्दिर है, पांच सादडी सोहे; धणी विराजे राणपुरामें, जग दीपक मन मोहे हो ॥ जि० ॥ १२ ॥ भांणपुराने ढोल सायरे, नांदामांये चार; तीन मन्दिर गोगूंदे भेट्या, वरत्यो जय जयकार हो ॥ जि० ॥ १३ ॥ उदयपुरमें पद्मनाभादि, संमीने खेडे एक; धणी विराजे धूलेवामें, केसरीयो राखे टेक हो ॥ जि० ॥ १४ ॥ केसर कीचमचे अति भारी, अंगीकी छवी न्यारी; पुन्य पवित्र यात्रा कीनी, दर्शनकी वलीहारी हो ॥ जि० ॥ १५ ॥ पालमें श्री [illegible]नाथजी, ईडर मन्दिर पांच; किल्ला उपर करी यात्रा, लगी [illegible] पांच हो ॥ जि० ॥ १६ ॥ अमनगरमें तीन मन्दिर है, [illegible]में एक; छाला प्रांतीया नरवाडामें, मारी

---

१ १९७४ का चातुर्मास जोधपुरमे हुवा था.

कमापर मेरा हो ॥ जि० ॥ १७ ॥ अहमदावाद आनन्दसे आया, वसे जैन आबाद, जिन मन्दिरोंकी रचना देखी, पाम्या चित अहल्लाद हो ॥ जि० ॥ १८ ॥ समवनाथने आदेश्वरजी, वाडीमें भगवन्त, पचवीस दिन तक करी यात्रा, तोय न आया अन्त हो ॥ जि० १६ ॥ जैतलपुर खेडा मातरमें, साचा स्वामी भेट्या, देवा सोजतरा सुन्दरा में, भटादरे दुःख मेट्या हो ॥ जि० ॥ २० ॥ पेटलाद ने बोरसदमें, तीन तीन मन्दिर भारी, खेडासर गमीरा मांहे, दर्शनकी वलीहारी हो ॥ जि० ॥ २१ ॥ मुजपुर माहे एक मन्दिर है, पादरेमें तीन, वडोदरे भगवान भेटीया, हो भक्तिमें लीन हो ॥ जि० ॥ २२ ॥ मकरपुरमें घर देरासर, इटालामें आया, मियागाव मजामें भेट्या, करजण दर्शन पाया हो ॥ जि० ॥ २३ ॥ पालेजमें परमेश्वर भेट्या, जीणोरमें जगनाथ, अगालेसर घर देरासर, झघडीये आदिनाथ हो ॥ जि० ॥२४॥ लींवेठ माग-रोल कठोरमें, कतारमें किरतार, साहेव विराजे सुरत मांहे, शिवरमणी भरतार हो ॥ जि० ॥ २५ ॥ साल पचतर रया चौमासे, यात्रा करी श्रीकार, कृपा रत्नगुरुकी मुझपर, वरते जयजयकार हो ॥ जि० ॥ २६ ॥ सिद्धक्षेत्रकी यात्रा कारण, कतार गाममें आया; सायण किम कसवा होके, अकलेश्वर दर्शन पाया हो ॥ जि० ॥ २७ ॥ भरुचनगरमें भेटीया सिरे, मुनिसुव्रत भूनाथ, सवाली आमोद भेटीया, जबूसर जगनाथ हो ॥ जि० ॥ २८ ॥ कावी कृपानाथ विराजे, जहां में दर्शन

हो चेतन, मोहरायको जीपे हो. ॥ जि० ॥ ५० ॥ विसनगर में दश मन्दिर है, दर्शन दशा जगाई; वडनगर में चार देरासर, कुमती कूट भगाई हो. ॥ जि० ॥ ५१ ॥ खरेल दोय जिनालय भारी, कर्म गये सब हारी; कुमारपाल बनाये मन्दिर, तारंगे बलीहारी हो. ॥ जि० ॥ ५२ ॥ अजितनाथको ऊंचो मन्दिर, करे गगन से वात; अनुभव खडग हाथमें लीनो, करी मोहकी घात हो. ॥ जि० ॥ ५३ ॥ बाव भेट भलासण भेट्या, दांते दीनानाथ; विमलसाहने बिंब भराया, कूंभारीये कृपानाथ हो. ॥ जि० ॥ ५४ ॥ गुण अनन्ता जिनेन्द्रका सिरे, आतम अटल अरुप; लेइ कारण निज आतम भाषे, स्मर्ण सिद्ध स्वरुप हो. ॥ जि० ॥ ५५ ॥ खराडीमें एक मन्दिर है, देवलवाडे दीनानाथ; उर्द्धगती अंकलेश्वर पकडयो. शिवरमणीको हाथ हो. ॥ जि० ॥ ५६ ॥ झीणी झीणी कोरणी सिरे विमलसाहनो पक्ष; देराणी जेठाणीका आलीया सिरे, खर्च अठारे लक्ष हो, ॥ जि० ॥५७॥ अचलगढ ऊंचो घणो सरे, जिहां चौमुखजी छाजे; मन मेरा ललचायो जाऊं, जिहांपर सिद्ध विराजे हो. ॥ जि० ॥ ५८ आबूराजकी करी यात्रा, आतमभाव हुलसायो; द्रव्यगुण पर्याय प्रभूका, दर्शन भाव दरसाया हो. जि० ॥ ५९ ॥ आणंदरा गामेटा मांही, एक एक मन्दिर सारा; नगर सिरोही चवदे मान्दिर, दर्शन बहोत मजारा हो. ॥ जि० ॥ ६० ॥ अजरअमर अविनाशी

प्रभुजी, धेय घ्याता थइ घ्याऊ, शान्त मुद्रा कारण पामी, हू पण धेयपद पाऊ हो ॥ जि० ॥ ६१ ॥ पालडीमें परम जगद्गुरु शिवगज शिवका दाता, मन्दिर आठ कर्मको काटे, मिले अटल सुखसाता हो ॥ जि० ॥ ६२ ॥ कोरटनगर ने और ओसीया मूर्ति श्री महावीर, एक दिनमें करी प्रतिष्ठा, रत्नप्ररी जगधीर हो ॥ जि० । ६३ ॥ ते तीर्थनी करी यात्रा, मन्दिर छे तिहा चार, घाकली भगवान भेटीया, आणी हर्ष अपार हो ॥ जि० ॥ ६४ ॥ चन्तिश्चरा चमानन्दीमें, दूजाथे दीनानाथ, करुणासिंधु कोसेलावमें, झाल्यो शिव वधू हाथ हो ॥ जि०॥ ६५ ॥ गाम नाडोलमें एक मन्दिर है, गुणगिरुवा गुदोज, नवलखाजी पाली भेट्या, मोक्ष कारण मनमौज हो. ॥ जि० ॥ ६६ ॥ रोयीट होय सेलावस आयो, जगतारक जग छाजे, जोधपुर ने तिवरी ओसीया, भेलाका थाजा थाजे हो ॥ जि० ॥ ६७ ॥ वीर प्रभूकी करी यातरा, रोम रोम हुलसायो, सघ चतुरविध मिलके सारा, भक्ति ठाठ मचायो हो ॥ जि० ॥ ६८ ॥ भक्ति द्रव्य भाव दोय भेदे, कारण कारज जाणो, चार निक्षेपा भक्ति केरा, भेदाभेद पिछाणो हो ॥ जि० ॥ ६९ ॥ चार नयकी भक्ति कीनी, वार अनन्ती आगे, तोपण गरज सरी नही साहेब, किमकर कुमती भागे हो ॥ जि० ॥ ७० ॥ जिहा देखू तिहां धमाधम है, कारण धर्म आरोपे; गाडरी प्रवाह कुलाचारले, मूल मार्ग ने गोपे हो. ॥ जि० ॥ ७१ ॥ अध्यात्म उलस्यो नहीं साहेब, तुज आया

नही जाणी; गतानुगतीकी प्रवाह मांहे, निष्फल विलोयो पाणी हो. ॥ जि० ॥ ७२ ॥ आतमभाव अध्यात्म शैली, आसन मुद्रा असंगी; एक एक प्रदेशके अन्दर, लहरां रंग तरंगी हो. ॥ जि० ॥ ७३ ॥ शहर २ में यातरा करतां, अनुभव अमृत पीनो, अब हम अमर भये न मरेंगे, जातराको फल लीनो हो. ॥ जि० ॥ ७४ ॥ लोहावट ने खीचंद भेट्या, नगर फलोधी आयो; जातरा करतां साल सीतंतर, सुखे चौमासो ठायो हो. ॥ जि० ॥ ७५ ॥ भगवतीसूत्र वंचे व्याख्याने, श्रोता मधुकर जेवा; आचारांग अनुक्रम आगम, वीर वचन सुख मेवा हो. जि० ॥ ७६ ॥ पांच वर्षकी यात्रा मेरी, अनुमोदूं मन रंगे; सुमति सखी संग ज्ञान वगीचे, चेतन खेले चंगे हो. जि० ॥ ७७ ॥

दोहा—उगणीसे सीतोतेर, द्वितीय श्रावणमास; कृष्ण एकादशी सोमदिने, रह्या फलोधी चौमास ॥ १ ॥

[कलश.]

वामानंदन त्रिजगवंदन, पार्श्वनाथ दिनेश्वरं। शुभदत्त ने हरीदत्त गिरवा, आर्य समुद्र अलवेश्वरं ॥ पाट चौथे केशी श्रमणँ, सयंप्रभसूरीश्वरं। रत्नप्रभसूरी पाद-पंकज, ज्ञानसुन्दर शिवसुखवरं ॥ १ ॥



अथश्री

जैन दीक्षा

—※(◎)※—

जैन दीक्षा अनन्त सुखरूपी मोक्षफलकी दाता है। जितने जीव मोक्षमें गयें है वह सबके सब जैन दीक्षा आराधन करके ही गयें हैं इसलिये मोक्षार्थी आत्मबन्धुकों द्रव्य और भावसे जैन दीक्षा धारण कर आत्मकल्याण करना चाहिये।

जैन दीक्षाको धारण करनवाले तीर्थंकर चक्रवर्ति बलदेव और बडे बडे राजा महाराजा शेठ सेनापति गाथापति आदि हो गये है जिन्होंका इतिहास जैन सिद्धान्तोंमे मोजुद है बात भी ठीक है कि जिस वस्तुके योग्य मनुष्य होता है उसी को वह वस्तु दीजाती है अगर अयोग्य को वस्तु दिजावे तो वह लाभकी निष्वत् नुकशानको ही प्राप्त करनेवाली होती है।

सूत्र श्री स्थानायाग ठाणे तीजे तथा वृहत्कल्प उदेश तीजामें अयोग्यको दिक्षाका निषेध कीया है और सविस्तर श्री प्रवचनसारोद्धारमें हैं उक्त आगमोंका संक्षिप्त सारांश यहापर लिखा जाता है।

(१) दीक्षा लेनेवाला छोटी उम्रवाला-बालक हो उसको यह ख्याल नहीं हो सक्ता कि दीक्षा क्या वस्तु है जैसे एक लघु शीष्यको गुरुने पूछा कि हे शीष्य ? दीक्षा कैसी है उस समय वह लघु शीष्य मीष्टान्न भोजन करता था । उत्तर दिया कि गुरुमहाराज दीक्षा मीठी (मधुर) है। वास्ते बालक दीक्षाके अयोग्य है । (प्र०) अमाताकुमरको भगवानने दीक्षा दी थी या वज्रस्वामी भी बालक ही थे। (उ०) वह दीक्षाके देनेवाले आगमविहारी थे भविष्यकालके लाभको जानते थे और छद्मस्थोंके लिये उन्होंने भी मना कीया है वास्ते बेहोश बालक दीक्षाके अयोग्य है।

(२) दीक्षा लेनेवाला वृद्ध हो जिसकी शरीरकी हालत संयम पालनेमें विहार करनेमें क्रिया करनेमें या परिसह सहन करनेमें समर्थ न हो वह भी दीक्षाके अयोग्य है।

(३) दी० नपुंसक हो जो कि स्त्री-पुरुष दोनोंकी अभिलाषा रखनेवाला हो या अनेक कुचेष्टा कर स्व-परात्माओंको नुकशान पहुंचाता है वह भी दीक्षाके अयोग्य है ।

(४) दी० पुरुषकृत नपुंसक हो जिसको मोहनीय कर्मका प्रबल उदय होनेसे स्त्री देखते ही विषय वासना उत्पन्न होती है। वह भी दीक्षाके अयोग्य है।

(५) दी० जडमूढ-जड तीन प्रकारके होतें है (१) भाषाजड (२) शरीरजड (३) करणजड । जिस्में भाषा-

जड–जैसे पाणीमें डूबते हूवेकी माफीक बडबड करते ही बोले, तथा बोलते हूवे गुस्सेसे भरा हूवा क्रोधसे बोले, और बकरेकी माफीक दिनभर बोलता ही रहे, वह भी स्पष्ट मालम न पडे गुगाकी माफीक बोले (२) शरीरजड–जिसका शरीर भारी हो, हलनचलन क्रियामें आलसु–प्रमादी हो, समयपर बराबर क्रिया न कर सके (३) करणजड–हिताहितका ख्यालही न हो अगर हित शीक्षा देनेपर गुस्सा करे और गुरु महाराजका वचनका उल्लंघन करता हो वहभी दीक्षाके अ-योग्य है।

(६) दी० जिसके शरीरमें श्वास खासी जलदर भगंदर कोढ अर्गदका रोग हो वह अयोग्य है कारण रोगी हो वह आप पुरण संयम न पाले और दूसरे साधुओंको संयम पालने न दे (प्र०) अगर दीक्षा लेनेके बादमें रोग हो जावे तो क्या करना (उ०) अच्छे दीलसे उनकी वेयावच्च करना परन्तु पहिलेसे रोगीको दीक्षा देनेका हूकम नहीं है।

(७) दी० गृहस्थावासमें चोरी करी हो, लोकोंमें अप्रतित हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है कारण साधुओंको भिक्षादिको हरवख्त गृहस्थोंके वहां जाना पडता है अगर ऐसा साधु होतो लोगोंको अविश्वास होता है (प्र०) प्रभवादि चोरोंने दीक्षा तो लीथी (उ०) वह [illegible] चार ज्ञान–पुन केवली थे भवि[illegible] े जाते थे.

(८) दी कृतघ्नी या द्रोही हो राजा सेठ या माता पिता या मंत्री आदिका द्रोही हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है कारण राजादिको द्वेष उत्पन्न होता है की यह सब साधु एसेही होगा अगर दीक्षा लेनेके बाद भी ताजनादि मारे या शासनकी हीलना होती है । वास्ते एसोंको दीक्षा न देना चाहिये।

(९) दी० उन्मत्त घेलो गांडो बावलो बेभान हो तथा जिन्हीका शरीरमें भूत प्रेत पिशाच आदि हो वह दीक्षाके अयोग्य है कारण दुसरे साधूवोंको या दुनीयांको तकलीफकारी हो जाता है.

(१०) दी० अन्धा बेहरा मुंगा कांणा खोडा तथा कीसी प्रकारका अंग हीना हो अथवा कम दीखता हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है । कारण चलते हूवे काट खीला लग जावे या खाड्में गीरजाना इत्यादि ।

(११) थीणद्धि निद्रावाला हो या मृगी आदिका रोग हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है। कारण इस निद्रावाले संग्रामादि या अनुचित भोजन भी करलेते है इन्हीसे शासनकी हीलना होती है । दीक्षा लेनेके बाद उक्त अंगहीन हो तो एकस्थानपरही स्थिर रहे ।

(१२) दुष्ट हो (१) कषायदुष्ट, दीर्घकाल कषायवन्त हो जैसेकि कषायके मारे एक शीष्यने मृतक गुरुका दान्त पाडे थे (२) विषयदुष्ट, स्त्रि आदि देखनेसे विषय व्याप्त हूवा अनेक

प्रकारके अत्याचार करते है जिन्हीसे धर्मपर कलङ्क लगता है वास्ते नहभी दीक्षाके अयोग्य है ।

(१३) मुढ हो हिताहितको न जाने अर्थात् अज्ञानी अविवेकी हो ससारमें भी अज्ञानसे अनेक दुष्ट कार्य कीया हो तथा तत्त्वमें अज्ञात हो (प्र०) दीक्षा लेनेके पहले ज्ञान और तत्त्वका जाणकार कैसे हो सक्ता है (उ०) जिनेन्द्र भगवान की दीक्षा मूर्खोंके लिये नही किन्तु वडेही विचक्षणोंके लिये है ज्ञानी और तत्त्वके जानकार दीक्षा लेगा वही स्वपर आत्माओंका कल्याण कर सकेगा पहलेसे ही चिन्ह दीखाइ देता है कि यह भविष्यमें कैसा होगा इत्यादि देखकेही दीक्षा देना । (प्र०) सम्प्रतिराजाके पूर्वभव भिक्षाचरको दीक्षा दी थी । (उ०) वह आगमविहारी थे और उन्होंने ही फरमाया है कि हमने कीया वैसे मत करो परन्तु हम कहे वैसे करो ।

(१४) ऋणी हो-जो दीक्षा लेवे उन्हीके शिरपर पारका करजा हो वह भी दीक्षाके अयोग्य है कारण लेनदार दार-फरियादि करे । (प्र०) देना दीलवादे तो क्या हर्जा है । (उ०) मूल्य देके या दीराके शिष्य करना मना है और मूल्यके शिष्य कीतने दीन टरनेका है क्या वह परिसह सहन कर सकेगा ? वास्ते वैरागवालाको दीक्षा देना उचित है ।

(१५) दी० जाति, कर्म, शरीरसे दोषीत हो । जाति दोषीत जैसे धोबी कोली भील मेणा नाइ मोची के जिसके

हाथका पाणी वैश्य ब्राह्मण न पीता हो और जिस्की जातिमें मांसमादिरादि अनुचित वस्तु खानेमें आति हो। कर्मदोषीत जिन्होंने पेस्तर लोकविरुद्ध कार्य वह अनार्य वैपारादि दया-रहित प्रणामवाले किये हो। शरीरदोषीत–हाथ पग नाक कान तुटा हो लुला लंगडा कुबडादि दोषीत हो वह दीक्षाके अयोग है कारण शासनकी हीलना होती है।

(१६) दी० अर्थलोभी हो, रुपीया पैसा लेनेवाला हो या विद्यामंत्र आदि सीखनेके लिये थोडी मुदतके लिये दीक्षा लेता हो वह भी दीक्षाके अयोग्य है।

(१७) कीसे दीक्षा लेनेवालेको कीसी सहूकारका पैसा देना है वह शेठकों अमुक दीन आपकी नोकरी कर पैसा वसुल करदुंगा उन्हीकों दीक्षा देना अयोग्य है कारन पैसा लेनेवालोंको अप्रतित होती है या दीक्षा लेनेके बाद भी लेनदार आनेपर लज्जीत होना पडता है। सरकारकी कोरटमें भी जानेका समय पहुंच जाता है वास्ते ऋणीकों भी दीक्षा न देना चाहिये।

(१८) दीक्षा लेनेवालेके मातापिता या कुटुम्बकी विना रजा दिक्षा देना यह भी अयोग्य है कारण उन्हींके मातापितावोंको बडा ही दुःख होता है उन्हीका कारण दीक्षा लेनेवाला होता है अगर एसी तस्करवृत्तिसे दीक्षा दीजावे तों बहूतसे लोगोंका धर्मसे प्रणाम (श्रद्धा) पडे (उतरे) जावे

तो दीक्षा देनेवाला भवान्तरमें दुर्लभबोधी होता है और जगतमें जैन मुनियोंकी भी अप्रतित होती है दुनीयां कहने लगजाती है कि साधु पाटपर विराजे व्याख्यान देते है तब दुसरोंको चौरी करनेका त्याग कराते है और आप खुद चौरीयों करते फीरते है शास्त्रकारोंका क्या फरमान है वह दशवैकालिक अध्ययन चोथा आचारांग सूत्र श्रुतस्कन्ध दुजा अ० पन्दरवा तथा प्रश्नव्याकरण सूत्रमें विना आज्ञा दीक्षा देना बीलकुल मना कीया है तो क्या दीक्षा लेनेवाले लोभीयोंको भगवानकी आज्ञासे भी यह लोभवृत्ति अधिक प्यारी हो गइ है सूत्र पाठ यथा—

अहावरे तच्चभते महव्वए अदिन्नादाणाओ वेरमण सव्व भते अदिन्नादाण पच्चक्खामि से गामेवा नगरेवा रन्नेवा अप्पवा बहुवा अणूवा थूलवा चित्तमत्त वा अचित्तमत्त वा नेव सय अदिन्न गिण्हिज्जा नेवन्नेहिं अदिन्न गिन्हाविज्जा अदिन्न गिण्हतेऽनि अन्नेन समणु जाणेज्जा जावजीवाए तिविह तिविहेण मणेण वायाए काएण न करेमि नकारवेमि करतऽपि अन्नेन समणु जाणामि तस्सभते पडिक्कमामि नदामि गरिहामि अप्पाण वोसिरामि ॥

भावार्थ—तीसरे व्रतमें चौरी करनेका त्याग करनेवाला साधु कहते है हे भगवन् मैं ग्राम नगर वन [जगल] के अन्दर स्वल्प या बहुत छोटी या बडी अर्थात् दान्त सोधनेके

लिये तृणसीली मात्रभी चौरीसे न लेउंगा तथा सचित जीव सहित वस्तु [शष्पादि] अचित वस्त्रपात्रादि मैं वगर रजा न लेउंगा अन्योंसे न लीराउंगा लेते हूवेको अच्छाभी न समझुंगा यह नियम जावज्जीवतक हे अगर पहले संसारमें पूर्वोक्त वस्तु चौरीसे लीहो उन्हीकों गुरु साखसे आलोचन कर मेरी आत्मासे उन्ही पापको वोसिराता हूं। इस पाठसे निःशंक सिद्ध होता है कि दीक्षा लेनेवालेको कुटुंबकी रजा सिवाय दीक्षा देनेकी भगवानने सख्त मना करी है।

अगर विना आज्ञा दीक्षा देनेवालोंको बृहत्कल्पसूत्रमें नवी दीक्षाका प्रायश्चित बतलाये है सो पाठ—

तओ अणुवठप्पा पणंत्ता तंजहा सहम्मियं तीणकरमाणे परधम्मियं तीणकरमाणे हत्थोहत्थ दल्लमाणे ।

भावार्थ—अगर कोइभी साधु या आचार्य स्वधर्मीकी चौरी परधर्मीकी चौरी करे तथा कीसी शीष्यादि साधुको हाथसे दंडासे या डोरसे मारे इन्ही तीन कारणासे चाहे सो वर्षकी दीक्षा क्यों न हो परन्तु इन्ही कारणोंसे फीरसे दीक्षा लेनी पडती है दीक्षा लेनेसेही भगवानके आज्ञाका आराधक होता है इसीसेभी खुला फरमान है कि विगर रजा दीक्षा मत दो।

[प्र०] मातापिता या स्त्री अपनी खुशीसे कब आज्ञा देगे? और कीसीका परिणाम दीक्षा लेनेका हूवा तो फीर उन्हीका कल्याण कैसे हो सकता है?

(उ०) दीक्षा लेनेवालोंको अगर अन्तरगसे भवभ्रमणका भय और ससारसे उद्वेग हूवा हो तथा वैरागकी भावना हृदय कमलमें उत्पन्न हूइ हो तो वह अपने माता पिता स्त्री आदिको उपदेशद्वारा शान्तकर आज्ञा ले आवेगा अगर आज्ञा न लावें तो साधुवोंको अपने तीसरा व्रतको तीलाञ्जली दे के परजीवोंका उपकार करना कीसने बतलाया है ।

(प्र०) साधुवोंको तो इसमे कुच्छभी लोभ नहीं है परन्तु भव्यात्मावोंका कल्याण करनाभी तो साधुवोंका फरज है।

(उ०) यह बात सचे दीलसे कही जाती है या लोगोंमें सच बननेको जहापर सूत्रोंमे अधिकार आता है वहा " जहा सुहँ " क्या आते है । क्या पूर्व महा ऋषियों इस माफीक दीक्षा न दे सक्ते थे और क्यों एसा कायदा बाधते अगर आपके दीलमें परात्मावोंके तारनेकी बुद्धि हो तो भगवानकी आज्ञा माफीक दीक्षा देके " तिन्नाण तारयाण " बनना चाहिये किन्तु अपनी पलटन बढानेकी लोभदशासे बीचारे गृहस्थ लोगोंके बेसमझ अज्ञान लडकोंको इदर उदर भगाके शिरमुडन करनेसे तो " डुबाण डुबियाण " के सिवाय कुच्छभी फल नहीं होता है । इसका परिणाम क्या आता है जोकी जैन मुनियोंकी छाप जगतपर असर करती थी वह आज इस तस्कर वृतिसे जैनोंकोही यह वृत्ति जम जेसी मालम होती है और जा

हिर पत्रोंद्वारा पुकारे जाते है की अमुक साधु वेष छोडके भाग गये हैं. अमुक ग्राममें साधुवोंसे क्लेष उत्पन्न हूवे है, अमुक नगरमें अत्याचार हूवे है, अमुक शहेरमें पाट्टिके लिये दंडा उड रहा है, क्या यह सब अयोग और धर्मादीयावोंका फल नहीं है ? शासन लोपकों! इन्हीका फल कल्मद्वारा कहांतक लिखा जावे। अलम् पूर्वोक्त। १८ प्रकारके पुरुष, जैन दीक्षाके अयोग माना गया है और स्त्रीयां २० प्रकारकी दीक्षाके अयोग हैं जिस्मे १८ प्रकारे तो पुरुषवत्ही समझना (१६) गर्भवती हो या उदरमे बहूतरोजसे छोड हो हमेशां रौद्रचलतीहो। (२०) जिन्ही स्त्रीके बच्चा (लडका) छोटा हो पयपान करता हो इन्हीं २० प्रकारकी स्त्रीयोंकोभी जैनदीक्षा न देनी चाहिये। और जन्म नपुंसक के लिये जमाने हालमे दीक्षा देना बीलकुल मना है और कृत नपुंसकके लिये शास्त्रकारोंका फरमान है की १० प्रकारके नपुंसक दीक्षाके अयोग है देखो "प्रवचन सारोद्धार"

अगर कोइ अतिशयज्ञान या आगमविहारी हो और भविष्यमें अच्छे फल जानते हो वह ज्ञानसे जानके दीक्षा देभी सक्ते है उन्होंके लिये यह कायदा लागु नहीं पड सक्ता है परन्तु जिन्होको दुसरोंकी तो क्या किन्तु खुद अपनाही भविष्यमें क्या होगा इतना ज्ञान नहीं वह इन्ही कायदा माफीक वरताव अवश्य करे उन्होंके लिये कीसको दीक्षा देना चाहिये वहभी लिखदीया जाता है।

(१) जातिवन्त हो-जिन्होके माताका पक्ष निर्मल हो कारन माताके वसका एक अंस पुत्रमेंभी होता है ।

(२) कुलवन्त-जिन्होके पिताका पक्ष निर्मल हो अर्थात् जिन्होके कुलमें कुच्छभी कलक न हो लोकमान्य कुल हो ।

(३) रूपवन्त हो-जिन्होका अगोपाग शोभनीय हो ।

(४) बलवन्त हो—सयम भार वहन समर्थ हो ।

(५) विनयवन्त हो-सघ शासन गुरवादिका विनय करे कारण मूल प्रकृति विनयकी हो वही विनय करेगा ।

(६) लज्जावन्त हो—लौकीक और लोकोत्तर लज्जावन्त होगा उन्होंसे कभी अकार्य न होगा पुर्ण विचारही करता रहेगा ।

(७) ज्ञानवन्त हो-ज्ञानवन्त होगा तो कभी अस्थिर हुइ आत्माको ज्ञानके जरिये स्थिरीभूत कर सकेगा ।

(८) दर्शनवन्त हो-दृढश्रद्धा होनेसे कीसी प्रकारसे उपसर्गसे धर्मश्रद्धासे चलायमान न होगा ।

(९) यत्नावन्त हो-सयमके अन्दर भलीभाति यत्न करता हो ।

(१०) उदार चित्तवाला हो-उदारचित्त और गभीरतावन्त होगा तो सब साधुवोंका निभाव करनेमें समर्थ होगा ।

(११) संसारमें प्रशंसनीय कार्य किया हूवा हो।

(१२) जैनशासनपर परम राग हो-अन्दर हाड हाडकी मींजी रंगाइ हो कीसी प्रकारसे देवादि भी चलित न कर सके।

(१३) दीक्षा लेनेवाले वंधुवोंको एकान्तमें बेठके अपना आत्माको पुछना चाहिये। हे आत्मन्! क्या तेरेमें जैन दीक्षा लेनेकी योग्यता है? क्या तेरे १५ प्रकृतियों (अनन्तानुबंधी चोक, अप्रत्याख्यानि चोक, प्रत्याख्यानि चोक, मिथ्यात्वमोहनि, मिश्रमोहनि, सम्यक्त्वमोहनि एवं १५) का क्षय तथा उपशम हूवा है? अगर सच्चा दीलसे आत्मा साक्षी देता है तो दीक्षा लेना उचित है कारण यह हस्तीयोंका वजन उठाना कोइ सहजही नहीं है पीछेही तो देश काल संघयण आदिका नाम लेना पडेगा तो इन्हींकों पहलेही सोचो, शास्त्रकारोंने तो साधुधर्म और श्रावकधर्म दोनोंमें मोक्षका रस्ता बतलाया है अगर सच्चे दीलसे श्रावकधर्म पालनेवाले भी आराधी हो सक्ता है वह १५ भवोंसे अधिक नहीं करता हैं और जो साधु होके भी आराधी न होगा तो भवभ्रमणका अन्त न होगा। इन्हीसें यह न समझना कि दीक्षा लेनेकी मना करते है हम मजबुती करते हैं कि योग्यता हांसलकर कुच्छ दिनतक गृहस्थावासमें आत्माका साधन करो फीर दीक्षा लेके स्वपर आत्माओंका कल्याण करो यह हमारी भावना है।

दीक्षा लेनेवालेको बाह्य और अभिंतर परिग्रहका त्याग करना चाहिये (१) बाह्यपरिग्रह धन धान्य रुपा सुवर्ण द्विपद (मनुष्यादि) चतुष्पद (पशुआदि) क्षेत्र (बागबगेचा खेतखला) वत्थु (हाटहवेली मकानादि) कुमी धातु सर्व घरमें मणि मोती रत्न लोहा कासी पितल आदि सर्व वस्तुमे रहीत होना (२) अभिंतर–हास्य भय शोक दुगन्छा रति अरति क्रोध मान माया लोभ स्त्रिवेद पुरुषवेद नपुसकवेद मिथ्यात्व एव १४ प्रकार इन्ही दोनों परिग्रहको त्याग करना चाहिये । अब जो सयमकी रक्षा निमित्त धर्म उपकरण रखा जाता है वह भी लिखदिया जाता है ।

जैन साधु दोय प्रकारके होते है (१) स्थविरकल्पी (२) जिनकल्पी, जिस्में जिनकल्पी महात्मा जगलमें रहते हैं वह पाणीपात्र लब्धिवाले होते है एक रजोहरन दुसरी मुख-वस्त्रिका रखते हैं और बिलकुल नग्न रहते है (२) दुसरे स्थविरकल्पी साधु होते है उन्होंके लिये वृहत्कल्पसूत्र तीजे उद्देशेके १४ वा सूत्रमें लिखा है कि जब दीक्षा लेते है उन्हीकों रजोहरन मुखवस्त्रिका तीन वस्त्र (एक हाथका पना चौवीस हाथका लबा एक वस्त्र होते हैं) अगर साध्वी हो तो च्यार वस्त्र इन्ही वस्त्रोंसे चदर चोलपटा झोली मडला पडला आदि सर्व उपगरण बनजाता है । पात्रा ३ तथा पात्रोंके बाधनेका गुच्छा । (प्र०) तीनही पात्र रखना क्या एसा लेख है ?

(उ०) आचारांगसूत्र २ । ५ में वस्त्रका अधिकारमें तीन वस्त्र कहा है और २ । ६ में पात्रके अधिकारमें वस्त्रकी भोलावण दी है तथा उत्पातिकसूत्रमें उणोदरी अधिकारमें लिखा है कि एक वस्त्र और एक पात्र रखनेवालेको उणोदरी कही है विचारीये कि स्वादको जीतनेके लिये साधु हूवे है तो एक पात्रमें रोटी दुसरेमें शाक और तीसरेमें पाणी लेवे तो फीर चोथाकी क्या जरुरत है । निशिथसूत्रमें लिखा है कि कीसी साधुका हाथ पग नाक कान तुट जावे–छेदा जावे तो उन्हीको एक पात्र अधिक देना चाहिये । कंबली संथारीया रखना दशवैकालिकमें कहा है और ज्ञान दर्शन चारित्रकी वृद्धिके लिये दंडासन आदि उपकरन भी रखाजाते है और वृद्ध होजानेपर कारणसे और भी उपकरण रखसक्ते है परन्तु उन्हीपर ममत्वभाव नहीं रखना चाहिये । अधिक उपाधि रखनेसे संयमकी विराधना होती है प्रतिलेखन बन नहीं सक्ती है चौरादिका भय रहता है विहारमें पोटलीया–मजूर रखना पडता है बाजे बाजे तालाकुंची भी रखनी पडती है और दुनियां महावीरजीके पोठीयेके नामसे भी बतलाने लगजाती है । (प्र०) यह जो आचार बताये है वह तो चोथा आराके साधुवोंका है अबी तो पंचमो काल मंद संघयण है वास्ते अधिक भी रखना पडता है । (उ०) आपके उपर कीसने वजन रखा था कि आपको दीक्षा लेनाही पडेगा अगर आप इस बातको पहलेही सोच-

लेवे कि अभी पांचमा आरा है दीक्षा लेती वखत माता पिता स्त्री आदि समझते थे उन्ही समय तो चोथा आरा होगया था अब एक घर छोडके हजार घरोंकी उपाधी उठाती वखत पांचवा आरा होगया है यह कलीकालकी अद्भुत लीला नहीं तो क्या है आज भी नास्ति नहीं है संयमकी यथाशक्ति खपकरणेवाले भूमंडलपर विचरते है । (प्र०) एसे तो दीक्षा लेनेवाले अल्पही मीलेगा । (उ०) इस्की फीकर आप न करे वीरप्रभुका शासन २१००० वर्ष तक अमोघ चलता रहेगा । सिंह स्वल्पही होते हैं परन्तु जिस वखतपर धरतीपर गर्जना करते है तब बहूतसी गाडरीयोंके झूंडको दिशो दिश भगादेते हैं पूर्व महात्मऋषियोंने तप संयम और आत्मबलसे हजारों लाखोंकी संख्यामें नये जैन बनाये थे और आज शीतल प्रवृतिवालोंसे नये जैन बनाना तो दूर रहा परन्तु जो जैन है उन्हीकों संभालना या रक्षण करनाही नहीं बनता है और शीतलवृति देखदेखके लोकोंकी श्रद्धा शीतल होजाती है । वास्ते आप उग्र विहारी बनके योग्य पुरुषोंकों दीक्षा दे उन्हीकोंभी उग्रविहारी बनावो ताके स्वपर आत्माओंका कल्याण करे। दीक्षा देनेकि विधि गच्छ गच्छकि भिन्न भिन्न है वास्ते यह नहीं लिखी है स्व स्व गच्छ मर्यादासेही दीक्षा देनी चाहिये।

दीक्षा देनेके बाद गुरु महाराज अपने शीष्यको हितकारी शिक्षा देवे अर्थात् ग्रहणशिक्षा-ज्ञानादि सेवन

शिक्षा दे । हे शिष्य यह अनन्त कल्याणकारी दीक्षा तुजे मीली है इसमें यत्नांपूर्वक हलना चलना बोलना भोजन करना साधुक्रियामें सावधान रहना किंतु प्रमाद न करना ।

प्रथम नवदीक्षतको साधु समाचारीमें हुशीयार कर देना बादमें जेसी जेसी योग्यता देखे वेसे वेसे सिद्धान्तोकि वाचना दे कारण जहांतक आचारांग और निशिथ सूत्र न पढा हो वहांतक साधुको गोचरी जाना व्याख्यान बांचना या कीसीसे वार्तालाप भी करना मना है या आगेवान होके विहार करना भी। देखो व्यवहारसूत्र ३०८ सूत्र १२ वामें साफ मना करी है ।

कीतनीक प्रवृति एसी भी देखनेमें आती है की नवदीक्षितको दीक्षा देनेके बाद गुरुजीको तो गप्पोंसे ही मन मीले तब अपने नवदीक्षीत शीष्योंकों मिथ्यात्वीयोंके सुप्रत कर दीया जाते है बस विनय भक्ति आदि तो प्रथमसेही नष्ट हो जाती है साधुतो क्या पण नवजवान साध्वीयों भी तो उन्ही ब्राह्मणोंके पास पढती है तो कहां उन्हीका आचार कहां व्यवहारकी शुद्धि कहां गुरुभक्ति विनय कहां उन्होंकि वैरागभावना कहां उन्होंकि ब्रह्मचर्य गुप्ती शीलकि वाडों परन्तु बादमें उन्ही गुरुमहाराज कोही तकलीफ उठानी पडती है हाथोहाथ फल मीलता है ।

जैनसिद्धान्तमें परम वैराग्यरस और विनय भक्ति आदि

भरी है की दीक्षा लेते ही यह गुटीका दी जावे तो सारी ऊमर तक यह असर उन्ही शिष्यके हृदयसे कभी नहीं नीकलती है ।

दीक्षा लेनेवाले शिष्यकोभी चाहियेकी मेरे अनन्त भवोंका पुन्योदय और कर्मोंका क्षयोपशम हूवा है की यह चारित्र चुडामणि मेरे हाथमें आया है यह सब गुरुमहाराजकीही कृपाका फल है वास्ते गुरुमहाराजकी विनयभक्ति कर तत्त्वज्ञान प्राप्ती करु एसी भावना हमेशां रखना चाहिये ।

जैन सिद्धान्त अनेकान्त पक्षवाला है परन्तु जिस समय जिसकी व्याख्या की जाती है उन्हींकी पुष्टीमें हेतुयुक्तिभी वही दी जाती है की पूर्व पदार्थको पुष्टी मीले इसलियेही यह जैनदीक्षा नामका प्रथम अंक लिखा गया है अब दीक्षा लेनेके बाद क्या करना वह दुसरे अंकमे लिखा जावेगा ।

॥ इति प्रथम अंक जैन दीक्षा ॥

—•◦(◎)◦•—

श्रीरत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ।

अथश्री

प्रतिमाछत्तीसी ।



दोहा.

अरिहंतसिद्धने आयरिया, उवझाया अणगार । पंचपरमेष्ठी एहने, वंदुं वारंवार ॥ १ ॥ च्यार निक्षेपा जिनतणा, सूत्रोमें वंदनीक। भोला भेद जाणे नहीं, जिनआगम प्रत्यनिक ॥ २ ॥ बत्तीससूत्रके मांहने, प्रतिमाको अधिकार । सावधान थइ सांभलो, पामो समकितसार ॥ ३ ॥ समकित बिन चारित्र नहीं, चारित्र बिन नहीं मोक्ष । कष्टलोच क्रिया करी, जन्म गमायो फोक ॥ ४ ॥

ढाल—आदर जीव क्षमागुण आदर ए देशी ॥ प्रतिमा छत्तीसी सुणो भविप्राणी । सूत्रांके अनुसारजी ॥ टेर ॥ आचारांग दूजे श्रुतखंधे । पंदरमे अध्ययन मुझारजी ॥ पांच भावना समकित केरी। नित्य वंदे अणगारजी ॥ प्रति० ॥ १ ॥ दूजे सूयघडांग छठे अध्ययने । आर्द्रनाम कुमारजी ॥ प्रतिमा

देखी ज्ञान उपनो । पाम्यो भवनो पारजी ॥ प्रति० ॥ २ ॥
ठाणायगके चोथे ठाणे । सत्यनिक्षेपा चारजी ॥ दशमें ठाणे 'ठवणासचे' । इम भाष्यो गणधारजी ॥ प्रति० ॥ ३ ॥
अजनगिरिने दधिमुखा । नदीश्वर द्विप मुझारजी ॥ नावन मदिर प्रतिमा जिनकी । वदे सुर अणगारजी ॥ प्रति० ॥ ४ ॥
स्थापना चारज चोथे अगे । द्वादश ठाणामायजी ॥ सतरमे समवायग जघाचारण । प्रतिमावदन जायजी ॥ प्रति० ॥ ५ ॥
शतक तीजो उदेशो पहेलो । भगवतीमें मारजी ॥ चमरइन्द्र सरणा लइ जाने ॥ अरिहत निंन अणगारजी ॥ प्रति० ॥ ६ ॥
शाश्वति अशाश्वति प्रतिमा नदे । दुगचारण मुनिरायजी ॥ शतक वीश उदेशे नवमे । वहुनचन कह्यो जिनरायजी ॥ प्रति० ॥ ७ ॥ सती द्रौपदी प्रतिमा पूजी । ज्ञातासूत्र मुझारजी ॥ आणद श्रावक अगसातमे । सुणो तेहनो अधिकारजी ॥ प्रति० ॥८॥ अन्यतीर्थी ने उणोरी प्रतिमा । नहीं वदु यावज्जीवजी ॥ स्वतीर्थोरी प्रतिमा वदी त्यारी । निर्मल समकित नीवजी ॥ ॥ ६ ॥ अतगढने अणुतरोवाइ । प्रथम उपांगरी सारेजी ॥ अरिहत चैत्ये नगरिया शोभे श्रीजिनमुखमे भारेजी ॥ प्रति० ॥ १० ॥ प्रश्नव्याकरण पहले सवर । पूजा अहिंसा नामची ॥ प्रतिमा व्यावच तीजे सवर । करे मुनि गुणधामजी ॥ प्रति० ॥ ११ ॥ विपाकमें सुबाहु प्रमुखा । आणद सरीखा जोयजी ॥ उववाइ अरिहत चेइयाणि । अवड प्रतिमा वदी सोयजी ॥

ढालचोपइयां । प्रतिमा देवो गोपजी ॥ तीजो महाव्रत चवडे भांगो । जिन आज्ञा दिनीलोपजी ॥ प्रति० ॥३३॥ एक अक्षर उत्थापे जिनको । वढे अनंत संसारजी ।। सूत्रका सूत्र नहीं माने । ए डुवे डुवावण हारजी ॥ प्रति० ॥ ३४ ॥ वत्तीस सूत्रोमें प्रतिमा वोले । चतुरा लीजो जोयजी ॥ भावदया मुज घटमें व्यापी । उपकार बुद्धि छे मोयजी ॥ प्रति० ॥ ३५ ॥ प्रतिमाछत्तीसी सुणो भव्य प्राणी । हृदये करो विचारजी ॥ पक्ष छोडी समकित आराधो । पामो भवनो पारजी ॥ प्रति० ॥ ३६ ॥

कलस—राय सिद्धार्थ वंशभूषण, त्रिशलादेवी मायजी । शासननायक तीर्थ उशिया, रत्नविजय प्रणमे पायजी ॥ साल चहोंतेर जेष्ट मास, सुद पंचमी गुरुवारजी । गयवर शरणो लीयो तोरो, सफल भयो अवतारजी ॥ ३७ ॥ इति संपूर्णम् ॥

अथ श्री

लिंगनिर्णयबहुत्तरी

दोहा—

आदिनाथ आदि करी, चौवीसमा महावीर ।
ऋषभसेण गणधरथकी, गौतमवीर वजीर ॥ १ ॥
ब्राह्मी सुन्दरी साधवी, चन्दनबाला गुणखाण ।
शुद्धलिंग जिनराजसे, पामीपद निर्वाण ॥ २ ॥
श्रेयससे श्रावक हुवा, आनन्दादिक जाण ।
सुव्रतासे हुइ श्राविका, सुलसातक पहेचाण ॥ ३ ॥
शुद्ध साधु श्रावकतणो, लिंग कह्यो जिनराय ।
सुरनरने सुन्दर लगे, निरखत नयन ठराय ॥ ४ ॥
हुंडा सर्पिणी योगमें, जनमें मच्यो फेल ।
लुंके उत्थापि प्रतिमा, लवजी वदन्यो चेन्ह ॥ ५ ॥
भस्मीग्रह उतर्या पछी, संघराशी धूमकेत ।
तेपण हीय उतरी गयो, संघहुवो सावचेत ॥ ६ ॥
हठ कदाग्रही जीवडा, पकडी न छोडे वात ।
जेहने शिवसुख चाहिए, तो तजीये पक्षपात ॥ ७ ॥
शुद्धलिंगमे मुनिवरा, कुलिंगमे कुसाध (साधु)
आगममें निर्णय करु, सुणजो तजी प्रमाद ॥ ८ ॥

ढाल पहेली

(देशी—भुंडीरे भुख अभागणी. बाला खाणी नाम लालरे.)

शुद्धलिंग तुमे सांभलो, आगमके अनुसार ॥लालरे॥ शुद्ध लिंग तुमे सांभलो ॥ दशमा अंगे भाखीयां , ओघ निर्युक्ति जाण लालरे ॥ बृहत्कल्प अंग पहेलडे, भाख्यो श्री जगभाण ला० ॥ शु० ॥ १ ॥ एक वेंत च्यार अंगुली, मुख वस्त्रको मान ला० रजोहरण अंगुल बत्तीसको, दंडो परिमाण कान ॥ ला० ॥ शु० ॥ २ ॥ चोलपटो हाथ पांचको, दोनों चोडा खुला होय ला० साडातीनसे पांच हाथकी, तीन पीच्छोवडी जोय ला० ॥ शु० ॥ ३ ॥ डावी कारवमें ओघो रहै, मुखवस्त्री-का जीमणे हाथ ॥ ला० ॥ खंधा उपर रहे कंबली, दंडो रहे नित्य साथ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ४ ॥ गुप्त झोलीमें पातरा, उ-पर पडिला तीन ला० कमंडल नाम है तरपणी, [1]व्यवहारे नि-र्णय कीन ॥ ला० शु० ॥ ५ ॥ जीमणे हाथ निचे थकी, च-दर ओडे साध (मुनि) ला० यथायोग्योपकरणकी, राखेजिन मर्याद ॥ ला० शु० ॥ ६ ॥ परम्परा इम चालती, आयो पं-चमो काल ला० पन्दरासो एकतीसमे, बेठो धूमकेतु विकराल ॥ ला० ॥ शु० ॥७॥ जिनभक्ति उत्थापवा, प्रगटी लुंपकजाल[2] ला० लिंगराख्यो सब जैनकों, श्रद्धापहुंची पाताल ॥ला०॥

---

१ व्यवहारसूत्रके मूलपाठमें कमंडलका लेख है ।

२ लुंपक वनियाकी उत्पत्ति देखो सिद्ध प्रतिमा मुक्तावली.

शु० ॥ ८ ॥ अक्षर शुद्ध जाणे नहीं, आगम केम वचाय ला० पायचन्द्रसूरितणो, सरणो लीधो जाय ॥ला० ॥ शु० ॥ ६ ॥ उक्तसूरि इम बोलीया, जो जावों जिन प्रासाद ला० जिनप्र तिमा मानों जिनतुल्य, एवी पालो मर्याद ॥ला० ॥शु०॥१०॥ तो तुमने टीका थकी, टबो देउ वनाय ला० मंजुर करी सब वातकी, सूरि टबो रह्या बनाय ॥ ला० ॥ शु० ॥ ११ ॥ टबो हुवो जाणी करी, लुपको लोपीकार ला० हिंस्या हिंस्या करता फीरे, केइ मूढ हुवा त्हेनी लार ॥ ला० ॥ शु० ॥ १२ ॥ सवत् सत्तरासें आठमें, लुपक वजरंग साध ला० तेहनो शिष्य क्रोधसे, लवजी कीयो उन्माद ॥ ला० ॥ शु० ॥ १३ ॥ मुहडे बांधी मुहपत्ती, दडो धरीयो दुर ला० लटकती झोली हाथमें, गुरु निन्दक भडसूर ॥ ला० । शु० ॥ १४ ॥ गुरु बहुत समजानीयो, ताही न मान्यो मूढ ला० दीसे वेष डरावणो, नाम धर्यो लोको ढुढ (ढुंढीया) ॥ ला० ॥ शु० ॥ १५ ॥ धर्मदास ढुढक हुवो, अज्ञानमें सीरदार ला० पायचन्द्र टबा थकी, विप्रीत नीरख्यो सार ॥ ला० ॥ शु० ॥ १६ ॥ जहा जिनमन्दिर प्रतिमा, अर्थ दिया उलटाय ला० अनन्त ससार पोते कीया, बहुतने दिया डुवाय ॥ ला० ॥ शु ॥ १७ ॥ टीकासे टबो हुवो, दोनोंमें प्रतिमा जान ला० ज्ञान साधु वगेचो किये, तो ढुढकने मानमी कोन ॥ ला० ॥ शु० ॥ १८ ॥

आज परंपर दोनोंतणी, यतिलुंकांना जाण ला० लवजीका ढुंढक फीरे, तेहना सुनो यह नाण ॥ ला० ॥ शु० ॥ १९ ॥ वेष श्रद्धा जुदी जुदी, नाम धरावे संत ला० संवत् अठारा पन्द्रडोतरे, प्रगट्यो भिखम पन्थ ॥ ला० ॥ शु० ॥ २० ॥ जुदी पकाइ खीचडी, दयादान उत्थाप्या दोय ला० मूढ चुका कहे वीरने, रुगनाथ गुरु दीयो रोय ॥ ला० ॥ शु० ॥ २१ ॥ पंथी साधु सिवायने, जो कोई देवे दान ला० एकान्त है तेहमें जोवो, कुमत्योंको अज्ञान ॥ ला० ॥ शु० ॥ २२ ॥ नवप्रकारे पुन्य बांधे, दश प्रकारे दान ला० दानछत्तीसी वांचने, हृदय आणो ज्ञान ॥ ला० ॥ शु० ॥ २३ ॥ जीव मार्यो पाप एक छे, बचायो कहे अठार ला० जिनवचनोंके उपरे, मारे मूढ कुठार ॥ ला० ॥ शु० ॥ २४ ॥ जीवरक्षा जड जैनकी, अनुकंपा छत्तीस जोय ला० निरक्षर भट्टाचार्य ज्हांने शरम न आवे कोय ॥ ला० ॥ शु० ॥ २५ ॥ राखोड्यो पाणी पीवे, नितारियों काचो नीर ला० आधाकर्मीनी भावना, क्रिया मुकी पेले तीर ॥ ला० ॥ शु० ॥ २६ ॥ अजीवपन्थी अलगा पड्या, नहीं माने धान्यमें जीव ला० विचरे पंजाबके देशमें, जुदी ढुंढकसे नीव ॥ ला० ॥ शु० ॥ २७ ॥ आठ कोटी गुजरातमें, सामायिकना पच्चखाण ला० गुलाबपन्थ नगुरो थयो, जीख

---

१ लुंपकयति प्रतिमा पूजते है ।

२ स्त्रियोंको सामायिक पोसह नहीं होता है एसी मान्यता थी।

लोपी ढुंढकनी आण ॥ ला० ॥ शु० ॥ २८ ॥ कुडापन्थी करडा घणा, जिन प्रतिमासे द्वेष ला० पचागी उत्थापत, जाणे न आगम रहस्य ॥ ला० ॥ शु० ॥ २६ ॥ मतवाला इम बोलीया, थारे चौरासी गच्छ ला० तेहने उत्तर दिजिये, सब जिनका चाल्या गच्छ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३० ॥ चोथे अगे चाल्या, आदि जिनका चौरासी गच्छ ला० यावत कह्या श्रीवीरना, इग्यारे गणधर नवगच्छ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३१ ॥ पचागी प्रतिमा विषे, श्रद्धा सहुनी एक ला० लिंग पण सहुनो सारखो, समझो आणी विवेक ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३२ ॥ सामान्य विशेष क्रिया, देखीने चमके मूढ ला० पण जिनाज्ञा सहु वहे, दुरे राखीछे ढुढ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३३ ॥ देशीकी जड काटेवा, प्रदेशी लीयो अवतार ला० आप थापी अभिमानीया, आडंबर पूजावणहार ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३४ ॥ स्थानकमें उत्तरों नहीं, उष्णोदकमें बतावे पाप ला० मूल्य भाडे गृहस्ती घर रहे, गुप्त पाणी पीवे सेवे पाप ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३५ ॥ लम्बो रजोहरण राखतां, प्रायश्चित निशिथमें होय ला० गाति गाठ चदरतणी, यमपावण आयो जाणे कोय ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३६ ॥

---

१ "उसमस्स आह कोसलस्स उसभसेण पमुक्खाण चउरासी गण चउरासी गणहारा होत्था × × ×" समणे "भगव महावीरस्स नवगण एकारस्स गणहरा होत्था" समवायांग सूत्र वचनात्।

२ ढुंढीयोंमें फिरका दो है (१) देशी साधु (२) परदेशी साधु।

दोहा.

मोटी बांधे मुपत्ती, धोवे पेसाबसे आवे वास ।
तपसी नाम धरावतो, अद विलोइ पीवे छास ॥ १ ॥
मोटा डाकी पातरा, तेह पण तीन बताय ।
अशूची तेहमें करे, तीणमें लाइ खाय ॥ २ ॥
ऋतु धर्म हो साध्वी, वांचे तेह सिद्धान्त ।
जिन शासन निंदावता, पाटे बेसी बाजे महान्त ॥३॥
सूत्र अर्थके उपरे, शाही सपेतों पूर ।
करे आगम आसातना, कृतघ्नी ने क्रूर ॥ ४ ॥
वासी विदल टाले नही, नही टाले ऋतु धर्म ।
ओघड जीम आचरणा, केइ छाने करे कुकर्म ॥ ५ ॥

ढाळ २ जी.

चतुर नर समजो ज्ञानविचार ॥ ए देशी ॥

दया दया मुखसें रटेजी, करे हिंसाकाजी काम, दिन रात मुंडो बांधतोजी, समुर्छिम उपजे तीणे स्थान, ढुंढकों तज दो कुलिंगको वेष ॥ १ ॥ टेर ॥ (धोवण विषय) दुध आटो ओला राखतोजी, अथवा रस चलित होय, कीडा अन्दर कलवलेजी, परठो तळाव कुवे जाय ॥ ढुं० ॥ २ ॥ अनन्त जीव निगोदनाजी, विफर्स जाय विरलाय, उत्कृष्ट देशीथकीजी,

१ एक दूसरे स्पर्शसे जीव मृत्यु पामते है वहां अनन्त जीवोंकी हिंसा है ।

फिर रह्या फेल मचाय ॥ ढु० ॥ ३ ॥ निंदक कुमरनी ढुढणी-योंजी, इन्द्री ज पेटामें जाण, काइक अधिकाइ कपटनीजी, तीजो आदि पेच्छाण ॥ ढु० ॥४॥ मुढखी अक्षर जाने नहींजी क्लेश करण हुसीयार, काम पडे उत्तर तणोजी, रात्रीमें करे जो विहार ॥ ढु० ॥५॥ लिखतोंही लाजां मरुजी, केसा कर रही काम, चरित्रका चीणा कर्याजी, क्रियाकि न वटे छ दाम ॥ ढु० ॥ ६ ॥ पारबती हुइ ढुढणीजी, समजाइ आतमाराम, इण समय गई करुजी, आगे म कर एसा काम ॥ ढु० ॥ ७ ॥ सब ढुढक नहीं खीजसोजी, कीधाका फल जोय, वात सुणो कुलिंगनीजी, एकाग्रचित्त होय ॥ ढु० ॥ ८ ॥ मोटी चर्चा मुपत्तीजी, लेवे शक्र इन्द्र नाम, सूरियाभनी पूजातणोजी, गीणे देवनो काम ॥ ढु० ॥ ६ ॥ भगवती शतक सोलमोंजी, मूलकों दुजो उदेश, शक्र इन्द्र भाषा विषेजी, मुख वान्धण नही लेश ॥ ढु० ॥ १० ॥ हस्त वस्त्र मुख आगलेजी, राखीने बोले जोय । निर्वद्यभाषा जिन

१ मूर्तिसिद्धिमें प्रतिमा सिद्धि गयवरविलासादि बनचूकी है। ढुढक सूरियाभदेवकी पूजाकों तो देवतोंकी करणी है एसा कहके उडादेते है और मुखवस्त्रिकाके समय शक्रेन्द्रका पाठको अगाडी मो-रचें लाते है । तो जेसा शक्रेन्द्रका पाठ है वेसाही सूरियाभका पाठ है दोनोंकोही मानना चाहिये ।

यत " तुब्भेण भंते मुहपत्तीयए मुहवधही तएण भगव गोयममियादेवीए एव वुत्ता समाणे मुहपत्तीयए मुहवधेइ २ " विपाकसूत्र अ० १ वचनात

कहीजी, खुले मुख सावद्य होय ॥ ढुं० ॥ ११ ॥ खुले मुख नहीं बोलणोजी, बोले जेहनो प्रमाद, रातदिन तोबड बन्धतो जी, मिथ्याहठ उन्माद ॥ ढुं० ॥ १२ ॥ प्रमादकी आलोचनाजी, किरिया होवे शुद्ध, पण कुंलिंग कदाग्रहीजी, मिथ्या छे तस बुद्ध ॥ ढुं० ॥ १३ ॥ कहे आगे मुपत्ती बान्धताजी, अन्त गढकिज वात, आमंतो झाली अंगुलीजी, गौतम बोल्या तेहनी साथ ॥ ढुं० ॥ १४ एक हाथ पकडी लीयोजी, झोली रही दुजे हाथ, खुलेमुख बोले नहीजी, केसे करी वह वात ॥ ढुं० ॥ १५ ॥ झोली हाथ कोंणी परेजी, मुख वस्त्रिका रही हाथ, जैनमुनि आज देखलोजी, सुखसे किनि वात ॥ ढुं० ॥ १६ ॥ गौतमस्वामि विपाकमेंजी, मृगाकुमर देखण जाय, मृगाराणी इम कहेजी, मुपत्ती बान्धो मुनिराय ॥ ढुं० ॥ १७ ॥ जो पहेला बन्धीहुतीतो, राणी कीम कहेती बन्ध, लुंपक लवजी इहां नहीजी, परस्पर होय विरोध ॥ ढुं० ॥ १८ ॥ आचारांग श्रुत स्कन्ध दुसरेजी, तीजा अध्ययनकी वात, छींकादिक हुवे ध्यानमेंजी, मुनि म्होंडे दे हाथ ॥ ढुं० ॥ १९ ॥ कहे उपयोग रहे नहींजी, खुले मुख वायु हणाय, जेहथी मुंहडो बान्धणोजी, आयो मारी दाय ॥ ढुं० ॥ २० ॥ उपयोग दूरो मुकनेजी, मुखबान्धी हुवा निःशंक, तो संयम किमपालसोजी, थें तो पुरो छो शंख ॥ ढुं० ॥ २१ ॥ चौस्पर्श भाषा कही जी, वायु शरीर स्पर्श आठ, जीव मरे नहीं तेहथुं जी, मत करो मनका थाट ॥ २२ ॥ होठसे होठ मिलियो

कहेजी, अठ स्पर्श होजाय, हिंस्या हुवे वायुतणीजी जे-हथी मुख बन्धाय ॥ ढु० ॥ २३ ॥ कीसासूत्रमें एह कहीजी, के मुखसे किनी थाप, न्युनाधिक प्ररूपतांजी, आज्ञा भग वज्र पाप ॥ ढु० ॥ २४ ॥ थारें कहनेसे अठ स्पर्शी हुवेगी, तो मुख बान्ध्यो शु थाय, पुद्गल तो रहे नहींजी, लोकान्त शुद्धि जाय ॥ ढु० ॥ २५ ॥ मुखपत्ती सूत्रें कहीजी, हाथपत्ती न कहे-वाय, थें आहार लोच निंद्रा करोजी, तो खोली केम मेलाय ॥ ढु० ॥२६॥ धरती राख्यो धरतीपत्तीजी, पाटेपाटापत्ती होय, रही नही यहमुखपत्तीजी, हेतुगणा जगजोय ॥ ढु० ॥ २७ ॥ रजो-हरण सूत्र कहेजी, तो रजहरो दीनरात, के कामपडयो लो काम-मेंजी, तो मेलो मुपत्तीमाथ ॥ ढु० ॥ २८ ॥ दशवैकालिक सू-त्रमेंजी, पांचमे अध्ययन पहेलो उदेश, गाथा त्यासी (८३) तीजेपदमेंजी, "हत्थग" बोले समझो रहस्य ॥ ढु० ॥ २९ ॥ थांरे मारे वाद छेजी, तीजो मत देवे साख, तो हठ कीण वातकोजी, परभवको डर राख ॥ ढु० ॥ ३० ॥ वैद्यव्यासजी इम कहेजी, शिवपुराण अध्याय एकवीस,[1] जैनवस्त्र राखे हाथ-

---

१ देखिये ढुढकजी ! वेदव्यासजी शिवपुराण अ० २१ में जैन मुनियोंके लिये क्या कहते है यथा—

मुंड मलीन वस्त्रं च, कुंडीपात्र समाचितम् ।
दधानं पुंजीका हस्ते, चालयन्ते पदे पदे ॥ १ ॥
वस्त्रयुक्त तथाहस्तं, क्षिप्यमाणं मुखे सदा ।
धर्मेति व्यवहारान्तं, तं नमस्कृत्य स्थितं हरे ॥२॥

मेंजी सिद्ध हुइ वीसवावीस ॥ ढुं० ॥ ३१ ॥ जेसे सिद्ध हुइ मुहपत्तीजी, इम सबबोल पेच्छाण, संक्षेपे इतना मांहेजी, बुद्धि-वन्त लेसी जाण ॥ ढुं० ॥ ३२ ॥ एकतो समकित बावनीजी, दुजी दर्पण ज्ञान, कर्ता कहन्यो एकनोजी, दुजो हीरो अज्ञान ॥ ढुं० ॥ ३३ ॥ प्रेरक तीजी ढुंढणीजी, वले ढुंढकजीके साध (साधु) आग्रे ढुंढक श्रावकोजी, लीजो एह प्रसाद ॥ ढुं० ॥ ३४ ॥ जो आगे वडके लिखोजी, तेह मुझ दिजो एक, टोले टोले जुदी जुदीजी, महिमा लिखुं अनेक ॥ ढुं० ॥ ३५ ॥ सुख सदा संपत्त थकीजी, फुट दुःखनोजी मूल, उन्नति करो धर्मकीजी, जिनाज्ञा अनुकुल ॥ ढुं० ॥ ३६ ॥

कलश.

वामानन्दन जगतवन्दन तीर्थंकर तेवीसमो ।
नहीं देव दुजो त्रीकाल पूजो फलोधीमंडनवाल हो ॥
चउसंघ आयो वरघोडो लायो पांचो वाजा वाजतो ।
उपकेश राजे रत्न सुछाजे ज्ञानघन ज्युं गाजतो ॥१॥

समाप्तं ।



और पारवती नामकी ढुंढणीने भी अपनी ज्ञानदीपीका नामके पुस्तकके १४ वा पृष्टमें लिखा है कि बजरांगजी ढुंढकके शिष्य लवजीने सं० १७०८ में मुहपत्ती मुंहको वन्धी है इति ।

अथश्री

ककावत्तीसी ।

दोहा

सद्गुरु चरण सरोजरज, मुझ शिर वसो हमेश ।
कवि नहीं कविता करूं, ककावत्तीसी लेश ॥ १ ॥
अक्षर अक्षर अनन्त भव, अरट घटिका माल ।
सुमति सखी हित कारणे, दे उपदेश रसाल ॥ २ ॥
कका—कटक कर्मोतणी, चढआइ तुझ लार ।
अप्रमत्त गजारूढ हो, मतकर देर लिगार ॥ ३ ॥
खखा—खडग क्षमातणा, ज्ञानघोडे असवार ।
कर्मकटकको जीततां, लागे कितनी वार ॥ ४ ॥
गगा—गारव तीन है, मोहतणा सीरदार ।
तत्त्व तीन त्रीशुल ले, मर्दव दड सुविचार ॥ ५ ॥
घघा—घौर कर देखिये, अपना घर है दूर ।
जागो मोहनिद्रा थकी, अब उगा है सूर ॥ ६ ॥
चचा—च्यार कषाय है, उत्तर भेद पच्चवीस ।
धन हरे दीर्घ कालसे, कर तु इन्हसें चीस ॥ ७ ॥

छछा–छिद्र पारका, मत धोवो पर मेल ।
ज्ञान दीपकसे देखिये, निज आतमका खेल ॥ ८ ॥
जजा–जीतो आतमा, पर जीत्यां क्या होय ।
निज दुश्मन निजमें वसे, ओर दुश्मन नहीं कोय ॥ ९ ॥
झझा–झूठ बोलो मति, झूठ पापको बाप ।
सत्य शील धारण करो, छूटे भवसंताप ॥ १० ॥
टटा–टोटो है नहीं, निज खाताकों देख ।
अनन्त खजाना अखूट है, प्रेम सहित तुं पेख ॥ ११ ॥
ठठा–ठाकुर निजतणो, सूतो काल अनन्त ।
ललकारे सिंहनादकर, होय अरिको अन्त ॥ १२ ॥
डडा–डाकण जाणजो, कुलटा कुमति नार ।
अनन्त जीव भक्षण कीये, अब तुं सूरत संभार ॥ १३ ॥
ढढा–ढंग आच्छो रखो, ढंगसे सुधरे काज ।
स्वसत्तामें रमणता, कर पामों स्वराज ॥ १४ ॥
णणा–रणतूर वाजीयो, चढ चालो रणखेत ।
अन्तःकरण शुद्ध आठमें, शुक्लध्यान लो श्वेत ॥ १५ ॥
तता–तनको देखके, मत करिये अहंकार ।
विनय भक्ति भजनकर, तन पाम्याको सार ॥ १६ ॥
थथा–थारो को नहीं, किनसे करिये प्यार ।
ज्ञान दर्शनमें रमणता, करिये तत्त्व विचार ॥ १७ ॥
ददा–दमन करो सदा, पांचो इन्द्रियां चौर ।

तेवीस योद्धा धनहरे, दोमो रावन मचावे शोर ॥ १८ ॥
धधा–धर्मदोय भेद है, सूत्र ओर चरित्र ।
शुद्ध श्रद्धासे कीजीये, नरभव जन्म पवित्र ॥ १९ ॥
नना–नाटक कर्म संग, नाच्यो काल अनन्त ।
निजघर आवो वाहला, सुमति कहे सुनों कन्थ ॥ २० ॥
पपा-पैसा पापसे, जोड्या लाख करोड ।
अणचेत्यों आसे रिपु, लेसे घाटो तोड ॥ २१ ॥
फफा–फूल सम देह है, चीण चीणमें चय थाय ।
पुन्य पूंजी ले आवियो, खाली खजाने जाय ॥ २२ ॥
बबा–बखत अमूल्य हैं, गइ न आवे कोय ।
वहा पें मूल्य करानीये, जहा कसोटी होय ॥ २३ ॥
भभा–भेद जाणों मति, आतम सिद्ध स्वरूप ।
भेद मीट्यो भर्म टल्यो, तब चैतन्य चिद्‌रूप ॥ २४ ॥
ममा–मर्म जाण्यो पछे, कर्म न बान्धे कोय ।
पूर्व कर्म प्रजालके, सिद्ध समाना होय ॥ २५ ॥
यया–यम नियम धरे, आसन समाधि ध्यान ।
नही जाणी निज आतमा, यह सबलो अज्ञान ॥ २६ ॥
ववा–वाणी जिनतणी, करो सुधारस पान ।
मीटे पीपासा भवतणी, प्रगट्यो परम निधान ॥ २७ ॥
ररा–रात वीती गइ, उग्यो अब दीनकार ।
भानु प्रगट्यो निजघरे, दूर भयो अन्धकार ॥ २८ ॥

ळळा–लटपट छोड दो, राखो एकही वात ।
वेश्यासम कुमति गीनो, पकडो शिववधु हाथ ॥ २९ ॥
शशा–शक्ति सिंहतणी, पिंजर दीधी रोक ॥
हाथल पटकी नाद कर, करे न कोइ टोक ॥ ३० ॥
षषा–षट् द्रव्य अरू, नय निक्षेप प्रमाण ।
तोडो पिंजर कर्मका, तव पहुंचो निर्वाण ॥ ३१ ॥
ससा–स्याद्वाद धोरी भला, शासन रथको जोड ।
चाहे दुश्मन एक हो, चाहे लाख हो कोड ॥ ३२ ॥
हहा–हाः इति खेद है, हार्यो रत्न अमूल्य ।
सुमति तुम प्रसंगसे, चैतन्य भयो अतूल्य ॥ ३३ ॥
क्षक्षा–क्षिण क्षिण जात है, आयुष्य रंग पतंग ।
देर करो मतिवालहा, चलो शिवमन्दिरमें संग ॥ ३४ ॥
ज्ञज्ञा–ज्ञानसुन्दर करो, निज आतमका काम ।
चैतन्य सुमति संगसे, ज्ञान पाम निज धाम ॥ ३५ ॥
उगणीसे इठांतरे, कृष्ण तीज माघ मास ।
नगर फलोधीमें फली, मनवंच्छीत सव आश ॥ ३६ ॥

कलस.

पार्श्वनाथ वर पाट सोहे, शुभदत्त गीरुवा गणधरो ।
हरिदत्त ने भलो आर्यसमुद्र, केशी गणधर हितकरो ॥
सयंप्रभ ने रत्नप्रभसूरी, उपकेश गच्छ आनन्द करो ।
ज्ञानसुन्दर दास जिनका, सदा शिवसंपत्त वरो ॥ १ ॥

अथश्री

ककाबत्तीसीका संक्षिप्तार्थ ।

दोहा

सद्गुरु चरण सरोजरज, मुझ शिर बसो हमेश ।
कवि नहीं कविता करू, ककाबत्तीसी लेश ॥ १ ॥

अर्थ—सन्मार्गके बतलानेवाले सद्गुरुमहाराजके चरण-कमलोंकी रजरूपी जो कृपा हमारे मस्तक उपर हमेशा बनी रहे यह प्रार्थना सदैव करता हू । कारण जो वस्तुकी प्राप्ती होती है वह सब गुरुकृपासे ही होती है क्योंकि एक पाषाणका खड होता है यह भी गुरुमहाराजके निर्देश किये हुवे विधिविधानसे उपासनको प्राप्तकर दुनियाके उद्धारके लिये बडा भारी साधन होजाता है अर्थात् यह सब रस्ते बतलानेवाले गुरुमहाराज ही है वास्ते मैं गुरुमहाराजको वन्दन नमस्कार कर सदैवके लिये कृपाकी ही याचना करता हू ।

यद्यपि मैं कवि नहीं हू तथापि गुरुकृपासे बालक्रीडावत् ककाबत्तीसीकी कविता करनेमें साहस किया है यह भी गुरुकृपाका ही फल है । हे भव्य जीवो ! ज्यादा विस्तारसे नहीं कहता हूवा साधारण मनुष्योंके भी सुखपूर्वक समझमें आ सके वास्ते लेशमात्र ही कहूगा । वास्ते चित्त स्थिरकर पढिये ।

अक्षर अक्षर अनन्त भव, अरट घटिका माल ।
सुमति सखी हितकारणे, दे उपदेश रसाल ॥ २ ॥

अर्थ—चैतन्य राजाकी मुख्य दोय सखीयां है (१) धर्मराजाकी धर्मपुत्री जिस्का नाम सुमति सखी है (२) मोह-राजाकी अधर्मपुत्री जिस्का नाम कुमति सखी है । इन्ही दोनों शोकोंके अन्दर मेल मीलाप-स्नेहाचार कभी भी नहीं रहता है अर्थात् आपसमें हमेशां वैर-विरुद्ध खटपट चली ही करती है और एक दुसरीका छलछिद्र जोया करती है । अपनी अपनी कलाकौशल्य हास्य विनोदसे अपने पतिका प्रेम अपनी अपनी तर्फ आकर्षित करनेकी कोशीष हमेशां करती है जिस्में सुमति सखीका स्वभाव शान्त सरल दीर्घविचार नेकसलाह और अपने पतीका हित इच्छक है । और कुमति सखीका स्वभाव क्रूर मायायुक्त छल-कपट धूर्ततासे सदैव अपना पतिका अहित इच्छक है । यह बात तो प्रसिद्ध ही है कि जहांपर शोकों तरीके दोय सखीयां रहती है वहांपर आपसका स्नेह रहना असंभव है अर्थात् उन्हीकी खटपट हमेशां चलती ही रहती है । यही दशा सुमति कुमतिकी हो रही थी इसलिये चैतन्य राजाने इन्हीं दोनोंको एकत्र न रहने देना इस इरादासे एक कायदा बांध दीया कि जहांतक सुमति रहे वहांतक कुमति न आ सके और जहांतक कुमति रहे वहांतक सुमति न आ सके । इस कायदाको दोनों सखीयोंने सहर्ष स्वी-

कार कर पालन करने लगी । इसीसे यह हुवा कि कुमति म-खीने अपना पति चैतन्य राजाके निज आवासमें छावणी डालके निवास करादिया कि विचारी सुमति सखीकों चैतन्य राजाका दर्शनभी दुर्लभ होगया ।

जब कुमति कीसी समय अपने कार्यवशात् अपने पिता मोहराजाके वहां जाती है तब चैतन्यराजाको अपनी शय्याके अन्दर पोढाके उपर एक बहु मूल्यसाडी (मोहनिद्रारूप) ढांकके जाती है । बस, अनन्तकालतक नि॰चेष्ट हुवा चैतन्य उन्ही शय्या (निगोदादि) में ही पडा रहता है । कभी सु-मति सखी अपने कायदे माफीक पतिके पास आवे बतलावे तोभी घौर निद्रामें पडा हुवा चैतन्य बोलेभी क्यों । सुमतिका आदर तो दूर रहा परन्तु मुह खोलके देखनाभी दुर्लभ था इसी निद्रामें चैतन्यजी अनन्तकाल व्यतित कर रहेथे ।

एक समयकी बात है कि कुमति अपने पिताके वहा जा-नेके समय चैतन्यपर वह निद्रारूप साडी डालना भूल गइथी । कुमति जानेके बाद सुमति अपने पतिके कायदे माफीक पतिके पासमें आइ । चैतन्यने पहेचानी भी नही तथापि अपना स्वा-भाविक गुण होनेसे सुमतिको आदर सत्कार देके अपने पास बैठाली और पुछा कि आप कौन हो ? स्वामिनाथ ! क्या आप मुझे भूल गये हों आपके निज आवासमें रहनेवाली सु-मति हू । इतना कहनेपर चैतन्यको अपना भान हूवा और

बहूतही प्रेमपूर्वक आलिंगनकर विशेष आदर कीया । सुमतिने अवसरपाके कहा स्वामिनाथ ! में कीतनेही दफे आपके पास आइथी परन्तु में कमनसिबहूं वास्ते आपका देदारका दर्शन तकभी नहीं हूवा । तो क्या आप जैसे न्यायशील पुरुषोंको उचित है कि अनन्त कालतक एकही पक्षका पोषण करना और दुसरे पक्षका पोषण तो दूर रहा परन्तु आदरके वदले तीरस्कार करना । इत्यादि प्रेमपूर्वक नम्रता के साथ चैतन्यराजाको उपालंभ दीया ।

सुमति सखीके स्नेह सहित मधुर वचन सुनके चैतन्य कुच्छ मुंहको मलकाता–हसता हूवा अर्थात् अपनी तर्फसे स्नेह वतलाता हूवा बोला कि हे मृगनयनी! में आपसे तीलमात्रभी नाराज नहीं हूं । मैं आपके सद्गुणोंको अच्छी तरहसे जानता हूं, परन्तु क्या करूं अपने कायदाका पालन करनेके लिये मुझे यह वरताव करना पडा है, और वह कुमति स्थानान्तर जाती है जब न जाने क्या जादु डालजाती है या किसी प्रकारका नसा दे देती है ताके मुझे किसी प्रकारका भान ही नहीं रहता है कि कौन आया और कौन गया । में क्या कृत्य करता हूं या अकृत्य करता हूं । परन्तु आज न जाने क्या कारण हूवा है कि मैं ठीक ठीक सावचेत रहा हूं ॥

हे मधुर भाषिणी ! आज अच्छा अवसर मीला है, वास्ते आप यहांपर ही निवास करें और इतने दिनमें निज

घरमें क्या क्या वरतावे हुवा है वह सब हाल मुझे सुनावो, कारण मैं आपकी मधुर भाषा द्वारा सब हाल सुनना चाहता हूं ॥

सुमति सखीने चैतन्यके सब हाल सुनके यह विचार किया कि जो मैं कल्पना करती थी कि मेरी शोक कुमति मेरे पति चैतन्यराजाको वशमें करलिया होगा, यह मेरी कल्पना बिलकुल असत्य है, परन्तु मेरे पिताजी और मेरा भाइ सद्बोध सदागम कहता था कि " आत्मा निमित्तवासी है " यह बात सत्य है। सुमतिने सुविचार किया कि जबतक कुमतिके दुर्गुणोंसे चैतन्यने अनन्तकाल तक दु'ख सहन किया है, वह सब चैतन्यको न समझाये जाय, तबतक चैतन्यकी रूची कुमतिसे कभी हठेगी नहीं। और यह चैतन्य और भी कुमतिके वश हो नरक-निगोदके दु खोंको सहन करेगा। वास्ते मुझे उचित है कि पहले यह भी हाल सुनादू

हे आत्मवीर! जबसे आप इस मोहराजाकी पुत्री कुमतिके वशमें हुवे हैं तबसे इस अपार ससारके अन्दर जन्म मरण रोग शोक आदि अनेक दु'खोंका अनुभव किया है और यह कुमति एक आपको ही नहीं किन्तु आप जैसे अनन्त जीवोंको हालमें भी दु खोंका अनुभव करा रही है। यह आप देखते ही हैं कि यह पशवादि और कितनेक मनुष्योंको भी अत्याचारमें प्रेरणा करती है। यह वही कुमति है जो कि

आपको अनन्तकाल तक भवभ्रमण कराया है। आपका सबका सब दुःख तो मैं नहीं कह सक्ती परन्तु किंचित् वह भी आप ठीक तौरपर समझ सके, वास्ते हेतु सहित ही कहती हूं आप सुनिये। इस संसारके अन्दर १४ स्वर और ३३ व्यंजन अनादिकालसे हैं इन्हीको लोग भाषामें अक्षर भी कहते हैं और जीतने जीव संसारमें जन्ममरण करते है उन्होंको पहेचाननेको अक्षरकी अपेक्षा रहती है। जैसे नारकी कहनेसे प्रथम न अक्षरकी अपेक्षा है। हे स्वामिन्! आप इन्ही कुमतिके संयोगसे एकेक अक्षरके नामवाले अनन्त अनन्त भव किये हैं अब आप स्वयं ही विचार करें कि इन्ही जन्ममरणका आपको कितना कष्ट सहन करना पडा है? मैं कहांतक कहूं।

चैतन्यने यह सुहितरूपी सुमतिके वचन सुनके दीलमें बडा ही दुःख कीया, और गभराता हुवा बोला कि हे प्राणेश्वरी! आपका वचन सत्य है मैंने इतना दुःख सहन किया है कि जिसका वर्णन नहीं हो सक्ता परन्तु अब भविष्य के लिये क्या करना चाहिये कि फीरसे इन्ही महान् दुःखोंका अनुभव न करना पडे।

हे स्वामीन्! जहांतक आप कुमतिका प्रेम बिल्कुल त्याग न करोगे वहांतक भविष्यके लिये इ[illegible] दुःखोंसे नहीं बचोगे। मैंने अबी ही मेरी दासीय[illegible] द्वारा सुना है कि मैं आपकी पास आइ हूं यह स[illegible]

हाल कुमतिका पहूच गया है । यह बात सुनतेही कुमतिने अपने जनक मोहराजाके पास जाके आपकी और मेरी शीकायत करी है, उसपरसे मोहराजाने अपनी सर्व सेनाके साथ आपके उपर चढाइ करी है, एसा समाचार अभी ही सुना है ।

हे हितकारिणी सुन्दरी । जब मेरे सुसराजी मेरेपर सेना लेके आ रहे है तो अब मेरेको क्या करना चाहीये, और एसा उपाय बतलावो कि मै मोहराजाका पराजय कर सकू ।

हे आत्मवीर ! आप घबरावे नहीं कारण मेरा पिता धर्मराजाके पासभी बहुतसी सेना है आपतो एक हो परन्तु आपके जेसे अनन्ते जीव इन्ही दुष्ट मोहराजाके पजोसे छूडवायके मेरे पिताने अक्षयस्थानमें पहूचा दीया है उन्होंके विषयमें तो मोहराजा अभीतक दातोंको पीस ही रहा है आप एकाग्रचित्त होके मेरी अर्ज सुनिये ।

कक्का–कटक कर्मोतणी, चढआइ तुझलार ।
अप्रमत्त गजारूढहो, मतकर देर लिगार ॥३॥

अर्थ–हे स्वामिन्! इन्ही कर्मकटकका अधिपति मोह नामका नरेन्द्र है जिन्होंके कर्मकर्त्ता मिथ्यादर्शन प्रधान है और राग केसरी और द्वेष गजेन्द्र तथा सर्व २८ उमरावों और ज्ञानावर्णिय उपराजा पाच उमरावोंसे, दर्शनावर्णियराजा नव उमरावोंसे, वेदनियराजा दोय उमरावोंसे, आयुष्यकर्म राजा चार उमरावोंसे, नामकर्मराजा १०३ उमरावोंसे, गोत्रकर्म राजा

मूल दोय और साथमें सोले उमारावोंसे और अन्तरायकर्म राजा तो पांच महान् योद्धोंसे कटकके साथ है। हे स्वामिन् ! मोहराजाके कटकमें पुरुष और स्त्रियां सभी उमरावोंमें ही समावेश होता है। वह तीन लोकको त्रास देता हूवा आपके पीछे आ रहा है।

हे सुमति! में अकेला इन्ही महान् योद्धाओंको कैसे जीत सकता हूं।

हे स्वामिन्! आप चालिये मेरे पिताके घरपर वहांपर एक गन्धहस्ती है उन्हीपर आप विवेकरूपी अंबाडी और दोनों तर्फ स्याद्वाद रुप दो घंटा लगा दो और शुद्ध अन्तःकरणका वज्रदंड हाथमें मजवुत पकडलो मैं आपके अप्रमत्तरूपी गन्धहस्ती के उपर माहावत वन वेठजाउंगी फीर आप देखीये मोहका कटक आपके सन्मुखही क्यों आवेगा अर्थात् दुरहीसे भग जावेगा।

चैतन्य सुमतिकी वात सुन जिस माफीक मोहसे संग्राम करनेको तैयार हो गये उसी माफीक सर्व आत्महितेषीयोंको अपना स्वराज प्राप्त करना चाहीये।

खखा–खडग क्षमातणो, ज्ञान घोडे असवार।
कर्म कटकको जीतते, लागे कितनीवार ॥ ४ ॥

अर्थ–इतनेमें मोहराजाका वडापुत्र द्वेष गजेन्द्रका वडा पुत्र विश्वानल अपने सुभटोंको साथमें लेके चैतन्यराजा परचढ़ाइ की थी उन्होंको देखके चैतन्य वहुत ही, घवराने लगा

और सुमतिको पुछाकि अब क्या उपाय करना चाहिये । तब सुमति बोली कि हे स्वामिन् आप क्यों घबराते हो, मेरा पिताके खजानेमें एक ऐसा चन्द्रहास खडग (क्षमारूपी खडग) है यह मानों दुश्मनोंके लिये एक सुदर्शन चक्र है और दुसरा कम्बोज देशका आकरणी जातिके अश्वकोभी लजित करनेवाला अश्व (ज्ञानरूपी अश्व) है उन्हींपर आप असवार होके यह खडग हाथमें धारण करो, फिर इन्ही जड कर्मोंको पराजय करनेमें क्या देर लगती है ।

हे नाथ-क्षमारूपी खडग और ज्ञानरूपी अश्व अर्थात् ज्ञान सहित क्षमा करनेसे हजारों दुश्मनरूपी कर्मोंका एक श्वासोश्वासमें नाश हो जाता है । इन्हीं सुमति सखीकि हित शिक्षाको धारण कर चैतन्य हिम्मत बाहादुर होते हूवे रिपुओंका पराजय करनेको कम्मरकम तैयार हो गया है वास्ते सबको तैयार होना चाहिये ।

गगा–गारव तीन है, मोहतणा सीरदार ।
तच्च तीन श्रीशुलले, मर्द्दव दढ सुविचार ॥ ५ ॥

अर्थ–इतनेमें तो मोहराजाके सीरदार जो रसगारव, ॠद्धिगारव, सातागारव, इन्होंकि मददमें मायाशल्य, निदानशल्य, मिथ्यादर्शनशल्य भी साथमें केसरीया करके चैतन्यपर चढाइ करीथी, एक दुसरेके साथमें अभिमान कर रहेथे, कि चैतन्यकि क्या ताकत है देखिये हम उन्हींको रणमें गर्द बना

देंगे, कुटम्ब धनामें लोभी बना देंगे, सुखशल्य बना देंगे, माया कपटाइ धूर्तताके लपेटामें ले लेंगे, इतने परभी वह मोहरूपी पासमें न पडेगा तो उन्हीकि सर्व धर्मक्रियाका मैं नियाणा करा दूंगा, इतनेमें मिथ्यादर्शनशल्य बोलाकि तुम फीकर क्यों करते हैं, चैतन्यके असंख्याते प्रदेश है उन्हीसे मैं चुपकेसे कीसी२ प्रदेशोमें छावणी डालके अपने सबका निर्वाह कर दुंगा। अपने अपने मनके मोदक बान्धते हूवे चैतन्यकी तर्फ आने लगे, तब चैतन्यने सुमतिसे पुछा कि दुश्मन तो नजीक आ रहे है, अब क्या करना चाहिये। सुमतिने कहाकि हे प्राणेश मर्दवरूपी वज्रदंड लेके पेस्तरतो इन्ही तीनों गारवका मदको चकचुर करदो। बादमें शुद्धदेव शुद्धगुरु शुद्धधर्म रूपी यह तीनों तत्त्वोंकी तीक्षण त्रीशुल है इन्हीको करकमलोंमे धारण कर तीनों शल्योंको अलग अलग त्रीशुलसे छेदन भेदन करदो कि इन्ही महान् दुष्टोंका फीर कीसीके परभी जोर जुलम न चले।

घघा—घौर कर देखिये, अपना घर हे दूर।
जागो मोह निंद्रा थकी, अब उगाहे सूर ॥ ६ ॥

एक समय चैतन्यराजा कुमति सखीके उपर पलंगपर लेट रहा था उन्ही समय मोहराजाके प्रमाद नामके महान् योद्धा उन्होंकी पुत्री निद्राने चैतन्यराजाको झकडके अपने आधिन बनालिया, उन्ही समय कुमति सखीका अन्तरापाके सुमति सखी अपने प्रितमके पास आके कहने लगी। हे नाथ!

आप अपने घरपर जानेका प्रयाण किया था तो इस विषम रस्तेमें क्यों लेट रहे हो कारण अभीतक आपका घर (मोक्ष) बहुत दुर है वास्ते अब मोहनिद्राको जरा दुर करो अनन्तकाल हो गये है इन्ही घोर अन्धकाररूपी रात्रीमें ही आप इदर उदरके धक्के खा रहे हो परन्तु जरा दुसालेको दुर कर मुह बहार निकालोगे, तो आपको सूर्य (ज्ञान) दीख पडेगा फीर अपने मकानपर जाने योग्य रस्तेका स्वीकार कर निज स्थानपर पहुच जाना। चैतन्य यह सुमति सखीका वचन सुनके खडा हो वार्तालाप करने लगा। इतनेमें सुमति सखी चैतन्यसे कहने लगी हे स्वामीन्!

चर्चा—च्यार कषाय है, उत्तर भेद पचवीश।
धन हरे दीर्घकालसे, कब तु इन्हसे बचीश॥७॥

अर्थ—हे कन्थ! मुख्य च्यार कषाय है परन्तु इन्हीका उत्तर भेद पचवीश है।

४ अनन्तानुबन्धी—क्रोध, मान, माया, लोभ। सम्यक्त्व गुणको रोके।

४ प्रत्याख्यानि—क्रोध, मान, माया, लोभ। देशव्रत गुणको रोके।

४ अप्रत्याख्यानि—क्रोध, मान, माया, लोभ। सयम गुणको रोके।

४ संज्वलनके—क्रोध, मान, माया, लोभ। वीतराग गुणको रोके।

६ हास्य, भय, शोक, जुगुप्सा, रति, अरति। शुक्ल-ध्यानको रोके।

३ स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। अवेद गुणको रोके।

यह २५ कषाय प्रतिदिन आपके निज गुणरूपी धन जो ज्ञान दर्शन चारित्र है उन्हीको दीर्घकाल अर्थात् अनन्त-कालसे हरण कर रहे है तो मेरी अर्ज है कि जब आपके धन हरण करनेवाले दुश्मन है, तो इन्ही दुश्मनोंके साथ आप प्रिति क्यों कर रखी है। क्या आप नहीं जानते हो कि, यह महान् दुष्ट अनन्ते जीवोंको विश्वास दे देके अपने कबजे कर, केद कर दिये है। तो मैं आपसे कहती हूं कि आप इन्होंसे कब प्रिति तोडोगे अर्थात् कब इन्ही दुष्टोंसे बचोगे, मैं आपको हितकारी बात कहती हूं तथापि आप मेरी बातपर ख्याल नहीं करते हुवे इन्ही दुष्टोंके साथ गुपचुप प्रवृत्ति करते हो परन्तु वह मेरेसे छीपी हूइ नहीं है. लो सुनलो।

छछा–छिद्र पारका, मत धोवो पर मेल।

ज्ञान दीपकसे देखीये, निज आतमका खेल ॥ ८ ॥

अर्थ—हे स्वामीन्! आप कुमतिके कबजे होके पारके छिद्र देख रहे हैं और रजक (धोबी) के पदको धारण कर

दुनियोंकी छती या अछती निंदा कर अपनी कुमति सखीका पोषण करते हो परन्तु क्या आप अनन्तकालके दुःखोंको भुल गये है कि परछिद्र देखना और परनिंदा करना भवान्तरमें कितना दुःखका कारण होता है। भला आप दीर्घदृष्टिसे विचारीये कि इस्में आपको क्या स्वार्थकी प्राप्ति होती है। चैतन्य बोला कि हे सुमति ! इस्में मेरेको स्वार्थ तो कुच्छ भी नहीं है परन्तु मेरेको यह एक कीसमका ईसक (स्वभाव) ही पड-गया है कि अब मेरेसे रहा नहीं जाता है। हे नाथ ! यह आपके हृदयमें दीर्घकालसे असर जमानेवाली कुमति है परन्तु आपको एसा ही इसक होगया हो तो मैं आपका इसक छोडाना नहीं चाहती हु किन्तु आप ज्ञानरूपी दीपक हाथमें लेके अपने आत्माका छिद्र देखीये कि यह आत्मा क्या क्या करता है और एक दिनमें कितने अकृत्य कार्य करता है। अकृत्य कार्य किये हुवेकि निंदा हमेशाके लिये करते रहो, अगर इस पाप का वजन कोइ कम करनेवाले (आपकी निंदा करनेवाला) मील जावे तो आपको खुशी मानके उन्ही उपगारी पुरुषोंका उपकार मानो, हे साहिब ! एसा इसक रखो कि जिन्होंसे भव-भवमें मेरी और आपकी प्रीति बनी रहे अगर आपका यह दुष्ट इरादा हो कि मैं दुसरोंका छिद्र देख निंदा कर पराजय कर दू तो यह भी आपका विचार खराब है इन्हीके लिये भी आप कान देके सुनिये।

जजा-जीतों आत्मा, पर जीत्या क्या होय।
निज दुश्मन निजमें वसे, और दुश्मन नहीं कोय ॥९॥

अर्थ—हे चैतन्यराजा! आपको कुमतिने बडा भारी भर्म डाल दीया है वास्ते आप अपने दुश्मनोंको सज्जन मान अपने निजावासमें स्थान दे रखा है और जो आपके दुश्मन नहीं है उन्हीमें आपकी दुश्मनभ्रान्ति करादी है परन्तु जब आप मेरी शय्यामें आवोगे तब जान पडेगी कि "अप्पा अरि होइ अणवठियस्स" + + "अप्पामित्तममित्तंच" इस वास्ते आप परको पराजय करनेका निरर्थक पुरुषार्थ क्यों करते हैं अगर आपको पुरुपार्थ ही करना हो तो आपका आत्माके अन्दर रागकेसरी और द्वेषगजेन्द्रके पुत्र क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, भय, शोक आदि अनेक दुश्मनों रहा हुवा है इन्होंके साथ युद्ध कर अपने कब्जे कर लोगा तो फीर दुनियांमें आपके कोइ भी दुश्मन नहीं है। हे सुमतिप्रिय! आपका कहना तो बहुत अच्छा है परन्तु इन्होंको पराजय करनेको एक शस्त्र एसा होना चाहिये कि प्रथमसे इन्ही दुश्मनोंका नायकको अपने आधिन बनाले। सुमति बोली कि हे नाथ! अपने घरमें बहुत शस्त्र है जिससे दोनों हाथोंमें दो शस्त्र लो।

झझा-झुठ बोलो मति, झुट पापको बाप।
सत्य शील धारण करो, छुटे भव संताप ॥१०॥

अर्थ—हे स्वामिन्! सर्व पापोंका बाप तथा नायक एक झुठ बोलना है कारण कि दुनियामें सब बातोंका इलाज हो सक्ता है परन्तु झुठ बोलनेवालेका इलाज नहीं है और सर्व दुर्व्यसनोंमें शिरोमाणि कर्मदलिकमें अधिक तीव्रता रस डालनेवाला असत्य है और मिथ्यात्वके आगमनमें अग्रेश्वर मोहराजाके सर्व दुतोंमे यह एक नायक दुत है वास्ते आप इन्होंका पराजय करनेके लिये अपने निज खजानासे एक सत्य और दुसरा शील यह दोनों बडेही जोरदार शस्त्र धारण करके इन्ही पापके बापको अपने कबजे करलो कि फीरसे इसी चौरासीके अन्दर भव भ्रमनके तापरूपी संतापके संकटोंका मुह ही देखना न पडे अर्थात् भवभ्रमनको जलाजलि देके मोक्ष चले जावोगे फीर अपने अचलानन्दमें अव्याबाध सुखोंका अनुभव करते रहेंगे।

हे स्वामिन् कुमतिने आपको यहभी भर्म डालाथा कि सुमतितो भीखारण हे निर्धन है इन्होंके पास जानेवाला बडा ही दुःखी हो जाता है क्योंकि सुमति अति प्रसन्न होती है तब जगतके अच्छे सुन्दर पदार्थ खानेका पीनेका पहेरनेका मोजमजा रगरागका तो प्रथमही त्याग करा देती है बादमें योगि बनाके घर घरमें भिक्षा मगवाति है यह सर्व दालिद्रताकाही चिन्ह ह वास्ते हे कामणगारा कन्त! आप भुल चुकके सुमतिके प्रासादमें कभी नहीं जाना, अगर इन्ही कुमतिके कहनेपर आप विश्वास किया होतो अब सुनिये।

टटा-टोटा है नहीं, निज खाताको देख।
अनन्त खजाना अखुट है, प्रेम सहित तुं पेख ॥११॥

अर्थ-हे नाथ ! कुमतिने आपको अनादि कालसे अपने पक्षमें रखनेके लिये कभी कभी पौद्गलीक सुख देखाके नरक निगोदके दुःखोंसे आपके निजगुणोंकि हानि करी है इसीसे आपको जहां तहां टोटाही टोटा मालम होता है अर्थात् आपको पुन्यहिन बनाके बन्दरकी माफीक चतुर्गतिमें परिभ्रमन करा रही है। परन्तु हे स्वामिनाथ आप अपनि निज दुकानमें-पधारके अपना निजखाताको देखो, आपकी दुकानमें बिलकुल टोटा नहीं है। लो मैं आपको आपके निजघरका अखुट खजाना बतलाती हूं देखिये आपके एकेक आत्मप्रदेशमें अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्तचारित्र अनन्तवीर्यरूपी धन भरा हुवा है जोकि आप इन्हीको मेरी शय्याके अन्दर रहके सदैव उपभोग करते रहोगे तो यह खजाना अनन्तानन्त काल तक कभी खाली न होगा वास्ते मैं अर्ज करति हूं कि एक दफे प्रेम सहित आप अपने खजानाको देखो। हाँ आपके इन्ही खजानेको लूंटनेवाले दुश्मन बहुतसे है परन्तु दुश्मनोंका जोर कब लगता है ? कि जब खजानाके मालिक घोर निंद्रामें सुता रहे तो चौर अवश्य मालका हरण करता है वास्ते अर्ज है कि-

ठठा-ठाकुर निजतणो, सुतो काल अनन्त।
ललकारे सिंहनादकर, होय अरिका अन्त ॥ १२ ॥

अर्थ-हे प्रभो! आपके निजानन्द नामका ठाकुर अनन्तकालमें कुमतिसखीकी साथ शय्याके अन्दर मोहनिद्रारूपी दुसाला ओडके सुता हुवा है। हे गुफावासी सिंह! जरा हमारी अर्जपर ध्यान देके सम्यग्दर्शनरूपी हातल और ज्ञानरूपी गर्जना करिये। अर्थात् अनन्तवीर्यरूपी श्राक्रममें सिंहनादकि ललकार करिये ताके आपको अनन्तकाल तक अपने कब्जे रखके अनन्ते भव भ्रमन करानेवाले अरि (वैरी) को जड-मूलसे नष्ट होनेमें क्या देर लगति है। हे स्वामिन् जहांतक आप इन्ही दुश्मनोंसे घबराते रहोगे, वहा तक यह दुश्मन आपको कभी छोडनेवाले नहीं है बल्के आपको अधिकाधिक दु:ख देंगे। हे स्वामिन मैं आपके दुश्मनोंका भी परिचय करा देती हूं। (१) केवल ज्ञानावर्णिय (२) निंद्रा (३) निंद्रा निंद्रा (४) प्रचला (५) प्रचला प्रचला (६) स्त्यानर्द्धि (७) केवल दर्शनावर्णिय (८) मिथ्यात्वमोहनीय (९) अनंतानुबन्धी क्रोध (१०) एव मान (११) एव माया (१२) एव लोभ १३-१४-१५-१६ प्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ १७-१८-१९-२० अप्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ एव २० दुश्मनों आपके निजगुणोंकी सर्वथा घात करनेवाले हैं और (१) मतिज्ञानावर्णिय (२) श्रुतज्ञानावर्णिय (३) अवधिज्ञानावर्णिय (४) मनःपर्यवज्ञानावर्णिय (५) चक्षुदर्शनावर्णिय (६) अचक्षुदर्शनावर्णिय (७) अवधि दर्शनावर्णिय ८-९-१०-११ सञ्ज्वलनका

क्रोध मान माया लोभ १२ हास्य १३ भय १४ शोक १५ जुगुप्सा १६ रति १७ अरति १८ स्त्रिवेद १९ पुरुषवेद २० नपुंसकवेद २१ दानान्तराय २२ लाभान्तराय २३ भोगान्तराय २४ उपभोगान्तराय २५ वीर्यान्तराय एवं २५ दुश्मनों आपके निज मालको देशसे लुंटालुंट कर रहे हैं अर्थात् च्यार घातिकर्मोंकि ४५ प्रकृति है जिस्मे २० प्रकृति सर्व घाति है और २५ प्रकृति देशघाति है इन्होंने निजानन्दका अनन्तज्ञान गुण, अनन्त दर्शन गुण, अनन्त त्तायकगुण, अनन्तवीर्य गुण इन्ही चारों गुणोंको अनन्त कालसे दबा रखा है। क्यों चैतन्यजी! अब आपके नेत्रोंका पडल दुर हुवे हो तो एक सिंहनादकी ललकार करीये तांके आपकी भवोभवकी निंद्रा दुर होजाय फीर अच्छी तरहसे शिवसुन्दरीके साथ अव्याबाध सुखोंका अनुभव भोग करते सदैव आनन्दमय बन जाइये। इस मेरे कहने पर आप अवश्य विचार करेंगे। अगर इस अवसरभी आप पहिलेकि माफीक गफलत रखोगे तो मैं आपको सची सची बात सुना देती हूं।

डडा—डाकण जाणजो, कुटीला कुमति नार।
अनन्तजीव भत्तण किया, तुं अब सुरत संभार ॥१३॥

अर्थ—हे चैतन्यराज! आप इन्ही कुटीला कुमतिके बाहारके हाव भाव रंग राग देखके इन्ही दुष्टाके फन्दमें पड जाते हो तब यह कुमति आपको विश्वास उत्पन्न करनेको खान

पान एवं आरामादि कार्योंमें प्रेरणा करती है और आपके हाथसे न करने योग्य अत्याचार कराती है कभी कभी तो आपके हृदयकमलमें निवास कर देती है और आपके प्रदेश प्रदेशमें अपना असर पहुंचा देती है जिन्होंके जरिये आपको जडवत् बनादेती है। वास्ते महान् पुरुषों इन्ही कुटिला कुमतिको डाकनके नामसे पुकार रहे हैं। डाकन हो तो एक ही भवमें भक्षण करती है परन्तु यह कुमति डाकन तो भवोभवमें भक्षण करती है, हे नाथ! बिचारी डाकन तो एक दोय अथवा तीन जीवोंका भक्षण करती है परन्तु यह महान् दुराचारिणी कुमतिने तो अनन्ता जीवोंका भक्षण किया है इतनेपर भी तृप्त न हुइ और अनन्ते जीवोंका भक्षण कर रही है, और इन्हीके पञ्जेमें आवेगा उन्होंको कभी नहीं छोडेगी, हे स्वामिनाथ! आप मेरी शय्याके अन्दर पधारे हो वास्ते मैं आपको नम्रतापूर्वक अर्ज करती हूं कि आप अपनी दशाको ठीक ठीक संभाल करते रहे कारण जहांतक इन्सान अपने ढगपर चलते है उन्हों पर किसीका जोर नहीं चलता है वास्ते ही मैं आपको वार वार अर्ज करती हूं कि—

ढढा—ढग आच्छो रखो, ढगसे सुधरे काज।
स्वसत्तामें रमणता, कर पामो स्वराज ॥ १४ ॥

अर्थ—हे स्वसत्ताविलासी! अनन्तकालकी कुमति दूर हो गइ है अब भी आपको चेतना हो तो आप अपना ढग—

चलन अर्थात् नियम व्रत पच्चक्खान यह बाह्य ढंग है और परवस्तु जो पौद्गलादि द्रव्य पांच है उन्हींको हेय पदार्थ समझके त्यागभाव रखो। अर्थात् आपके अच्छे ढंगको देखके कुमति बहुत कोपीत होके आपके अच्छे ढंगमें हजारों विघ्न करेंगी क्युं कि अच्छे ढंगपर चलनेवालोको तो कुमति अपने दुश्मन ही समझती है। हे स्वामिनाथ ! आपकों मैं पहलेसे ही इन्ही कुमतिकी आदतें बतला देती हूं आप कान देके सुनिये। आप जब अच्छे ढंग (चलन) पर चलेंगे तब कुमति दुर रहकर आपके शरीरमें व्याधि कर आपका ढंग छोडा देगी। कभी चोरीका माल बहुत सस्ता आपके पास भेजेगी वह आपसे स्वल्प मूल्यमें खरीद कराके कारागृहमें डलावेगी। कभी स्त्रीपर राग, कभी पुत्रपर राग, कबी मानदशा, कभी निबिडमाया इत्यादि प्रपंच कर आपको अच्छे ढंगसे भ्रष्ट कर अपनी शय्यामें पकड लेजावेगी। वास्ते मैं आपसे निवेदन करती हुं कि आप अपनी सत्ता जो ज्ञान, दर्शन चारित्र और वीर्य इन्होंमें रमणता करो और स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल, स्वभावके दरवाजेसे कभी भूलचुकके पांव बहार न धरना, एसे जो वरताव रखोगे तो पराधिनपणासे मुक्त होके आप अपने असंख्य प्रदेश सत्तावाले नगरमें स्वराज करते हुए स्वतंत्र सुखोंका अनुभव करोगे और मैं आपके इन्ही कार्यमें हमेशां मदद करती रहूंगी।

णणा-रणतुर वाजियों, चढ चालो रणखेत।
अन्त'करण शुद्ध आठमे, शुक्लध्यान लो श्वेत ॥ ९५ ॥

अर्थ—हे निजानन्द ! मैं आपसे पहले ही कहती थी कि यह कुमति आपके उपर कुपीत होगी, देखीये रणतुरकी अवाज आ रही है, अगर इस अवसरपर आप चुपचाप बेठ जावोगे, तो यह कुमति अपने बान्धवोंके साथ आपपर अपना हुमला करके आपको पकड अपनी शय्याके अन्दर लेजावेगी, तो फीर आपको अनन्तकाल तक नहीं छोडेगी। वास्ते आप अब पेस्तर मदचुर मुद्गल, विषय विनसन वज्र, कषाय निकदन कुद्दाल, निद्रानष्ट स्मृतिशील और विकथाभग वत्त हाथमें धारण करो इन्होंसे कुमतिके जितने योद्धे-मद, विषय, कपाय, निद्रा, विकथाका शिर छेदके अन्त'करण शुद्धिरूपी निसरणी (श्रेणी) पर चढके आप एकदम शुक्लध्यानरूपी मेरा वृद्ध बन्धवके साथ वार्तालाप करो, वह आपकी पूर्णतया सहायता करेगा, और मा धर्मीमें भी इस बातकी कोशीष करती रहुगी, देर न करीये पुरुषार्थरूपी रथ आपके लिये तैयार है इसपर विराजके रणखेतमें जल्दी चलिये।

हे स्वामिन् अभी मेरे कानोंमें अवाज हुइ है कि हे सुमति ! तु तेरे प्राणपतिको हिनशिना तो दे रही है परन्तु कभी ? कुम तिका एक छोटासा लडका चैतन्यके पास आता है इन्होंने

लिये रुकावटका करार चैतन्यसे पहेले कर लेना। इस वास्ते एक बात आप और भी सुन लिजिये।

तता–तनको देखके। मत करिये अहंकार।
विनय भक्ति भजनकर। तन पाम्याको सार॥ १६॥

अर्थ—सुमति चैतन्यसे कह रही है हे प्रीतमजी! आप इसी गौरे गौरे गात्र (शरीर) को देखके अहंकार न करिये, कारण यह शरीर हाड मांस रक्त मेद चरबी और मलमूत्रसे भरा हुवा उपरसे पतंगके रंगमाफीक लालीमा देख अहंकार कर रहा है परन्तु इन्हीका धर्म क्या है वह भी आप जानते है कि क्षणमात्रमें सडन पडन विध्वंसन हो जाता है। क्या आपने सनत्कुमार चक्रवर्तीका हाल नहीं सुना है? शरीरके सुन्दराकारका अभिमान करनेसे क्षणमात्रमें शोलारोग उत्पन्न हो गयाथा। आप प्रत्यक्ष देखते है कि युवक अवस्थामें शरीरका रंग ढंग कुच्छ और ही होता है और वृद्ध अवस्थामें ज्वरा पिडित शरीरका हाल कुच्छ और ही देखाइ देता है। जोकि शिर कम्पने लग जाता है, मुंहसे लाळें पडने लग जाती है, चमडी लटकने लग जाती है और उठने बैठने की भी शक्ति नही रहती है तो ऐसा नाशवंत शरीरका अहंकार आपको करना ठीक नही है। हे नाथ! इस शरीर पाने का सार यह है कि देव गुरु साधर्मी और मातापितादि सज्जनोंका

विनय करना, भक्ति करना, वेयावच्च करना, तथा परमेश्वरका भजन करना यह ही सार है। इन्होंसे ही यह मीलाहुवा नरभव रत्न चिंतामणि सफल होता है वास्ते आप अहकारको छोडके सद्कार्यमें अपना शरीर अर्पण कर दो। हे स्वामिन्! कितनेक लोगोंका यह भी दुर्ध्यान है कि माता पिता पुत्र कलत्र धन धान्यादि मेरा है वास्ते यह शरीर उन्होंके कार्यमें लगादेते है वास्ते आप जरा इधर भी देखीये।

थथा-थारो को नही। कीसमे करिये प्यार।
ज्ञानदर्शनमें रमणता। करिये तत्त्व विचार ॥ १७ ॥

अर्थ—हे चैतन्यराजा! इस दुनियामें सभी प्राणीवनीयेकी दुकानें और सरायके मेलाकी माफीक मुसाफरोंके रुपमें एकत्र हुवे है। नजाने कोनसा मुसाफर कीस देशसे आया है और कीस देशमें जावेगा, और कितनी वखत यहापर ठेरेगा और यह मेरी प्रित कितनेकाल पालन करेगी? जब इतनाही निश्चय नहीं है तो फीर उन्ही मुसाफरोंका विश्वास कर उन्हाके साथ प्रेम करना क्या उचित है? अर्थात् यह कुटुम्ब मेला है वह सब मुसाफर है यह तेरा नहीं है कारण जब तु परभव गमन करेगा तब यह सब यहापरही रहेगा और जब वहलोक परभव जावेगा तब तु यहापर रहेगा। तो ऐसा कारमी कुटुम्बमे प्रेम कर अपने अमूल्य मनुष्य-

जन्मको व्यर्थ क्षय करदेना आपको योग्य नहीं है। हे नाथ ! यह बडी भारी कोपीशसे मीला हुवा नरभवरत्नका आपको पुर्ण यत्न करना चाहिये। जो अपनी वस्तुपर ही आपको प्रेम होतो आपके निज सबन्धी तो ज्ञान दर्शन है, उन्होंके अन्दर रमणता अर्थात् द्रव्यगुण पर्यायरूपी समुद्रमें कल्लोल करना चाहिये। हे आत्मानन्द ! जरा नेत्रोंको खोलो, आपके असंख्यात प्रदेशरूपी कोशके अन्दर एकेक प्रदेशमे अनन्त ज्ञानगुण अनन्त दर्शनगुण अनन्त चारित्रगुण अनन्त वीर्यगुण भरा हुवा है। उन्होंमें भी अगुरुलघु पर्याय अनन्त है वह आपको समय समय नये नये रूपसे देखाइ देगा। अगर आपको आपके मन्दिरपर प्रेम होतो इन्होंका दरवाजा जो सात नय, च्यार निक्षेप, अष्टपक्ष सतभंगी आदि अनेकान्तपक्ष दरवाजोंके स्याद्वादरूपी कींवाड खोलके अन्दर पधारे और निज परिवारके अन्दर तत्त्व रमणता करे तांकि वह नित्यपरिवारसे शाश्वता प्रेम बना रहे, यह ही आपका सज्जन है इन्ही तत्त्वज्ञानपर सदैव प्रेम सहित विचार करते रहो और इन्ही निजकार्यमें विघ्न करता जो आपके दुश्मन—चौर हे उन्हीको अपने कबजे बनानेकी कोशीष करो।

ददा—दमन करो सदा, पांचोइन्द्रियां चौर।
तेवीस योद्धा धनहरे, दोसोबावन मचावे शौर ॥१८॥

अर्थ—हे नाथ ! आप जब कुमति सखीके वश हो गये

थे तनमे यह वेश्या समान पाचो इन्द्रिया जोकि श्रोत्रेन्द्रिय-आपके अच्छे मनोहर विलासकारी शब्द श्रवण करनेमें प्रेरणा कर रही है, चक्षुइन्द्रिय अच्छे सुन्दराकार तत्काल विषयोत्पन्न करनेवाले रूप देखनेको खींच रही है, घ्राणेन्द्रिय अच्छे सुगन्धदार पुष्पादिकी सुवास लेनेको निमन्त्रण कर रही है, रसेन्द्रिय अच्छे अच्छे भोजन करनेमें आपको बेभान बना देती हैं, कि जो भक्षाभक्ष, रात्रि है कि दिन है! इन्हांसे भी आपको निकल बना देती है और स्पर्शेन्द्रिय सुखशय्या आदिमें अपनी छटा दीखानेमें कुछभी कसर नहीं रखती है। हे महाराज! यह पाचो इंद्रिय अपनी विषय प्रतिकुल पदार्थमें आपको बडेही कुपीतभी बना देती हैं। केवल पाचों इन्द्रियाही नही किन्तु इन्होंके २३ पुत्राको भी साथम रखती हैं। श्रोत्रेन्द्रियका जीवशब्द, अजीवशब्द, मिश्रशब्द, आदि चक्षुरिन्द्रियका श्याम, निला, लाल, सफेत, श्वेत. घ्राणेन्द्रियका दोय सुरभिगन्ध दुरभिगन्ध रसेन्द्रियका पाच तीक्त, कटुक, कषीत, आम्ल, मधुर और स्पर्शेन्द्रियका आठ कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष एवं २३ तथा इन्होंका भी परिवार २५२ सुभट हैं+

+ श्रोत्रेन्द्रियके १२ विकार है। जैसे सुशब्द, दुःशब्द इन्होंके सचित्त, अचित्त, मिश्र करनेसे ६ इन्ही छे अच्छे होनेमे राग और बुरे होनेसे द्वेष एवं १२ और चक्षुइन्द्रियके ६० विकार है। पाच शुभवर्ण, पाच अशुभवर्ण एवं १० सचित्त, १०

वह चैतन्यजी ! आपके उपर हमेशां शौर मचा रहे है वास्ते पेस्तर आपको तपश्चर्यारूपी तलवार हस्तगत करके इन्ही पांचों इन्द्रिय, २३ विषय और २५२ विकारोंका शिरछेदन करके फीर समभावरूपी प्रासादमें अपनी वल्लभा सुमति सखीके साथ अनुभवपान करना उचित है। कारण आपके निज आवासके दरवाजेकी कुंजिये सब सुमतिके हाथमें है वह ही आपको बतलावेगी।

दोधा—धर्म दोय भेद है, सूत्र और चारित्र।
शुद्ध श्रद्धासे किजिये, नरभव जन्म पवित्र ॥१६॥

अर्थ—प्रसन्न चित्त होके सुमति सखी कह रही है कि हे सुखविलासी ! आपके निज मन्दिरकी दोनों कुंजियां मेरे पास है वह लिजिये। धर्म दोय प्रकारका है (१) सूत्रधर्म (२) चारित्रधर्म। जिस्में सूत्रधर्म तो आचारांग, सूयगडायांग,

---

अचित्त, १० मिश्र एवं ३०। अच्छेपर राग और बूरेपर द्वेष एवं ६०। घ्राणेन्द्रियके १२ यथा सुगन्ध दुर्गन्धमें भी सचित्त अचित्त मिश्र एवं ६ पर राग ६ पर द्वेष। रसेन्द्रियके पांच विषय और निमक एवं ६ अच्छे रस और ६ बूरे रस एवं १२ सचित्त १२ अचित्त १२ मिश्र एवं ३६ पर राग और ३६ पर द्वेष एवं ७२। स्पर्शेन्द्रियके ८ अच्छे विषय ८ बूरे एवं १६ सचित्त, १६ अचित्त, १६ मिश्र एवं ४८ पर राग, ४८ पर द्वेष एवं ९६ सर्व १२–६०–१२–७२–९६ सर्व २५२।

स्थानायाग, समवायाग, भगवती, ज्ञाताधर्म कथा, उपासग-दशाग, अन्तगडदशाग, अनुत्तरोववाइदशाग, प्रश्नव्याकरण, विपाक और दृष्टिवाद इन्होंके सिवाय वर्तमान जो उपाग, मूल, छेद आदि पूर्व महाऋषियोंके बनाये हुवे प्रकरणादि यह सर्व सूत्रधर्म है इन्होंके अन्दर पूर्ण श्रद्धा रखके पठन पाठन करना और चारित्रधर्म जो देशसे श्रावकव्रत और सर्वसे साधु-व्रत है इन्होको श्रद्धापूर्वक यथाशक्ति पालन कर अपना मीला हुवा मनुष्यजन्मको पवित्र बनाना। हे मोक्षाभिलाषी ! यह दोनों कुंजिये आपके निजावासकी है इन्हीको स्वीकार कर चलिये मेरे साथ आनन्दसे अनुभव करो। यह मेरा बारबार आमत्रण है क्योंकि आप मेरेसे दीर्घकाल दुर ही रहे थे जैसे कि—

दोहा–नाटक कर्म सग, नाच्यो काल अनत।
निज घर आवो वालहा, सुमति कहे सुनो कन्त ॥२०॥

अर्थ—हे साहिबजी ! मै अनन्तकाल हो गये आपकी राह देख रही हू मेरी शय्या आपके सिवाय बिलकुल सुनी है परन्तु क्या करू ! आपके बन्धे हुवे कायदेमे मै लाचार हू। क्योंकि आप कुमतिके भ्रममें पडके इन्ही मोहराजाके राजमें नाना प्रकारके नाटक करते थे। वह मै सब देखरही थी मुजे बडा दुःख होता था कि मेरा भरतार अनन्त शक्तिवाला

होनेपर भी बन्दरकी माफीक नाच रहा है परन्तु क्या करूं ! आपका कायदा तोडनेको मैं साहसीक नहीं थी। हे स्वामीन् ! अब आपकी दासीकी अर्जको स्वीकार कर आपके निज महेलमें पधारो वहांपर मैं आपकी सेवा करनेकी अभिलाषा करती हूं अर्थात् मेरी अनन्तकालकी पीपासाको पुरण करो। अगर मेरे इस कथनपर आप ध्यान न देंगे तो हे कन्थजी ! जैसे कुमतिने आपको चौरासी चौटोंमें, कभी नरकमें तो कभी देवतावोंमें तो कभी हस्ती, कभी अश्व, कभी गद्धा, कभी श्वान, कभी सर्प, कभी मच्छ, कभी कच्छ, कभी गरुड, कभी मयूर, कभी कीडे--कुंथुवे तो कभी निगोदमें, कभी पृथ्वी, अप, तेउ वायु और कभी वनस्पति, कभी मनुष्यमें भी अनार्य उसमें भी आपकी कुमतिसखी देख रहीथी कभी लुला, लंगडा, काना, बेरा, मुंगा कभी दालद्री, कभी निर्धन, कभी कोष्टरोग, श्वासरोग, जलंदर भगंदर शुल ज्वर आदि रोगसें भ्रमण कराके कुमति खुश होतीथी। हे स्वामिन् आपको कभी राजा बनायाथा और मदिरा, मांस, शीकार, कुदंड आदि कराके आपके नाकमें रसा डालके नरकमें पहुंचा दीयाथा वहां पर परमाधामी देवतावोंने आपका छेदनभेदन कीयाथा वहांसे कभी सेठ सेठन।पति--आदिमें नाटक नचा-याथा तो कभी तेली, मोची, तंबोली, घांची, कुंभरा, खटीक, भील, मैणा, वडभुजादिके वेष कराके नाटक नचाया था। हे

स्वामिन् ! देखीये आपको कभी वैश्या, दूति, दासी, विधवा आदिके वेषमें नाच नचाया था। कभी देवतावोंमें परमाधामी-पणे कि बिलकुल निर्दय, तो कभी व्यंतर पणे, कभी आसुरी-काय तो कभी क्लिबिषिया, कभी अभोगीक तो कभी कुतूह-लीक हे स्वामिनाथ। मे कहांतक इस आपके आत्महरण नाट-कका व्याख्यान करू। क्या उन्ही नाटकोंमे आप विस्मृत हो गये है ? क्या यह सब दु ख इतनेहीमें आप भुल गये हो। हे नाथ ? आपने तो उन्ही प्रेमसहित दु'खका अनुभव किया है परन्तु में तो आपका दु ख देखदेखके आधा शरीरवाली हो गइ हू तो आपने फीर उन्ही दु खों को मूल्य खरीद करने का इरादा करते हो यह बात मै ठीकतौरपर जानती हू परन्तु याद रखीये।

पपा पेसा पापसे। जोड्या लाख करोड।
अणचेत्यो आसे रिपू। लेसे घाटो मरोड ॥ ७१ ॥

अर्थ—हे पुद्गलानन्दी। आप इतने दु ख देखनेपर भी इन्ही सुमडी मायासे प्रीत रखते हो परन्तु अभीतक आपने यह नही सुना होगा कि इस दुनियाके अन्दर महान् सत्वधारी महात्मावोंने इन्ही सुमडी मायाका केसा बडा तीरस्कार कीया है उन्ही जगविनाशक मायाका आप आदर सत्कार करते है उन्हीके लिये राजाका हासल चोराते हो, मातपिता बन्धु सज्जनोंको धोखा दे देते हो, विश्वासघात करते हो, झूठ बोलते

हो, माया छल धूर्तता कुडतोल कुडमाप कुडलेख लिखते हो।
कृत्याकृत्यका भान भूल जाते हो, धर्मकर्मको उंचे धर भर्ममें
धक्का खाते हो, कभी कभी देवद्रव्य, गुरुद्रव्य, ज्ञानद्रव्य,
साधारणद्रव्य का भी प्रसाद कर जाते हो, हे लोभानन्द
आयुष्यके अन्दर तुमनें इस सुमडी मायाको एकत्र करने के
सिवाय कुच्छ भी प्रयत्न नही कीया है और लचों तथा क्रोडों-
की माया एकत्र करी है परन्तु इसीसे हूवा क्या ? भला तुं
स्मृतिकर कि इन्ही नाशवंत मायाको सफल करनेके लिये तेरे
हाथसे कभी:सुकृत में एकपैसा भी लगाया था ? अरे! आत्म-
वीर, जरा मेरे हाथमें हाथ दे के देखीये इस सुमडी मायामें
कितने प्रधान लच्चण है। प्रेमका नाश करना, माता पिता
बन्धु सज्जनोंसे विरोध कराना, अकृत्य—अत्याचार कराना,
सत्संग न करने देना, धर्मकार्योंमे वाधा डालनी, मोच-
मार्गमें विघ्नभूत होना, कीसीपर अछते कलंकका दिराना, असत्य
बोलना इत्यादि अनेक दुर्गुणोंसे अलंकृत होनेपरभी जब कर्मो-
दयसे शरीरमें रोग होता है तब इन्ही मायाको पासमें लाके
कहो कि हे अत्याचारिणी ! मैं तेरे लिये चुधा पीपासा शीतो-
ष्णादि अनेक कष्ट सहन किया है। अब तुं मेरा रोगको नष्ट कर दे
तो क्या वह माया रोगको नष्ट कर सक्ती है ? अरे ! तृष्णाके
पुत्र ! तु जरा विचार तो कर कि जब तेरे रिपु—काल आवेगा
तब यह माया तेरे साथमें चलेगी ? नहीं। बस, काल आतेही

तेरा घाटा मोडके तुजे ले चलेगा—और दुष्कृतकर जो माया एकत्र करी है उन्होंका फल तेरेको परमाधामीयोंसे दीरावेगा वहांपर न तेरी माया काम आवेगी। न तेरे कायाके मजुर पुत्र कलीभी काम आवेगा। वहांपर निर्धन होके तुजे अकेलेको ही दु ख सहन करना पडेगा वास्ते हे नाथ! आप इस सुमडीमाया-तृष्णाको दूर ही रखो। और इन्ही प्रधान शरीरमे बने वहांतक अच्छ कार्य करो क्योंकि—

फफा—फुल सम देह है, क्षण क्षणमें क्षय थाय।
पुन्य पुंजी ले आयीयों, खाली खजाने जाय ॥२२॥

अर्थ—हे आत्मविलासी! अगर यह प्रधान शरीर अर्थात् मनुष्य जन्म जो कि बहुत मुश्कीलसे मीला हुवा है वह भी प्रतिक्षण क्षय हो रहा है। इन्हीके लिये अगर आप जरा भी विचार न करोगे तो क्या यह प्रधान मनुष्यभव आपको वारवार मीलाही करेगा? नही नही यह नरावतार वडाही दुर्लभमे मीलता है। आजतक जो तुमने संसारके अन्दर भव किया है उन्होंका हीसाब किया जाय तो अनन्ते भव तीर्यंचके करनेपर एक भव देवतावोंका मीला है और असंख्याते भव देवतावोंके करनेपर एकभव नरकका मीला है और असंख्याते भव नरकके करनेपर एक भव मनुष्यका मीला है अर्थात् एक भव मनुष्यका कब मीलता है कि असंख्याते नरकके भव, उन्होंसे असंख्यात गुणे देवतावोंका भव, उन्होंसे अनन्त गुणे तीर्यंचके

भव किया है तब एक भव मनुष्यका मीला है। क्या एसा मनुष्यभव चिंतामणी रत्न, कामकुंभ, कल्पलता, चित्रावेली, और सुरतरूसेभी अधिक अमूल्य नहीं है ? अर्थात् इन्हांसभी अमूल्य है ! अरे ! भर्मकी खाटपर पड हुये प्रीतमजी ! इन्ही नर-देहकी देवताभी इच्छा करते है तो फीर आप प्राज्ञ होके इस मनुष्यभवको रदी खातेमें क्यों निष्फल करते हो । हे स्वामिन् आप पूर्वभवमें पूर्ण पुन्योपार्जन किये वह साथमें लेके आयेथे कि जिन्होंके जरिये आपको आर्य क्षेत्र, उत्तम जाति, शरीर निरोग, पूर्णेन्द्रिय, दीर्घायुष्यवाला नरभव और सद्गुरुकी सेवा सिद्धान्तका श्रवण इन्ही आठ बोलों की सामग्री आपको मीली है परन्तु उसपर ठीक निर्मल चित्तसे श्रद्धा रखना और इन्हांमें पुरुषार्थ करना वह दोय कार्य आपके आधिन है । अगर इन्हांको आप नहीं करोगे तो पूर्व आठबोलोंके खजाना लायेथे उन्हीको यहांपर क्षयकर पुन्य रहीत नरक तथा तीर्यच गतिमें चले जावोगे। फीर नरकमें अनन्त वेदना सहन करोगे तीर्यचमें हस्ती, उंट, अश्व, बेल होके दुसरोंकी असवारीका काम देना पडेगा । वास्ते आप इस अमूल्य समयको खेल तमासे हांसी ठठे अस आराममें मत खोओ । मैं आपसे वार वार पुकार करती हूं कि—

दुहा—वखत अमूल्य है, गइ न आवे कोय ।
वहांपे मूल्य करावियें, जहांपे कसोटी होय ॥ २३ ॥

अर्थ—हे निजानन्द ! इस ससारके अन्दर जितने पौद्-गलीक पदार्थ है वह गये हुवे फीर भी मील सक्ते ह जैसे माता पिता पुत्र कलत्र नोकर चाकर राज सुवर्ण चादी हाट और यह शरीर भी किसी कालमें मील सक्ता है । किन्तु जो समयरूपी वखत जाता है वह फीरसे कभी नहीं मीलता ह वास्ते इन्ही समयको व्यर्थ न खो देना चाहिये । हे चैतन्य ! तू ज्ञान लोचनोंसे देख, जब किसी मनुष्यका १०० वर्षका आयुष्य होता है वह ५० वर्ष तो निद्रामें ही क्षय कर देता है शेष ५० वर्षोंके अन्दर दश वर्ष वाल्यावस्था और दश वर्ष वृद्धावस्थामें चले जाते है शेष ३० वर्ष रहता है जिस्में खाना-पीना वेपार करना विवाह-सादी आनाजाना सजन सबधी आदि कितने प्रकारकी उपाधीया है उन्होंके लिये अगर १५ वर्ष छोडदिया जाय तो शेष सो वर्षोंके अन्दर पन्दर वर्ष आपके लिये जमा रहता है । अगर उन्होंको भी गफलतीमे खोद तो क्या वह मनुष्यजन्मका माराश निकाला अर्थात् सोके सो वर्ष धूलमें खो दिया कहना क्या अनुचित होगा ? हे चैतन्य ! आपको इस मनुष्यभवके वखतकी किमत न हो तो किसी सत्पुरुषोंके पास जावों कि जिन्होके पास किमत करनेकी कमोटी हो। वह आपको किंमत कर वतलावेगा कि इस समयकी इतनी किमत है । अगर आप अकेले नही जा सक्ते हो तो चलीये मै आपके साथ चलू । सुमति और चैतन्य दोनो समयकी किमत करानेको कमोटीवालोंके पासगये । वहांपर

जो अपने वखतकी किंमत कर अमूल्य समज रखी है वह महात्मा चैतन्यको एक हितशिक्षा देते हुवे बोले कि—

भभा–भेद जाणो मति, आतमसिद्ध स्वरूप ।
भेद मीट्यो भर्म टल्यो, तब चैतन्य चिदरूप ॥ २४ ॥

अर्थ—हे सुमति ! मुजे आश्चर्य होता है कि यह कुमतिका कन्थ आज तेरे हाथ कहांसे आगया ? साथहि में मुजे आनन्द भी होता है कि ऐसे अनादिकालके भ्रमण करते हूवे प्राणीयोंको अपना वखतकी किंमत कराने की अभिलाषा उत्पन्न हूइ है। हे धर्मपुत्री ! तुं तेरे पतिके हृदयकमलमें निवास करके अच्छी तरहसे चैतन्यको सुनाना जो कि मैं कहता हूं । हे चैतन्य ! वखतका मूल्य तो अमूल्य है परन्तु कौनसा दर्जे पर है इन्हीका निर्णय करना खास जरूरी है। जहांतक प्राणीयोंको यह भर्म है कि मेरी आतमा और सिद्धों की आतमामें भेद है । मैं दुःखी सिद्ध सुखी, मैं अज्ञानी सिद्ध-ज्ञानी, मैं रागी द्वेषी, सिद्ध अरागी अद्वेषी इत्यादि जो भेद समझता हो उन्होंके लिये वखत अमूल्य है परन्तु जब ज्ञानीयोंकी उपासना कर इन्ही भेद भावको मूलसे निकालदे और अभेदावस्थाकी प्राप्ती करले उन्होंके लिये वखत की किंमत नही है क्योंकि जिन्होंको कार्य करना हो वह समय की राह देखता है परन्तु सर्व कार्य सिद्ध कर लिया है उन्होंको समय की राह देखने की आवश्यक्ता नही है। वास्ते हे

सुमतिके भरतार ! अब आप अपनी आत्माको सिद्ध सामान्य समझो जैसे सिद्धोंका स्वभाव अनाहारी है तो मेरा भी स्वभाव अनाहारी है, सिद्धोंका स्वभाव शान्त है तो मेराभी स्वभाव शान्त है, सिद्धज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य रूप घनमय है वैसे मेरी आत्मा भी ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यमय है, जैसे सिद्धोंको पर स्वभावमें रमणता नही है, वेसे मेरेभी परसत्तामें रमणता नही है। सिद्ध स्वसत्तामें रमणता कर रहे हैं वैसेही मुझेभी स्वसत्तामें रमणता करना चाहिये। ऐसे जो अभेद आत्मा हो गया है फेर कीसी प्रकारका भर्म नही रहता है अर्थात् भेद भाव मीट गया है तो चैतन्यको कीसी प्रकारका भर्म नही रहता है एसा होनेसे आत्मा चिदानन्द रूप होजाता है। हे चैतन्य—

ममा–मर्म जाण्यों पछे कर्म न बान्धे कोय।
पूर्वकर्म प्रजालके। सिद्ध समाना होय ॥ २५ ॥

अर्थ—हे आनन्दानन्द ! इस रौद्र ससारके अन्दर जीतने प्राणीयों शुभाशुभ कर्मोपचय करते है वह अभितक कर्मोके मर्मसे अज्ञात है तथा आत्माके मर्म (अभितरके गुण) से अज्ञात है और जिन्ही महापुरुषोंने कर्मोका मर्म जैसे जल-निवास करने वाली मच्छीयों के लिये प्रथम गोलीयों टालते है उन्ही गोलीयोंकी लालचसे मच्छीगरकी जालमें अनेक मछलीया फस जाती है और मृग रागश्रवण कर, हस्ती सुन्दर

रूपदेखके, भ्रमर सुगन्धी लेते हुवे. यह सब कर्मोके मर्मसे अज्ञात होते हुवे क्षणमात्रके पौद्गलीक सुखके लिये अपनी जिंदगीको खो बैठते है। अर्थात् कर्मोका मूल मर्म संसारके अन्दर परिभ्रमन करनेका है एसा समझ गये है फीरसे नये कर्म कबी नही बान्धेगा। जैसे कपील ब्राह्मण दो मास सुवर्ण के लिये राजाके पास गयाथा उन्हो की तृष्णा इतनी तो बढ गइ कि उन्ही राजाका सम्पूर्ण राज ले लेने-पर भी संतोष न हुवा जब इन्ही कर्मोका मर्मको जान लिया तब आत्मभावनाके भुवनमें आते ही केवलज्ञानको प्राप्त करालिया। फीर नये कर्मोंको नही बांधे। जब नये कर्मोका बन्ध नहीं होता है और अनशन, उणोदरी, भिक्षाचारी, रसपरित्याग, कायाक्लेश, प्रतिसंलीनता, प्रायश्चित, विनय, वेयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग, एवं बारह प्रकारकी तपश्चर्या करके पूर्वके शेष कर्मोका क्षय करदेनेसे आत्मा सिद्ध सामान्य निर्मल होजाता है। हे चैतन्यराज! तब ही निज घरके सुखोंकी मालुम होती है परन्तु कितनेक लोक एकान्तवादको ही स्वीकार कर अनेक कष्टक्रिया करते है। कभी तुमको भी भर्ममें न डालदे वास्ते एक शिक्षा और भी सुनलो कि—

यथा-यम नियम धरे, आसन समाधि ध्यान।
नहीं जाणी निज आतमा, यह सबसे अज्ञान ॥२६॥

अर्थ—हे परमानन्दमय ! इस दुनियामें ऐसे भी ढोंगी धूर्त कुमति रागी और कदाग्रह पुनके वसीभूत हुवे मनुष्य देखनेम आते है कि जिन्होंके हृदयमे अभी तक विषय कषा-योंकी वासना दूर नहीं हुई है। जिन्होंने वर्ष दो वर्ष कष्ट करनेपर भी अन्तिम सवाल करते है कि हमको यह वस्तु चाहती है। हे भक्तो ! तुम मुझको यह वस्तु-पदार्थ दीलादो अगर कितनेक ऐसे भी होते है कि बाह्य देखावमें विषयकषा-यसे निवृत्ति देखते है परन्तु अन्दरमें जीवाजीवको नहीं जानता है, बन्धहेतु जो मिथ्यात्व, अव्रत, कषाय, योग उन्होंको नहीं जाना है, निर्जराका हेतुको नहीं जाना है, मोक्षका हेतु जो सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्रको नहीं जाना है, एसा जो अज्ञानी जीव अष्टांगध्यान जो यम नियम आदिसे ही स्वर्गकी इच्छा करते है। कथञ्चित् कष्टके जोरसे स्वर्गादिकके पौद्गलीक सुख मील भी जाते है तो भी इन्होंसे हुवा क्या ? जो ससारमें भव-भ्रमणके तंतु थे उन्होंका तो छेद नहीं होता है। वास्ते महा-ऋषियोंने स्वसत्ता परसत्ताम अज्ञात लोगोंका उक्त कष्टादि सर्वको अज्ञानदशाकी चेष्टा मात्र मानी है। हे आत्मवीर ! आप पेस्तर सदागमसे प्रेमकर जीवाजीवको समझो। यह जीव कीस कारणसे अजीवके पासमे बन्धा है और कैसे छूट सकता है इन्होंका हेतु-कारणको ठीक ठीक समझके ही यम निय-मादि अष्टांगध्यानमे सहज समाधिमें तल्लीन होजावों कि

जिन्होंके जरिये आपको स्वसत्ता प्रगट हो सक्ती है। हे महात्मा! देखीये इन्ही सबका कारण मैं आपको बतलाती हूं—

दूहा—वाणी जिनतणी, करो सुधारस पान।

मीटे पीपासा भवतणी, प्रगटे परम निधान। २७॥

अर्थ—हे हंसात्मा! इन्ही घोर समुद्रमें भ्रमण करनेवाले जीवोंको आकाश प्रदेशसे भी अनन्तगुणी तृष्णारूपी पीपासा लग रही है। उन्हीको शान्त करनेके लिये एसा कोइ भी संसारमें शान्तरस नहीं है कि उन्ही पीपासाको मीटा सके। परन्तु संसारके किनारे रहे हुवे जिनेन्द्र देवोंने शान्ति रसमय जिनवाणीरूपी सुधारस धाराका पान भव्यात्माओंको कराया है और उन्ही सुधारसका पान करते हुवे अनन्ते जीव अपना निधान (केवलज्ञान) प्रगट कर स्वतंत्र बन गये है। हे चैतन्य! आपको भी वह ही पीपासा लग रही है जिन्होंके जरिये आप भी घर, हाट, महेल, धन, धान्यादिका संचय करनेमें समयको खो रहे है। परन्तु आप अन्तरात्मासे विचार करेंगे तो इन्ही नाशवंत पौद्गलीक सुखोंसे आपकी पीपासा नहीं मीटेगी परन्तु यह तो दिन दिन अधिक वढती जावेगी "यथा लाभो तथा लोभो" वास्ते आपकी दासी सुमति मैं आपको अर्ज करती हूं कि आपको अनन्तकालकी पीपासाको मीटाना हो तो आप एक दफे इन्ही जिनवाणी सुधारसका पान करो और हर समयानुभव

कर इन्हीके स्वादको समझो कि आपको कैसा आनन्द होता है इतना ही नहीं बल्कि आपके निज घरमें निधान-खजाना (केवलज्ञान, केवलदर्शन) आपसे प्रगट हो जायगा, ऐसा होनेपर यह पीपासा आपसे मुह छीपाती फीरेगी अर्थात् कभी भी आपके पास नहीं आवेगी जीससे आत्मा आनन्दमय हो जायगा।

ररा-रात निति गइ, उगो अब दिनकार।
भानु प्रगट्यो निज घर, दुर भयो अन्धकार ॥२८॥

अर्थ—हे चैतन्य! अनन्तकाल हो गया है कि आप मिथ्यात्वरूपी अन्धकारमें इधर के उधर गोता खा रहे हो, नरकसे तीर्यच, तीर्यचसे मनुष्य, मनुष्यसे देव, देवसे तीर्यच, तीर्यचसे निगोद इत्यादि अमावास्याकी रात्रीमें आप रमते रमते अनन्त दुःख सहन किया है। हे नाथ! कुमतिने कुच्छ भी कसर नहीं रखी है। एसा कोइ भी लोकाकाश प्रदेश नहीं छोडा है कि आपने उन्ही आकाशप्रदेश पर जन्ममरण नहीं किया हो। परन्तु अब आप इन्ही सदागमके उपासक बने हो और मैं भी आपके लिये पुरण कोशीष करती हूं कि अमावास्याकी रात्री पूर्ण हो गइ है और सम्यक्त्वरूपी सूर्य उदय हो गया है। अब आप अपने अन्तरआत्माका पडलको दूर करो कि आपके निज घरमें इन्ही सूर्यका प्रकाश पडे और सूर्यके प्रकाश पडनेसे आपके निज घरमें जो अनन्त खजाना

भरा हुवा है वह आपको दिखाई पडे। तांके फीर आपको इस अन्धकारमें फीरनेकी जरूरत ही न पडे। परन्तु यह खजाना कब मीलेंगे कि आप जब दृढ निश्चय करलें कि मुझे तो मेरा घर ही को देखना है। परन्तु मैं जानती हूं कि आप मेरी इतनी शिक्षा सुननेपर भी कभी कभी कुमतिके साथ भी बोलते है। परन्तु सुनिये—

दूहा—लटपट छोड दो, राखो एकही बात।
वेश्या सम कुमति गीनो, पकडो शिववधू हाथ ॥२६॥

अर्थ—हे स्वामिन्! अनादिकालसे आप चपलता करते हुए पूर्ण दुःखका अनुभव किया हे तथापि आप अपना स्वभावको क्यों नही छोडते हो। और भी लटपटकी दुकानदारी जमा रखी है। कारण कभी आप मुझे आदर करते है, कभी कुमतिका आदर करते है तो क्या आप भुल गये है जेसे वेश्या होती है वह पैसा लूंटती है, शरीरको क्षीण बनाती है, इन्सानोंमे इज्जत गमाती है, परभवमें नरक दीखाती है और भी उन्होंका स्वार्थ नहीं होनेपर अपना मजुर बनाती है। इत्यादि विटम्बना जैसे वेश्या करती है उन्होंसे भी अनन्तगुणी विटम्बना करनेवाली कुमतिसे अभीतक आपको राग नही गया है यह कितना विचारकी बात है। आज मैं आपको सच सच कह देती हूं कि आपकी यह पोलीसी अब चलनेकी नही है। अब तो आपको एक तर्फ निश्चय करना ही होगा। अभी भी मेरी तो

सलाह है कि आप कुमतिका मुह कालाकर इसमतिको दे दीजीये और आत्मारामकी साक्षीमें आप दृढ निश्वास करके जो अनन्तकाल तक अव्याबाध आनन्द–सुख देनेवाली "शिव-सुन्दरी" के हाथमें हाथ मीलाके उन्हींके शिवमन्दिर पर पधारीये। फीर आपको इन्ही कुटीलाकुमति जो अनन्ते जीवोंको दासकी माफीक नाटक कराती है उन्होंकी मालम पड जायगी

शशा–शक्ति सिंहतणी, पिंजर दीधि रोक।
हालत पटकी नादकर, करे न कोइ टोक ॥ ३० ॥

अर्थ—हे मुग्ध! तुझे कर्मोरूपी पिंजरमें रोक देनेसे क्या मेरे अन्दर अनन्त ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य रूप जो सिंह शक्तिथी उन्होंका कीसीने हरन कर लिया होगा। क्या एसा तुझे भर्म है या तेरे अन्दर शक्ति है उन्होंसे कर्मरूपी पजरमें अधिक शक्ति है। एसे तुमको भर्म हुवा है या मेरा बल क्षीण हो गया है एसा तुमको भर्म है। इन्हींके सिवाय भी कीसी कीसमका अगर तुमको भर्म हुवा भी हो तो मैं आपको निःशक दावाके साथ कहती हू कि बिचारे कर्माकी क्या ताकत है कि तेरी शक्तिके सामने भी दृष्टी कर सके। हा, कर्मोंने तुझको पींजरामें रोका है परन्तु हाथल पटकके सिंह-नाद करना तो मना नही कीया है तो अब आप अपने असली स्वरूपको स्मरण करो कि मैं एक सिंहोकी गीनतीका सिंह हू।

चैतन्य अनन्तशक्तिवाला होने पर क्या कीसीकी ताकत है कि मुझे कोइ रोक सके। नहीं नहीं नहीं, कभी नहीं रोक सक्ता है। मैं खुद ही भर्ममें आके रूका हुवा पडा हूं। वास्ते अब सिंहशक्ति देखाते हुवे हाथल पटक सिंहनाद करनेपर आपको कोइभी टोक नही सकेगा। सुमतिका यह वचन सुनके चैतन्य विचार करने लगा। इतनेमें सुमति बोली—

षषा-पटद्रव्य अरू, नय निक्षेप प्रमाण।
तोडो पिंजर कर्मका, तब पहूंचो निर्वाण ॥ २१ ॥

अर्थ-हे चैतन्यजी! आप इतना क्या विचार करते हो' लो मैं आपको सीधा ही उपाय बतला देती हूं। जो आपके निज घरमें शक्ति भरी हुइ है उन्हीको विचारो। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल यह पट् द्रव्य है। जिसमें पांच द्रव्य तो जड -अचैतन्य है और जीव है सो चैतन्य है. तो क्या आप जड पदार्थसे भी इतना गभराते हो। यह आपकी बहादुरी? देखीये चैतन्यजी यह पांचों द्रव्य आपके सन्मुख दास बनके रहते है क्योंकि आप चलते हो तब धर्मास्तिकाय आपको चलनेमें दास बनके सहायता देता है, अधर्मास्तिकाय आप जब स्थिर रहते हो तब सहायता देता है और आकाशास्तिकाय आपके अवगाहन सहायतामें हाजर रहता है तथा पुद्गलद्रव्यतो आपके तांइ दास हुवे रहते है और कालद्रव्यतो आपकी सेवासे क्षणमात्रभी

दुर नहीं रहता है अर्थात् पाचोंद्रव्य आपकी हाजरी भरते है। परन्तु आपतो इन्ही पाचो द्रव्यके ठाकुर हो वास्ते किसीभी द्रव्यकी नोकरी नही करते हो। तो क्या आप अपने नोकरोंके रोकनेपर कभी रूक सक्ते हो। हे निजानन्द! कभी आपको यह भर्म होता हो कि नोकर असख्य है और मै अकेला हु तो इन्होंके लिये मैं आपको एक एसा यत्र देती हू कि आप अपनी या शेष पचद्रव्योंकी शक्तिरूपी तत्त्वका विचार कर सक्ते हो। उन्ही यत्रका नाम शास्त्रकारोंने 'नय' रखा है। वह नय मुख्य-दो प्रकारका है (१) द्रव्यास्तिकनय (२) पर्यायास्तिकनय जिस्मे जो द्रव्यको ग्रहन करते है उन्होंको द्रव्यास्तिकनय कहते है जिन्होंका चार भेद है यथा–नैगमनय, सग्रहनय, व्यवहार नय, ऋजोसूत्रनय, और द्रव्यके पर्यायको ग्रहन करे उन्होंको पर्यायास्तिकनय कहते हैं जिन्होंका तीन भेद है, शब्दनय समी-रूढनय और एवभूतनय एव कुल मीलके ७ नय है इन्हाका स्वभाव भिन्न भिन्न है।

(१) नैगमनय–सामान्यार्थको ग्रहण करते हूवे एक शको वस्तु माने।

(२) सग्रहनय–सत्ताको ग्रहणकर सामान्य वस्तुकोभी वस्तु माने।

(३) व्यवहारनय–दीसती वस्तुकी प्रवृत्तिको वस्तु माने।

(४) ऋजोसूत्रनय–वर्तमान वरतति वस्तुको वस्तु माने।

(५) शब्दनय—निजवस्तुका मुख्यगुणोंको वस्तु माने ।

(६) संभिरूढनय—वस्तुके गुण प्रगट होगये परन्तु अंश कम होने परभी वस्तु माने ।

(७) एवंभूतनय—संपूर्ण वस्तुके गुण प्रगट होनेसे वस्तु माने ।

इन्ही नयद्वारा आपको अनन्त द्रव्योंकी शक्ति मालम हो जायगी और शीघ्रता पूर्वक देखना हो तो निक्षेपद्वारा देख लिजिये यथा—(१) नाम निक्षेप (२) स्थापना निक्षेप (३) द्रव्य निक्षेप (४) भाव निक्षेप । जैसे कि—किसी जीवाजीव वस्तुका नाम दे दीया उन्ही वस्तुमें वह गुण हो या न हो परन्तु उन्ही नामसे बोलाना वह नाम निक्षेपा है और उन्ही नामसे किसी पदार्थकी स्थापना करना और उन्ही नामसे स्थापनाको उद्देश करना यह स्थापना निक्षेप है और भूतकालमें पदार्थ था तथा भविष्यकालमें होनेवाला है वर्तमान भाववस्तु शुन्य है उन्हों को द्रव्य निक्षेप कहते है, तथा नाम स्थापना द्रव्य संयुक्त भाववस्तुके गुण संयुक्त हे उन्हों को भाव निक्षेपा कहते हैं जैसे कि—

(१) नाम महावीर—वह नाम निक्षेपा है.

(२) स्थापना महावीर—शान्त मुद्रा मूर्त्ति स्थापन करना.

(३) द्रव्य महावीर—महावीर होनेका निश्चय हो गया था मरीचीके भवमें, वहांसे महावीरका द्रव्य निक्षेपा है.

(४) भाव महावीर—सिद्धार्थ राजा और त्रीसलाराणी के पुत्र तीर्थ रुप होनेसे ।

इसी माफीक धर्मास्ति आदि षट् द्रव्यपर भी निक्षेपा लगा लेना चाहिये । अब निक्षेप ज्ञान होनेके लिये प्रमाण बतलाते है । वह प्रमाण च्यार प्रकारके हैं । प्रत्यक्ष प्रमाण, आगम प्रमाण, अनुमान प्रमाण, उपमा प्रमाण, जिस्में प्रत्यक्ष प्रमाणका दोय भेद है (१) इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, (२) नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण । जिस्में इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण जो कि इन्द्रियद्वारा प्रत्यक्ष ज्ञान होना कि यह वस्तु एसी है जिन्होंका पाच भेद है यथा—श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय । और नोइन्द्रिय प्रत्यक्षज्ञान जो कि इन्द्रियकी अपेक्षा विगर ज्ञान होना उन्होंका दोय भेद है। (१) सर्वसे (केवलज्ञान) (२) देशसे मनःपर्यवज्ञान, अवधिज्ञान और आगम प्रमाणके १२ भेद है । आचारागसूत्र, सूयगडायागसूत्र, स्थानायाग, समवायाग, भगवती, ज्ञाताधर्मकथा, उपासकदशाग, अन्तगडदशाग, अनुत्तरोववाइ प्रश्न व्याकरण, विपाकसूत्र और दृष्टीवाद तथा दृष्टीवादके विभागरुप उपागादि आगम है वह सब आगम प्रमाण है तथा अनुमान प्रमाणके तीन भेद है । पुव्व, सेसव, दिट्ठिसामन्न, नित्य अपना सजन दीर्घकालमे मीलने पर तीलमसादि के अनुमानसे पहेचाने उसे 'पुव्व' कहते है तथा सेसवके पांच भेद है ।

(१) कज्जेणं–हस्ती अश्वादिको शब्दसे पहेचाने।

(२) कारणेणं, जैसे घटका कारण मटी, पटका कारण तंतु।

(३) गुणेणं, जैसे पुष्पोंमें सुगन्धीका गुण, वस्त्रमें स्पर्शका।

(४) आसरेणं, बुकके इसारासे सरवार जाणे धूमसे अग्नि जाणे।

(५) आवयवेणं, जैसे दंताशुलसे हस्ती, काव्य रचनासे पंडित चित्रपाखोंसे मयूर इत्यादि एक अंगसे वस्तुका ज्ञान होना।

और द्रीष्टी सामन्नं जैसे सामान्यसे विशेष जाने और विशेषसे सामान्य जाणे और उपमा प्रमाण–जैसे ज्वार मोतीके माफीक, सरोवर कोटरके माफीक, द्वार देवलोक माफीक इत्यादि प्रमाणसे भी जड और चैतन्य इन्हीं दोनोंकी शक्तीको पहेचान सक्ते हो। हे आत्मवीर! इन्हीं तीक्ष्न शस्त्रद्वारा कर्मोंका पिंजरको तोडफोड नष्ट बना दोगे, तब ही आपका निर्णय होगा। अगर इतनेपर भी आपकी चैतन्यता प्रगट न हो तो आप आगे चलीये। आपके लिये मैंने वडी मारी तजवीज कर रखी है।

सत्ता–स्याद्वाद धोरी भला, शासन रथको जोड।
चाहे दुश्मन एक हो, चाहे लाख हो कोड ॥३२॥

अर्थ—हे सदानन्द प्रीतमजी ! जीस रथपर बैठके अनन्ते जीव निजावासमें पहुंच गये हैं वह ही रथ आज आपके लिये तैयार किया है। इन्हीका परिचय स्थुलदृष्टिसे आप कर लिजिये। जेसे जैनशासनरूपी रथ बडा ही मजबुत है कि जिन्होंकी तुलना कोइ भी मतवादी कर नहीं सक्ता है और दोनों धोरी अर्थात् दोनों बलद इतनी शीघ्र गतिवाला है कि जिन्होंके सामने कीसी प्रकारके सवारोंका वेग काममें नहीं आता है। आपके सुसराजी (मोह) के लस्करमें अनन्ते सुभट (कर्मवर्गणायें) है परन्तु आप जो उक्त रथ द्वारा एकेक सुभटको अलग अलग पकडना चाहते हो तो उन्हीका पकड सक्ते हो। क्यों कि इन्ही धर्मराजाके धोरी सिवाय इस दुनियामें इन्ही अनन्ते सुभटोंको अलग अलग पकडनेवाला कोइ भी नहीं है। हे स्वामिन् ! एक पदार्थमें अनन्त धर्म है उन्होंको सापेक्ष स्याद्वादसे ही जान सक्ते है न की एकान्त पक्षी। जैनशासनकी गंभीरता और वस्तु धर्म प्रतिपादन शैली है तो एक स्याद्वादमें ही है। जैसे एक वस्तुमें एक ही समय स्वगुणकी अस्ति है उसी समय परगुणकी नास्ति है शास्त्र कारोंने इन्होंके ७ भागे किये है।

(१) स्यात् अस्ति–स्वगुणापेक्षा अस्ति है।

(२) स्यात् नास्ति–उन्ही समय परगुणापेक्षा नास्ति है।

(३) स्यात् अस्ति नास्ति–दोनों गुण एक समयमें है।

(४) स्यात् अवक्तव्यं–एक समयमें वक्तव्यता करना असंभव है।

(५) स्यात् अस्ति अवक्तव्यं–अस्ति होनेपर भी एक समयमें कह नहीं सक्ते वास्ते अवक्तव्य है।

(६) स्यात् नास्ति अवक्तव्यं–नास्ति होनेपर भी एक समयमें कह नहीं सक्ते।

(७) स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्यं, जिस समय अस्ति है उन्हीं समय नास्ति है अर्थात् जीस समय स्वगुणकी अस्ति है उन्ही समय परगुणकी नास्ति है वह युगपत् समय दोनों गुण एक द्रव्यमें है परन्तु वचनोच्चारणमें असंख्यात समय लगजाता है वास्ते एक समयमें दोनों गुण वक्तव्यताके अयोग्य हैं।

हे नाथ ! इसी शासनरूपी रथके स्याद्वादरूपी बलदोंको जोडके आप अपने शुद्ध अन्तःकरणके असंख्य अध्यवसायरूपी वाण और पुरुपार्थकी धनुष्य हाथमें लेके तैयार हो जाइये, फीर चाहे एक दुश्मन हो चाहे लक्ष, क्रोड, संख्य, असंख्य और अनन्त हो आपके सन्मुख कौन आ सक्ता है। हे नाथ ! एक वात औरभी आप लक्षमें रखिये, इन्ही सुभटोंने धूर्तविद्याभी वहुत सीख रखी है। जब चैतन्यका जौर शौर होता है तब मोहके सुभट अचेत–चेष्टा रहित होके गुपचुप मृत्युके माफीक पड जाते है अर्थात् प्रकृति

याका उपशम होता है-इतनेपर दयावन्त, कोमल हृदयवाला चैतन्य इन्हीं दुष्टोंपर रहीमतालाको छोड देते है और आप इग्यारवे गुणस्थानवाले उपशान्त वीतरागी हो जाते है । फीर वह धूर्त मोहके सर्व दूत एकत्र होके चैतन्यको प्रथम गुणस्थानके काराग्रहरूपी निगोद तक पहूचा देते हैं, वास्ते आप इन्हीं धूर्तबाजीसे बचके सब शत्रुओं (कर्मो) का शिर छेदते हुवे आठवा गुणस्थानसे जो आपके निजावास पहूचनेकी क्षपकश्रेणीसे आरूढ होके शत्रुवोंका शिरछेदन करते हुवे सिधे ही बारहवां गुणस्थानपर चले जाना । वहांपर तुटे लगडे बिलकुल कमजोर तीन उपराजा बेठे हुवेको एक हुकार शब्दसे गिराके आप अपने निजसत्ता (केवलज्ञान) को प्राप्त कर लेना यह मेरी अन्तिम अर्ज हैं वास्ते आप कृपा कर स्वीकार कीजिये ।

दुहा–हा' इति खेद है, हार्यो रत्न अमूल्य ।
सुमति तु प्रभावसे, चैतन्य भयो अतूल्य ॥ ३२ ॥

अर्थ–सुमति सखीके हृदयकी हितशिक्षा द्वारा चैतन्य अपनी शुद्ध दशाका भान करता हुवा जेसे कोइ मनुष्य नसाके अन्दर क्रोडो द्रव्य खो देनेके बादमें शुद्ध दशा आनेसे नि श्वासके साथ खेद करता है इसी माफीक चैतन्यने भी अपने अनन्त भवोंमें आत्मशक्तिको मोह वमाम खो दीथी परन्तु सुमतिसखी द्वारा अपना हाल सुनते ही बडा भारी नि श्वास लेते हुवे मुर्च्छित हुवा तब सुमतिने अश्वासना देके सावचेत किया । तब

चैतन्य बोला कि-हाः इति खेद है। अहो, अहो मैं दुर्भागी एसी हितकारिणी सुमति सखीकी शय्यामें मैंने प्रेम सहित कभी अनुभव नही कीयाथा और कुमतिकी शय्यामें मुग्ध बनके मैं मेरा अमूल्य नररत्न तथा ज्ञानादि रत्नको खो बैठा था इन्हीका ही मुझे बडा दुःख है। साथहीमें महान् हर्ष इस बातका है कि मेरे सुभाग्योदयसे आज इतना टाइम तक सुमतिके साथ वार्तालाप करनेका प्रसंग मीला है। इतने दीन हुए सुमति के गुणोंको मैंने आजही पहेचाना है और इन्ही हितवादिनी द्वारा मेरा चैतन्यका अतूल्य गुणोंसे आज ही परिचय कीया है। अहो अहो! कुमतिका क्या भर्म है कि हरवखत मुझे दुसरोंकी सेवामें और तावेदारीमें जोड देतीथी परन्तु आज साफ साफ मालुम हो गया है कि मेरे चैतन्यका बल अतूल्य है एसा कोइभी पदार्थ नही है कि मैं कीसी दुसरोंसे याचना करुं अर्थात् सर्व मेरा घरमें ही मोजुद है। एसा अनुभव-विचार करता हुवा चैतन्य सबसे पहला सुमतिका ही उपकार मानता हुवा बोला कि हे सुमति! मैं आज आपके सद्गुणोंसे ठीक ठीक ज्ञात हुवा हूं। अब मेरा इरादा है कि आप क्षण मात्रभी मेरेसे दूर न रहें। कारण कि हमारे कायदे माफिक जहां तक आप मेरे पासमें निवास करोगी वहांतक कुमतिका मुंहभी देखना नही चाहता हूं वास्ते यह मेरा कहना स्वीकार करो—

क्षणा-क्षीण क्षीण जात है, आयुष्य रंग पत्तंग।

देर करो मति वालहा, चालो शिवमन्दिरमें संग ॥ ३४ ॥

अर्थ—चैतन्यके एसे सुवाक्य श्रवणकर सुमतिसखी आनन्दकी अवाज करती हुइ बोली कि हे प्राणेश्वर ! आज मैं अपना टाइमको सफल मानती हूं कारण कि मैं एक आपकी दासी तूल्य हूं परन्तु आपने मेरे वचनोंपर आरूढ होके अपनी स्वसत्ताको प्रगट करदी है बस यह ही मेरा मुख्य उद्देश था। परन्तु हे स्वामिन् अब मेरेको निःशंक होके कह देना उचित है कि आप मनोर्थसेहि कार्यको सिद्ध करना चाहते हो तो एसा मैंने हजारो नही बलके असंख्य चैतन्योंको देखा है कि कीसी हितकारी शिक्षाको श्रवणकर मनोर्थ कर लेते है परन्तु पुरुषार्थकी बखत पीछे हट जाते हुवे फीर भी कुमतिकी शय्याका सेवन कर लेते है वास्ते आपको अगर सचा रंग लगा हो तो मेरी अर्ज सुनों। यह नर देह बडा ही नाजुक है और क्षीण क्षीणमें आयुष्य जैसे पतंगका रंग तथा पाणीका वेगकी माफीक क्षय हो रहा है। इसीमें न जाने मोहका दूत ' काल ' कीस समय धाड पाडेगा। वास्ते लो मैं भी आपके पुरुषार्थ करनेमें अच्छी अच्छी सलाहोंकी मदद देनेको तैयार हूं आप पुरुषार्थ रूपी गजपे आरूढ हो जाइये. हे स्वामिन् ! मेरा भी दील हो रहा है कि एसे पवित्र पुरुषोंके साथ ही शिवमन्दिर (मोक्ष)की सुख शय्यामें आनन्दका अनुभव करु इसलिये हे वालमजी ! आप देर न करे अर्थात् पुरुषार्थ कर कर्म-शत्रुवोंका पराजय जल्दी ही कर मोक्षमें चलें मैं भी

आपके संग चलूंगी परन्तु अपने दोनोंको रास्ता बतलानेवाला एक तीसरा भी होना चाहिये।

ऋजा-ज्ञानसुन्दर करो, निज आत्माका काम।
चैतन्य सुमति संगसे, ज्ञान पाम निज धाम ॥ ३५ ॥

अर्थ-इस अपार संसारके अन्दर मोहराजाको मदद करनेवाली और अज्ञानको सहायता करनेवाली कुमतिने सर्व लोकमें अज्ञानका साम्राज्य फेला दीया था और धर्मचारित्र राजाके मददगार ज्ञानको सहायता करनेवाली सुमतिने कुमति के फन्दसे अनन्तमा भाग जीवोंपर ज्ञानका साम्राज्यका झुंडा फरका रही थी। अपने अपने पक्षको पुष्ट बनानेमें दोनों कटिबद्ध हो प्रयत्न कर रही थी। उन्ही समय सुमति चैतन्य के साथ वार्तालाप कर रही थी, इतनेमें ज्ञान इदर उदर फीर रहा था परन्तु कुमति की सहायतासे अज्ञानका साम्राज्यमें ज्ञानका आदर करे कौन! उलटा तीरस्कारसे त्रास पाता हुवा ज्ञान सुमतिके पासमें जा रहा था इतनेमें तो रास्तेमें सुमतिका मीलाप हो गया। ज्ञानकी दशाको देखके सुमतिने कहा कि हे भ्रात! आप इदर उदर फीरते हुवे अपनी कमजोरी क्यों बतलाते हो। आप अपना स्वरूपको सुन्दर बना लों क्योंकि आप कोइ सामान्य व्यक्ति नहीं है आपके जरिये अनन्ते जीव निवृत्तिपुरीमें आनन्द कर रहे है और भी बडे बडे ऋषि मुनि और विद्वान् लोक आपके लिये तन तोड अभ्यास कर रहे हैं। और तीनो लोकमें आपकी यशोकीर्तिकी जयध्वनीकी

अवाजीम अज्ञान बिचारा भागता फीर रहा है। तो आप क्यों इधर उधर फीरके इन्ही कुमति द्वारा आपका अपमान कराते हैं। हे बन्धु! मेरी तो आपसे नम्रतापूर्वक अर्ज है कि आप किसीके फन्दमें न पडके आप अपना स्वकार्य ही साधन करो। मैं एसा भी सुनती हुं कि आप कभी कभी कुमतिके बच्चाको गुप्तपणे अपने निजावासमें स्थान देते हो अर्थात् उपशमभाव जो कि विपाकों तो ज्ञान ही है किन्तु प्रदेशों अज्ञान भी रहता है उन्होंको क्षयोपशमीक ज्ञान कहते है तो आप जैसे निःस्पृहीयोंको यह मायावृत्ति क्यों होना चाहिये। हे वीर! आप सर्वथा प्रकारे अपना ज्ञान सुन्दर बनावों अर्थात् क्षायकभाव आठवा गुणस्थानसे क्षपकश्रेणी तक आ पहुचो और हम और हमारे प्रीतमजी निवृत्तिपुरमें जानेवाले हैं वास्ते आप भी साथम चलीये और हमको रस्ता ठीक ठीक बतलाइये। बस! यह सुमतिका अमृतमय वचन श्रवण करते ही ज्ञानने अपने मन्दिरके अन्दर जो कुच्छ प्रदेशों अज्ञानदलके थे उन्हीको सुमतिके सपाटेमें ही बिलकुल नष्ट कर चैतन्य और सुमतिके साथ आठवें गुणस्थान क्षपकश्रेणी चढके नववे गुणस्थानमे दशवा और दशवामे सीधा ही बारहवे गुणस्थानपर चले गये। वहापर ज्ञानावर्णिय दर्शनावर्णिय और अन्तराय इन्हीं तीनों योद्धोंको एक ही चोटमे क्षय कर त त्र गुणस्थान पहुचा दीये। वहा जा के ज्ञान

बोला कि हे सुमति! यह अपने विश्रामका स्थान है और यहां पर सब लोक निवृत्ति करके जानेवाले ही हैं। वास्ते किसी प्रकारका विघ्न नहीं है वास्ते आपको अगर ठहरना हो तो वायु की सहल करीये नहीं तो चलो अपने निजानन्द प्रासादमें पहुंच जावे। सुमतिका इरादा तो हो गया परन्तु चैतन्यको निवृत्तिपुर देखनेकी बडी ही आतुरता थी वास्ते वहांसे चउदवे गुणस्थान जाते हुवे ही अयोगावस्था स्वीकार करते ही ज्ञान सहित चैतन्यजी निज धामपर पहूंच गये और सादि अनन्त भांगेमें स्थीत हो गये।

उगणीसे इठांतरे। कृष्ण तीज माघ मास ॥
नगर फलोधीमें फली। मन वंच्छित सब आस ॥२६॥

अर्थ—मरूस्थल नामका देश, साडा पचवीश आर्य देशोंके अन्दर एक आर्य देश है जिन्होंका गौरव-महत्व शास्त्रकारोंने बडे ही विशालतासे बतलाया है जैसे कि बडे बडे मुनि मत्तंगजोंको मरुस्थलके धोरी-बैलोंकी उपमा दी गइ है। ऐसे महत्ववाले देशमें फलवृद्धि (फलोधी) नामका अच्छा सुन्दर रमणीय नगर है। जीस नगरकी शोभामें वृद्धि करनेवाले अलंकार समान शीखरबन्ध पांच जिनालय बडे ही मनोहर और संसार समुद्रमें नावके माफीक शोभते हैं। उसी हि जिनालयोंकी सेवा भक्ति करनेवाले श्रावक गणोंकी विशाल संख्या और धनधान्यसे

परिपूर्ण है। इसी नगरमें सम्वत् १९७८ के माघ मासके कृष्ण-पक्षकी तीज सोमवारके रोज अपने मनोवच्छित फलोंको प्राप्त किया है। अर्थात् इन्ही ककावत्तीसीको निर्विघ्नपणे समाप्त करी है।

॥ कलस ॥

पार्श्वनाथ तर पाट सोहे। शुभदत्त गौरुवा गणधरो।
हरिदत्तन वली आर्य समुद्र। केशी गणधर हितकरो॥
मयप्रभने रत्नप्रभसूरी। उपकेशगच्छ अलकरो।
ज्ञानसुन्दर दास जिनका। सदा शिव सपत्त वरो ॥ १ ॥

अर्थ-श्री त्रेवीशमा तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ प्रभुके पाटपर श्री शुभदत्त नामके गणधर च्यार ज्ञान और चौद पूर्व धारक अनेक गुण समूहसे सुशोभित हूवे थे। उन्हींके पाटपर श्री हरिदत्त नामके आचार्य आगम समुद्रके पारगामि हुने थे। उन्हींके पाट पर श्रीआर्यसमुद्रसूरि महाराज हूने थे। इन्होंके शासनमें बुद्धकीर्ति साधुसे बौधधर्म चलाया। इन्होंके पाटपर श्री केशीश्रमणाचार्य हूवे थे उन्ही महान प्रभाविक आचार्य महाराजने प्रदेशी आदि १२ राजाओंको प्रतिबोध दे के जैनधर्ममें स्थापन किये थे। उन्ही के पाटपर श्री मयप्रभसूरि हूने। उन्ही महा ऋषियोंके चरण-कमलोंकी सेवा अनेक देवदेवीया करती थी जिस्में भी चक्रेश्वरी, अम्बिका, पद्मावती और सिद्धायिका ये मुख्यथी। इन्ही आचा-र्यश्रीने भीनमाल नगरमें ९०००० घरोंको प्रतिबोध दे के श्री-

जाली तथा पद्मावति नगरीमें ४५००० पोरवाल जैन बनाया था औरभी अनेक प्रकारसे शासनकी बडी भारी उन्नति करी थी. इन्होंके पाटपर श्री रत्नप्रभसूरि जोकि विद्याधरवंशके भूषण समान थे और अनेक विद्याओंसे भूषित थे उन्होंने उपकेशपट्टन अर्थात् हालमें ओशीयानगरीमें ३८४००० राजपुत्रोंको प्रतिबोध देके ओसवाल जैन बनाया था। जिन्होंके अठारह गोत्र स्थापन कीयेथे (विस्तार देखनेवाले आत्मबन्धुओंको पार्श्वपटावली देखनी चाहिये) और ओशीयामें श्री वीरप्रभुके बिंबकी प्रतिष्ठा स्वहस्तसे करी थी। वह मन्दिर आजभी मौजूद है। इन्ही आचार्यश्रीसे इस गच्छका नाम उपकेश गच्छ पडा है। इन्होंकी पाट परम्परामें भी बडे२ आचार्य हुवे हैं (वह सब विस्तार देखो उपकेश पट्टावली) इन्ही महान् पुरुषोंके चरणकमलोंका दास " ज्ञानसुन्दर " गुणी जनोंका गुण गा कर अपनी आत्माको पवित्र करी है। हे प्रभो ! मेरी मनोकामना पुरण करो अर्थात् शिवरुपी संपत्त बक्षीस करो। मैं आपकी अनुग्रह-कृपासे यह " कका बत्तीसी " स्वपरात्मावोंके कल्याणार्थे बालक्रीडावत् प्रयत्न कीया है। इसमें अगर मतिदोष तथा दृष्टिदोष रहा हो तो सज्जन पुरुषोसे क्षमा चाहता हूं। ॥ श्रीरस्तु ॥ कल्याणमस्तु ॥

॥ इति ककाबत्तीसी समाप्तम् ॥

अथ श्री

व्याख्याविलास।

भाग २ जो

सघोऽयं गुणरत्नरोहणगिरिः सघः सतां मडनं।
सघोऽयं प्रबलं प्रतापतरणिः सघो महा मंगलम् ॥
सघोऽभीप्सितदानकल्पविटपी सघो गुरूणां गुरुः।
सघः सर्वजनाधिराजमहितः सघश्चिरं नन्दतात् ॥१॥

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं।
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः ॥
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परं दैवतं।
विद्या राजसु पूज्यते न तु धनं विद्याविहीनः पशुः ॥२॥

विद्या नाम नरस्य कीर्तिरतुला भाग्यक्षये चाश्रयो।
धेनुः कामदुघा रतिश्च विरहे नेत्रं तृतीयं च सा ॥
सत्कारायतनं कुलस्य महिमा रत्नैर्विना भूषणं।
तस्मादन्यमुपेक्ष्य सर्वविषयं विद्याधिकारं कुरु ॥ ३ ॥

यद्यपि भवति विरूपो, वस्त्रालंकार वेषपरिहीणः ॥
सज्जन सभां प्रविष्ट, शोभामुद्वहति सद्विद्यः ॥ ४ ॥

न चोर हार्यं न च राजहार्यं, न भ्रातृ भाज्यं न च भारकारि ॥
व्यये कृते वर्द्धत एव नित्यं, विद्या धनं सर्व धनं प्रधानम् ॥५॥

बालादपि हितं ग्राह्यममेध्यादपि काञ्चनम् ॥
निचादप्युत्तमां विद्यां, स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि ॥ ६ ॥

काव्यशास्त्र विनोदेन, कालो गच्छति धीमताम् ॥
व्यसनेन हि मूर्खाणां, निद्रया कलहेन वा ॥ ७ ॥

सन्तोषस्त्रिषु कर्तव्यः, स्वदारे भोजने धने ॥
त्रिषु चैव न कर्तव्यो, दाने चाध्ययने जपे ॥ ८ ॥

श्लोकार्धं श्लोकपादं वा, समस्त श्लोकमेव वा ॥
अवन्ध्यं दिवसं कुर्याद्, दानाध्ययनकर्मणि ॥ ९ ॥

अनभ्यासे विषं शास्त्र–मजीर्णे भोजनं विषम् ॥
विषं सभा दारिद्रस्य, वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ १० ॥

विषं कुपठिता विद्या, विषं व्याधिरुपेक्षितः ॥
विषं गोष्ठी दारिद्रस्य, वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ ११ ॥

लक्षणेन विना विद्या, निर्मलापि न शोभते ॥
युवतीरूपसंपन्ना, दारिद्रस्येव वेश्मनि ॥ १२ ॥

सुलभानीह शास्त्राणि, गुर्वादेशस्तुदुर्लभः ॥
शिरोवहति पुष्पाणि, गन्धं जानाति नासिका ॥ १३ ॥

काकचेष्टा वक ध्यान, श्वाननिद्रा तथैव च ॥
स्वल्पाहार. स्त्रियास्त्यागी, विद्यार्थी पञ्चलक्षण ॥१४॥

पठतो नास्ति मूर्खत्व, जपतो नास्ति पातकम् ॥
मौनिन' कलहो नास्ति, न भय चास्ति जाग्रतः ॥१५॥

सुश्रूषा श्रवण चैव, ग्रहण धारण तथा ॥
ऊहापोहोऽर्थविज्ञान, तत्त्वज्ञान च धीगुणा' ॥ १६ ॥

विद्या विनयतोग्राह्या, पुष्कलेन धनेन वा ॥
अथवा विद्यया विद्या, चतुर्थो नैव विद्यते ॥ १७ ॥

सुखार्थी त्यजते विद्या, विद्यार्थी त्यजते सुखम् ॥
सुखार्थिन कुतोविद्या, सुख विद्यार्थिनः कुतः ॥ १८ ॥

आलस्येन हता विद्या, आलापेन कुलस्त्रिय ॥
अल्पबीज हत क्षेत्र, हत सैन्यमनायकम् ॥ १९ ॥

आरोग्यबुद्धिविनयोद्यमशास्त्ररागा ।
पञ्चान्तरा' पठनसिद्धिकरा भवन्ति ॥
आचार्यपुस्तकनिवाससुसगभिक्षा ।
बाह्यास्तु पञ्चपठन परिवर्धयन्ति ॥ २० ॥

न च राजभय न च चौरभय, इह लोकसुख परलोकहितम् ॥
वर कीर्तिकर नरदेवनत, श्रमणत्वमिद रमणीयतरम् ॥ २१ ॥

येषा न विद्या न तपो न दान, न चापि शील न गुणोऽपि धर्मः ॥
ते मृत्युलोके भुवि भारभूता, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥२२॥

अक्रोधवैराग्यजितेन्द्रियत्वं, क्षमादयासर्वजनप्रियत्वं ॥
निर्लोभदाता भयशोकमुक्ता, ज्ञान प्रबोध दशलक्षणानि ॥२३॥

एकाक्षरोऽपि दातारं, यो गुरुनैव मन्यते ॥
श्वानयोनिशतं गत्वा, चाण्डालेष्वपि जायते ॥ २४ ॥

गुरुत्यागे भवेद्दुःखी, मन्त्रत्यागे दरिद्रता ॥
गुरुमन्त्रपरित्यागे, सिद्धोऽपि नरकं व्रजेत् ॥ २५ ॥

स्वरूपं पुरुषं दृष्ट्वा, भ्रातरं पितरं सुतं ॥
स्रवन्ते योनयः स्त्रीणां, आमपात्रमिवाम्भसि ॥ २६ ॥

अहिंसा सर्वजीवेषु, तत्त्वज्ञैः परिभाषितम् ॥
इदं हि मूलं धर्मस्य, शेषस्तस्यैव विस्तरम् ॥ २७ ॥

नाहं स्वर्गफलोपभोगतृषितोनाभ्यर्थितस्त्वंमया ।
सन्तुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव ॥
स्वर्गं यान्ति यदा त्वया विनिहिता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो ।
यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा बान्धवैः ॥२८॥

काया हंसविना नदी जलविना दाता विना याचकाः ।
भ्राता स्नेहविना कुलं सुतविना धेनुश्च दुग्धं विना ॥
दानं पात्रविना निशा शशिविना पुण्यं विना मानवाः ।
एते सर्वे न शोभते इह तथा वाणी च सत्यं विना ॥२९॥

लिङ्गिनां परमाधारो, वेश्यानां परमो निधिः ॥
वणिजां परमा नीति, मृषावाद नमोस्तुते ॥ ३० ॥

यस्मिन् गृहे सदा नार्या, मूलकं पच्यते जनैः ॥
स्मशान तुल्यं तद्गेहम्, पितृभिः परिवर्जितम् ॥ ३१ ॥

विद्यावृद्धास्तपो वृद्धा, ये च वृद्धा बहुश्रुताः ॥
सर्वे ते धनवृद्धस्य, द्वारि तिष्ठन्ति किङ्कराः ॥ ३२ ॥

न ज्ञानतुल्यः किल कल्पवृक्षो, न ज्ञानतुल्यं किल कामधेनुः ॥
न ज्ञानतुल्यः किल कामकुम्भो, ज्ञानेन चिंतामणिरप्यतुल्यः ॥३३॥

निद्रा मूलमनर्थानां, निद्रा श्रेयो विघातिनी ॥
निद्रा प्रमादजननी, निद्रा संसारवर्द्धिनी ॥ ३४ ॥

धनधान्यप्रयोगेषु विद्यासंग्रहणेषु च ॥
आहारे च विहारे च, त्यक्तलज्जः सुखी भवेत् ॥३५॥

यदि वहति त्रिदण्डं नग्नमुण्डं जटां वा ।
यदि वसति गुहायां वृक्षमूले शिलायां ॥
यदि पठति पुराणं वेदसिद्धान्ततत्त्वं ।
यदि हृदयमशुद्धं सर्वमेतन्न किञ्चित् ॥ ३६ ॥

अपरीक्षितं न कर्तव्यं, कर्तव्यं सुपरीक्षितम् ॥
पश्चाद्भवति सन्तापो, ब्राह्मणी नकुलं यथा ॥ ३७ ॥

हंसः श्वेतो बकः श्वेतो, को भेदो बकहंसयोः ॥
नीरक्षीरविभागे तु, हंसो हंसो बको बकः ॥ ३८ ॥

नर्निनोमधुमासेन, अन्तरं पिककाकयोः ॥
वसन्तश्च पुनः प्राप्ते, काकः काकः पिकः पिकः ॥३९॥

परविघ्नेन संतोषं, भजते दुर्जनो जनः ॥
लभेदग्निः परांदीप्ति, परमंदिर दाहतः ॥ ४० ॥

दुर्जनः परिहर्त्तव्यो, विद्यया भूषितोऽपिसन् ॥
मणिना भूषितः सर्पः, किमसौ न भयंकरः ॥ ४१ ॥

नाहं काको महाराज, हंसोऽहं विमले जले ॥
नीचसंगप्रसंगेन, मृत्युरेव न संशयः ॥ ४२ ॥

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च, ये च विश्वासघातकाः ॥
ते नरा नरकं यान्ति, यावच्चन्द्र दिवाकरौ ॥ ४३ ॥

क्षमाधनुः करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति ॥
अतृणे पतितोवह्निः, स्वयमेवोपशाम्यति ॥ ४४ ॥

अतिपरिचयादवज्ञा, संततगमनादनादरो भवति ॥
मलये भिल्लपुरन्ध्री, चन्दनतरुकाष्टमिन्धन कुरुते ॥४५॥

असंतुष्टा द्विजानष्टाः, संतुष्टश्च महीपतिः ।
सलज्जा गणिका नष्टाः निर्लज्जा च कुलांगना ॥ ४६ ॥

अनाभ्यासे विषं शास्त्र- मजीर्णे भोजनं विषम् ॥
मूर्खस्य च विषं गोष्टी, वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ ४७ ॥

क्षणे तुष्टाः क्षणे रुष्टास्तुष्टा रुष्टाः क्षणे क्षणे ॥
अव्यवस्थितचित्तानां, प्रसादोऽपि भयंकरः ॥ ४८ ॥

उष्ट्राणां च विवाहेषु, गीतं गायंति गर्दभाः ॥
परस्परं प्रशंसन्ति, अहो रूपमहोध्वनिः ॥ ४९ ॥

अनारम्भो मनुष्याणां, प्रथमं बुद्धि लक्षणम् ॥
आरब्धस्यान्तगमनं, द्वितीयं बुद्धिलक्षणम् ॥ ५० ॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां, यस्यैकोऽपि न विद्यते ॥
अजागलस्तनस्येव, तस्य जन्म निरर्थकम् ॥ ५१ ॥
एकं दृष्ट्वा शतं दृष्ट्वा, दृष्ट्वा पञ्चशतान्यपि ॥
अतिलोभो न कर्तव्यः, चक्रं भ्रमति मस्तके ॥ ५२ ॥
असङ्गसङ्गदोषेण सत्याच मतिविभ्रमः ।
एकरात्रप्रसङ्गेन, काष्ठघण्टाविडम्बना ॥ ५३ ॥
सुलभाः पुरुषा राजन्सततं प्रियवादिनः ॥
अप्रियस्य च पथ्यस्य परिणामः सुखावहः ॥ ५४ ॥
अल्पतयोश्चलत्कुम्भो ह्यल्पदुग्धाश्च धेनवः ॥
अल्पविद्यो महागर्वी कुरूपो बहु चेष्टते ॥ ५५ ॥
उद्योगः कलहः कण्डूर्द्यूतं मद्यं परस्त्रियः ॥
आहारो मैथुनं निद्रा, सेवनात्तु विवर्धते ॥ ५६ ॥
आचारो भावो धर्मो नृणां श्रेयस्करो महान् ॥
इहलोके पराकीर्त्तिः, परत्र परमं सुखम् ॥ ५७ ॥
मातृवत्परदाराश्च, परद्रव्याणि लोष्टवत् ॥
आत्मवत्सर्वभूतानि, यः पश्यति स पश्यति ॥ ५८ ॥
आहारनिद्राभय मैथुनानि, सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् ॥
एको विवेकोऽधिको मनुष्ये, तेनैव हीना पशुभिः समानाः ॥५९॥

आचारः परमोधर्मं आचारः परमं तपः ॥
आचारः परमं ज्ञानमाचारात्किं न साध्यते ॥ ६० ॥

आशाया ये दासा-स्ते दासाः सर्वे लोकस्य ॥
आशा येषां दासी तेषां दासायते लोकः ॥ ६१ ॥

इतोभ्रष्टस्ततोभ्रष्टः परमेकान्ति वेषभाक् ॥
न संसारसुखं तस्य, नैव मुक्तिसुखं भवेत् ॥ ६२ ॥

अश्वस्य लक्षणं वेगो, मदो मातङ्ग लक्षणम् ॥
चातुर्य लक्षणं नार्या, उद्योगः पुरुषलक्षणम् ॥ ६३ ॥

उत्तमे तु क्षणं कोपो, मध्यमे घटिकाद्वयम् ।
अधमे स्यादहोरात्रं चाण्डाले मरणान्तिकम् ॥ ६४ ॥

जटिलो मुण्डी लुञ्चितकेशः, कापायाम्बरकृतबहुवेषः ॥
पश्यन्नपि च न पश्यति मूढ, उदर निमित्तं बहुकृत वेषः ॥६५॥

अधः पश्यति किं बाले, तत्र किं पतितं भुवि ॥
रे रे मूढ न जानासि, गतं तारुण्य मौक्तिकम् ॥६६॥

गतानुगतिको लोकः, कुट्टिनिमुपदेशिनीम् ॥
प्रमाणयति नो धर्मे, यथा गोघ्नमितिद्विजम् ॥ ६७ ॥

एकस्य कर्म संवीक्ष्य, करोत्यन्योऽपि गर्हितम् ॥
गतानुगतिको लोको, न लोकः पारमार्थिकः ॥ ६८ ॥

गतानुगतिको लोको, न लोकः पारमार्थिकः ॥
बालुका लिंगमात्रेण, गतं ताम्रस्य भाजनम् ॥ ६९ ॥

गत शोको न कर्तव्यो, भविष्य नैव चिन्तयेत् ॥
वर्तमानेषु कार्येषु वर्तयन्ति विचक्षणा ॥ ७० ॥

लक्ष्मीर्लक्षणहीनेषु, कुलहीने सरस्वती ॥
कुपात्रे रमते नारी, गिरौ वर्षति माधव ॥ ७१ ॥

मात्रा सम नास्ति शरीर पोषण ।
विद्या सम नास्ति शरीर भूषणम् ॥
भार्या सम नास्ति शरीर तोषण ।
चिन्ता सम नास्ति शरीर शोषणम् ॥ ७२ ॥

अर्थातुराणा न गुरुर्नबन्धु , कामातुराणा न भय न लज्जा ॥
क्षुधातुराणा न रुचिर्न पक्व, चिन्तातुराणा न सुख न निद्रा ॥७३॥

ज्वरादौ लङ्घन प्रोक्त, ज्वरमध्ये तु पाचनम् ॥
ज्वरान्ते भेषजदद्यात्सर्वज्वर विनाशकम् ॥ ७४ ॥

जामाता कृष्णसर्पश्च, पावको दुर्जनस्तथा ॥
विश्वासो नैव कर्तव्यः, पञ्चमो भगिनीसुत ॥ ७५ ॥

भारत पञ्चमो वेदः, सुपुत्र सप्तमो रस ॥
दाता पञ्चदश रत्न, जामाता दशमो ग्रह ॥ ७६ ॥

जीर्णमन्न प्रशसन्ति, भार्या च गत यौवनम् ॥
शूर विजितसग्राम, पारगत तपस्विनम् ॥७७॥

अमृत दुर्लभ नृणां, देवानामुदक तथा ॥
पितृणा दुर्लभ पुत्र , तक्र शक्रस्य दुर्लभम् ॥ ७८ ॥

घृतं न श्रुयते कर्णे, दधि स्वप्नेऽपि दुर्लभम् ॥
मुग्धे दुग्धस्य का वार्ता, तक्रं शक्रस्य दुर्लभम् ॥७९॥

मूर्खोऽपि शोभते तावत्सभायां वस्त्र वेष्टितः ॥
तावच्च शोभते मूर्खो, यावत्किञ्चिन्न भाषते ॥ ८० ॥

निर्द्रव्यं पुरुषं सदैव विकलं सर्वत्रमन्दादरं ।
तातभ्रातृसुहृज्जनादिकुपितं दृष्ट्वा न संभाषितम् ॥
भार्या रूपवती कुरङ्गनयना स्नेहेन नालिङ्गते ।
तस्माद्द्रव्यमुपार्जयाशु सुमते द्रव्येण सर्वे वशाः ॥ ८१ ॥

दूरस्थः पर्वता रम्या वेश्या च मुखमण्डने ॥
युद्धस्य वार्ता रम्या च त्रीणि रम्याणि दूरतः ॥ ८२ ॥

गजं मत्तं द्विजं भ्रष्टं वृषभं काममोहितम् ॥
नृपमन्तःपुरगतं दूरतः परिवर्जयेत् ॥ ८३ ॥

खरं श्वानं गजं मत्तं रण्डां च वहुभाषिणीम् ॥
राजपुत्रं कुमित्रं च दूरतः परिवर्जयेत् ॥ ८४ ॥

देहे पित्तं गृहे वित्तमेकचित्तं कुटुम्बिनाम् ॥
जेष्टपुत्र मतिश्रेष्टं न भवन्ति गृहे गृहे ॥ ८५ ॥

शकटं पञ्चहस्तेन, दशहस्तेन वाजिनम् ॥
गजं हस्तसहस्रेण, देशत्यागेन दुर्जनम् ॥ ८६ ॥

दैवं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम् ॥
समुद्रमथनाल्लेभे हरिर्लक्ष्मीर्हरो विषम् ॥ ८७ ॥

अश्वप्लुतं माधवगर्जितं च स्त्रीणां चरित्रं पुरुषस्य भाग्यम् ॥
अवर्षणं चाप्यतिवर्षणं च देवो न जानाति कुतो मनुष्य ॥८८॥

क्षणं चित्तं क्षणं वित्तं क्षणं जीवति मानवः ॥
यमस्य करुणा नास्ति धर्मस्य त्वरिता गतिः ॥ ८९ ॥

शान्ति तुल्यं तपो नास्ति सतोषान्न सुखं परम् ॥
नास्ति तृष्णा समो व्याधिर्न च धर्मो दयापरः ॥ ९० ॥

न च विद्या समो बन्धुर्न च व्याधि समो रिपुः ॥
न चापत्य समः स्नेही न च धर्मो दयापरः ॥ ९१ ॥

पुनर्वित्तं पुनर्मित्रं पुनर्भार्या पुनर्मही ॥
एतत्सर्वं पुनर्लभ्यं न शरीरं पुनः पुनः ॥ ९२ ॥

यत्र विद्यागमो नास्ति तत्र नास्ति धनागमः ॥
यत्र चात्मा सुखं नास्ति न तत्र दिवसं वसेत् ॥ ९३ ॥

न देवाय न धर्माय न बन्धुभ्यो न चार्थिने ॥
दुर्जनेनार्जितं द्रव्यं भुज्यते राजतस्करैः ॥ ९४ ॥

नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः ॥
चतुष्पदां शृगालस्तु स्त्रीणां धूर्ता च मालिनी ॥ ९५ ॥

पुस्तकं प्रत्ययाधीतं, नाधीतं गुरु संनिधौ ॥
न शोभते सभा मध्ये, जारगर्भा इव स्त्रियः ॥ ९६ ॥

पिण्डे पिण्डे मतिर्भिन्ना, तुण्डे तुण्डे सरस्वती ॥
देशे देशे विभाषाभ्यासनानाराना वसुन्धरा ॥ ९७ ॥

दर्शनाद्धरते चित्तं, स्पर्शनाद्धरते बलम् ॥
संभोगाद्धरते वीर्य, नारी प्रत्यक्ष राक्षसी ॥ ९८ ॥

उदारस्य तृणं वित्तं, शूरस्य मरणं तृणम् ॥
विरक्तस्य तृणं भार्या, निस्पृहस्य तृणं जगत् ॥ ९९ ॥

अज्ञानात्कुरुते श्राद्धं योऽमिश्रवण वर्जितम् ॥
श्राद्धहन्ताभवेत्कर्ता, निराशाः पितरोगताः ॥ १०० ॥

नीचाश्रयो न कर्तव्यः कर्तव्यो महदाश्रयः ॥
अजा सिंहप्रसादेन, आरूढा गज मस्तके ॥ १०१ ॥

विरला जानन्ति गुणान्विरला कुर्वन्ति निर्धन स्नेहम् ॥
विरला रणेषु धीराः परदुःखेनापि दुःखिता विरलाः ॥१०२॥

खलः सर्षपमात्राणि, परच्छिद्राणि पश्यति ॥
आत्मानो विल्वमात्राणि, पश्यन्नपि न पश्यति ॥ १०३ ॥

राजपत्नी गुरोःपत्नी, मित्रपत्नी तथैव च ॥
पत्नीमाता स्वमाता च, पञ्चैता मातरः स्मृताः ॥१०४॥

प्रत्यक्षे गुरवःस्तुत्याः, परोक्षे मित्रबान्धवाः ॥
कार्यान्ते दासीभृत्याश्च, पुत्रो नैव मृताः स्त्रियाः ॥१०५॥

प्रथमेनार्जिता विद्या, द्वितीयेनार्जितं धनम् ॥
तृतीये न तपस्तप्तं, चतुर्थे किं करिष्यति ॥ १०६ ॥

लालयेत्पञ्चवर्षाणि, दशवर्षाणि ताडयेत् ॥
प्राप्ते तु षोडशेवर्षे, पुत्रं मित्र वदाचरेत् ॥ १०७ ॥

पुस्तक वनिता वित्त, परहस्त गतगतम् ॥
यदि चेत्पुनरायाति, नष्ट भ्रष्ट च खण्डितम् ॥ १०९ ॥
पुस्तकेषु च या विद्या, परहस्तेषु यद्धनम् ॥
सग्रामे च गृहंमन्य, त्रय पुसा विडम्बनम् ॥ ११० ॥
पात्रे त्यागी गुणे रागी, सविभागी च बन्धुषु ॥
शास्त्रे बोद्धा रणे योद्धा, पुरुषा• पञ्चलक्षणा ॥१११॥
पूर्वदत्तेषु या विद्या, पूर्वे दत्तेषु यद्धनम् ॥
पूर्वदत्तेषु या भार्या, अग्रे धावति धावति ॥ ११२ ॥
दाने तपसि शौर्ये वा, विज्ञाने विनये नये ॥
विस्मयो नहि कर्तव्यो, बहुरत्ना वसुन्धरा ॥ ११३ ॥
भार्या रूपवती शत्रु पुत्र• शत्रुरपण्डित' ॥
ऋणकर्ता पिता शत्रुर्माता च व्यभिचारिणी ॥ ११४ ।
विपत्तौ किं विषादेन सपत्तौ हर्षणेन किम् ॥
भवितव्य भवत्येव कर्मणामीदृशीगति ॥ ११५ ॥
खण्डे खण्डे च पाण्डित्य क्रयकृत च मैथुनम् ॥
भोजन च पराधीन त्रय पुसा विडम्बनम् ॥ ११६ ॥
दिनान्ते पिबेद्दुग्ध निशान्ते च पिबेत्पय ॥
भोजनान्ते पिबेत्तक्र कि वैद्यस्य प्रयोजनम् ॥ ११७ ॥
शैले शैले न माणिक्य मौक्तिक न गजे गजे ॥
साधवो न हि सर्वत्र चन्दन न वने वने ॥ ११८ ।

यतः सत्यं ततो धर्मो यतोधर्मस्ततो धनम् ॥
यतो रूपं ततः शीलं यतो नागास्ततो जयः ॥ ११९ ॥

मंत्रे तीर्थे द्विजे दैवे दैवज्ञे भेषजे गुरौ ॥
यादृशी भावनां कुर्यात्सिद्धिर्भवति तादृशी ॥ १२० ॥

दृष्ट्वा यतिं यतिः सद्यो वैद्यो वैद्यं नटं नटः ॥
याचको याचकं दृष्ट्वा श्वान वहु गुरायंत ॥ १२१ ॥

काके शौचं द्यूतकारे च सत्यं क्लीवे धैर्यं मद्यपे तत्त्वचिन्ता ॥
सर्पे क्षान्तिः स्त्रीषु कामोपशान्तिः राजामित्रं केन दृष्टं श्रुतंवा ।१२२।

अशक्तस्तु भवेत्साधुर्ब्रह्मचारी च निर्धनः ॥
व्याधितो देवभक्तश्च वृद्धा नारी प्रतिव्रता ॥ १२३ ॥

देशाटनं पण्डित मित्रता च वाराङ्गना राजसभाप्रवेशः ॥
अनेकशास्त्राणि विलोकितानि चातुर्यमूलानि भवन्ति पञ्च ॥१२४॥

शनैः पन्थाः शनैः कन्थाः शनैः पर्वतलङ्घनम् ॥
शनैर्विद्या शनैर्वित्तं पञ्चैतानि शनैः शनैः ॥ १२५ ॥

शठं प्रति शठं कुर्यादादरं प्रति चादरम् ॥
तत्र दोषो न भवति दुष्टे दुष्टं समाचरेत् ॥ १२६ ॥

अविद्या जीवनं शून्यं दिक्शून्याचेदबान्धवा ॥
पुत्रहीनं गृहशून्यं सर्वं शून्या दरिद्रता ॥ १२७ ॥

सुखस्यानन्तरं दुःखं दुःखस्यानन्तरं सुखम् ॥
न नित्यं लभ्यते दुःखं न नित्यं लभते सुखम् ॥ १२८ ॥

उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथै ॥
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविश्यन्ति मुखे मृगा ॥१२६ ॥
दयाम्भसा कृतस्नानः सन्तोषशुभवस्त्रभृत् ।
विवेकतिलकभ्राजी भावनापावनाशयः ॥
भक्तिश्रद्धानघुसृणोमिश्रपाटीं रजद्रवं' ।
नव ब्रह्माङ्कतो देव शुद्धमात्मानमर्चय ॥ १३० ॥
निर्ममो निरहङ्कारो निस्सङ्गो निःपरिग्रह ॥
रागद्वेषविनिर्मुक्तस्त देव ब्राह्मणो विदु ॥ १३१ ॥
पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेष' कपिलादिषु ॥
युक्तिमद्वचन यस्य, तस्य कार्य परिग्रहः ॥ १३२ ॥
मनोविशुद्धपुरुषस्य तीर्थं, वाक्संयमश्चेन्द्रियनिग्रहश्च ॥
एतानि तीर्थानि शरीरजानि, मोक्षस्य मार्गं च निदर्शयन्ति ॥१३३॥
मरुस्थलीकल्पतरूपमान, मोहान्धकारोचयनित्यभानुम् ॥
ससारनारानिजयानपात्र, त वीतरागजातः प्रमदैकपात्रम् ॥१३४॥
सत्यब्रह्म तपोब्रह्म, ब्रह्मश्चेन्द्रियनिग्रहः ॥
सर्वभूतदयाब्रह्म, एतद् ब्राह्मण लक्षणम् ॥ १३५ ॥
जितेन्द्रिय सर्वहितो, धर्मकर्म परायण ॥
यत्र तिष्ठन्ति तत्रैव, सर्व तीर्थानि देवता ॥ १३६ ॥
गुणा सर्वत्र पूज्यन्ते, पितृवंशा निरर्थक' ॥
वासुदेव नमस्यन्ति, वसुदेव न ते जना ॥ १३७ ॥

किं भावी नारकोऽहं किमुत बहुभवी दूरभव्यो न भव्यः ।
किं वाऽहं कृष्णपक्षी किमचरमगुणस्थानकं कर्मदोषात् ॥
वह्निज्वालेव शिक्षाव्रतमपि विषवत्खड्गधारा तपस्या ।
स्वाध्यायः कर्णसूची यम इव विषमः संयमो यद्विभाति ॥१३८॥

सर्पदुर्जनयोर्मध्ये, वरं सर्पो न दुर्जनः ॥
सर्पो दशति कालेन, दुर्जनस्तु पदे पदे ॥ १३९ ॥

दुर्जनं प्रथमं वन्दे, सज्जनं तदनन्तरम् ॥
मुखप्रक्षालनात्पूर्वं, गुदप्रक्षालनं यथा ॥ १४० ॥

लोभः पितातिवृद्धो, जननी माया सहोदरः कूटः ॥
कुटिला कृतिश्च गृहिणी, पुत्रो दम्भस्य हुंकारः ॥१४१॥

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलोभता ॥
अशौचं निर्दयत्वं च स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ॥ १४२ ॥

यस्यभार्या शुचिर्दक्षा भर्तारमनुगामिनी ।
नित्यं मधुरवक्त्री च सा रंभा न रमा रमा ॥ १४३ ॥

सारं सारं गृहीत्वैव, निःसारं परिवर्जयेत् ॥
इक्षुयन्त्रोऽपि गृह्णाति, रसमेव न चापरम् ॥ १४४ ॥

गुणारविन्दमालां ये, धारयन्ति नरोत्तमाः ॥
वन्दनीया नरेशानां, भवन्ति गुण धारिणाम् ॥ १४५ ॥

कृपणाधनासाद्य, कृतकष्ट परंपराः ॥
परार्थद्वेषिणः खिन्ना, स्वयं नैवोपभुञ्जते ॥ १४६ ॥

भक्तो मातापितृणां स्वजनपरजनानन्ददायी प्रशान्त ।
श्रद्धालु• शुद्धबुद्धिर्गतमदकलह' शीलवान् दानवर्षी ॥
अक्षोभ्य सिद्धगामी परगुणविभवोत्कर्ष हृष्ट• कृपालु ॥
सर्वैश्वर्याधिकारी भवति किलनरो दैवत मूर्तमेव ॥ १४७ ॥

पाषाणेषु यथा हेम, दुग्धमध्ये यथाघृतम् ॥
तिलमध्ये यथा तैल, देहम ये तथा शिव ॥ १४८ ॥

न देवपूजा नच पात्रपूजा, नश्राद्ध धर्मश्च न साधु धर्मः ॥
लब्धापि मानुष्यमिद समस्त, कृत मयारण्य विलापतुल्यम् ॥१४६॥

सर्व मगल मागल्य सर्व कल्याण कारणम् ॥
प्रधान सर्व धर्माणां जैनोधर्मोऽस्तु मगलम् ॥ १५० ॥

॥ इति शम् ॥



अथश्री

व्याख्याविलास.

भाग ३ जो.

अप्पा चेव दम्मेयाव्वो, अप्पाहु खलुदुदम्मो ॥
अप्पादंतो सुहीहोइ, अस्सिंलोए परत्थय ॥ १ ॥
एगया खत्तिओ होइ, तओ चंडाल बुक्कसो ॥
तओ कीड पयंगोय, तओ कुंथु पिप्पीलिया ॥ २ ॥
कम्मसंगेहिं संमूढा, दुक्खिया वहु वेयणा ॥
अमणुस्सासु जोणिसु, विणिहम्मंत्ति पाणिणो ॥ ३ ॥
तेणे जहा संधिमुहेगाहिए, सकम्मुणा किचेइ पापकारी ॥
एवं पयापेच्च इहं च लोए, कडाणकम्माण न मोक्ख अत्थि ॥४॥
जहा कांगणीए हेऊ, सह संहारेए नरो ॥
अपत्थं अवंगंभुच्चा, राया रज्जं च हारए ॥ ५ ॥
जे लक्खणं सुविणं च, अंगविज्जं च जे पऊजंति ॥
नऊते समणावुच्चन्ति, एवं आयरिय मक्खायं ॥ ६ ॥
जहालाभो तहालोभो, लोभा लोभं पवड्ढइ ॥
दोमासा कणीयं कज्ज, कोडिए वि न निट्ठिए ॥ ७ ॥
जो सहसं सहसाणं, संगामे दुज्जए जणे ॥
एगो जिणिज्जा अप्पाणं, एसस्स परमो जओ ॥ ८ ॥

सुवण्ण रूप्पस्स उ पव्वया भवे ।
सियाहु केलास समा असङ्खाय ॥
नरस्स लुद्धस्स न तेहिं किंचि ।
इच्छाओ आगास समा अणन्तिया ॥ ९ ॥
सल्लकामा विसकामा, कामा आसी विसोवमा ॥
कामेय पत्थेमाणा, अकामा जन्ति दोग्गइ ॥ १० ॥
अहो ते अज्जवसाहु, अहो ते साहु मद्दव ॥
अहो ते उत्तमा खन्ति, अहो ते मुत्ति उत्तमा ॥ ११ ॥
दुमपत्तए पण्डुरे जहा, निवडइ रायगणाण अच्चाए ॥
एव मणुयाण जीविय, समय गोयम म पमायए ॥१२॥
कुसग्गे जह ओसबिन्दुए, थोव चिठइ लम्बमाणए ॥
एव मणुयाण जीविय, समय गोयम म पमायए ॥१३॥
एव भवससारे ससरइ, सुहासुहेहिं कम्मेहिं ॥
जीवो पमाय बहुलो, समय गोयम म पमायए ॥ १४ ॥
नहु जिणे जिणे अज्ज दिस्सइ, बहुमए दिस्सइ मग्गदेसिए ॥
सपइ नेयाउए पहे, समय गोयम म पमायए ॥ १५ ॥
सव्व विलवियं गीय, सव्वनट विडम्बणा ॥
सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा ॥ १६ ॥
अह पचहिं ठाणेहिं, जेहिं सिक्खा न लब्भई ॥
थभामोहा पमाएण, रोगेण आलसेण य ॥ १७ ॥
चेच्चा दुपयच चउप्पय च, खेत्त गिह धण धन्न च सव्व ॥
सकम्म बीओ अवसो पयाइ, पर भव सुदर पावग वा ॥१८॥

खण मेत मुक्खा बहुकाल दुःक्खा, पगाम दुक्खा अनिगाम सुक्खा ॥
संसार मोक्खस्स विपक्खभूया, खाणी अणत्थाणउ कामभोगा ॥ १९ ॥
इमं च मे अत्थि इमं च नत्थि, इमं च मे किच्चा इमं अकिच्चं ॥
तं एवमेवं ललप्प माणं, हरा हरंति त्ति कहं पमाए ॥ २० ॥

धम्मारामे चरे भिक्खू, धिइमं धम्मसारही ॥
धम्मारामे रते दन्ते, बंभचेर समाहिए ॥ २१ ॥
देव दाणव गन्धव्वा, जक्ख रक्खस किन्नरा ॥
बंभयारिं नमंसन्ति, दुक्करं जे करान्ति ते ॥ २२ ॥
बहुमाई य मुहरी, थद्धे लुद्धे अणिग्गहे ॥
असंविभागी अचियत्ते, पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ २३ ॥
जे केइ पव्वइए निद्दासीले पगामसो ॥
भोच्चा पिच्चा सुहं सुवइ, पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥ २४ ॥
दुद्ध दहि विग्गइओ, आहारइ अभिक्खणं ॥
अरइ तवो कम्मेणं पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥ २५ ॥
अभयं पत्थिवा तुब्भं, अभयदाया भवाहि य ॥
अणिच्चे जीवलोगम्मि, किं हिंसाए पसज्जसि ॥ २६ ॥
चइत्ता भारहं वासं, चक्कवट्टी महड्ढिओ ॥
सन्ति सन्तिकरे लोए, पत्तो गइ मणुत्तरं ॥ २७ ॥
करकण्डू कलिंगेसु, पंचालेसुय दुम्मुहो ॥
नमीराये विदेहेसु, गन्धारेसु य नग्गई ॥ २८ ॥
साहुस्स दरिसणे तस्स, अज्झवसाणंमि सोहणे ॥

मोहंगयस्स सन्तस्स, जाइसरण समुप्पन्न ॥ २६ ॥
जम्म दुक्ख जरा दुक्ख, रोगाणि मरणाणि य ॥
अहो दुक्खो हु ससारो, जस्स कीसन्ति जतवो ॥ ३० ॥
खेत्त वत्थु हिरण्ण च, पुत्त दार च बन्धवा ॥
चइत्ताण इम देह, गन्तव्वमवसस्स मे ॥ ३१ ॥
जहा किंपाक फलाण, परिणामो न सुदरो ॥
एव भुत्ताणभोगाण, परिणामो न सुदरो ॥ ३२ ॥
जहा गेहे पलित्तम्मि, तस्स गेहस्स जो पहु ॥
सारभडाणि नीहरेइ, असार अवइज्झइ ॥ ३३ ॥
वालुयाकवलो चेव, निरस्साए ओ सजमो ॥
असीधारागमण चेव, दुक्कर चरउ तवो ॥ ३४ ॥
सरीर माणसा चेव, वेयणाओ अणन्तसो ॥
मए सोढाओ भीमाओ, असइ दुक्खभयाणि य ॥३५॥
तत्ताहिं तब लोहाइ, तउयाइ सीसगाणिय ॥
पाइओ कलकलन्ताइ, आरसन्तो सुभेख ॥ ३६ ॥
जारिसा माणुसे लोए, ताता दीसन्ति वेयणा ॥
एत्तो अणन्तगुणिया, नरएसु दुक्ख वेयणा ॥ ३७ ॥
जहा मियस्स आतके, महारण्णमि जयइ ॥
अच्चन्त रुक्खमूलमि, को ण ताहे तिगिच्छई ॥ ३८ ॥
लाभालाभे सुहे दुहे, जीविए मरणे तहा ॥
समो निंदा पससेसु, तहा माणावमाणओ ॥ ३९ ॥

सिद्धाणं नमो किच्चा, संजयाणं च भावओ ॥
अत्थ धम्म गइ तच्चं, अणुसुट्ठिं सुणेह मे ॥ ४० ॥
अप्पणा वि अणाहोसि, सेणिया मगहाहिवा ॥
अप्पणा अणाहो सन्तो, कस्स नाहो भविस्ससि ॥ ४१ ॥
अप्पा नदी वेयरणी, अप्पा मे कूड सामली ॥
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नन्दणावणं ॥ ४२ ॥
अप्पा कत्ता वि कत्ताअ, दुक्खाण य सुहाण य ॥
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय सुप्पट्ठिओ ॥ ४३ ॥
चिरं पिसे मुंड रुइ भवित्ता, अथिर वय तव नियमेहिं भट्ठे ॥
चिरं पि अप्पाण किलेसइत्ता, न पारए होइ हु संपराए ॥४४॥
पुल्लेव मुठ्ठी जहा से असारे, अयन्तिए कूडकहा वणे वा ॥
रढामणि वेरुलियप्पगासे, अमहग्घाए होइ य जणाइसु ॥४५॥

विसं तु पीयं जहा कालकूडं ।
हणाइ सत्थं जह कुग्गहीयं ॥
एसो वि धम्मो विसओ ववन्नो ।
हणाइ वेयाल इवा विवन्नो ॥ ४६ ॥
उद्देसियं कीयगडं नियागं ।
न मुच्चेइ किंचि अणेसणिज्जं ॥
अग्गीविव सव्वभक्खी भवित्ता ।
इत्तो चुए गच्छइ कट्टू पावं ॥ ४७ ॥
न तं अरी कंठ छेत्ता करेइ ।
जं से करे अप्पाणिय दुरप्पाया ।

मे नाहइ मच्चु मुह तु पत्ते ॥
पच्छणु तानेण दया त्रिहुणा ॥ ४८ ॥
त पासीउण सनेग, समुद्दपालो इणमव्व वि ॥
अहो असुभ कम्मण, निजाण पावग इम ॥ ४६ ॥
अहा सा रायवर कन्ना, सुसीला चारु पेहणी ॥
सव्व लक्खण सपन्ना, निज्जु सोय मणिप्पभा ॥५०॥
कस्स अट्ठा इमे पाणा, एते सव्व सुहोसिणो ॥
वाडेहिं पञ्जरेहिं च, सन्निरुद्धा य अच्छहिं ॥ ५१ ॥
अह सारही तओ भणइ, ए ए भद्दाओ पाणिणो ॥
तुज्झ विवाह कज्जमि, भोयावेओ नहु जेण ॥ ५२ ॥
जइ मज्झ कारणा, एए हम्मन्तिसु नहु जिया ॥
त मे एयतु निस्सेस, परलोगे भविस्सइ ॥ ५३ ॥
सो कुडलाण जुयल, सुत्तगच महाजसो ॥
आभरणाणि य सव्वाणि, सारहिस्स पणामए ॥५४॥
केसीकुमार समणे, गोयमे य महायसे ॥
उभओ निसण्णा सोहन्ति, चन्द सूर समप्पभा ॥ ५५ ॥
पुरिमा उज्जुजड्डओ, वक्कजडाओ पच्छिमा ॥
मज्झिमा उज्जुपन्नाओ, तेण धम्मे दुहा कए ॥ ५६ ॥
पुरिमाण दुव्विसोज्झोओ, चरिमाण दुरणु पालोओ ॥
कप्पो मज्झिमगाणतु, सुविसोज्झो सुपालओ ॥ ५७ ॥
एगप्पा अजिए सत्तु, कसाया इन्दियाणि य ॥
ते जिणित्ता जहानाय विरहामि अह मुणी ॥ ५८ ॥

निसग्गुवएसरुइ, अणारुई सुत्तं बीयरुई ॥
अभिगम वित्थाररुई, किरिया संखेव धम्मरुई ॥ ८१ ॥
नत्थि चरित्त सम्मत्तविहुणं, दंसणे उ भइयव्वं ॥
सम्मत्त चरित्ताइं, जुगवं पुव्वं च सम्मत्तं ॥ ८२ ॥
नादंसणस्स नाणं, नाणेण विणा न हुन्ति चरणगुणा ॥
अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि मोक्खस्स निव्वाणं ॥८३॥
जहा महातलायस्स, सन्निरुद्धे जलागमे
उस्सिंचणाए तवणाए, कमेणं सोसणा भावे ॥ ८४ ॥
नाणस्स सव्वस्स पगासणाए, अन्नाण मोहस्स विवज्जणाए॥
रागस्स दोसस्स य संखएणं, एगन्त सोखं समुवेइ मोक्खं ॥८५॥

नवा लभेज्जा निउणं सहायं ।
गुणाहियं वा गुणओ समं वा
एगो वि पावाइं विवज्जयन्तो
विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ ८६ ॥
जहा य अंडप्पभवा बलागा
अंड बलागप्पभाव जहाय
एमेव मोहायतणं खु तण्हा
मोहं च तण्हायतणं वयन्ति ॥ ८७ ॥
रागो य दोसो विय कम्मबीयं ।
कम्मं च मोहप्पभवं वयन्ति
कम्मं च जाइ मरणस्समूलं
दुक्खं च जाइ मरणं वयन्ति ॥ ८८ ॥

दुक्ख हय जस्स न होइ मोहो ।
मोहो हय जस्स न होइ तण्हा ॥
तण्हा हया जम्म र होइ लोहो ।
लोहो हओ जस्स न किंचणाई ॥ ८९ ॥
पञ्चासवप्पवत्तो तिहिं अगुत्तो छसु अविरओय ।
तिव्वारभ परिणामो खुद्दो साहमिओ नरो ॥ ९० ॥
निद्धन्धसपरिणामो, निस्ससो अनिइन्दिओ ।
एय जोग समाउत्तो, किण्ह लेस तु परिणामो ॥ ९१ ॥
ईसा अमरिसा अतवो, अविज्जमाय अहीरिया ।
गिद्धी पओमे य सढे पमत्ते, रस लोलुए सायगवेसए ॥९२॥
आरभओ अविरओ, खुद्दो साहमिओ नरो ।
एय जोग समाउत्तो, निललेम तु परिणामो ॥ ९३ ॥
वके वक समायरे, नियडिल्ल अणुज्जुए ।
पलिउचगओ वहिए, मिच्छादिट्ठी अणारिए ॥ ९४ ॥
उप्फामग दुट्ठवाइ य, तेण य वि य मच्छरी ।
एय जोग ममाउत्तो, काऊलेस तु परिणामो ॥ ९५ ॥
नीयावत्ती अचवले, अमाइ अकुतुहले ।
विणीय विणए दन्ते, जोगव उवहाणव ॥ ९६ ॥
पिय धम्मे दढ धम्मे, वज्जभीरू हिएसए ।
एय जोग ममाउत्ते, तेउ लेसतु परिणामो ॥ ९७॥
पयाणु कोहमाणाय, माया लोभ य पयाणुए ।

पसन्त चित्ते दन्तप्पा, जोगवं उवहाणव ॥६८॥
तहा पयाणुवाई य, उवसन्ते जिइन्दिए ।
एय जोग समाउत्तो, पम्ह लेसंतु परिणामो ॥६६॥
अट्ट रुद्दाणि वज्जिता, धम्म सुक्काइज्झायए ।
पसन्त चित्ते दन्ताप्पा, समिए गुत्तेय गुत्तीसु ॥१००॥
सरागे वीयरागे वा, उवसन्ते जिइन्दिय ।
एय जोग समाउत्ते, सुक्कलेसंतु परिणामो ॥ १०१ ॥
मणोहरं चित्तहरं, मल्ला धूवेण वासियं ॥
सक्कवाडं पण्डुरुलोयं, मणसावि न पत्थए ॥ १०२ ॥
अच्चणं रयणं चेव, वन्दणं पूयणं तहा ॥
इड्ढी सक्कार सम्माणं, मणसावि न पत्थए ॥ १०३ ॥
जिणवयणे अणुरत्ता, जिणवयणं करन्ति भावओ ।
अमला असंकिलिट्ठा, ते होन्ति परित्त संसारे ॥ १०४ ॥
कन्दप्प कुक्कुयाइं तह, सील सहावह रुण विग्गहाइं ।
विम्हवेन्तो वि परं, कन्दप्पं भावणं कुणइ ॥ १०५ ॥
मन्ताजोगं काउं भूईकम्मं च जे पउञ्जन्ति ।
सायरस इड्ढिहेउं, अभिओगं भावणं कुणइ ॥ १०६ ॥
नाणस्स केवलीणं, धम्मायरियस्स संघ साहूणं ।
माई अवण्णवाई, किब्बिसियं भावणं कुणई ॥ १०७ ॥
अणुबद्धरोसपसारो, तह य निमित्तंमि होइ पडिसेवी ।
एए हि कारणेहिं, आसुरियं भावणं कुणइ ॥ १०८ ॥

सत्थगहरणं विसभक्खणं च, जलणं च जलपवेसो य ॥
अणायार भडसेवी, जम्मण मरणाणि वद्धन्ति ।।१०६॥
धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ॥
देवा वि तं नमसन्ति, जस्स धम्मे सयामणो ॥११०॥
वत्थगन्धमलंकारं, इत्थिओ सयणाणि य ॥
अच्छंदा जे न भुंजन्ति, न से चाइ त्ति वुच्चइ ॥ ११? ॥
जेय कन्ते पिय भोए, लद्धे विप्पिट्ठिकुव्वइ ॥
साहीणे चयई भोए, सेहु चाइ त्ति वुचइ ॥ ११२ ॥
आया वयंति गिम्हेसु, हेमंतेसु अवाउड ॥
वासासु पडिसंलीणा, संजयसु समाहिया ॥ ११३ ॥
जयं चरे जयं चिट्ठे, जयं मासे जयं सए ॥
जयं भुंजतो भासन्तो, पावकम्मं न बन्धइ ॥ ११४॥
पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठइ सव्व संजया ॥
अन्नाणी किं काही, किंवा नाही सेय पावग ॥११५॥
सोचा जाणइ कल्लाणं, सोचा जाणइ पावगं ॥
उभयपि जाणइ सोचा, जं सेयं तं समायरे ॥११६॥
उग्गमं सेयं पुच्छेज्जा, कस्सट्टा केणवा कडं ॥
सोचा निसंकियं सुद्धं, पडिग्गहिज्ञा संजए ॥११७॥
अहो जिणेहिं असावज्जा, वित्ती साहुण देसिया ॥
मोक्ख साहुण हेउस्स, साहु देहस्स धारणा ॥११८।
दुल्लहाओ मुहा दाइ, मुहा जीवी विदुल्लहा ॥
मुहा दाइ मुहा जीवी, दोनी गच्छन्ति सुगइ ॥११६॥

सिणेहि पुप्फ सुहुमं च, पाणुत्तिंग तहेव य ॥
पणगं वीयं हरियं च, अण्ड सुहुमं च अट्ठमं ॥१२०॥
जरा जाव न पीडेइ, वाहि जाव न वड्ढइ ॥
जाविंदिया न हायन्ति, ताव धम्मं समायरे ॥ १२१ ॥
कोहो पीयं पणासेइ, माणो विणय नासिणो ॥
माया मित्ताणि नासेइ, लोभो सहु विणासणो ॥१२२॥

आसी विसो वा वि परं सुरुट्ठो ।
किं जीव नासाओ परंतु कुज्जा ॥
आयरिय पाय पुण अप्पसन्ना ।
अवोहि आसायणा नत्थि मोक्खं ॥ १२३ ॥
सिया हु सीसेण गिरं पि भिंदे ।
सिया हु सीहो कुविओ न भक्खे ॥
सिया न भिंदेज्जा वसत्ति अग्गं ।
न आवि मोक्खो गुरु हीलणाए ॥ १२४ ॥
जस्सान्तिए धम्म पयाइं सिक्खे ।
तस्सान्तिए विणइयं पउञ्जे ॥
सक्कारए सिरसा पंजलिओ ।
काय गिराभो मणसाय निच्चं ॥ १२५ ॥

संघट्टाइत्ता काएणं, तहा उवहीणामावि ॥
खमेह अवराहं मे, वएज्जा न पुणोत्तिय ॥ १२६ ॥

भगवान गोतमस्वामी कण्ठ विनिर्गत मुक्ता रत्नमाला।

(गौतमकुलक)

लुद्धानरा अत्थपरा हवंति, मूढानरा कामपरा हवंति ।
बुद्धानरा खंतिपरा हवंति, मिस्सानरातिन्निवि आयरंति ॥१॥
ते पंडिया जे विरया विरोहे, ते साहुणो जे समयं चरंति ।
ते सत्तिणो जे न चलंति धम्मं, ते बंधवा जे वसणे हवंति ॥२॥
कोहाभिभूया न सुहं लहंति, माणसिणो सोय पराहवंति ।
मायाविणो हुंति परस्सपेसा, लुद्धामहिच्छा नरयं उविंति ॥३॥
कोहो विसं किं अमयं अहिंसा, माणो अरि किं हियमप्पमाओ ।
माया भयं किं सरणं तु सच्चं, लोहो दुहो किं सुहमाहतुट्ठि ॥४॥
बुद्धि अचंडं भयए विणीयं, कुद्धं कुसीलं भयए अकीत्ति ।
संभिन्नचित्तं भयए अलच्छी, सच्चेठियं सं भयए सिरीयं ॥५॥
चयंति मित्ताणि नरं कयग्धं, चयंति पावाइं मुणिं जयंतं ।
चयंति सुक्काणि सराणि हंसा, चयंति बुद्धि कुवियं मणुस्सं ॥६॥
अरोइ अत्थं कहीए विलावो, असंपहारे कहीए विलावो ।
विक्खित्तचित्ते कहीए विलावो, बहुकुसीसे कहीए विलावो ॥७॥
दुट्ठाहिवा दंड परा हवंति, विज्जाहरा मंत परा हवंति ।
मुक्खानरा कोव परा हवंति, सुसाहुणो तत्त परा हवंति ॥८॥

सोहा भवे उग्ग तवस्स खंती, समाहि जोगो पसमस्स सोहा ।
नाणं सुझाणं चरणस्स सोहा, सीसस्स सोहा विणए पवित्ति ६॥
अभूसणो सोहइ बंभयारी, अकिंचणो सोहइ दिक्खधारी ।
बुद्धिजुओ सोहइ रायमंती, लज्जाजुओ सोहइ एगपत्ति ॥ १० ॥
अप्पा अरी होइ अणवट्ठिअस्स, अप्पा जसो सीलमओ नरस्स ।
अप्पा दुरप्पा अणवट्ठिअस्स, अप्पा जिअप्पा सरणं गईय ॥ ११॥
न धम्मकज्जा परमात्थिकज्जं, न पाणि हिंसा परमं अकज्जं ।
न पेम रागो परमत्थिबंधो, न बोहिलाभो परमत्थिलाभो ॥१२॥
न सेवियव्वा पमया परक्का, न सेवियव्वा पुरिसा अविज्जा ।
न सेवियव्वा अहिमानिहीणा, न सेवियव्वा पिसुणा मणुसा । १३॥
जे धम्मिया ते खलु सेवियव्वा, जे पंडिया ते खलु पुच्छियव्वा ।
जे साहुणो ते अभिवंदियव्वा, जे निम्ममा ते पडिलाभियव्वा॥१४॥
पुत्ताय सिसाय समं विभत्ता, रिसीय देवाय समं विभत्ता ।
मूरखातिरिक्खा च समं विभत्ता, मुआदरिद्दाय समं विभत्ता ॥ १५॥
सव्वकला धम्मकला जिणाइं, सव्वाकहा धम्मकहा जिणाइं ।
सव्वं बलं धम्म बलं जिणाइं, सव्वं सुहं धम्मसुहं जिणाइं॥१६॥
जूए पसत्तस्स धनस्स नासो, मंसं पसत्तस्स दयाइ नासो ।
मज्जं पसत्तस्स जसस्स नासो, वेसा पसत्तस्स कुलस्स नासो॥१७॥
हिंसा पसत्तस्स सुधम्मस्सनासो, चोरी पसत्तस्स सरीरस्सनासो ।
तहा परत्थिसु पसत्तयस्स, सव्वस्स नासो अहमागइ य ॥१८॥
दाणं दरिद्दस्स पहुस्सखंति इच्छानिरोहो य सुहोइयस्स ।
तारुण्णए इंदिय निग्गहो य, चत्तारीए आणि सुदुक्कराणि ॥१९॥

असासय जीवीय महुलोए, धम्मचरे साहु जिणेवईह ।
धम्मोयताण सरण गइय, धम्म निसेविचु सुह लहति ॥२०॥

सयल कल्लाण निलय, नमिऊण तित्थनाहा पयकमल ॥
परगुण गहण सरून, भणामि सोहग्गसिरि जणय ॥ १ ॥
उत्तम गुणाणुराओ निनसइ हिययमि जस्स पुरिसस्स ॥
आतित्थयार पयाओ न दुल्लहा तस्स रिद्धीओ ॥२॥
जइवि चरसि तव विउल, पडसि सुय करिसि विनिह कट्ठाइ ॥
न धरसि गुणाणुराय, परेसु ता निप्फल सयल ॥ ३ ॥
जो परदोसे गिएहइ, सतासतेनि दुट्ठ भावेण ॥
सो अप्पाण बन्धइ, पावेण निरत्थएणावि ॥ ४ ॥
सो देसो त नगर, त गामो सो अ आसमो धन्नो ॥
जत्थ पहु तुम्ह पाया, निहरति सयानि सुपसन्ना ॥ ५ ॥
जा रिद्धि अमरगणा, भुजता पियतमाइ सजुत्ता ॥
सापुण कित्तियामित्ता, दिट्ठे तुम्ह सुगुरु मुह कमले ॥ ६ ॥
अट्ठमि चउद्दस्सीसु, सव्वाउ नि चेइयाइ वदिज्जा ॥
सव्वेवि तहा मुणियो, सेसदिणे चेइअ एक ॥ ७ ॥
जिणचलणकमल सेवा, सुगुरु पाय पज्जुवासण चेन ॥
सज्झायवायवडत, लब्भति पभूय पुंणेहिं ॥ ८ ॥
दाण सोहाग्ग कर, दाण आरुग्ग कारण परम ॥
दाण भोग निहाण, दाण ठाण गुणगणाण ॥ ६ ॥

जिणभुवण बिंब पुथ्थय, संघ सरुवेसु सत्ताखेतेसु ॥
ववित्रं धणंपि जायइ सिवफल यमहो अणंतगुणं ॥ १० ॥
सीलं उत्तमं वित्तं, सीलं जीवाण मंगलं परमं ॥
सीलं दोहग्गहरं, सीलं सुख्खाण कुलभवणं ॥ ११ ॥
अथिरंपि थिरं वकंपि, उज्जुअं दुल्लहंपि तह सुलहं ॥
दुस्सझंपि सुसझं तवेण संपज्जए कज्जं ॥ १२ ॥
निच्चुन्नो तंबोलो, पासेण विणा न होइ जह रंगो ॥
तह दाण सील तव भावणाओ अहलाओ सव्व भावविणा ॥१३॥
अहा कम्मं उद्देसिय, पूइकम्ममिस जाएय ॥
ठवणा पाउडियाए, पाउर कीयपामिच्चे ॥ १४ ॥
परियट्टे अभिहडे भिन्ने मालोहडे (भूमिमालोहडे) ॥
अच्छिज्जे अणिसिट्ठे अज्झोयरसोलस ठग्गमदोसा ॥ १५ ॥
धाइदूइ निमित्ते आजीवे वणिमगतिगिच्छे ॥
कोहे माणेमायालोभे हवंति दसदोसाए ॥ १६ ॥
पूव्वं पच्छासंथव विज्जामंत्तचुन्नजोगेय ॥
उप्पायणाएदोसा सोलसमेमूलकम्मेय ॥ १७ ॥
संकिए मक्खिए निक्खित्ते पोहियसाहरिया ॥
दायगोभिसे अपरिणित्त लित्त छंडुए एसणादसहाहुंति ॥१८॥
संजोयणापमाणे इंगालेधूमकारणे ॥
एएसायालीसा दोसा वज्जयंति महामुणी ॥ १९ ॥

॥ समाप्तम् ॥

अथश्री , ,

व्याख्याविलास–भाग ४ था

(भावाविभाग)

(१)

गामनपति अरिहत, कर्मोंको कियो अन्त ।
सूरि पाठक अनगार, नमो तपचारको ॥
स्थविरगण कुल सघ, क्रियानन्त शुद्ध लिंग ।
जघा निद्याचारण मुनि, जिनकल्प धारको ॥
जिन निम्ब जिन ज्ञान, तप शील भाव दान ।
आत्म समाधि ध्यान, नमो सुखकारको ॥
शासनको नमस्कार, करत हजारवार ।
ज्ञानसेती प्रीत धार, तीरो ससारको ॥

(२)

जीवदया जगसार, धर्मरूची अनगार ।
मेतारज मुनि सार, पाया भवपारको ॥
मेघरथराय जान, परेवाको राख्यो प्रान ।
शान्तिनाथ भगवान, तार्यो समारको ॥

तेवीसमा जिनराज, नागको सुधार्यो काज ।
राजुलके शिरताज सुनी, पशुकी पोकारको ॥
जिन आज्ञा परधान, जीवदया शुभ ध्यान ।
सुन्दर सुजान ज्ञान, पावे पद सारको ॥

(३)

जो अरि मित्त बरावर जानत, पार्श्व ओर पापाण जो दोही ।
कनक कीच समान कहे जिम, निच नरेश्वरमें भेद न कोही ॥
मान कहा अपमान कहा, मत एसो विचार नहीं तस होही ।
राग अरु रोस चित्त नहीं जाके, धन्य अहो जगमें जन सोही ॥

(४)

ज्ञानी कहो अज्ञानी कहो कोइ, ध्यानी कहो मन माने ज्युं कोइ ।
योगी कहो भावे भोगी कहो कोइ, जाको जेसा मन भासत होइ ॥
दोपी कहो निर्दोषी कहो, पिंड पोपी कहो कोइ अवगुन जोइ ।
राग अरु द्वेष नहीं सुन जाकुं, धन्य अहो जगमें जन सोही ॥

(५)

साधु शान्त महान्त कहो कोइ, भावे कहो निर्ग्रन्थ सुप्यारे ।
चोर कहो कोइ ढोर कहो कोइ, सेव करो कोइ जाण भलेरे ॥
विनय करी कोइ उच्च बेठावे, ज्युं दूरथी देख कहे कोउ जारे ।
धर्म सदा समभाव चिदानन्द, लोक कहावत सुनत नारे ॥

(६)

लज्जा विनो रूप रंग होय तो भी राखरूप ।
लज्जा विनो धूल जेसा सबही निधान है ॥

लज्जा विनो विनय विचार रह सके नहीं ।
लज्जा विनो मोटाइको खोटो अभिमान है ॥
लज्जा विनो नाम ठाम लोकमें न रहे भार ।
लज्जा विनो जहां जावो तहां अपमान है ॥
केशव कहत साची लज्जा यह मोटी बात ।
एक लज्जा विनो नर पशुके समान है ॥

(७)

चिंता विनो कामकाज सत्यहु न माने कोय ।
चिंता विनो लेखपत्र पीपल केरा पान है ॥
चिंता विनो आरम अधूरा रहत है सब ।
चिंता विनो कीसका मान अपमान है ॥
चिंता विनो सुख दु:ख शरीरको न जाने आप ।
चिंता विनो धुलधाणी तप जप ध्यान है ॥
केशवदास चिंता विनो चतुराई केसी भाई ।
एक चिंता विनो तन लकड़ा समान है ॥

(८)

हाथमें घरे तो चीटी पुणच्छीस विशेप शोभा ।
कानमें घरे तो अमूल्य कुडलके आकार है ॥
मुखमें धरे तो मुख वाससे सुवास होवे ।
कंठमें धरे तो मानो हीरों केरो हार है ॥
मस्तकपे घरे तो मुगटसे भी सुदर शोभे ।
घरमें धरे तो अच्छो घरको शृंगार है ॥

भविता प्रताप भयो कविता कविश्वर करे
अधर रहे हुवे जनको मनको आधार है।

(६)

बालक पीवे तो त्हेने विद्याबल बहु बधे।
जवान पीवे तो छाक उतारे जवानीको ॥
वृद्धजन पीवे ताको हिम्मत अरु जौर वधे।
उपजावे अन्तरमें रस सोला आनिको ॥
सतीयां पीवे तो त्हेने सत्यको मार्ग मीले।
सुधारस सम नारी मोटी अरु छोटीको ॥
सुकविता अवगुणकारी होय नहीं कीसीको।
दोष न देखाय जहामें लगार नादानीको ॥

(१०)

बोलीये तो जब तब बोलनेकी शुद्धि होय।
न तो मुख मौन करी चूप बैठ रहिये ॥
जोरिये तो जब तब जोरवाको ज्ञान होय।
तुंक छंद अर्थ अनूप जहामें लहिये ॥
गाइये तो जब तब गायवाको कंठ होय।
श्रवणके सुनतेही मन जाय गहिये ॥
तुंकभंग छंदभंग अरथ मीले न कच्छु।
सुन्दर कहत एसी वाणी नही कहीये ॥

(११)

दाने सपत्त होय, दान लच्छी घर आवे ।
दाने होय उद्धार, दानमे आदर पावे ॥
दाने निर्मल चित्त, दान घर जाचक आवे ।
दाने सुर अवतार, दानमे शिवपद पावे ॥
धन धरा सग न चले, चले जो दीनो दान ।
परभवमें दीनो मीले, समजावे गुरुज्ञान ॥

(१२)

शील सुधारस पान कर, उतरे मोहकी छाक ।
यन्त्र मन्त्र सिद्ध हुवे, रहे कान्छका पाक ॥
रहे काच्छका पाक महीलाको माता जाणे ।
वचनसिद्धि होइ जाय आतमा आप पेन्छाने ॥
भवभ्रमण भटक्यो घणो लगी पीपासा ज्ञान ।
सुन्दर सदा सुख शीलसे करो सुधारस पान ॥

(१३)

ज्ञान साथे तप कर, चमा हुकी सग धर ।
कर्मोको प्रज्वाल कर, टालो मिथ्या अंधकारको ॥
इन्द्रभूति गणधार, धन्ना नामे अनगार ।
तप कियो खडग धार, जीत्या मोहरायको ॥
श्रेणिक नृपकी नार, काली आदि तप धार ।
प्रदेशीको कीयो पार, सुदत्त अनगारको ॥

काटत कर्मशूल, भवको उखेडे मूल ।
शिवसुख अनुकूल, तोडे कर्म निकाचितको ॥

(१४)

दान शील तप सही. भाव साथे फल लही ।
ज्ञान ध्यान पूजा आदि, भावसे प्रधान है ॥
एक छत्र राज करे, षट खंड आण धरे ।
भरत नरेश्वर जाके, भावे केवलज्ञान है ॥
ध्यान मांहे थीर थोभ, राजतणो लाग्यो लोभ ।
प्रसन्नचन्द्र नरकदल, भावे निर्वाण है ॥
वंस रोपी करे खेल, भावसेति धोवे मेल ।
एलापुत्र केवलज्ञान, भावही निधान है ॥

(१५)

क्रोधी महा चंडाल, धड धड धूजावे छाती ।
क्रोधी महा चंडाल, आंखीयों करदे राती ॥
क्रोधी महा चंडाल, गीने नहीं छूरी कुंडो ।
क्रोधी महा चंडाल, जाय नरकमें उंडो ॥
क्रोधी महा चंडाल, कीधो तप संयम खोवे ।
क्रोधी महा चंडाल, बीज दुर्गतिको बोवे ॥
क्रोधी महा चंडाल, गीने नहीं माता भाई ।
क्रोधी महा चंडाल, दोनों गति देत डूबाई ॥
वैर वधे गटे पितडी, अग्निज्वाला जान ।
आतम शीतल जे करे, ज्ञान सुधारस पान ॥

(१६)

मानसे मान जाय मानसे तान जाय मानसे ज्ञान जाय कठको।
मानसे मन जाय मानसे तन जाय मानसे धन जाय गाठको॥
मानसे पशु थाय मानसे नरक जाय मानमे रावणने दु ख पायो खानको
मानको नीवार वार ज्ञानसेति प्रित धार सुन्दरको कर पार,
पद लहो ध्यानको॥

(१७)

माया विनसे ज्ञान माया अज्ञान बढावे।
माया गमावे मान माया प्रतित उठावे॥
माया लावे मिथ्यात पशुकी योनि पावे।
माया नरक निगोद चौरासी वाट नतावे॥
कपट कुटीलता दभ तज भज श्रीजिनके पाय।
ज्ञान सुधारस पान कर हृदय साफ हो जाय॥

(१८)

तृष्णा आग अपार तृष्णा जग भिख मगावे।
तृष्णा अत्याचार तृष्णा सन ज्ञान भुलावे॥
तृष्णा करे फजीत तृष्णा लै केद करावे।
तृष्णा कटावे शिप तृष्णा नर नरक दीखावे॥
मानपिता अरु सज्जनों तृष्णा गीने न एक।
ज्ञान सदा समता धरो प्रगटे गुन अनेक॥

(१९)

पैसा जगमें पाप पैसा नर मृत्य करावे।

पैसा जगमें पाप शुद्ध आचार हूवावे ।।
पैसा जगमें पाप अत्याचार करावे ।
पैसा जगमें पाप प्रेम प्रतीत उडावे ।।
पैसा जगमें पाप पापकों घरपर लावे ।
पैसा जगमें पाप ज्ञानको उलट बनावे ।।
त्याग करी पैसा तणो जगको दीनी पुठ ।
ज्ञान दीपक से देखीये अक्षय खजानो अखुट ।।

(२०)

पैसा जगमें पुन्य पुन्यको निजघर लावे ।
पैसा जगमें पुन्य दुःखीको सुखी बनावे ।।
पैसा जगमें पुन्य तीर्थ अरू यात्रा करावे ।
पैसा जगमें पुन्य शासनकी सेवा बजावे ।।
पैसा जगमें पुन्य ज्ञान पढे अरु पढावे ।
पैसा जगमें पुन्य धर्म अरु कर्म कमावे ।।
त्याग कीयो जग योगीयों गृहस्थीको शृंगार ।
ज्ञान सुधारस पान कर स्याद्वादको सार ।।

(२१)

निंदा नरक ले जाय निंदा जग वैर वढावे ।
निंदा गुणोंका नास निंदा पर दव लगावे ।।
निंदा करे फजीत निंदा दुर्गुण सब लावे ।
निंदा मानका भंग निंदा ले केद करावे ।।

बिन पैसा धोरी मील्यो निंदक धोवे मेल ।
ज्ञानी आश्चर्य न करे सब कर्मोंका खेल ॥

(२२)

गुनग्राही बनीये सदा लागत नही कछु मोल ।
अवगुन जोये आपका पामे गुन अनतोल ॥
पामे गुन अनतोल जगतमें लोक सराने ।
परभव सुर अवतार आखर वह शिवपद पावे ॥
कहत कनी करजोड ज्ञानकी वातो सुनीये ।
लागत नहीं कच्छु मोल गुनके ग्राहक बनीये ॥

(२३-२४)

विदेशको हुवे तैयार, हाथ जोडी बोले नार ।
आपमे अधिक प्यार, पाछा जल्दी आवजो ॥
सठाकी कमाइ सार, लावजो मोत्याको हार ।
कदोरो ने टोटी कडा, सोनाना घडावजो ॥
बिच्छीया बाजुबन्ध भेला, बगडी घडाजो पहेला ।
नाकवाली दान्त चुक, रतन जडावजो ॥
चन्द्र सूरज निंदा घोर, पुणच्छी पति ठुमी ओर ।
पनडीयो चाला तीमणीयाको, हीरामे मढावजो ॥
काच टीकी सूरमो सार, आडको ले आजो लार ।
हींगुलकी पुडी च्यार, लाल लेता आवजो ॥
फूल ने किनार कोर, जरी तुटा तारा ओर ।
ओढनेके काज चीर, रेसमी ये लावजो ॥

घाघराकी चोखी छींट, सोना केरी लाजो ईंट ।
और कोइ नवी चीज, भुली मत आवजो ॥
ज्ञानसेति जान सही, धूर्त नारी बोली नहीं ।
देहली केरो पेचो एक आपके भी लावजो ॥

(२५)

ज्ञान घटे नर मूढकी संगत, ध्यान घटे चित्तको भरमाये ।
सोच घटे ज्यूं साधुकी संगत, रोग घटे कछु औषध खाये ॥
रूप घटे पर नारिकी संगत, बुद्धी घटे बहु भोजन खाये ।
वैताल कहै विक्रम सुनो, कर्म कटे ज्यूं प्रभु गुण गाये ॥

(२६)

ज्ञान वढे गुणवानकी संगत, ध्यान बढे तपसी संग कीनो ।
मोह बढे परिवारकी संगत, लोभ बढे धनमें चित दीनो ॥
क्रोध बढे नर मूढकी संगत, काम बढे त्रिया संग कीनो ।
बुद्धि विवेक विचार बढे, कवि दीन कहे सुसज्जन संग कीनो ॥

(२७)

तारोंकी ज्योतिमें चन्द्र छिपे नहीं, सूर्य छिपे नहीं बद्दल छायो ।
रण चढे राजपूत छिपे नहीं, दातार छिपे नही घर मंगण आयो ॥
चंचल नारिके नयन छिपे नहीं, प्रीत छिपे नहीं पूंठ दिखायो ।
योगीका भेख अनेक करो पण, कर्म छिपे नहीं भमूत लगायो ॥

(२८)

सूर्य छिपे अदरि बदरि, अरु चन्द्र छिपे अमावस आयो ।
पानिकी बूंदसे पतंग छिपे, अरु मीन छीपे इछत जल पायो ॥

भोर होनेपर चोर छिपे, अरु मयूर छिपे ऋतु ग्रीष्म आयो ।
ओट करो शत घूघटकी, पण चचल नयन छिपे न छिपाये ॥

(२६)

मान घटे मुखसे कछु मांगत, प्रीत घटे नितके घर जायो ।
बुद्धि घटे ज्यू नीचकी सगत, क्रोध घटे मनको समझायो ॥
नेह घटे चुकतेपर चूके, नीर घटे ऋतु ग्रीष्म आयो ।
वैरी घटे भुज जोर किये, ज्यु कर्म कटे प्रभुके गुण गायो ॥

(३०)

बालसे आल बूढेसे विरोध, अरु चचल नारीसे ना हँसीये ।
आँछेकी प्रीत गुलामकी सगत, अजानत नीरमें ना धसिये ॥
बैलको नाथ अश्वको लगाम, मतगको अँकुशसे कसिये ।
कवि गग कहे सुन शाहा अकबर, क्रूरसे दूर सदा बसिये ॥

(३१)

काज बिना न करे कोइ उद्यम, रीस बिना रण माहि न जूझे ।
शरीर बिना न सधे परमारथ, शील बिना नर देहि न शोभे ॥
नियम बिना न लहे निश्चयपद, प्रेम बिना रस रीत न बूझे ।
ध्यान बिना न स्थभे मनकी गति, ज्ञान बिना शिवपन्थ न सुझे ॥

(३२)

कबहुँ मन रग तरग चढे, कबहुँ मन सोचत है धनकू ।
कबहु मन कामनी सग चले, कबहुँ मन मृग होय फिरे बनकू ॥

कबहुँ मन रंगमें भंग करे, कबहुँ मन साधत है रणकुं ।
कवि गंग कहै सुनो शाहा अकबर, वश करो सदा कपटी मनकुं ॥

(३३)

बचने होय मिलाप, वचन सब वैर मिटावे ।
बचने दौलत होय, वचन अमृतरस पावे ॥
बचने पावे राज, वचन विद्याबल आवे ।
बचने शील संतोष, वचन वैराग्य उपजावे ।
रोग शोक सबी जाय, वचन सुर लच्छी लावे ।
धनराज कहे सुन चतुर नर, वचनसे कवि आदर पावे ॥

(३४)

चिन्तामणि पायकर, मूढताको परिहर ।
काच गेह रंग भर, अक्कल ताहारी काहारे ॥
गजवर वेच कर, सो तो मूंढ लेत खर ।
पावे नहिं वेर वेर, मनुष्य अवतारेरे ॥
कल्पवृक्ष काट कर, बोवत बंबूल शठ ।
सोना केरे थाल मांहे, रज काहे भररे ॥
रसकूम्प पाय कर, पाँव धोवे मूंढ नर ।
भावसे आदर कर, तिर संसाररे ।

(३५)

बातनसे बैर कटे, बातनसे पन्थ हटे ।
बातनसे वहे जात दिनरात है

वातनसे रोजगार, वातनसे स्नेहाचार।
वातनसे चोर घर, आये फिर जात है॥
वातनसे भूत प्रेत, वातनसे डाकन श्वेत।
वातनसे सर्प विच्छू विष उतर जात है॥
और तो अनेक वात, धरमकी लिजे साथ।
वात कर जाने सो तो वात करामात है॥

(३६)

काल वैतालकी धाक तिऊँ लोकमें, देव दानव घर रोग लगावे।
इन्द्र नरेन्द्र फणेन्द्र चकेनर, कालकी फौजको कौन हटावे॥
शील सतोष अवेद लिये मुनि, सो कालकी फौजको सकडे लावे।
मुक्ति महलमें जाय विराजे, वहा कालका जोर कछु नहिं पावे॥

(३७)

अल्प सी उमर तामे जीव सोच बहूत करे।
करणेके अनेक काम कहा कहा कीजीये॥
आगमका अन्त नहीं प्रकरणका पार नहीं।
वाणी तो बहूत चित्त कहा कहा दीजीये॥
कविकी कला अनेक छदका प्रकाश बहूत।
अलकार अनेक रस कहा कहा पीजीये॥
सौ वाताकी एक वात निकटही बताइ जात।
जो जनम सुधारा चाहे तो एक आतमवश कीजीये॥

(३८)

लगे सिंहको बोल लगे हरिनको अङ्कुश ।
लगे पुरुषको नार लगे तुरँगको चाबक ॥
लगे सुर्यको ग्रहण लगे चन्द्रको राहू ।
लगत लगत मत्रको लगे अरू ऋतु आप फल लगे ॥
बेताल कहे विक्रम सुनो गो मूर्खको क्या लगे ? ।

(३९)

पानी के काज धान पान सुखजात ।
पानीके काज मयूर बोले असमानि है ॥
पानीके काज रामचन्द्र रणको चढे ।
पानीके काज रावण खोई जिन्दगानी है ॥
पानीके काज घोडेको रातब मीले ।
पानीके काज मीनहारी जिन्दगानी है ॥
पानीके काज हीरा पुखराजमणी ।
पानी बिन मोतीयनकी कीमत हलकानी है ॥
पानीके काज रणमें झुंझत शूरवीर ।
पानीने काज सती आगमें जलानी है ।
कहत गुरु ज्ञानी जाके नही पानी ।
तांका जन्म धूलधानी है ॥

(४०)

रती बिन राज रती बिन पाट, रती बिन छत्र नहीं एक नीको ।
रती बिन साधु रती बिन संत, रती बिन योग न होय यतिको ॥

रती बिन मान रती बिन तान, रती बिन मानस लागत फीको।
कवि गग कहे सुन शाह अकबर, एक रती बिन पाव रतीको॥

(४१)

वह बिरला ससार, नेह निर्धनसे जोडे।
वह बिरला ससार, ज्ञानसे मोहको छोडे॥
वह बिरला ससार, आमद और खर्च समारे।
वह बिरला ससार, हाथ निर्बल पर न डारे॥
वह बिरला ससार, देखकर कर अदिट्ठा।
वह बिरला ससार, वचनमे बोले मीट्ठा॥
आपो मारे प्रभु भजे, तन मन तजे विकार।
अवगुण उपर गुण करे, वह बिरला ससार॥

(४२)

जट कहा जाने भट्टकी बातकु, कुम्हार कहा जाने भेद जगाको।
मूढ कहा जाने गूढकी बातको, भील कहा जाने पाप लगाको॥
प्रीतकी रीत अतीत कहा जाने, भैंस कहा जाने खेव सगाको।
कवि गग कहे सुन शाह अकबर, गद्धा कहा जाने नीर गगाको॥

(४३)

रसना योग अरू भोग, रसना सब रोग बढावे।
रसना करे उद्योग, रसना ले कैद करावे॥
रसना स्वर्ग ले जाय, रसना नर्क दिखावे।
रसना मिलावे यश, रसना जग फजीत करावे॥

रसना वश एकांत कर, पहला मनमें तोल ।
वैताल कहे विक्रम सुनो, रसना संभारके बोल ॥

(४४)

धर्मके प्रभाव कोटि धार नर भयो ।
अब धर्मकी बात नहीं सुहावत है ॥
रात दिवस करत विचार धन जोडवेको ।
आयुष्य घट्यो जात ताकि चितमें न बात है ॥
हीरनके हेत कांचनके नग लेत ।
आपही के हाथ देखो आप गोता खात है ॥
कविराज कहे औरनकी हूंडी सिकारी ।
आपकी हूंडीका दाम रीता खोया जात है ॥

(४५)

घरमें के बारमें के कोटडी किंवाडमें के ।
पोढणेकी सहेज मेंहे सुतो ही संभारेगो ॥
जंगमें के झाडीमें के बागमें के वाडीमें के ।
तावकी तेजरेमें के भरवारमे डारेगो ॥
सुदमें के वदमें के वातके विरुद्धमें के ।
लोककी लडाइमें के छार कर डारेगो ॥
कहत है इश्वरदास जीवनेकी कैसी आस ।
कहा जानुं कर्मगति कैसी मात मारेगो ॥

(४६)

बार बार कह्यो तोय सावधान क्यों न होय ।
ममताकी पोट सिर कायको धरत है ॥
मेरा धन मेरा धाम मेरा सुत मेरा ग्राम ।
मेरी वाडी मेरा बाग भूल्यो ही फीरत है ॥
तु तो भयो बावरो बिकाय गइ तेरी बुद्ध ।
ऐसे अंधकूपमाहि काहेको पडत है ॥
सुन्दर कहत काज आवत नाहिं तोकू लाज ।
काजको बिगाड पर काजको करत है ॥

(४७)

कारमो कुटुम्ब यह काहेको धरत नेह ।
हारत मानव देह फेर कहा पाईये ॥
मात तात घरनार बेटा बहू परिवार ।
आवे नहीं तेरी लार कैसे मन लाईये ॥
तु तो भयो बावरो बिकाय गइ तेरी बुद्ध ।
कौन तेरा जग बीच मुझे ही बताईये ॥
मन बच थिर कर ज्ञानमेती प्रेम धर ।
मनुष्य रत्न भव काहेको गमाईये ॥

(४८)

मरलको शठ कहे वक्ताको धृष्ट कहे ।
विनयकर तामे कहे धनके आधीन है ॥

क्षमावन्तको निर्बल कहे दानीको अदत्त कहैं ।
मधुर वचन बोले तांसे कहे आ तों दीन है ॥
धर्म्मीको दम्भी कहे निस्पृहीको गुमानी कहैं ।
तृष्णा घटावे तांको कहै भाग्यहीन है ॥
जहां साधु गुन देखि तिन्हिको लगावे दोष ।
ऐसा कछु दूर्जनोंका हृदय मलीन है ॥

(४९)

चार जणोंको हं सखी सोहे जरा शृंगार ।
राजा म्हेता वैद्य ऋषी गरडपणे गुनसार ॥
गरडपणे गुनसार उपजे बुद्धि रसायन ।
विणसे वैश्या मल्ल चाकरने गायक ॥
करे बहूतसी कला एक हुं मन नहीं माने ।
धर्मसिंह कहे जरा क्षीण करे चार जणांने ॥

(५०)

हस्ति दान्तके खिलौने सोतो आवे बालकोंके काम ।
बाघकी बाघाम्बर शिवशंकर मन भावे है ॥
मृगकेरी छाल सो तो बिछावत योगीराज ।
बकराकी खाल सोतो पाणीभर पावे है ॥
साम्बरके कमर पट्टे बांधत है सिपाहिलोग ।
गेंडेकी ढाल सोतो राजा राणा मन चावे है ॥

करलोकी खालमें होग है सुगध गध ।
वृषभकी खाल सब जगको सुहावे है ॥
नेकी अरू नदी देखो दोनु सग आवे ।
मयाराम कहे मनुष्यकी खाल कच्छु काम नहीं आवे है ॥

(५१)

हस्ति चचल होय झपट मैदान दिखावे ।
राजा चचल होय मुल्कको सरकर आवे ॥
पण्डित चचल होय सभाका मन रीझावे ।
घोडा चचल होय मनारको युद्ध जीतावे ॥
यह चारो चचल भला राजा पडित गज तुरी ।
वैताल कहे विक्रम सुनो एक चचल नार बुरी ॥

(५२)

पग विन कटे न पन्थ, बाहु विन हटे न दुर्जन ।
तप विन मिले न राज, भाग्य विन मिले न सज्जन ॥
गुरु विन मिले न ज्ञान, द्रव्य विन मिले न आदर ।
पुरुष विन शृगार, मेघ विन जैसे दादुर ॥
वैताल कहे विक्रम सुनो, बोल बोल बोली फीरे ।
धिग् धिग् मनुष्य अवतार, सो मन मेन्यां अतकरे ॥

(५३)

नमे तुरी बहु तेज, नमे दाता धन देतो ।
नमे आम बहु फल्यो, नमे बद्दल वर्षतो ॥

नमे सिंह गुणवान, नमे गज वहत असवारी ।
नमैसु भारी होय, नमे कुलवंती नारी ॥
प्रेम सहित सज्जन नमे, मोक्ष साधत मुनि नमे ।
सुखो काष्ट अरू मूढ नर, तुट पडे पण नहीं नमे ॥

(५४)

दीनको दीजीये आन दया मन, मित्रको दीजीये प्रीत वधारे ।
शत्रुको दीजीये वैर वधे नहीं, राजाको दीजीये आदर पावे ॥
सेवकको दीजीये सेव करे नित, भाटको दीजीये कीर्ति गावे ।
साधुको दीजीये मोक्षके कारण, हातको दीनो कहां नहीं जावे ॥

(५५)

चोसठ हजार नार नवनिधि भरीये भंडार ।
चक्रादिक चवदे रत्न जाके आठ सिद्धि है ॥
हस्ति अरू रथ घोडा चौरासी है लक्ष जोडा ।
छीनव क्रोड जाके पैदल प्रसिद्ध है ॥
बत्तीस हजार देश पाटणपुर नगर शेष ।
गाम है छीनव क्रोड ऐसी जांके ऋद्धि है ॥
ऐसी ज्हाँनें ऋद्धि त्यागी भये है अजब वैरागी ।
तुं तो सुणरे अभागी नर कहो तेरे केति ऋद्धि है ॥

(५६)

तूटो सो छप्पर घर तामें बिल है अनेक दर ।
सर्प कोल मूषा बिछू और क्षूद्र जीव है ॥

गाडी हाँडी तूटो चाइ फाटीमी गुन्डी जाके।
चौपाई चकचुर है ॥
कालीमी कुम्पानार-बोलत हजार गार।
पूत है कपूत जांके नियरा पर धाई है ॥
लेणायत लारे लागे रातको टाडी ने भागे।
ऑर हू अनेक दुख ताहि पर माने मूंट।
मोह निद्रा छाई है ॥

(५७)

यह मेरे देश विलायत हय गज, यह मेरे मन्दिर यह मेरे ग्यारी
यह मेरे मातापिता पुन. बान्धव, यह मेरे पुत्र यह मेरे नाती ॥
यह मेरी कामिनी केल करे नित, यह मेरे सेवक है दिन रवी ॥
सुन्दर छोड चले गये सबही, तेल जलनेपर बुझ गई बाती ॥

(५८)

कोउ घर पुत्र जायो कोउके वियोग आयो।
कोउ घर रंग राग रोउ रोवा पीट मारी है ॥
जहाँ भानु उगत उत्साह गीत गान देख्यो।
साँझ समय ताहि घर हाय हाय पारी है ॥
अगाधी रीत जाग मुखिमे विचार भान।
एक घर होरी और एक घर दीवाली दीवारी है ।
मनुष्य जन्म पाय सो तो छिनमें बिताय जाय।
दुहांदा धर्म उदय साँर बाँध चले नारी है ॥

(५९)

बङ्का पांव डारे सो तो पाधरा पसार दीना ।
आंख न उघाड तो गो तीरडीतीरात है ॥
अपनेही बोल आगे बोलवा न दे तो ।
बोलवो थाक्यों अब बोलायो न बोलात है ॥
छायरी निरख छबी छकीयो छकीयो चाल तो सो ।
छबी छुटी छांत भई कोई न छीबात है ॥
आवताको न कहतो आव—आयोको अभिमान करे ।
सो तो अब आप देखो, परखंदे चढीयो जात है ॥

(६०)

न्याय विना रंचक कच्छु जानत नाहिं, झगडो सुन कच्छु और बढावे ।
चौरकी गौर करे शठ विर्था शाहके हातमें गोला दिरावे ॥
साचही बातको मात करे और न्यायसे दूर होय फिर पलटावे ।
नरक लहे दुख मार पडे तब आपही आप मूढ पछतावे ॥

(६१)

गोरो गोरो गात देखी काहेको गुमान करे ।
रंग तो पतंग सम काल उड जायगो ॥
धूवा केरी दीवार सो तो ढोवतां न लागे वार ।
नदीके किनारे रूख कल उठ जायगो ॥
बोलता सो बोले नहीं बोले सो गुमान करे ।
जोबन गमायो पीछे कोडी हू न पायगो ॥

मानूषकी गर्दी देह जीवतही आवे काम ।
मुवा पीछे कहा जानू काग कूत्ता खायगो ॥

(६२)

कचनके आसन कचनके वासन ।
कचनके पलंग सब यहा ही रहेंगे ॥
हाथी हूलशाननमें घोडे घुडशालनमें ।
कपडे जामदानमें धरीबध धरे रही रहेंगे ॥
बेटा और बेटी धन दोलतका पार नहीं ।
जवाहरातके डब्बोंपर ताले जडेही रहेंगे ॥
देह छोड दिगम्बर होय देखे सब खडे लोग ।
न्यायके करइये नृप उठही चलेंगे ॥

(६३)

शीशकी शोभाको केश दीये, युगनयन दीया जिन जोवनको।
पँथ चलनेको दोय पाव दीये, दो हाथ दीये दान देननको ॥
कथा सुननेको दोय कान दीये, एक नाक दीयो मुख शोभनको।
कर्मराय सब ठीक दीये, पिण पेट दीयो पत खोननको ॥

(६४)

भक्तिवन्त, मीठाबोले, कपटरहित, एक मने सुने चित्त धर सीखको।
प्रश्नकर्ता प्रगट कहे घणासूत्र रहस्य जाने, धर्म आलस्य त्यागको ॥
निद्रारहित, बुद्धिवान, दयाके परिणाम जान, करेपर उपकारको।
गुणग्राही निंद्रा नहीं ऐसे श्रोता आग बरे मुनी धर्म वेपारको॥

(६५)

एक समय भेला मिलि चाल्या है मित्र पट ।
पाको आम्र देखी कहे किस विध कीजीये ॥
एक कहे मूल काटो दूजो कहे उपरसे तो ।
तीजो कहे लघु शाखा काट लीजीये ॥
चोथो कहे काची पाकी पांचमाने पाकी पाकी ।
छठो कहे फल हेठेसेही लीजीये ॥
छउ जणा सम छउ लेश्याका परिणाम जाण ।
तीन है अशुभ तीन लेश्या रस सुधा पीजीये ॥

(६६)

काजलकी कोटडीमें सेणा पुरूष पेठ देखो ।
काजलकी एक रेख लागे है पीण लागे है ॥
कोई जावे बागनमें वास आवे फुलनकी ।
कामनीके संग काम जागे है पीण जागे है ॥
बैठीये न एक ठोर भटकाये न ठोर ठोर ।
कायरके सग शूरो भागे है पीण भागे हे ॥
कहत हे विहारीलाल सुनोहो सयानालाल ।
संगतकी एक रेख लागे है पीण लागे है ॥

(६७)

श्वास एक खाली मत खोयरे खलक बीच ।
कनक कीचड अंग धोयले तो धोयले ॥

अज्ञानको अधकार कहत गुरु वारवार ।
ज्ञानकी चीराक चित जोयले तो जोयले ॥
चिंतामणि मनुष्यभव मिले नहीं मूढ तोको ।
प्रभूजीसे प्रेम पियारो होयले सो होय ले ॥
क्षणभगुर देह जामे जन्म सुधारो चाहे तो ।
बिजली चमकारे मोती पोयले तो पोयले ॥

(६८)

माडलगढ आय कर माल पूरे बेठ रह्यो ।
दिल्लिहूको याद कर आगरे को जाना है ॥
काबुल तो पीछे रही घोरागढ आय लागो ।
चदनोरको याद कर नागोरका थाना है ॥
लखनउके द्वार आय सायपुरको भूलमत ।
चितोडकी चिन्ताकर इग्लेन्डको जाना है ॥
सुरतको मोधनकर सयतीमे वासकर ।
लोहारगढ लिया सेति शिवपुरको जाना है ॥

(६६)

क्षमा जगमें सार क्षमासे आदर पावे ।
करी प्रदेशीराय सुख सुरीयामे पावे ॥
करी हरीकेशी अणगार मोक्षमें आप सिधावे ।
मेतारज मुनीराय अटल सुख आगम गावे ॥
खदक मुनीके शिष्य पाचसो पदको पावे ।

उतारी मुनी चर्म कर्म कलंक मिटावे ॥
मुनिवर गज सुखमाल छिनमें शिवपद पावे ।
ज्ञान अध्यात्मसार मुझे भी आनन्द आवे ॥

(७०)

एकके पाय अनेक परे, पुनि एक अनेकके पाय परे है ।
एक अनेककी चिन्ता हरे पुनि एक न अपनो पेट भरे है ॥
एक सोवे सुख सेज पलंगपर एकको भूमि पथारी करे है ।
प्रत्यक्ष देखो पुन्य पापका फल जैसा कीया वैसाही भरे है ॥

७१

रोजगार विना यार—यारसो न करे प्यार ।
रोजगार विनो नार न्हार ज्युं घूरे है ॥
रोजगार विनो सब गुण सो विलाप जात ।
एक रौजगारसे अवगुन सब दूर है ॥
रोजगार बिन बात कच्छू बन आवत नाहीं ।
विना दाम बने नही कच्छू काम बैठो धाम भूरे है ॥
रोजगार बने नाहिं रोज रोज गारी खाय ।
धर्म रोजगार कर तांके दोनों भव सुखपुरे है ॥

(७२)

दगा किसिका सगा नहीं है कीया नही तो करिया देखो ।
उनका दगा उनके पुगे डूबा उन्हीका घर देखो ॥
तु औरांकी करेगा परवस्ती तो तेराभी बसेगा पुरा ।
तुं किसिके लगावेगा छुरी तो तेरेभी लगेगा धुरा ॥

तू करेगा औरका बुरा तो तेरा भी होजायगा नूरा ।
कलयुग नहीं करयुग हे इस हाथ दे और उस हाथ ले ॥

(७३)

दूति कहे सुनो मनमोहन पंख बिना पखेरु ऊडाऊ ।
कागका हस कसूरेकी केसर रेतीपे नाव चला के दिखाऊ ॥
पहाडपे मेंडक समुद्रमें दीपक उटका भार पपई पे लदाऊ ।
और ही मोहन वाद वदो तो घासके ढेरेमें आग लगाके–
सोर के गजमें जाय छिपाऊ ॥

(७४)

उचा मकान फीका पकवान, मोटासा पेट लम्बासा कान ।
जाडी गादी दीपकका उजाला, केसरका तिलक और कपूरकी माला । छोटासा कपाट बडासा ताला, पाचसोकी पूजी और साठसोका दीवाला ॥

(७५)

भलो जहा भरतार तहा घर नारी नखरी ।
पति नहीं परविण जहा घर नारी सखरी ॥
जहा घर नहुलो नित्त दत्त देखी नहीं आवे ।
जहा घर नहीं है नित्त दत्त देणो चित चावे ॥
श्रोता तो सुखी नहीं पडित नहीं परवीणता ।
कवि कलयुग देखके राख सत्यसे लीनता ॥

(७६)

गिरी और छूहारा खाय किसमिस बिदामसेति चित चाह ।
सेव और सिंघाडा खाय मक्खन मिश्रीसुं खुब मन लादी है ॥
मुट्ठा और मतीरा खाय काकडी खरबुजा लाय,
मूला वोर मोगरीसुं खुब प्रीत साधी है ॥
बरफी अकबरी मन जाय खांड रस पेंडा खाय,
मक्खन अरू दुध पी के लोंटे बडी गादी है ।
आम्र जाम्बू केला आदि अनेक पदार्थ खाय अेदी ।
कंठ तक आरोगके शाली भूखको भगादि है ॥
नाम धर्यो अल्पाहार पेट भरपूर खाय ।
कहने की एकादशी पण द्वादशीकी दादी है ॥

(७७)

कठासुं पधारिया स्वामीनाथजी बतावो मांने ।
कीसो नाम ठाम कीसो बात करो निर्धारजी ॥
किणरा टोलारा साधु गुरुजीको कांइ नाम ।
कितरा सूत्र भणिया तत्व कहोनी विचारजी ॥
और कछू पूछे नाहीं औषध आरोग तन ।
सुखशाता विहार अरु थोडी बहूत आहारकी ॥
कहे मुनी विज्जुलाल सुनो हो सयाना बाल ।
ऐसी हमने चाल देखी देश मारवाडकी ॥

(७८)

कोडे चाल्यो आवे तू तो मूडे पाटी बाध आडी।
निकल अठासु आगो नहीं तो पीटसु अनार रे।
घाली झोली लीना पातर आय उभो जम जैसो॥
मूडकों मूडाई शाला क्यों छोडया घरबार रे।
कपडा मलीन दिसे छोकरा डरावे डाकी॥
अरे मूढ शुचि को न लेम थारे, जानों मागो ओसवालके।
लालचद कहे हाथ धोया विना रोटी थने देवो नहीं॥
चीकणी सोपारी जैसा लोक है दुढाडको।

(७९)

मेवाड मालवे देश माकड घणा है भाई।
चेठका भरे छे पूरी निद्रा नहीं आवे रे॥
माकड मकोडा राते पाडे घणा फोडा।
डस मस घणा सो तो चटकीने खावे रे॥
उत्तराध्ययन दूसरे अध्ययनमांहि।
पाचमो परिसहो जिन दोहलो बतायो रे॥
खूबचद बोले इम सुनहो श्रावक जन।
मालवे मेवाड देश किणविध आवे रे॥

(८१)

गुर्जर मजेको देश तहा मोटा है तीर्थ विशेष।
सुखी लोक वसे जाके अन्न धन पूर है॥

आचार विचार कम एंठतणी नाहीं गम ।
साधू संत देखी करे भक्ति भरपूर है ॥
साफसुफ साधु रेहवे कपडाको साबू देवे ।
बोझके उठावण काज नोकर रहे साथमें ॥
कहे कविराज थें तो सुनो हो महाराज राज ।
दूध चाय पीणी हो तो जावो गुजरातमें ॥

(८१)

नाम दयाराम सो तो दया हू न राखे मन ।
नाम हे शितलदास वो तो क्रोधाग्नी जान रे ॥
नाम हे शयानालाल सो तो मैं लडाक देख्यो ।
नाम जोधराज सो तो मूल ही अपान रे ॥
नाम हे नैणसुख आंखनकी खोज नहीं ।
नाम मीठालाल सो तो विष केरी वेल रे ॥
नाम दानमल सो तो दान ही जाचत फिरे ।
गुण विना नाम सो तो दीवानो सो खेल रे ॥

(८२)

नाम दीयो मायाराम माया हू न राखे पास ।
नाम हीरालाल सो तो पर्वतफल तैसो है ॥
नाम गोरीलाल सो तो श्याम ही वर्ण पेख्यो ।
नाम कस्तुरचंद वो तो हींग गंध जैसो है ॥
नाम हे गणेश तामें बुद्धिको न दीखे लेश ।

नाम विद्याराम सो तो मूर्ख ही कहाना है ॥
नाम अमरचद सो तो मैं मरत देख्यो ।
गुन विना नाम सो तो प्रभुता न पाना है ॥

(८३)

योग लेइ योगी भयो जगमुख देखी भूरे जैसे कागो हाटको ।
योग लइ भटकत गटकत सब रस झूठो मोती साच नहीं
पायो कूदो पाठको ।
औरोंको उपदेश देवे आप पोते रीतो रहवे हास नहीं पूरे
जैसे दोडायो घोटो काठको ।
ऋषी लालचद कहे शुद्धमति न्याय लहे धोवी केरो कूत्तो
सो तो घरको न घाटको ।

(८४)

योग लीयो जग देखनकूँ कछु योगकी रीत सक्या नहीं पाली ।
केईक रमावत बाल छोकरा केईक चरावत गाय अरू छाली ॥
जान घरातमें मग चले जन भातमें खात सचनकी गाली ।
कहत कवि सुनो रे सज्जन, नागोंको वानो औंर हालीको हाली ॥

(८५)

भेप लेई गयो भूल शक नही माने मूढ ।
झगडेम रह्यो भूल हाथ लेई लाकडी ॥
मन नहीं स्थिर स्थोभ लगोहे इन्द्रियोंको लोभ ।
शरीरकी वधाई शोभ उची मेली आखडी ॥

मोक्ष मार्ग दीयो मूंद जगतको खायो खूंद ।
मोटी तो वधाई धूंध बन रह्यो वोकडो ॥
भयो मुनि वालचन्द्र सुनोहो विवेकवृन्द ।
ऐसे अज्ञानी साधू दुःख सहे आकरो ॥

(८६)

बने हैं बडे ब्रह्मचारी कुलकाण तज डारी ।
शुद्ध आतमा विसारी नहीं आचार विचारी है ॥
झूठा झूठा नियम धारे मिथ्या सब वचन उच्चारे ।
जुदे जूदे पंथ चाले शुद्धमार्गको विसारी है ॥
दम्भी अभिमानी निंद्या करत विरानि ।
ऐसे अमर विमानी करी आत्माको कारी है ॥
खाली ठकूराई ज्यांमें वैरागकी वडाई करे ।
माई माई करके लूगाइकर डारी है ॥

(८७)

जाति तणो अहंकार गर्व्व कूल बलको तौले ।
देखि रूडो रूप पंडित हो टेडो वोले ॥
तप कर गमावे तेज लाभ हो तृष्णा खोले ।
ठकूराईमें ठाकूर भयो मद छकीयो मगरूर ।
ज्ञान कहे मद आठसुं शिवसुख रहशे दूर ॥

(८८)

प्रथम चमा सार दूसरो लोभ निवारे ।
होवे सरल स्वभाव मान मद दूरो नाखे ॥
हलका द्रव्ये भाव झूठ मुखसे नहीं भाखे ।
तप सयम शुद्ध ज्ञान शीयल अमृतरस चाखे ॥
ए दशविध धर्म आराधता सो गुरू लीजो धार ।
ज्ञान कहे समझायने तिरे सो तारणहार ॥

(८९)

नारीतणा दश बाण कटाक्षका नयण जाण ।
भ्रकुटी चढावे ताण उचो नीचो जोवे है ॥
अगको मरोडे तोडे दातसेति हास्य छोडे ।
मुहको मरोडे और झीणी राग गावे है ॥
उची करे काख पाख बातको बनावे लाख ।
स्तनतणी देइ साख घात करे शीलकी ॥
नरककी दीवार नार पुरूषको लेजावे लार ।
ज्ञान कहे ऐसी नार सो तो धार तरवारकी ॥

(९०)

त्रिया चरित्र दश लाख लच यातों मुख जोडे ।
दिनमें कागथी डरे रातको अहिफण मोडे ॥
उदरसेती दूर हृदे पकड शेर वश थावे ।
पलगसेती गीरपडे चड पर्वत मध जावे ॥

रीतोसर देखी डरे भरीयो समुद्र राते तिरे ।
कवि गंग कहे सुनो हो ठाकुरो या स्त्रिया चरित्र एता करे।

(६१)

निपट घुलावे नेण अंगत्रासंग ज्युं मोडे ।
कडवा बोले बोल प्रीत प्रीतमसे तोडे ॥
धोवे सरवर पाय नीर बहूतेरो लावे ।
चाले भीणी चाल राग रीभालू गावे ॥
नर देखी नखरो करे घर घर फिरे तरूणी ।
कवि गंग कहे सुनो हो ठाकूरो ।
यह लच्चण नारी कूलच्चणी ॥

(६२)

माय लजावत बाप लजावत और लजावत लारली खट्टी ।
खबर पडे दरबारके माणस कूटत माथो ने ताणत लट्ठी ॥
सिरे बजारमें जूते लगावत गहना गांठा लेत भपटी ।
तोहि न छांडतपरनारीको पापी कामके वश भये काछ लपट्टी ॥

(६३)

गढके पासे डूंगरी कबही गढको भंग ।
साधूके पास त्रीया जो बैठे तबही बढे कुसंग ॥
तबही बढे कूसंग भंगजो शीलमें होवे ।
नारीके पास बैठके मुर्ख मूलकी जो पूंजी खोवे ॥

शीलादिक आचारको पालणसे मन भागो।
नाथ कहे रे बालका यो योगको रोग लागो ॥

(६४)

महिला परिचय अति बूरो माडे बहूली बात।
चित चचल जाणो सही करे शीलकी घात ॥
करे शीलकी घात शका इसमें मत आणो।
धर्मकर्म से भ्रष्ट रोग बहु काल का जाणो।
उत्तराध्ययन सोलमें भाख गया जिनराज।
लज्या पामें लोकमें निटलजाय मुनीराज ॥

(६५)

द्रव्यको पायके मूर्ख धर्म कथा न रूची
तीनको तीनको।
जिन एकेक राड बुलाय नचावत नहीं आवत
लाज जरा जिनको जिनको।
मृदग कहे धिक है धिक है सुरताल
पुछे किनको किनको—
तब उत्तर राड बतावत है धिक है सब
इनको इनको ॥

(६६)

फासी जब लग मजहबकी, तब लग होत न ज्ञान।
टुटे फासी मजहबकी, तब पावत निर्वाण ॥

तब पावत निर्वाण, निरंजनमांहि समावे ।
जन्म मरण मिट जाय, फिर योनी नहीं आवे ॥
कहे गिरधर कविराय, बोध बिन फिरे चौराशी ।
तब लग हूवे न ज्ञान, मजहबकी जब लग फांसी ॥

(९७)

लकडीमें गुण बहूत है सदा राखीये संग ।
नदी नाला विषमस्थान जहां तहां बचावत अंग ॥
जहां तहां बचावत अंग झपट कूत्तेको मारे ।
दुश्मन दावागीर होय तिनकुं पण टारे ॥
कहे गिरधर कविराय सुनो हो धुरके भाटी ।
जो चाहो दिल चैन तो हाथमें राखो लाठी ॥

(९८)

बंदा बहूत न फुलीये मालक क्षमेगा नाहिं।
जोर जुल्म न कीजीये मृत्युलोकके मांहि ॥
मृत्युलोकके मांहि तजरबा तुरत दिखावे ।
जेता करे गुमान तेता नर गोता खावे ॥
कहे दीन दरवेश भूल मत गाफल अन्धा ।
खुदा क्षमेगा नाहिं बहूत मत फुले बंदा ॥

(९९)

गुनके ग्राही बहूत है बिन गुन लेत न कोय ।
जैसे काग कोकिला शब्द सुने सब कोय ॥

शब्द सुने सब कोय कोकिला सबे सुहावे ।
दोनोंका रग एक काग मनमें नहीं भावे ॥
कहे गिरधर कविराय सुनो हो मनके ठाकूर ।
बिन गुन लहे न कोय सहस्र नर गुनके ग्राहक ॥

(१००)

फूट बूरी है जगतमें जाने सकल जहान ।
मन्दोदरी लज्या गई गया रावणका प्राण ॥
गया रावणका प्राण भेद निभिक्षण दिन्हो ।
कुटुम्ब सहित परिवार नाश अपनोही कीन्हो ॥
कहे गिरधर कविराय लकगढ कैसे तुटे ।
पडे दुश्मनका दाव भेद जब घरका फूटे ॥

(१०१)

सम्पत सबसे सचिये सरे सम्पमे काज ।
जैसे रस्सीकी सुतळी स्थमत है गजराज ॥
स्थभत है गजराज सपका कारण यही ।
कहा तृणीका ताग कहा मत्तगकी देही ॥
कहे गिरधर कविराय सम्पसे वैरी कम्पत ।
जो होवे पुण्यवान ताँ घर पावे सम्पत—

(१०२)

धनिक अपने बापको ठगत न लगावे वार ।
काम पडे जननी ठगे जहा लियो अवतार ॥

जहां लीयो अवतार मास नव उदरे राख्यो ।
गुरुसे करे विवाद आप पंडित मद दाखे ॥
कहे गिरधर कवि राय वेचे हल्दी अरु धनिया ।
गुरु मित्र ठग लेत वस जहां पहूंचे वनिया ॥

(१०३)

मिश्री घोले झूठकी ऐसे सन्त हजार ।
जहर पिलावे सत्यका वह विरला संसार ॥
वह विरला संसार पठंतर उनका ऐसा ।
मिश्री जहर समान जहर है मिसरी जैसा ॥
कह गिरधर कविराय सुनोरे सज्जन भोले ।
जिसके सिर पैजार झूठकी मीसरी घोले ॥

(१०४)

मित्र विछोवो अति बूरो मत दीजे करतार ।
उनका गुन जब चित चढे वर्षत नयन अपार ॥
वर्षत नयन अपार मेघ श्रावण झरलाई ।
अबके विछडे कब मिलोगे कहो कैसी बन आई ॥
कहे गिरधर कविराय विनति सुनीये एहा ।
कृपानिधि कृपाल मत दे मित्र विछोहा ॥

(१०५)

विन विचारे जो करे सो पीछे पस्ताय ।
काम विगारे आपनो जगमें होत हंसाय ॥

जगमें होत हमाय चितमें चेन न पावे ।
खान पान सनमान राग रंग मनहू न भावे ॥
कहे गिरधर कविराय दु'ख कछु टरत न टारे ।
खटकत है दीलमाहि कीये जो विन विचारे ॥

(१०६)

भाई वेर न कीजीये गुरू पंडित कविराय ।
बेटा वनिता पोरिया यज्ञ करावनहार ॥
यज्ञ करावनहार राजमंत्री जो होइ ।
विप्र जुवारी वैद्य आपके तपे रसोई ॥
कहे गिरधर कविराय जुगनमे यह चल आई ।
इन तरहमे वेर भूल मत करीये भाई ॥

(१०७)

बेगम गावे गालीया कर कर मनमें कोड ।
बूढी हूई है वेगर भी अब तो ममता छोड ॥
अब तो ममता छोड घणी गाई अरू नाची ।
कहे दास सागर अब क्यु न ले पाछी ॥
कर्मराय देंगे धका यम कुटमी रोड ।
बेगम गावे गालीया कर कर मनमें कोड ॥

(१०८)

ढुढीये इन्ही ससारमें पेट भरनके काज ।
ग'धा जीम ममता फीरे, जीम तीतर पर बाज ॥

जीम तीतरपर बाज, लाज इन्हींको नही आवे ।
मेले कपडे पहेर, ज्ञान उलटाही सुनावे ॥
कहे गीरधर कविराय, कहो ये किसके मुंडीया ।
आदि धर्म उठावे पापी नरकमें जावे ढुंढीया ॥

(१०९)

तेरापन्थी धर्ममें, नही दया नहीं दान ।
चुका कहे महावीरने, धरे उन्होंका ध्यान ॥
धरे उन्होका ध्यान, ज्ञान भली वह ही सुनावे ।
आप नरकमें जाय, और कों साथ ले जावे ॥
कहे गीरधर कविराय, सुनोरे उंधापन्थी ।
नहीं दया नहीं दान, धर्म है तेरापन्थी ॥

(११०)

विवहा मत्त कर भावरा, खोडे पडसी पाव ।
खीली देशी खाचके, पीच्छे निकला न जाय ॥
पीच्छे निकला न जाय, आयके दोला फीरसी ।
लेसी लाटो लूंट पछे जा किणने केसी ॥
पहेला कहो न मानीयों, अब वैठो पछताय ।
कवि कहे परणो मति, खोड पडसी पाव ॥

(१११)

चिन्ता ज्वाला शरीर वन दव अगि लगि जाय ।
प्रगट धूँआ नहीं देखीये उर अंतर धूंधवाय ॥

उर अतर धूधराय जले ज्यों काचकी भट्ठी ।
जरेगो लोही माम रह गइ हाडकी तट्ठी ॥
कहे गिरधर कविराय सुनो हो मेरे मिन्ता ।
वह नर कैसे जिवन्त जाहि तन व्यापे चिन्ता ॥

(११२)

धोखे दाडिमके सुवा गयो नारियल खान ।
फल खायो पाई सजा फिर लाग्यो पछतान ॥
फिर लाग्यो पछतान बुद्धि अपनीको रोयो ।
निर्गुनियोंके सग बैठ गुन अपनो ही खोयो ॥
कहे गिरधर कविराय कहुँ जइये नहीं ओखे ।
चोंच खटकके टुटी सुवा दाडिमके धोखे ॥

(११३)

पूर्वदिशा पलटी अर्क उगे पश्चिमदिशी ।
सदा काल कलपुगे ज्वाला वर्षे शशि ॥
सायर तजे मर्याद अचल गिरि होय चलाचल ।
पावक शीतलता भजे पृथ्वी जो जाय रसतल ॥
शिर सहस्र नाग धुणे कदा, धरा उपर निचे गगन ।
जिनहर्ष ताइ न पलटे उत्तम पुरुष बोल्या वचन ॥

(११४)

मज्जनं मज्जनं चन्दनं चीरं, दोउ कर कंकणं राजुं धीर ।
बिंदली निलाड जयकनी माल, शोभित हार फुलनकी मालं ॥

धमके घुंघरी चमके झूंझारी, नाके नकबेसर कंचुक सारी ।
काजल टीकी तंबोल जोबन शोभे, गज मोती श्रृंगार बनावत गोरी।

(११५–११६)

यति नाम भरायके इन्द्रियाँ जीते नाम ।
परनारीके लंपटी रखे भेंसने गाय ॥
रखे भेंसने गाय करे बाग वाडी खेती ।
फेरे व्याजीणा दाम तृष्णा चामर जेती ॥
शतरंज चोपट रमे आठ पहोर करे गहमस्ती ।
अणगलीया नीरसे करे स्नान ॥
कहो कौन विध कहिये यति ॥ १ ॥
यति वह ही जानिये इन्द्रिय जीते पांच ।
परनारी माता गीने मुखसे बोले साच ॥
मुखसे बोले साच करे छे कायाकी जयणा ।
आरंभ परिग्रह छोड पाले श्री जिनवर वयणा ॥
भ्रमरपणे करे गोचरी दोष न लागे रति ।
इणपरे करे विहार जिन्होंको कहिये यति ॥ २ ॥

(११७)

एक करे अणखोड, दुसरी लाड लडावे ।
तीजी लेवे निद्रा, चोथी कथाका मंडप मडावे ॥
अदविच उठे एक, एक पुठ फेरीने बेसे ।
सुनेतो समझे नाय, गुरू सम जावे केसे ॥

घरको धधो छोडके, भेली मीली बहु नार ।
कवि कहे ममभ्मायने, बाइयों कहीं निकाल्यो सार ॥

(११८)

व्याख्यानकी तैयारी हुइ, बहेना मीली हजार ।
श्रावक शाखी भेलसी, अपों बातोंने होशीयार ॥
बातोंने होशीयार, करे कोड छाने छाने ।
केई होय निःशक, बरज तांही नही माने ॥
सद्गुरु वाणी वागरे, गोले कठको तान ।
कवि कहे समभ्मायके, बाइयों सुनो व्याख्यान ॥

(११६)

वेश्याको ज्ञान काहा, गधाहुको पान काहा ।
नाजरको नार काहा, अन्धेको आरसी ॥
मूर्खका मान काहा दुष्टका दान कांहा ।
कपटिकी प्रीत काहा, खोटी उर धारसी ॥
कायरका युद्ध काहा, कृपणका धन कांहा ।
शत्रुका सग काहा, दगोकर मारसी ॥
कहे कवि रग, दुष्टहु का छोड सग ।
भावे कहो सिधी, भावे कहो पारसी ॥

(१२०)

ज्ञानसे ज्ञान आदरसत्कार पावे ।
ज्ञानसे ज्ञान भाव लक्ष्मी घर आवे ॥

ज्ञानसे ज्ञान आत्म परात्म तारे ।
ज्ञानसे ज्ञान लोकपरलोक सुधारे ॥
ज्ञानसुन्दर गुण ज्ञानबिन सब गुण होत निकाम ।
सम्यक् ज्ञान गुरुमुख लहे सो पांमे शिव धाम ॥

(१२१)

लच्छी तोरे काज ठग्या बहु सज्जन प्यारे ।
लच्छी तोरे काज धरतीपे कीये बहुत पसारे ॥
लच्छी तोरे काज हिताहित नही वीचारे ।
लच्छी तोरे काज धर्म कर्म सब दुरे डारे ॥
भुख तीरसा मेने सही, ले नाखी धरती धमन ।
मुंजी कहे लच्छी सुनों, उठ चलो मेरी गमन ॥

(१२२)

प्रथम चरण मेरा यह हरष सन्तन मुखडारे ।
द्वितिय चरण मेरा यह जीवोंका प्रान उभारे ॥
त्रितिय चरण मेरा यह शासनके काज सुधारे ।
चतुर्थ चरण मेरा यह खावे खीलावे अरू लेवे लारे ॥
यह चारों चरण काटके, ले नाखी धरती धमन ।
शिर पीट मर जाय मुंढ, नही चालुं तोरी गमन ॥

(१२३)

के गांठसे गीरपरा के काउ को दीन ।
जोरु पुच्छे तूमसे केसे वदन मलीन ॥

नही गाटस गीरपटा, नही काउको दीन ।
द्वेखों ढेखे ऑरको जिन्हमें नदन मलीन ॥

(१७४)

सज्जन एसा किजिये, जेसे तनकी छाय ।
भेद भाव नहीं चित्तमें, एकरूप हो जाय ॥
मित्र एसा किजिये, जेसें शिरका बाल ।
काटे कटाने फीर कटे, कहुह न छोडे ख्याल ॥



प्रास्ताविक दोहा



सबमे अधिका प्रेम ह, प्रेमसे अधिका नियम ।
जहा घर नियम न प्रेम हे, तहा घर कुशल न क्षेम ॥१॥
मगत शोभा पाईये, सुनो अकबर नेन ।
नहीज काजल ठीकरी, नहीज काजल नयन ॥ २ ॥
मन मोति गीरने रखा, प्रभु तुमारे पास ।
भक्ति व्याज नित्यका दंडे, नहीं छुटणकी आश ॥ ३ ॥
काच कटोरो नयन धन, मोती ओर मन ।
इतना तुटा नहीं मीले, पहेला करो जतन ॥ ४ ॥
पापी रे तु पापकर, पापकरीयो गति होय ।
जो तु पापकरे नहीं तो, नरकमे रावे न कोय ॥ ५ ॥

पाठ कियोसे एक गुन, अनुभव होत हजार ।
तां ते मनको रोकीये, आत्मज्ञान विचार ॥ ६ ॥
ठगी ढुंगी आळसु, चौर निद्रा जुगार (जुवा) ।
एता सत्य बोले नहीं, कीजे क्रोड प्रचार ॥ ७ ॥
साधु स्वामी सन्यासीया, भक्त वैरागी मौन ।
जब लग समता संग नहीं, तब लग सबही सुन ॥ ८ ॥
होकामें हिंस्या घणी, पापतणो है पुर ।
जो सुख चाहो जीवका, तो होका करदो दूर ॥ ९ ॥
ओडीया पीवे मोडीया पीवे, पीवे पुत्त कालालीका ।
ब्राह्मण वनीया होका पीवे, फुटा कर्म लीलाडीका ॥ १० ॥
माया सुखी हाड जीम, श्वान जीम संसार ।
चाट चाटके मर गया, तांही न छोडे लार ॥ ११ ॥
कहना था सो कह दीया, क्या बजाउं ढोल ।
समय एकमें जात है, तीन लोकका मोल ॥ १२ ॥
जस जीवन अपजस मरण, सुनो सयाना लोय ।
कहा लंकपत ले गयो, कहा करण गयो खोय ॥ १३ ॥
हिंमत किंमत होय, विन हिंमत किंमत नहीं ।
ज्यांने आदर करन कोय, रदी कागद जिम राजिया ॥१४॥
नारी निरखे पुरुषको, पुरुष पराइ नार ।
दोनो ही लंपट मीले, वह नकटा वह छीनार ॥ १५ ॥
पाणीमें पाषाण, भींजे पण भेद नहीं ।
मूर्खको उपदेश, देवे पण लागे नहीं ॥ १६ ॥

शत मजन और लच मित्र, मजलस मित्र अनेक ।
सकट म साथे रहे, सौ लाखनम एक ॥ १७ ॥
चरण धरे चिंता करे, नयन निद्रा नही और ।
दुढत फीरे सुवरणको, जाहार कनी अरु चौर ॥ १८ ॥
ग्रथ पढियो अरु तप तप्यों, सहे न परिग्रह धर्म ।
केवल तत्त्व पेच्छान विन, मिट्यो न मनको भर्म ॥ १९ ॥
वध्यासे वध्यो मीले, छुटे कोन उपाय ।
सगत किजे निग्रंथकी, सो छीनमें देत छोडाय ॥ २० ॥
विद्या गुरुभक्तिसे लहै, फीर करिये अभ्यास ।
भील द्रोणकी भक्तिसे, सीख्यो बाण विलास ॥ २१ ॥
पंडितकी लातों भली, नही मूर्खकी वात ।
इन्ह लातों सुख उपजे, उन्ह वातों दु'ख थात ॥ २२ ॥
जल न डुवावे काष्टकों, कहो कहाकी प्रित ।
अपना सिचा जानके, यह वडोंकी रीत ॥ २३ ॥
सिच्याथा गुण जानके, कपटी निकला काट ।
गुन अवगुन जाना नहीं उलटी पाडी वाट ॥ २४ ॥
वडा कवी डवावे नहीं, जो पकडे तस वाह ।
नावा सग लोहा रहे, तीरत फीरत जल माह ॥ २५ ॥
जो जा के सरणे वसे, तांको उन्हीकी लाज ।
उलटे जल मच्छली तीरे, वहे जात गजराज ॥ २६ ॥
यौवन था तव रूप था, पुछते थे सव मोय ।

यौवन रूप गयो पछी, बात न पुछे कोय ॥ २७ ॥
चन्द्र विनो क्या चान्दनी, मोती विना क्या हार ।
धर्म विना क्या मानवी, पिउ विना क्या श्रृंगार ॥ २८ ॥
धन संग्रह और पन्थचलन, गिरिपर चढन सुजान ।
धीरे धीरे होत सबी, ज्ञान ध्यान बहुमान ॥ २९ ॥
तीन स्थान संतोष धर, धन भोजन स्वनार ।
तीन संतोष न किजिये, दान पठन तपचार ॥ ३० ॥
अन्न पान मकान दे, भय रक्षक ज्ञानी ।
दीक्षा जनक ससुरा भणी, यह सात पिता सम जाणी ॥ ३१ ॥
शील दान सत्य मधुरता, सुस्वर शब्द विनयवान ।
क्षमा स्थिरता चातुर्यता, नव सिधा निधान ॥ ३२ ॥
जब लग अंकुश शिरपे रहे, तब लग नर गुणगेह ।
हस्ती अंकुश बाहीरो, शिरपर डालत खेह ॥ ३३ ॥
बिन अंकुश बीगड्या घणा, कुशिष्य कुपुत्र कुनार ।
अंकुश शिरपें नित्य वहे, वह विरला संसार ॥ ३४ ॥
अरे ! बिनोला (कपास) बापडा, तुं छे बडोज धीर ।
आप उघाडो हो रह्यो, परको ढांक शरीर ॥ ३५ ॥
गन्ध विनो जिम फुल, जीव विनो जिम देहडी ।
पुत्र विनो गृहकुल, सुनो लागे साहिबा ॥ ३६ ॥
ज्ञान प्रणाति संगमें, जो उपयोग रमन्त ।
रस अनगम आतम लहै, अनुभव केल करन्त ॥ ३७ ॥
सज्जन बिछेवो कठिन है, सुकत सर्व शरीर ।

धींग पापी मुकत नहीं, सो भर भर आनत नीर ॥ ३८ ॥
काजल तजे न श्यामता, मोती तजे न श्वेत ।
दुर्जन तजे न कुटिलता, सज्जन तजे न हेत ॥ ३६ ॥
च्यार मील्या चौसठ हस्या, बीस रहा कर जोर ।
सो बासठ तृप्त हुवे, पडित करो निछोर ॥ ४० ॥
जो देने तो वेश्याने दीजे, ब्राह्मणने दीयो नरक पडिजे ।
वेश्याने दीयो वढेगा वश, ब्राह्मणने दीया जाय निर्वंश ।४१।
मूर्ख मुख कमान है, वचन कठोरके तीर ।
एमा मारे खेंचके, सो साले सर्व शरीर ॥ ४२ ॥
एक उदरके उपने, जामण जाया वीर ।
महिलाओंके वश हुवे, नहीं गाकमें सीर ॥ ४३ ॥
प्रितम की प्यारी प्रितमसे कवहु न रहत न्यारी ।
प्रितम सुतो प्यारी जागे, प्यारी सुतो पीयु कवहु न जागे ॥४४॥
कोन चाहे वरसना, कोन चाहे धुप ।
कोन चाहे बोलना, कोन चाहे चुप ॥ ४५ ॥
माली चाहे वरसना, धोबी चाहे धुप ।
शाहा चाहे बोलना, चोर चाहे चुप ॥ ४६ ॥
विद्या वनिता नृप लता, यह नहीं जाय गिनीत ।
जाहाके सग निशदिन रहे ताहासे ही लपटत ॥ ४७ ॥
पातर प्रित पतग रग, ताते मदकी तार ।
पाछल दिन अरु अउत धन, जाता न लागे वार ॥४८॥

कर कम्पे शिर कम्पे, कम्पे सर्व शरीर ।
मन नही कम्पे कुकर्मसे, निष्फल गये सबतीर ॥ ४९ ॥
मन लोभी मन लालची, चित्त चंचल चित्त चोर ।
मनका मत अनेक है, मन पलक पलकमें और ॥ ५० ॥
डाकण मंत्र अफीम रस, तस्कर अरु जुआ ।
पर घर विना मानवी, यह विसरसी मुवा ॥ ५१ ॥
बनी बनाइ बनगइ, अब बननेकी नांहि ।
एसा ज्ञान विचारके, मग्न रहो मन मांहि ॥ ५२ ॥
सुख दुःख इण संसारमे, हरकोइको होय ।
ज्ञानी विसारे ज्ञानसे, मूर्ख काहाडे रोय ॥ ५३ ॥
सर हंसा वन कुंजरों, आव रस सुवा ।
सज्जन कटुक वचन जन्मभूमि, यह विसरसी मुवा ॥५४॥
रण जीतण कंकण बंधन, पुत्र बधावोत्साव ।
तीनो अवसर दानका, कोन रंक कोन राव ॥ ५५ ॥
धन जातो धरा जावतों, तीर्या पडंतो ताव ।
तीनों अवसर मरणका, कोन रंक कोन राव ॥ ५६ ॥
गर्भ धीणो व्पाजधन, लीला पानो थान ।
वहु वच्छेरा दीकरा, निवडीयों निधान ॥ ५७ ॥
सिंह भोग साहा पुरुष वचन, केल फले एकवार ।
त्रीर्य तैल हमीर हठ, छडे न दुजी वार ॥ ५८ ॥
नारी केरी मित्र रस, ज्ञान विद्या करसान ।

इतना वेग मभारीये, धान पान यजमान ॥ ५६ ॥
इसा सर नहीं छोडीये, जो जल खारो होय ।
तलाव तलाई डोलतां, भला न केहसे कोय ॥ ६० ॥
अवल अमूल्य गुण रत्न, अकले पुच्छे राज ।
एक अकलकी नकलमें, सबही सुधरे काज ॥ ६१ ॥
और वस्तु कि पारीखा, माप गणित अरु तोल ।
नर नारीकी पारीखा, होत बोल से मोल ॥ ६२ ॥
जाणतो अजाण नजे, तत्त्व लीजे ताणी ।
आगलो अग्नि सम होय, तो आप नन जावे पाणी ॥६३॥
सरवर सलीला मूर्ख धन, हरकोइ हर लेत ।
वलीहारी नर कुपकी, सो गुण निनो तुद न देत ॥ ६४ ॥
काच कटारो नयन धन, मोती अरू मन ।
इतना तुटा न जुडे, पहेला करो जतन ॥ ६५ ॥
सलीला सोनो सुघड नर, तुट जुडे सो वार ।
मूर्ख घडो कुमारको, सो जुडे न दुजी वार ॥ ६६ ॥
चलना है पण रहना नहीं, चलना विसवावीस ।
दोय घडीके कारणे, कोन गुथावे शिस ॥ ६७ ॥
आयुष्य घटे तृष्णा बढे, मन घट नढ रहत हमेश ।
प्रालब्ध न घटे पुरुषकी, सुन राजा सुरतेश ॥ ६८ ॥
शीतल पातल मन्दगति, अल्प आहार नहीं रोम ।
यह त्रियामें पाच गुण, यह ही तुरगमें दोष ॥ ६९ ॥

जो कुच्छ लिखा लिलाटमें, विच्छरन मीलन संजोग ।
दोष किसीको न दिजिये, सुनो सयाना लोग ॥ ७० ॥
दालिद्र घर डेरा हुवे, तो परणी न आवे पास ।
रूपइया हुवे रोकडा, तो सोरो आवे श्वास ॥ ७१ ॥
प्रभु नाम खारो लगे, मीठा लागे दाम ।
दुविधामें दोनो गई, माया मीले न राम ॥ ७२ ॥
लघुतासे प्रभुता मीले, प्रभुते प्रभुता दुर ।
जो लघुता धारण करे, तो प्रभुता हाथ हजुर ॥ ७३ ॥
सोच करे सो शूर है, कर सोचे सो क्रूर ।
सोच कर्यो मुख नूर है, कर सोच्यो मुख धूर ॥ ७४ ॥
समय सज्जन मत चुकीये, कहत कविजन कुक ।
चतुरनके खटके हृदय, समय चुककी हुक ॥ ७५ ॥
चन्दनकी चुगटी भली, गाडी भली न काठ ।
चतुरा तो एकही भली, मूर्ख भली न साठ ॥ ७६ ॥
हुं थाने पुछुं हे लच्छी (लक्ष्मी), तुं सुम घरे क्यों जाय ।
दाता पंडित शूरता, ये तुझ क्यों न सुहाय ॥ ७७ ॥
शूरा घर विधवापणो, दाता दे परहाथ ।
पंडित घरमें शोक है, जिन्हसे करूं न साथ ॥ ७८ ॥
मन मर्यो तन मर्यो, मर मर गया शरीर ।
आशा तृष्णा न मरी, कह गया दास कबीर ॥ ७९ ॥
जहांके घर समता नहीं, ममता मग्न सदैव ।
रमता राम न जाणीये, अपराधी नित्यमेव ॥ ८० ॥

पल पलम करे प्यार, पल पलमें पलटे परा ।
नोलतीयोंकी लार, रज्ज उडवो राजीया ॥ ८१ ॥
ह्रदय होवे हाथ, तो कुसगीके ता मीलो ।
चन्दन भुजगो साथ कालो न लागे कीसनिया ॥ ८२ ॥
नज्जन एसा नही किजिये, जेसा चीरमी घोर ।
मुख मीलीयों मीठा रहे, भीतर बडा कठोर ॥ ८३ ॥
सज्जन एसा किजिये, जिसमें लचख बत्तीस ।
भीड पड्यो भागे नही, देवे अपना शिष ॥ ८४ ॥

(चाकडा)

सोनो कहे सुनो सोनार, उत्तम मेरी जात ।
काल मुखकी कुकमी (चीरमि), तुली हमारी साथ ॥ १ ॥
मैं हू वनकी लाडकि, लाल हमारो रग ।
काला मुह जिनसे हुवा, तूली नीचकी सग ॥ २ ॥
भोली चीरमी भावली, भोली कर रही वात ।
जो तेरेमें गुण हुवे तो, जल हमारी साथ ॥ ३ ॥
वन जाइ वन उपनि, वनमे किया वनाय ।
तुतो जले कलकके कारण, मेरी जले बलाय ॥ ४ ॥ ॥८५॥

(चोकडा)

नही वाडी नही केतकी, नही फूलनका ढग ।
हु थाने पुछु हे सखी, भ्रमर भस्म लगावत अग ॥ १ ॥

पेहला थी यहां केतकि, बलगइ दवके संग ।
प्रित निभावण कारणे, भ्रमर भस्म लगावत अंग ॥ २ ॥
एसा था तब क्यों रहा, बलतों इन्हीके संग ।
प्रित लज्जावन हे सखी, भ्रमर भस्मी लगावत अंग ॥ ३ ॥
दव लागीथी केतकि, भ्रमर नहीथा संग ।
प्रित पालनके कारणे, भ्रमर भस्म वहावत गङ्ग ॥४॥ ॥८६॥

(चोकडा)

आइ लच्छमाणी नही, लाखो कहे सुण भट्ट ।
निश्चय परभव जावणो, के सातों के अट्ट ॥ १ ॥
लाखो भुलो लख गुणो, भोली कर रह्यो बात ।
कोन जाणे क्या होयगा, उगन्तडे प्रभात ॥ २ ॥
फुलाणी भुले मति, हृदय विमासी जोय ।
आँख तणे फरूकडे, कोन जांने क्या होय ॥ ३ ॥
लाखो अन्धो थी अन्धी, फुलाणी अन्धी सही ।
श्वास वटाउ पावणो, आवे के आवे नही ॥ ४ ॥ ॥ ८७ ॥
शोर अग्र गज केसरी, पय पद्म शिर मोड ।
उद्यराज केस बने, प्रीत कपट एक ठोर ॥ ८८ ॥
खोटी करणी आचरे, खोटा सुखकी आश ।
खोटी भक्ति हृदय धरे, खोटा प्रभुका दास ॥ ८८ ॥
खातों पीतां प्रभु मीले, तो मुझको भी कहेना ।

कष्ट क्रियामे प्रभु मीले, तो चुपचाप ही रहेना ॥ ८६ ॥
ज्ञान गुजारम किनिये, अपनि अपनी देख।
दुःखी दुनिया भारली, इसमें मीन न मेख ॥ ९० ॥
अध्यातम लखियो नहीं, न पीना समता नीर।
पडित भयो तो कहा भयो प्यारे, निष्फल गमायो तीर ॥ ९१ ॥
जगत जिन्होंका दास है, सो है जगके दास।
पडित भयो तो कहा भयो प्यारे, मीटी न जगकी आस ॥९२॥
रुप अध्यातम कन्तसे, कछु हि न मीडी बाथ।
पडित भयो तो कहा भयो प्यारे, धूले धोया हाथ ॥ ९३ ॥
आत्म अनुभव रस नही पाम्यो, नव नव चाल्यो चाल।
पडित भयो तो कहा भयो प्यारे, बन्धी न सरवर पाल ॥९४॥
पाच कामिनी मीलके तोंको, निलमावे दीन रात।
पडित भयो तो कहा भयो प्यारे, जाणी नही निज जात ॥९५॥
आत्म स्वरूप नहीं ओलख्यो, नही ओलख्यो वपु रूप।
पाडित भयो तो कहा भयो प्यारे, नहीं छुटो भव कृप ॥ ९६ ॥
जे जे कारण मोक्षना, कारज मान्या तास।
पडित भयो तो कहा भयो प्यारे, मीटी न तृष्णा प्यास ॥९७॥
हठयोग सा या बहुत, आसन समाधि ध्यान।
पाडित्त भयो तो कहा भयो प्यारे, पाम्यो नहीं सद्ज्ञान ॥९८॥
तपकर तन शोषण कर्यो, क्रिया कालो काल।

पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, दम्यो न मन विकराल ॥ ९९ ॥
स्व स्वभाव भुल्यो फीरे, पर पुद्‌गलकी लार ।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, मीली न सुमतिनार ॥१००॥
स्व स्वभावमें रमणता, पर पुद्‌गलसे रहे दूर ।
सो पंडित जगमें सही, ज्ञानसुन्दर रसपुर ॥ १०१ ॥



अथश्री दानछत्तिसी

दोहा

आदिनाथ प्रणमु सदा । जिण दिनो वर्षी दान ॥ प्रथम मयम आदर्यो । उपनो केवलज्ञान ॥ १ ॥ ऋपभ श्रेण गण-धर नमु । द्वादशागी ज्ञान ॥ च्यार प्रकारे धर्ममें । प्रथम प्ररूप्यो दान ॥ २ ॥ दुष्कर देशो दानको । भगवतीको ज्ञान ॥ सावधान थइ साभळो । आगे करु व्याख्यान ॥ ३ ॥ नयो मत प्रगट भयो । नाने तेरापन्थ ॥ दान उत्थापे वापडा । यह कुमतिका कन्थ ॥ ४ ॥

दाल—दशी गापीचन्द ख्यालकी

मुडोमति देखो । पाप कहेवे पन्थीदानमें ॥ मु० ॥टेर॥ नाम लेइ भगवती केरो । वोघोने नेकाने ॥ शतक आठ उदेशो पाचमो । असती पाठ वतावेरे ॥ मु० १ ॥ चहातो कर्मादान वतायो । श्रावक निणजकी वात ॥ अनाथ दुर्वल पन्थी कहे । उदय हुवो मिथ्यात रे ॥ मु २ ॥ भूखों मरता रक भिखारी । कोइ चिणा भूगडा देवे ॥ कहो पाप लागो किण विधमे । नव्व विचारी लेवे रे ॥ मु० ३ ॥ शतक आठ उदेशो छठो ।

भगवतीका नाम ॥ जिणसु पाप कहे अज्ञानी । यह कुमत्यांरा कामरे ॥ मुं० ४ ॥ तथा रूपको पाठ देखलो । मत पाखंडि होवे ॥ गुरू जाण पडिलाभे तीणने । एकांत पाप अढारमो जोवेरे ॥ मुं० ५ ॥ आनन्द श्रावक अंग सातमें । नहीं देउ नहीं दीराउ ॥ एसी थाप करे अज्ञानी । जीणरो भेद वताउंरे ॥ मुं० ६ ॥ आनन्द पेहला थो अन्यमति । गुरू जाणने देतो ॥ आज पछी देउं नहीं एसे । हुवो हाथ जोडके केहतोरे ॥ मुं० ७ ॥ भगु पुरोहितका दोनों बेठा । वली आर्द्र नामकुमार ॥ उलटा अर्थ बतावे मूर्ख । समजे नहीं गिवाररे ॥ मुं० ८ ॥ दुजे दशमें अंग वतायां । नरक तणो अधिकार ॥ दांन नाम सुर नहीं लीयो सरे । हृदय करो विचाररे ॥ मुं० ९ ॥ परदेशी राजा हुवे सरे । श्रावक व्रतको धार ॥ चोथा भागकी दांन शालाको । खोली चित्त उद्धाररे ॥ मु० १० ॥ श्रावक बहु तुंगीया तणासरे । भगवती अधिकार ॥ भात पाणी बहु निपजे सरे । खुल रह्या अभंगद्वाररे ॥ मुं० ११ ॥ चिज चावे नहीं मीलीयां सेति । क्रिया भारी दाखी ॥ मिलीयांसे पतली हो जावे । भगवती छे साखीरे ॥ मुं० १२ ॥ देनेवालाकी ममता उतरी । दोनों घर वधाइ ॥ मुंजी सूमके मन नहीं भावे । निन्हव वडे कसाईरे ॥ मुं० १३ ॥ दुजे अंग अध्ययन इग्यारे । सावद्य दान निषेधे ॥ आज्ञा चोरी वीतरागकी । वह व्रतीको छेदेरे ॥ मुं १४ ॥ दशमा अंगमें दान निषेधे । वह प्रभुको चोर ॥ निर्लजियोंको लाज न आवे । जुठ मचावे शौररे ॥

॥मु० १५॥ कहे वर्षीदान दियो वीरजी। जिणसु कर्म मताया ॥ एसी वात कहेतों अज्ञानी। जरा नहीं शरमायारे ॥ मु० १६ ॥ मल्लिजिनवर दान देइन। लीनो संयमभार॥ एक प्रहर छद्मस्थ रह्या सेरे। हुवा केवलके धार रे ॥ मु० १७ ॥ त्रिविधे २ पापज त्यागी। फासु भोजन लावे ॥ पडिमा धारी छेदसूत्रम। श्री जिन इम फरमावे ॥ मु० १८ ॥ तीणने दीयासु पाप न लावे। अव्रत रहे गई बाकी ॥ जोवो हृदय फुटा कुमत्याका। चडि मोहकी छाकी रे ॥मु०१९॥ आज्ञा दी प्रतिमाकी जिनवर। जिणमें मागने खावे। आप वीरे दातार जो ट्वे। तो चौरंसे अधिको थावे रे ॥मु० २०॥ द्रव्य धन तो चौर लेजावे। लारे पापनही आवे ॥ यो माल ले जावे पाप दे जावे। तो विश्वास घाती कहेवावे रे ॥मु० २१॥ जो पाप हुवे पडिमामें। जिनवर किंयु वतावे। अव्रतकी क्रिया नहीं लागे। भगवती आप बतावे रे ॥मु० २२ ॥ पाखंड कपट चलावे एमो। अधिकरण श्रावक काया। पाप कहे इण न्यायमें सरे। भगवतीकी वाया रे ॥मु० २३॥ अधिकरण नाम हे क्रोधको सरे दुग्कल्प को पाठ। वलि व्यवहार सूत्रमें देखो। मत करो मनका थाठरे ॥मु० २४॥ शतक सोले उदेशो दुजो। आहारक शरीर अधिकार। अधिकरण कहि साधुकी काया। हृदय करो विचार रे ॥मु० २५॥ अवड श्रावक करे पारणा। सो सो घर मझार। श्रावक दान देने हरखे। लाभ तणो नहीं पार रे ॥ मु० २६ ॥ शतक वारा उदेशो पहेलो। सखपोखलि मार।

स्वामिवत्सल कियो भावसे। भव जल तारण हार रे ॥ मुं० २७ ॥ पाछों जवाब न देवे मूर्ख। कुडाकुं हेत लगावे। अव्रतीने दान दीयों पछी। वह आरंभ करे करावे रे ॥मुं० २८॥ वह आरंभ दातारने लागे। जिणसे पाप ठेरावों। मन मानि गप्पों क्युं ठोकों। सूत्र पाठ बतावो रे ॥मुं० २९॥ पन्थी साधुने घृत दान दो। जिणसे इन्द्रिय जागी। अथवा कीडा पडे पेटमें। पाप तणो कुण भागी रे ॥ मुं० ३० ॥ श्रावकने थे धर्म सिखावो। थोरी श्रद्धा देवता थावे। भोग भोगवे देवी संघाते। वह पाप सब थोरे आवेरे ॥मुं० ३१॥ जब कहे मैं गुणजाणि। साधुने आहारज देवों। पच्छे पाप करे जो कोइ। मन करने नहीं लेवोंरे ॥मुं० ३२॥ इम अनुकंपा लावी देवे। दुर्बलने कोइ दान। भलो न जाणे पाप कर्मने। ते श्रावक गुणवान् रे ॥मुं० ३३ ॥ श्रावक व्रती तेहीज जाणो। राखे चित्त उदार। पूर्व भवमें साता उपजाइ। जोवो सनत कुमार रे ॥ मुं० ३४ ॥ राखो उज्वल भावना सरे। नित्यका चढता भाव। पूजो अरिहंत देवने सरे। यहीज मोच उपाय रे ॥मुं० ३५॥ सद्गुरू सिख हृदय में धारों। पन्थी दुर निवारों। कुलिंग परिचय त्यागो प्राणी। जो चाहो भवपारो रे ॥मुं० ३६॥

कलश.

नृपसिद्धार्थनन्द कहिये, त्रिशला देवी मायजी। त्रिकाल पूजा करो प्राणि, प्रणमो नित्य नित्य पायजी ॥ देश मरूधर ग्राम तीवरी, बहुत्तर कार्त्तिक मासजी। कृष्ण अष्टमि गयवर जोडि, ढाल दानकी खासजी ॥ इति ॥

॥ अथ श्री अनुकपा छत्तीसी ॥



दोहा

समकित रत्न शिरोमणि, जिणके लक्षण पाच । मूढ भेद समजे नहीं, खाली कर रह्या खाच ॥ १ ॥ शम सवेग जाणीये, निर्वेग तीजो होय । अनुकपाने आसता, नयन खोल कर जोय ॥ २ ॥ जीव अनता शिर धरी, शिवपुर गया और जाय । मानव थापे नापडा, चउगति गोता खाय ॥ ३ ॥ चडो उठ आगे भयो, पाछल भई कतार । सबही ड्बा बापडा, नडा उठकी लार ॥ ४ ॥

॥ ढाल-देशी भ्रमरकी ॥

सावद्य अनुकपा पन्थीडा थापे । श्री वीरजी वचन उत्थापे हो लाल ॥ सा० टेर ॥ आगे तो एक प्रतिमा उत्थापी, ये प्रगट नाजे टोला हो लाल । दया-दान भिखम उत्थापी, त्यारा भर्ममें पडिया केइ हो लाल ॥ मा० ॥१॥ अनुकपाने सावद्य बतावे, जिणसु दया उठावे हो० । काकरा मेली योगा नकावे, त्याने जरा शरम नहीं आवे हो० ॥ मा० ॥ २ ॥ किसा सूत्रको पाठ बतावो, के मनका कुहेतु लगावो हो० ।

रेणादेवीको नाम लइने, क्युं फोगट जाल फेलावो हो० ॥ सा० ॥ ३ ॥ अनुकंपाको नाम न चाल्यो, थें ज्ञाता नवमें देखो हो० । ' कालुण ' पाठ दीनपणाको, जरा टेक छोडीने झांखो हो० ॥ सा० ॥ ४ ॥ कृष्ण अभय सुलसा ये तीनों, सावद्य अनुकंपा केवे हो० । कारण कार्य न समजे अज्ञानी, ये बीज दुर्गतिको बोवे हो० ॥ सा० ॥ ५ ॥ सुबुद्धि मंत्रिने चित्त सारथी, कर्तव्य सावद्य किधो हो० । जयशत्रु प्रदेशी बुज्यो, ये तो लाभ घणेरो लिधो हो० ॥ सा० ॥ ६ ॥ चोथा लक्षण समकित केरो, निर्वद्य अनुकंपा जाणो हो० । क्षयोपशम भावे कही जिनवरजी, ये तो मृंडन न्याय पीछाणो हो० ॥ सा० ॥ ७ ॥ पाणी मांहे डूबे साधवी, मुनि अनुकंपा लावे हो० । चलता पाणीसे काढे साधवी, श्री वीरजीको हुकम उठावे हो० ॥ सा० ॥ ८ ॥ कहे अज्ञानी आ तो साध्वी, धर्मसूत्रमें चालीयो हो० । गृहस्थी उपर अनुकंपा करणी, तो क्युं न सूत्रमें घालीयो हो० ॥ सा० ॥ ९ ॥ आँखांरा अन्धाने हृदयरा फुटा, मिथ्या हठ लइ बेठा हो० । जो थांने निर्णय करणो हुवे तो, सद्गुरु चरणज भेटो हो० ॥ सा० ॥ १० ॥ उत्तराध्ययन तेरमें देखो, चित्त ब्रह्मने दाखे हो० । सर्व जीवोंरी अनुकंपा करणी, ये मुनि आदेशमें भाखे हो० ॥ सा० ॥ ११ ॥ दुजे आगे छठे अध्ययने, श्री वीर जिनेश्वर भाखी हो० । सर्व जीवोंरी अनुकंपा करणी, ये तो आर्द्रकुमार छे साखी हो० ॥ सा० ॥ १२ ॥ अग्निमें बळतो नाग बचायो,

श्री नामादेवीनो जायो हो० । शरणो दई स्वर्ग पहुचायो, ये तो धरणेंद्र पद पायो हो० ॥ सा० ॥ १३ ॥ वाडा पिंजरा भरीया देखी, नेमप्रभु हित राच्या हो० । जीव छोडाई दीनी वधाई, ये तो दया रग रस माच्या हो० ॥ सा० ॥ १४ ॥ हाथीरा भवमें शुसीयों बचायो, ये तो श्रेणिक सुत कहायो हो० । चोडे पाठ ज्ञाताजी बोले, ये तो कुमत्यारे मन नहीं भायो हो० ॥ सा० ॥ १५ ॥ मेघरथराजा पोषध कीनो, ज्यारे शरणे पारेवो आयो हो० । करी अनुकपा जीव बचायो, ये तो शान्तिनाथ पद पायो हो० ॥ सा० ॥ १६ ॥ मेतारज शिर चर्मन बा यो पम्निनी करुणा आणी हो० । दयारगमें मुनिवर रमता, करी शिवसुन्दरी पटराणी हो० ॥ सा० ॥ १७ ॥ कडवी तुंबी परिठण चाल्या, कीडीयारी करुणा आणी हो० । धर्मरूचि मुनि मोटका कहीने, ये तो ज्ञाता सूत्रकी वाणी हो० ॥ सा० ॥ १८ ॥ छ कायाको जीवणो वाछे, मुनिवर फासुक भोजी हो० । शतक पहेले उद्देशे नवमे, निर्णय करे कोई खोजी हो० ॥ सा० ॥ १९ ॥ आवश्यक अर्थ देखो अज्ञानी, थें मोहनिद्राथी जागो हो० । पडतो बालक झेले मुनिवर, ज्यांरा ध्यान गति नहीं भागो हो० ॥ सा० ॥ २० ॥ पन्थीरे कोइ फासी दे जावे, कोइ खोले अनुकपा आणी हो० । दोनों जणाने निन्हव पाप बतावे, या नरकतणी निशानी हो० ॥ सा० ॥ २१ ॥ शतक सोले उद्देशे तीने, मुनिवर ध्यानम

लागे हो० । मसः देखीने वैद्य जो काटे, ज्यांने पाप रति नहीं लागे हो० ॥ सा० ॥ २२ ॥ पडिमाधारी ध्यानमें उभा, कोइ दुष्ट त्यां अग्नि लगाइ हो० । आप परिसह सहे मुनीश्वर, निकले दुजाके तांइ हो० ॥ सा० ॥ २३ ॥ गउवोंका वाडामें अग्नि जो लागी, कोइ कहाडे अनुकंपा आणी हो० । पाप कहे पन्थी दोनोंमें, एतो जोवो कुमत्यारी वाणी हो० ॥ सा० ॥ २४ ॥ आचारांग दुजे श्रुतस्कन्धे, थें तो तीजा अध्ययनमें जोवो हो० । मृषा वोले मुनि दया निमित्ते, क्युं वृथा जन्मज खोवो हो० ॥ सा० ॥ २५ ॥ प्रश्न व्याकरण छट्ठे अध्ययने, साठ (६०) नाम फुरमाया हो० । शाता वेदनी जीवरक्षा थी, ये तो भगवती सूत्रमें गाया हो० ॥ सा० ॥ २६ ॥ वीरप्रभुने चुका बतावे, देवे अच्छतो आलो (दूषण) हो० । मृषावादीको क्या पतीयारो, ज्यारो कीजे मुंडो कालो हो० ॥ सा० ॥ २७ ॥ सावद्य अनुकंपा कहे अज्ञानी, गोला भर्मरा मेले हो० । किसो अध्ययन उद्देशो बतावे, जद शरणो क्रोधको झेले हो० ॥ सा० ॥ २८ ॥ कुबुद्धि कपटसे वोगा वेकावे, श्रावक दुःखीयो थावे हो० । हाथ फेरीने आच्छो करदो, एसा कुहेतु लगावे हो० ॥ सा० ॥ २९ ॥ शीतकाले थें पाणी ठारो, जिणमें मखि मच्छरादि पडिया हो० । मुहपति में राखी आच्छा करो छो, पाछा वोले मोहसु नाडिया हो० ॥ सा० ॥ ३० ॥ नहीं वंछोमें माखीरो जीवित, पोते पापज टाले हो० । तीणसु केहे वो रात अन्धारी, श्रावक अन्धो पालो हो०

॥ सा० ॥ ३१ ॥ थोरा पाटसु आखडि पडियो, मूर्च्छा आई तेहने हो० । कपटी न टालो पाप पोतागे, आच्छो नहीं करे एहने हो० ॥ सा० ॥ ३२ ॥ पाणीसे मारी कादी नचावे, पाप टालो इम बोले हो० । नहीं करे आच्छी श्रावक यतीने, बुद्धिवंत मनमें तोले हो० ॥ सा० ॥ ३३ ॥ देखो छलइया कपटयो केगे, निर्दयामन भाइ हो० । पाप नहीं कहेवे जीव बचायो, पुन्छिया सेति कसाइ हो० ॥ सा० ॥ ३४ ॥ नेमनाथजीने पार्श्वप्रभुजी, श्रीवीरजिनेश्वर राया हो० । शान्तिनाथजी पूर्वभवम, ये तो दयारा भडार खुलाया हो० ॥ सा० ॥ ३५ ॥ सात निन्हवतो आगे हुवा, नहीं कोइ दया उत्थापि हो० । भिखम निन्हव पाचमे आरे, ए तो जट समकितकी कापी हो० ॥ सा० ॥ ३६ ॥

कलश

दया सागर करूणा आगर, जगत रक्षण आप हो । भाग बचायो स्वर्ग पहुचायो, अश्वसेन नन्दन आप हो । साल बहुतेर कार्तिक मासे, कृष्ण सप्तमी शनिवारजी । करूणारसमें रमत गयवर, करदो बेडा पारजी ॥ १ ॥ इति.



अथ श्री प्रश्न माला

अर्थात्

वत्तीस सूत्रोंके मूल पाठका १०० प्रश्न.

दोहा.

मंगल शासनाधीशजी, मंगल गौतम स्वाम । मंगल वाणि जिनतणी, वंच्छित सिभे काम ॥ १ ॥ स्याद्वाद गंभिरता, जाणी पुर्व धार । पंचांगी जिणने रचि, खोल दीया सब तार ॥ २ ॥ नयो पन्थ प्रगट भयो, मांने सूत्र वत्तीस । भोला लोकों आगले, पुरे मनः जगीस ॥ ३ ॥ पुछीयो सेति इम कहे, प्रकरण टीका मांह । मिलता वोलज कों नहीं, तीणसु मानों नांह ॥ ४ ॥ तीण कारण निचे लिखुं, वत्तीस सूत्रोंका वोल । विनपंचांगी दिजिये, मूल सूत्रथी खोल ॥५॥

॥ ढाल देशी–आदर जीव क्षमागुण आदर ॥

मूल सूत्रथी उत्तर आपो, के करो पंचांगी प्रमाणजी ॥ टेर ॥ सत्तावनसो कह्या समवायांग, मल्लि मनःपर्यव जाणजी । ज्ञाता अंगे कह्या आठसो, या जिनवर की वाणजी ॥ मू० ॥ १ ॥ गुण षटसो कह्या अवधि नाणी, समवायांगनो

लेखजी । दोय महस्र मल्लिजिनजरके, ज्ञाता सूत्र लो देखजी ॥ मू० ॥ २ ॥ ज्ञातामें कृष्णकी राणी, बत्तिस सहसको मानजी । मोला महस्र कही ते देखो, यों अन्तगडको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ३ ॥ चार ज्ञान केशी श्रमणके, रायपसेणी जोयजी । तीन ज्ञान उत्तरा यथन बोले, शु तफावत होयजी ॥ मू० ॥ ४ ॥ विराधि पहेले देवलोके, भगवती में वातजी । ज्ञातामें गइ इशान देवी, आठोंड एक माथजी ॥ मू० ॥ ५ ॥ उववाइम ताप देखो, उत्कृष्ट जोतीषी जायजी । भगवतीमें तामली तापस, इशानेंद्र कहायजी ॥ मू० ॥ ६ ॥ उववाइ छट्टे देवलोके जावे चौदा पूर्वना धारजी । कातिक सेठ प्रथम देवलोके, भगवतीमें तारजी ॥ मू० ॥७॥ तीन करण योगथी टाले, श्रावक कर्मादानजी। उपासकमें हल निराडा, सगडाल आनद गुणगानजी ॥ मू० ॥ ८ ॥ वेदनी कर्मकी बारह मुहूर्त, जघन्य स्थिति पन्नवण जाणजी । तेहिज अतर्मुहूर्त दाखी, उत्तराध्ययनकी वाणजी ॥ मू० ॥ ९ ॥ भगवतीमें बाल मरणथी, घट अनत ससारजी । ठाणागमें दो मरणकी, आज्ञा दी कीरतारजी ॥ मू० ॥ १० ॥ चौदा पूर्व महाबल भण्यों, भगवती ब्रह्म देवलोकजी । छट्ठाथी नीचे नहीं जावे, उववाइ सूत्र अवलोकजी ॥ मू० ११ ॥ लसण माहे जीव अनता, उत्तराध्ययनमें सारजी । प्रत्येककाय पन्नवणा बोले, पचागी लो धारजी ॥ मू० ॥ १२ ॥ दोय भाषारी आज्ञा नहि, दशवैकालिक जाणजी । चार भाषा आराधी बोली, पन्न-

वणाकी वाणजी ॥ मू० १३ ॥ दशवैकालिकमें चित्रित नारी, नहीं रहे अणगारजी । ठाणांगके पांचमे ठाणे, साधु साध्वियां रहे लारजी ॥ मू० ॥ १४ ॥ रोग आयो औषध नहीं करणो, उत्तराध्ययनमें लेखजी । वीरप्रभुजी औषध कीनो, भगवती लो देखजी ॥ मू० ॥ १५ ॥ दशवैकालिक भोजन करवा, एक भक्तको मांनजी । विकट भोजी तपस्वी साधु, ओर कल्पसूत्रको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ १६ ॥ अल्पछांटां जावे गोचरी, कल्पसूत्रमें जाणजी । वर्षादमें बिलकुल नहीं जावे, दशवैकालिक वाणजी ॥ मू० ॥ १७ ॥ भगवतीमें अणसण कीधो, कदाचित करे आहारजी । बीजे सूत्रे व्रतभंगको, लागे दोष अपारजी ॥ मू० ॥ १८ ॥ पन्नवणामें स्त्रि वेदजो, स्थितिका पांच आदेशजी । सर्वज्ञका मतमें किम चाले, पिण छे सूत्रका रहस्यजी ॥ मू० ॥ १९ ॥ राजपिंड साधु नहीं लेवे, ठाणांगमें जाणजी । देवकी वहोरायो छे साधुने, अन्तगडकी वाणजी ॥ मू० ॥ २० ॥ पच्चवीश जोजन उपसर्ग नहीं होवे, समवायांग अतिशय अधिकारजी, अभंगसणादि शूली चडीया, विपाकसूत्र मझारजी ॥ मू० ॥ २१ ॥ दोय साधु समोसरण मांहे, बाल्या गोशाले आणजी । लोही ठांण हुवो भगवंतके, भगवती पेहेचाणजी ॥ मू० ॥ २२ ॥ समवायांगमें श्रावकां केरा, चैत्य हुंडीमें होयजी । उपासकसूत्रमें देखो, पाठ न दीसे कोयजी ॥ मू० ॥ २३ ॥ अल्प आयुष्य ठाणायांगे, दे दोषित आहारजी । अल्प पाप ने बहुत निर्जरा, भगव-

तीसूत्र मझारजी ॥ मू० ॥ २४ ॥ पाच महानदी नहीं उतरे, ठाणागरो लेखजी । मार्ग जाता नदी उतरे, आचाराग लो देखजी ॥ मू० ॥ २५ ॥ चौमासामें विहार न करणो, बृहत्कल्पकी साखजी । पाचमे ठाणे विहार करणको, वीतराग गया भाखजी ॥ मू० ॥ २६ ॥ विविधे २ हिंसा नहीं करणी आचाराग दशवैकालजी । नदी उतरे नावमें बैठे, आचारागमें भालजी ॥ मू० ॥ २७ ॥ कल्पसूत्र साधु चौमासे, विगइ नहीं लेने वारवारजी । सूयगडागम निपेध कीनो, नहीं लेने अणगारजी ॥ मू० ॥ २८ ॥ सचित्त मिश्र वस्तु नहीं लेने, दशवैकालिक जाणजी । आचारागमें लुण जो खावे, आ जिनवरकी आणजी ॥ मू० ॥ २९ ॥ भगवतीसूत्रमें देखो, जिनज वीखो हायजी । कडवो कह्यो अ ययन चौत्तिसे, उत्त राध्ययन लो जोयजी ॥ मू० ॥ ३० ॥ मृषावादका त्यागज कीना, दशवैकालिक जाणजी । आचाराग ' मृगादिक ' ताइ, जुठ बोले दया आणजी ॥ मू ॥ ३१ ॥ समवायागे तेविश तीर्थंकर, सूर्य उग्यो केवलज्ञानजी । नेमिश्वर पाछले पहोरे, दशाश्रुतस्कध पेन्छाणजी ॥ मू० ॥ ३२ ॥ सूर्य उगता ज्ञान उपनो, तेविश तीर्थंकर जाणजी। पाछले पहोरे मल्लि जिनवर, ये ज्ञातासूत्रकी वाणजी ॥ मू० ॥ ३३ ॥ दश प्रकारे वैयावच्च बोली, उववाइम लेखजी । हरिकेशीकी वैयावच करतां, जन्न ब्राह्मण हणीया देखजी ॥ मू० ॥ ३४ ॥ प्राणभूत जीव सत्त्वने,

दुःख नहीं देणो कोयजी। प्रत्यक्ष मांहे ब्राह्मण हणीया, वैया-वृच्च कीणविध होयजी ॥ मृ० ॥ ३५ ॥ श्री ठाणांगे मल्लि जिनवर, दीक्षा लिनी जण सातजी । छसो नण साथ निकल्या, आ ज्ञातासूत्रकी वातजी ॥ मृ० ॥ ३६ ॥ मल्लि जिनने केवळ उपन्यो, पछी मंत्री दीक्षा जाणजी । सात जण साथे दीक्षा, आ ठाणांगकी वाणजी ॥ मृ० ॥ ३७ ॥ पशु पिंड रहित हो स्थानक, उत्तराध्ययन न रहे अणगारजी । साधु साध्वी भेला रहे, ठाणांगसूत्र मझारजी ॥ मृ० ॥ ३८ ॥ निषेध ओर प्रशंसा न करणी, सुयगडांग सावद्य दानजी । एकांत पाप कह्यो जिनवरजी, ओर भगवतीको ज्ञानजी ॥ मृ० ॥ ३९ ॥ नन्दन वन पांचसो योजनको, जंबुद्विप पन्नति न्यायजी । वलकुट सहस्र जोजनको, तेहमें केम सामायजी ॥मृ० ॥ ४० ॥ पांचसो जोजनका चोड दाख्या, गजदंता दोय जाणजी । उपर कुट सहस्र जोजनको, जंबुद्विप पन्नति आणजी ॥ मृ० ॥ ४१ ॥ ऋषभ कुटको पहूलापणो, आठ जोजनको मूलजी । पाठांतर वारा जोजनको, जंबुद्विप पन्नति अनुकुलजी ॥ मृ० ॥ ४२ ॥ अर्द्ध भरतकी जीवा दाखी, जंबुद्विप पन्नति मझारजी । नव सहस्र सातसो अडतालीश, वारा कला विचारजी ॥ मृ० ॥ ४३ ॥ चोथे अंगे तेहीज जीवा, नव हजारको मानजी । पंचांगी विना ते किम जाणे, हृदय आणो ज्ञानजी ॥ मृ० ॥ ४४ ॥ चोथे अंगे जघन्य थिति, वत्तीस

सागर विजय विमाणजी । पन्नवणामें इगतीस सागर, जघन्य थिति परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ४५ ॥ ऋषभ वीरके वीचे मन वायाग, अतगे कोडाकोड एकनी । बयालीस सहस्र वर्ष ऊणा, जम्बुद्विप पन्नति लो देखजी ॥ मृ० ॥ ४६ ॥ आधा कर्मी आहार भोगवे, सूयगडांग बोले एमजी । कर्मोंथी लेपे न लेपे, दो वातों मीले केमजी ॥ मृ० ॥ ४७ ॥ भगवती सूत्रमें देखो, आधाकर्मी अविकारजी । चार गतिको कह्यो पोवणो, रले बहुत ससारजी ॥ मृ० ॥ ४८ ॥ उणो सहस्र तेतीस सूर्य, चक्षु स्पर्शे चोथे अगजी । बत्तीस सहस्र एक जोजन अधिको, जम्बुद्विप पन्नति रगजी ॥ मृ० ॥ ४६ ॥ शतक आठ उद्देशो दशमो, भगवती अग जाणजी । पोग्गले पोग्गली कह्यो जीवने, तेहनो सु परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ५० ॥ सोला नाम मेरुका चाल्या, समवायागमें जोयजी । आठमो प्रियदर्शन दाख्यो, चौदमो उत्तर होयजी ॥ मृ० ॥ ५१ ॥ तीसहिज जम्बूद्विप पन्नति, मेरुका सोला नामजी । आठमो सलोचय चौदमो उत्तम, यों पचागीको कामजी ॥ मृ० ॥ ५२ ॥ अणआहारी दोसमय स्थिति, पन्नवणा पेखाणजी । तीन समय भगवती बोले, आ जिनवरकी आणजी ॥ मृ० ॥ ५३ ॥ चर्म तीर्थंकर कल्पसूत्र बयालीस वर्ष दीक्षा सगजी । बयालीस वर्ष भाखेरा, देखो चोथो अगजी ॥ मृ० ॥ ५४ ॥ जीवाभिगम रुचक द्विपको, कह्यो असख्यातो मानजी । ठाम

दुणो संख्यातो आवे, जोवो जिनवरको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ५५ ॥ मेरु करंड अडतीस सहस्रको, समवायांगमें होयजी। तेहिज छत्तीस सहस्र बतायो, जंबुद्विप पन्नति जोयजी ॥ मू० ॥ ५६ ॥ इगसठ सहस्र जोजनको जाणो, समवायांग दुजो करंडजी। तैसठ हजार जोजनको देखो, जंबुद्विप पन्नति मंडजी ॥ मू० ॥ ५७ ॥ नव हजार नवसो जोजनको, नन्दनवन चोथे अंगजी। चौपन जोजन अधिको दाख्यो, जोवो पंचमे उपांगजी ॥ मू० ॥ ५८ ॥ दशमे अंगे बत्तीस इंद्र, अडतालीश पांचमे उपांगजी। चोष्ट कह्या दुजे ठाणे, देखो तीजे अंगजी ॥ मू० ॥ ५९॥ सिद्धांकी अवग्गना उववाइ, बत्तीस अंगुलको मानजी। जघन्य सात हाथका सिद्धा, यों भगवतीको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ६० ॥ सिद्धशीलाथी उणो जोजन, सिद्धक्षेत्र भगवती जाणजी। उववाइमें पुरो जोजन, करो पंचांगी परिमाणजी ॥ मू० ॥ ६१॥ छट्ठी नरकका मध्य भागसु, घणोदधिनो चरमांतजी ॥ गुणीयासी सहस्र समवायांग बोले, केवलज्ञान अनन्तजी ॥ मू० ॥ ६२॥ जीवाभिगम गणती करतां, इठंतर सहस्र जोजन परिमाणजी। पंचांगी विन ते किम जाणो, हृदय आणो नाणजी ॥ मू० ॥ ६३॥ रेवती नक्षत्रथी जेष्टातांइ, तारा अट्ठाणुं होयजी। गणती करतां सत्ताणु आवे, समवायांग लो जोयजी ॥ मु० ॥ ६४॥ नव जोजन घ्राणेंद्रि विषय, पन्नवणामें जाणजी। च्यारपांचसो जोजन दाखी, दुजे उपांग परिमाणजी

॥ मू० ॥६५॥ भगवतीमें पल्योपमको, कुवा तणो कह्यो मानजी। तेथी फर्क घणेरो दिसे, अणुयोग द्वारको ज्ञानजी ॥मू० ॥ ६६ ॥ असुर अवधि ज्ञान जघन्यथी, पचविस जोजन चोथे उपागजी । अगुल भाग असख्यातो दाख्यो, देव सुधर्मा चगजी ॥ मू० ॥ ६७ ॥ बादर तेउ मनुष्य लोकमें, पन्नवणा पदेचाणजी। देखो अग्नि कही नरकमें, उतराध्ययन उगणीसम नाणजी ॥मू० । ६८ ॥ शौरीपुरम नेमीनाथनी, कथा उत्तराध्ययन मझारजी । दीक्षा ले तो कहि द्वारका, मूलथी काडो सारजी ॥ मू० ॥६६॥ शौरीपुर पूर्वमें जाणो, द्वारका पश्चिम जाणजी । राम कृष्ण वदन कर चाल्या, आ जिनवरकी वाणजी ॥ मू० ॥ ७० ॥ सात कुलकरका नाम बताया, ठाणांग ठाणे सातजी । दश कुलकर कह्या दशमें ठाणे, मूळथी मेलो घातजी ॥ मू० ॥७१॥ आवती उत्सर्पिणी जाणो, कुलकरको अधिकारजी । सातमे दशमे ठाणे देखो, उपरवत् विचारजी ॥ मू० ॥७२॥ सुधर्म इशान कयो बरोबर, जीवाभिगम जोयजी। भगवती अग्रमें देखो, इशान उचो होयजी ॥ मू० ॥७३॥ तीर्छि गति कही असुरकी, नंदीश्वरद्विप मझारजी । राजधानी असख्या द्विपे, भगवती अग विचारजी ॥ मू० ॥७४॥ महावेदना सम्यग्दृष्टी नेरीयां, प्रथम शतके थायजी। शतक अठारे उदेशो पाचमो, अल्प वेदना कहेवायजी ॥ मू० ॥७६॥ पारमो तीर्थंकर कयो कृष्णने, अतगड अधिकारजी । जिनवर

होसी तेरमो देखो, समवायांग सूत्र मझारजी ॥ मू० ॥ ७६ ॥ मनुष्य तीर्यंचको काल वैक्रिय अंतर्मुहूर्त पांचमे अंगजी । भीन्न-मुहूर्त चार बताया, जोवो तीजे उपांगजी ॥ मू० ॥ ७७॥ जघन्य आराधिक रत्नत्रयीको, भव करे सत अठजी । नरदेव उत्कृष्टो रहेवे, अर्द्ध पुद्गल मठजी ॥ मू० ॥७८॥ भगवतीमें निद्रा लेतो, सात आठ बन्धे कर्मजी । तीजा पहोरे निद्रा लेणी, उत्तराध्ययनमें मर्मजी ॥ मू० ॥ ७६ ॥ असंघयणी कह्या नेरीया, जोवो तीजे उपांगजी । उत्तराध्ययन सुयगडांग देखो, मांस खवावे करे तंगजी ॥ मू० ॥ ८० ॥ दीव्य संघयण कह्या देवता, लेवो पन्नवणा देखजी । असंघयणी जाणो देवता, जीवाभिगमको लेखजी ॥ मू० ॥ ८१ ॥ भगवती असंन्नी मनुष्यको, अडतालीस मुहूर्त अवस्थित कालजी । चौवीस मुहूर्तको विरह बतायो, पन्नवणामें भालजी ॥ मू० ॥ ८२ ॥ ब्रह्मकल्प वैमाण ठाणांग, रक्त श्याम नीलवर्ण जाणजी। रक्त पेत सुपेत बतायो, जीवाभिगम पिछाणजी ॥ मू० ८३ ॥ समवायांग भगवती मांहे, शक्र स्तव अधिकारजी । दोनों पाठमें फर्कज दीसे, पंचांगी लो धारजी ॥ मू० ॥ ८४ ॥ पांचसो तीस भेद बताया, पुद्गल पन्नवणा लेखजी । चारसो चैयासी दाख्या, उत्तराध्ययन लो देखजी ॥ मू० ८५ ॥ जघन्य क्लिविषी सुधर्म जावे, पन्नवणाकी वायजी । भगवती सूत्रमें देखो, भुवनपतीमें जायजी ॥ मू० ८६ ॥ साहरण करतो मे

नहि जाणु, कल्पसूत्र परिमाणजी। आचारांगमें कहे में जाणु, श्री वीर जिणदवी वाणजी ॥ मृ० ॥ ८७ ॥ पहेला देव और पछी मनुष्यने, धर्म कह्यो जगनाथजी। अच्छेरामे वाणी निष्फळ, मेला मूलके साथजी ॥ मृ० ॥ ८८ ॥ याग वैपारसे हिंसा हुवे, भगवतीमें वातजी। आज्ञा दीनी शुभ योगकी, मेलो उववाइ सातजी ॥ मृ० ॥ ८९ ॥ बारा व्रत लेशु इम बोल्या, आनंद उपाशक जोयजी। सात व्रत उच्चरीया जाणो, अतिचार बारेका होयजी ॥ मृ० ॥ ९० ॥ वनस्पति सघट्टो नहि करणो, भगवतीमें देखजी। भाड पवड खाइसु नीवले, आचारांग लो देखजी ॥ मृ० ॥ ९१ ॥ समय मात्र प्रमाद न करणो, उत्तराध्ययन दशमे जाणजी। तीजे पहोरे निद्रा लेणी, छवीशमे अध्ययन परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ९२ ॥ गृहस्थीने कठण नहि बोले, निशिथसूत्रमें लेखजी। केशी कहे मूढ तुच्छ प्रदेशी, रायपसेणी लो देखजी ॥ मृ० ॥ ९३ ॥ निशिथमें साधुने वरज्यो, कोइ चीज देखवा जायजी। विपाक मृगापुत्रने गौतम, देख्यो जिनवर वायजी ॥ मृ० ॥ ९४ ॥ गृहस्थीमे परिचय नहि करणो, दशवैकालिक आयजी। गौतम अंगुली पकडी एमतो, आ अंतगडकी वाणजी। मृ० ॥ ९५ ॥ छ पुरुष सातमी नारी, अंतगड अर्जुन जाणजी। पुरुष सातमो छे कही नारी, प्रगट पाठ परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ९६ ॥ इत्यादि बहु वाल चाल्या, मूल सूत्रमें भालजी। स्याद्वादकी

शैली विना, ते किम जाणे बालजी ॥ मू० ॥ ९७ ॥ जो नहि माने ते पांचांगी, तासुं कहीये तेमजी। मूल पाठथी उत्तर आपो, जब बोले पाधरा एमजी ॥ मू० ॥ ९८। परम्पराने चले धारणा, टबा अर्थमें जोयजी। मतवालोंकी वातों सुणतां, आश्चर्य होवे मोयजी ॥ मू० ॥ ९९ ॥ लुंकाजी मजुरी करता, चौरीसे उलटो ज्ञानजी। परंपरा तमे केहनी चालो, हृदय आणो ज्ञानजी ॥ मू० ॥ १०० ॥ टबावालो हेला पाडे, मैं कीयो टीका अनुसारजी। टबो माने टीका नहि माने, वे डूबे डूबावणहारजी ॥ मू० ॥ १०१ ॥ भद्रबाहुस्वामि वृत्ति कीनी, ते बहु कठिण जाणजी। तेनी सुगम करी आचारज, ते वृत्ति परिमाणजी ॥ मू० ॥ १०२ ॥ वादी कहे वह तो पांचांगी, गइ कालमें वितजी। नवी रची आचारज ज्यारी, किम आवे प्रतितजी ॥ मू० ॥ १०३ ॥ सूत्र रह्या "निर्युक्ति" वीती, तेहनो शु परिमाणजी। आचारज रचित नहि मानो, आगे सुणजो वाणजी ॥ मू० ॥ १०४ ॥ तीन छेद भद्रबाहु किना, पन्नवणा श्यमाचारजी। देवऋद्धि गणी नंदी बनाइ, दशवैकालिक सज्जंभव गणधारजी ॥ मू० ॥ १०५ ॥ धर्मधूरंधर पूर्वधारी, टीका करता जाणजी। काम पडे जद बोलचालको, शरणों लेवो आणजी ॥ मू० ॥ १०६ ॥ जैन नाम धरावे फोगट, जिन आगमथी दूरजो। तेहिज बांची पंडित वाजो, कृतघ्नीन क्रुरजी ॥ मू० ॥ १०७ ॥ मूल सूत्र पांचांगी मानो,

दो बहु आदर मानजी । स्याद्वादकी शैली समजो, लो गुरु गमशे ज्ञानजी ॥ मू० ॥ १०८ ॥

कलश

नाभिराय कुल वंशभूषण, मरुदेवी मायजी । "अष्टापद" पर आप सिद्धा, गणधर प्रणमे पायजी । एकादशी अषाढ शुक्ल, उगणीश बहुत्तर सालजी । देश मरुधर ग्राम तीवरी, प्रभु जोडी प्रश्नमालजी ॥ १ ॥

॥ इति श्री प्रश्नमाला संपूर्ण ॥



परम योगिराज श्री श्री १००८ श्री श्री रत्नविजयजी महाराज कृत

॥ विनतिशतक ॥



[देशी वीर सुणो मारी विनति]

वीर सुणो मारी विनति, कर जोडी हो प्रभु करुं अरदासके। तुं समर्थ सायव धणी, मुज मननी हो करुं वात प्रकाशके ॥ वीर ॥ १ ॥ दश द्रष्टान्ते दोहिलो, पाम्यो पंचमे हो नरभव अवतारके। पंच हलाहल भ्हरमें, कृष्णपची हो बहुलो नर नारके ॥ वीर ॥ २ ॥ तुज शासन सुर तरु जीसो, जयवन्तो हो रहेशे चरमान्तके। आराद्धिक केइ होव से, निःशंक हो प्रभु तुज सिद्धान्तके ॥ वीर ॥ ३ ॥ हुंडासार्पिणी योगथी, तुज धरमें हो निन्हव हुवा सातके। छसो नव वर्ष थया, दिगम्बर हो सहु लोप्या सिद्धान्तके ॥ वीर ॥ ४ ॥ चैत्यवासी विधि चैत्यना, अविधि चैत्यना हो जगडा बहु जोयके। तरासे वर्ष प्रभु पच्छी, गच्छ चौरासी हो जुदा जुदा होयके ॥ वीर ॥ ५ ॥ दोय सहस्र वर्ष हुवा, लुंको लुपक हो मान्या आगम एकतीसके। मुह बंधा तीणमे हुवा, टोले टोले

हो निकल्या पानिसके ॥ वीर ॥ ६ ॥ तेरापन्थी अलगा पड्या, टोले टोले हो माहोमाही जुठके । भेद क्रिया श्रद्धा विषे, करे फोगट हो बहु माथाकुटके ॥ वीर ॥ ७ ॥ गच्छ गच्छान्तर जुवा-जुवा, अन्योअन्य हो बोले जुठ मजुठके । एक बीजाने उत्थापता, माहोमाही हो करे लुठ मलुठके ॥ वीर ॥८॥ जुठी पटावली ग्रन्थने, माहोमाही हो करे खाचाताणके, वेष क्रिया श्रद्धा जुइ जुइ, जुदा-जुदा हो सहुना ऐंनाणके ॥ वीर ॥ ६ ॥ चौरासीथी वदता हुवा, गच्छ तीनसो हो दश पन्थापन्थके । बावीसमाथी छन्नु थया, थापे उत्थापे हो केइ ग्रन्थाग्रन्थके ॥ वीर ॥ १० ॥ अढाई हजार वर्ष हुवा, कलयुगीया हो पेठा शासन माइके, घटमा गोचा गालता, लजावे हो प्रभु शासन तोयके ॥ वीर ॥ ११ ॥ संवेगी नाम धरायने, दुरो मुक्यो हो संवेगनो रगके । लोक लजावे बापडा, न्यारा न्यारा हो जाणो सहूना ढगके ॥ वीर ॥ १२ ॥ वेष क्रिया पदवी तणा, करे जघडा हो मांहोमांही जुठके । अन्तानुबन्धी राची रह्या, खाली हो करे माथाकुटके ॥ वीर ॥ १३ ॥ मार्गानुसारीपणो कीहा, कीहा समकित हो चारित्रनी घातके । कलयुगीया चेला हुवा, मांहोमाही हो करे गजबनी वात के ॥ वीर ॥ १४ ॥ देव वीतरागी तु प्रभु, गुरु वीतरागी हो गौतमादिक जोयके । धर्म वीतरागी पामीने, कलयुगीया हो फोगट देवे खोयके ॥ वीर ॥ १५ ॥ मांहोमाही जुठा कहे, लडी

मरता हो केइ वापडा रंकके। जाणे थोडुं ताणे घणुं, थई पासत्था हो विचरे निःशंकके ॥ वीर ॥ १६ ॥ पापारंभ करावता, सदोषित हो लेता अन्नने पाणके। राखे रखावे परिगरो (द्रव्य), करे आडम्बर हो जुठा तोफानके ॥ वीर ॥ १७ ॥ तीगट कारट कवर गणा, राखे पासे हो नोटों मस्तानके। नामा मंडावे गृहस्तना, कलयुगीया हो जाग्या सेतांनके ॥ वीर ॥ १८ ॥ लेखक, पंडित राखे साथमे, नोकर चाकर हो साथे राखे साधके। सिद्ध साधक जोडी मीली, भोला जीवोंने हो पकडे जीम व्याध के ॥ वीर ॥ १६ ॥ जुठा खाना चलावता, तार-टीपालहो लेता वी-पी आपके। मणीयाडार मोकलावता, वज कलदारंग हो बेठा जपे जापके ॥ वीर ॥ २० ॥ चौमासानी वीनती, करे श्रावक हो तब बोल रकम के। बे चार आठ हजारमे, दश हजार हो बोले हरदमके ॥ वीर ॥ २१ ॥ चौमासानी पेदासने, पोते मंगावी हो राखे निजपासके। नगद नारायण भेला करे, भोला जीवोंने हो आपे बहुत्रासके ॥ वीर ॥ २२ ॥ मोटा महन्त कहवावता, करे हुकम हो ओफीसर जेमके। हाकमनीपरे हाकता, नही राखे हो गरीबोंनी रहमके ॥ वीर ॥ २३ ॥ उपधान बांने कढावता, पैसा रोकडा हो तीस उजमणा मांह के, दीक्षा यात्रा तप व्रत में, लुटालुटी हो करे वापडा तांह के ॥ वीर ॥ २४ ॥ ग्रन्थ लिखावा कारणे, ग्रन्थ छापावाहो मांगे पैसा रोक के, लावो लावो करता फीरे, कलयुगीया हो हारे संयम फोकके ॥वीर॥ २५ ॥

गुरु नामे विचरे गणा, श्रावकना हो वीत्त (द्रव्य) हरण हारके । साचा सत् गुरु स्वलप छे, श्रावकना हो जो चित्त हरण हारके ॥ वीर ॥ २६ ॥ धर्मशाला उपासरा, मठ, धारी हो अपणा करी लिधके । खाता पोता राखे वेहना, मुनि पदने हो जलाजली दीधके ॥ वीर ॥ २७ ॥ पाठशाळा थापे आपणी, टीप मडावे हो वापडा गामो गामके । मायाना मजुरीया फीरे गणा, लजावे हो प्रभु पीलोतु नामके ॥ वीर ॥ २८ ॥ व्याज वीणज करे गणा, भाडा लेवे हो करे धीर उद्धारके । केस लडे कोरट छडे, पीली पलटणना होये छे समाचारके ॥ वीर ॥ २९ ॥ छापा परस्पर छापता, देता चेलेंजो हो लडता मांहोमांहके । लोक लजावे वापडा, पीताम्बरी हो अग्र वीगडता जायके ॥ वीर ॥ ३० ॥ नहीं करीयो नहीं करशके, न कुच्छ हो करणाने योगके । पीला कपडा पहेरके, भला हसाया हो कलयुगीया लोकके ॥ वीर ॥ ३१ ॥ रेल विहारी कोइ थया, कोइ पोटलीया हो थया मायाना मजुरके । साधु साध्वीयों साथे विचरता, पाच सात हो साथे होय मजुरके ॥ वीर ॥ ३२ ॥ पाछली रात्री वेला उठीने, गामोगाम करता विहारके । तुज शासन निंदावता पीली पलटणना, हो केता लिखु समाचारके ॥ वीर ॥ ३३ ॥ क्यां आणा प्रभु ताहरी, क्यां हो आ अज्ञान विलामने । मुनि मतगज क्या प्रभु, क्या कलयुगीया हो आ साध्वा भापके ॥ वीर ॥ ३४ ॥ एटला छतां आ वापडा, थइ बेठा

हो अहमींद्र सामान्यके। स्वश्लाघा परनिंदका, परस्पर हो गीणे तृण सामान्यके॥ वीर ॥ ३५ ॥ साधुगणो न पले कदि, रुडो कह्यो हो प्रभु गृहस्थावासके। उभय भिट महा पापीया, पील्या कपडानुं हो वाले सत्यानाशके॥ वीर ॥ ३६ ॥ साधुमांथी यति थया, यतिओमांथी हो कीयो क्रिया उद्धारके। पीलमांथी कोइ नीकली, करे पीलानुं हो प्रभु जीर्णोद्धारके॥ वीर॥३७॥ जेसी दशा पीलोंतणी, तेसी ढुंढकनी हो थइ आचारके। स्वामी नहीं कोइ वातमें, तुं जाणे हो तस सर्व प्रकारके ॥ वीर ॥ ३८ ॥ पूर्व विराधी भावथी, पामी धर्म हो नहीं जाणे मर्मके। मर्म विना कर्म न विछूटे, धर्म नामे हो पड्या फोगट मर्मके ॥ वीर ॥ ३९ ॥ शाहुकारने देवालीया, भीखारी आ तीन प्रकारके। आराधिकने विराधीका, अप्राप्त हो भीखारी लो धारके॥ वीर ॥ ४० ॥ पूर्व देवाला काढीने, अधुना हो काढे देवाला खुबके। साथे रहीने देखशो तो, देखाशे हो चित्र बेहुबके ॥ वीर ॥ ४१ ॥ पोते पदवीधारी थई, वाडा बांधे हो करे खेंचताणके। एक घर छोडी नीकल्या, घर अनेक हो थया मोटे मंडाणके ॥ वीर ॥ ४२ ॥ उपकरण चवदा कया प्रभु, पण वदता जावे हो जोवो दिनने रातके। परिसह गौचरी दोषमें, नहीं समजे हो आचारज आ बातके ॥ वीर ॥ ४३ ॥ संसार तजवो सोहलो, सार तजवो हो दोहिलो थयो आजके। किम तीरसी ते वापडा, जोइ जाणी हो बिगाडे काजके ॥ वीर ॥ ४४ ॥ वुकसने पडिसेवणा, देश-

कालना हो थाना घरे गुढके । यथाशक्ति खप नवि करे, नवि जाणे हो परमार्थ गुढके ॥ वीर ॥ ४५ ॥ शास्त्र अभ्यास मुक्यो पछ्या, जनरीसे हो हाके जुठ दफाणके । गाम पडोलीया थइ रह्या, वातोनी स्वाध्याय हो सुतोनो ध्यानके ॥ वीर ॥ ४६ ॥ भवाभिनन्दी वापडा, सुख शैल्या हो पामर थाता जायके । 'मुडाण मुडियाण' न्यायथी, कलयुगीया हो दुर्लभ बोधी थायके ॥ वीर ॥ ४७ ॥ माया कपटाइ समाचरे, मान वडाई हो इर्षा मृषावादके । हितशिक्षा माने नहीं, अन्योन्य हो करे वादविवादके ॥ वीर ॥ ४८ ॥ गृहस्थी परिचय बहुलो करे, स्वच्छदता हो कायरता तेम के । स्वार्थता बहु कुटिलता, तुच्छ वस्तुपर हो बहु राखे प्रेमके ॥ वीर ॥ ४९ ॥ पासत्थाने कुशीलीया, अहछदा हो ससक्ता प्रायके । उसन्ना नित्य पिंडिया, व्रत खडिया हो बहुलो समुदायके ॥ वीर ॥ ५० ॥ पडित नाम धरावता, मुर्खना हो करे काम तमामके । आचार्य नाम धरायने, अनाचार हो सेवे ठामोठाम ॥ वीर ॥ ५१ ॥ क्रियापात्र क्रिया नवि करे, तपस्वी हो जाय लपमी अनेकके । साधु नाम धरायने, वरताने हो बहुलो अविवेकके ॥ वीर ॥ ५२ ॥ नवा नवा कायदा घडे, नित्य तोडे हो कलयुगीया आपके । मिच्छामि दोकडो कुभकारनो, कोण काढे हो जो पापनो मापके ॥ वीर ॥ ५३ ॥ कनक कामनी लालचे, करे चालाकी केइ अपरम्पारके । सर्व प्रकार जाणो तमे, कर तेहनो हो प्रभु जलदी उद्धारके ॥ वीर ॥ ५४ ॥ पाच पाचडा तीम

स्वार्थना शेठके ॥ वीर ॥ ६३ ॥ धर्म धुतारा बापडा, धर्म नामे हो जग धुरति खायके। पोल खुले जो एहनी, कलयुगीया हो सीधा नवि थायके ॥ वीर ॥ ६५ ॥ पेगम्बर केइ उपन्या, दिगम्बर हो केइ पेदा थायके। महात्मा केइ निकल्या, द्रव्य साधु हो केइ दुग रचायके ॥ वीर ॥ ६५ ॥ साधु संसार सुधारता, केइ सुधारता हो श्रावक संसारके। सात क्षेत्र सुधारता, कलयुगीया हो केइ आव्या वारके ॥ वीर ॥ ७६ ॥ घरना जगडा लावीने, नोखे धर्ममें हो प्रभु शुं कहुं वातके। हीलना करावे धर्मनी, कलयुगीया हो करे आतमघातके ॥ वीर ॥ ७७ ॥ निर्बलानी सहायता नवि करे, सबलानी हो करे सार सवालके। उलटो न्याय चाले प्रभु, शासनना हो करे हालहवालके ॥ वीर ॥ ७८ ॥ पांजरापोल्या केइ उपन्या, धर्मादीया हो केइ उपन्या दलालके। स्वार्थीया पिंडपोषीया, शुं थाशे हो आ जगतना हालके ॥ वीर ॥ ७९ ॥ परस्पर जुठा कही, मनःकल्पित हो थापे आपणा बोलके। बलीम कोदर नाग जीउ, फोगट हारे हो तुज धर्म अमूल्यके ॥ वीर ॥ ८० ॥ नवनोयिक टोला थया, पांचसो हो जिम सुभटनुं वृन्दके। कालचुकी जिम बंदरा, दुःख पामे हो कलयुगीया अन्धके ॥ वीर ॥ ८१ ॥ आपकर्मी अलगा गया, बापकर्मी हो तिम चाल्या जायके। पापकर्मी भेला थया, कोण जाणे हो क्यारे छुटे बलायके ॥ वीर ॥ ८२ ॥ मोक्षमार्ग मांहे चालता, अधविचमें हो जे लुंटता जायके। पुद्गलानन्दी बापडा, करे चालाकी हो

मिथ्या आडम्बरी थायके ॥ वीर ॥ ८३ ॥ परोपदेशे पंडिता, पोते पापथी हो भरे आपणो पडके। जड उठावे धर्मनी, गुणहीना हो राखे सुब गमडके ॥ वीर ॥ ८४ ॥ प्रभु तुम नामे लुटीने, धुती खावे हो कलयुगीया आजके। धनलोभी धर्म वेचता, केइ करता हो केटला अकाजके ॥ वीर ॥ ८५ ॥ दशवैकालिक आगमे, आवश्यक हो तेम उत्तराध्ययनके। आचारांग सूयगडायांग भगवती, प्रश्न व्याकरण हो ते बोल्या वचनके ॥ वीर ॥ ८६ ॥ उववाइ उपदेशमालामें, ते भाख्यो हो मुनिमार्ग जेहके। कुगुरु तेहने छीपावता, मुनि लिंगमें हो उडावे खेयके ॥ वीर ॥ ८७ ॥ एकलो ज्ञान न फल देवे, तिम एकली हो क्रिया फलहीनके। फल समपुरण तब थावे। माहोमाही हो दोय होय अधिनके ॥ वीर ॥ ८८ ॥ वेरी तृष्णा तेरा काठीया, त्रिविध तापे हो ताप्या भवजीवके। बावना चन्दन मुनि थया, करे ठाड हो हरे ताप अतिवके ॥ वीर ॥ ८९ ॥ कामधेनु सम मुनि कया, काम कुंभ हो सुरमणि सुरवृक्षके। सुगुरु देखीने सभाले, सुदेव हो सुधर्म प्रतिक्षके ॥ वीर ॥ ९० ॥ अहो मुनि अहो सयमि, अहो ज्ञानी हो अहो ध्यानी जेह के। अहोत्यागी वेरागीया, नमु नमु हो कर जोडी तेहके ॥वीर॥९१॥ शासन रक्षक देवता, उठो जागो हो थयो सावधानके। साहय करो शासन तणी, अम उपर हो थावो मेहरबानके ॥ वीर ॥ ९२ ॥ युग प्रधान मुनिराजजी, दोय सहस्रने हो चार हुसे जेहके। तीरण तारण

कलीकालमे, भव्य जीवोना हो उपकारक तहके ॥ वीर ॥ ॥ ६३ ॥ शासन पडतो देखने, तद उपन्यो हो दीलमे चद दाफ के, साहाय करो कोइ जीवने, जिम सुधरे हो स्वपरना काज के ॥ वीर ॥ ६४ ॥ भस्मगृह उतरी गयो, वर्ष पांचमे हो विक्रनो अन्तके। अढाइ हजार वर्ष तुज धर्मनो, थाशे महोदय हो इम आप भणंतके ॥ वीर ॥ ६५ ॥ शासननायक तुं प्रभु, खुद भेटयो हो मैं आपो आपके। साहाय करो प्रभु भली पेरे, मारा मालीक हो मुज मनमे व्यापके ॥ वीर ॥६६॥ सहाय दीवि सिधसेनने ते तारीयों हो प्रभु हेमकुमारके। आचेरत्नतादि उद्धरया अभयदेवने हो तुं दीनो आधारके ॥ वीर ॥ ॥ ६७ ॥ साहाय करी जगचन्द्रनी, आनन्दविमलनी हो ते करी संभाल के, मल्लवादी देवसूरिनी, हीरसूरीनी हो ते की प्रति पालके ॥ वीर ॥ ६८ ॥ साहाय करी प्रभु सत्य नि, यशोविजयनी हो उन्नति करी नाथके। भक्तोना कार्य सूधारवा, प्रभू थारे हो हजार छे हाथके ॥ वीर ॥ ६६ ॥ इम अनेकने उद्धारया, ते केता हो प्रभु कहु अवदातके। भक्तवत्सल्य भगवान छो, दीनोद्धारक हो तू छे साक्षातके ॥ वीर ॥१००॥ ज्यारे ग्लाणी हो धर्मनी, त्यारे साहायक हो तू थाय जरूर के। भक्तोंका शंकट टाळवा, आपो आप हो तू थाय हजुर के ॥ वीर ॥ १०१ ॥ थोडो कयों घणो जाणजे, मारा सायब हो तमे चतूर सूजानके। विरुद्ध संभालो राजनो, सर्व

व्यापक हो तमे छो सावधान के ॥ वीर ॥ १०२ ॥ मारा मनमे उपनी, तेवी विनती हो करी दीन दयालके। समर्थ आगल बोलतो, ते वातनो हो होय तूरत निकाल के ॥ ॥ वीर ॥ १०३ ॥ ओशीयां मडन वीरजी, शासनपति हो श्री वीर जिनेन्द के। साधिष्ठायक प्रतिमा प्रभु, करी दर्शन हो पामू आनन्द के ॥ वीर ॥ १०४ ॥ तूज निर्वाण पच्छी प्रभु, वर्ष मीतर हो उपकेशमजार के। रत्नप्रभसूरिश्वरे, दीव्य विधिथी हो करी प्रतिष्ठा सार के ॥ वीर ॥ १०५ ॥ प्रभु तुम सवत् चौविसमो, इगतालीसमो हो ज्येष्ट मास उद्धारके। शुक्राष्टमि रविदिन भलो, विनति शतक हो स्तवन रच्यो श्रीकारके ॥ वीर ॥ १०६ ॥ सहाय करो मुज मात हा, कर करुणा हो गरीबनिवाजके। दिनोद्धारक तु मिल्यो, सेवकना हो सफला थाय काजके ॥ वीर ॥ १०७ ॥ ओशीया मडन वीरजी, जयजय हो तु श्री जिनरायके। धर्मरत्न निर्मल करो, जिम सुधरे हो सब जैन समाजके ॥ वीर ॥ १०८ ॥

॥ इति विनतिशतक स्तवन समाप्तम् ॥



ॐ

अथ श्री स्तवन संग्रह.

भाग १ लो.

॥ दुहा ॥

मंगल शासनधीसजी, मंगल गौतम स्वांम; मंगल वाणि जिनताणि, वंच्छित सिजे काम ॥१॥ सुत्र सिद्धांतमें रस घणो, म्हासु पियो न जाय; निवले भाजन किम रहे, सिंहणी दुध कहाय ॥२॥ प्राकृत संस्कृतमें, पूर्वकरी सज्झाय; अधुनातो काठिण वन्यो, वालक नहीं समझाय ॥३॥ तीर्थ ओसीयांमें गयो, भेट्या श्रीमहावीर; सफल करि निज आतमा, घाली मुक्तमें सीर ॥४॥ स्तुती नित की नवी, आणी हर्ष अपार। रसना पावन म्हारी भई, वाचो नर और नार॥५॥ इति पदम्.

(१) स्तवन पहेला—(देशीफागकि)

हां मूर्ती मोहनगारी, जब देखुं जब लागे प्यारी। हरखु मनके मांहने खूली केसर क्यारीरे ॥ मूर्ती ॥ टेर ॥ अष्ट-सहस्र लक्षण के धारी, गुण अनंत नहीं आवे पारी। वर्णन कयो नही जाय, जिभया एक हमारीरे ॥ मूर्ती ॥ १ ॥

अशोक वृक्षकी छाया भारी, भामंडलकी छवी है न्यारी। तीन छत्र शीर उपरे, चमर अधिकारीरे ॥ मूर्ती ॥ २ ॥ स्फटिक सिंहासण प्रभुजी छाजे, देव दुंदुभि नितकी बाजे। वाणी जोजन गामिणी, या घन जीउ गाजेरे ॥ मूर्ती ॥ ३ ॥ बारह प्रकारे परिषदा आवे, अमृतधारा जिन वर्षावे। सुणतो वाणी आपकी शीतलता थावेरे ॥ मूर्ती ॥ ४ ॥ केइ समकित केइ व्रत आराधे, केइ दिक्षा सिवपुरको साधे। केइ पूजा रचावे आपकी, मानव भव लावेरे ॥ मूर्ती ॥ ५ ॥ केसर चन्दन कर्पूर लावे, कस्तुरीका किच मचावे। पुष्प सुगंधि माहने, प्रभु अङ्गीया रचावेरे ॥ मूर्ती ॥ ६ ॥ केइ मुगट केइ हार मढावे, रत्नजडितका चोरखा लावे। कुंडल कटोरा हेमका, कोइ तिलक चढावेरे ॥ मूर्ती ॥ ७ ॥ अखत सोपारी श्रीफळ लावे, अत्तर अगर फुलेल चढावे। धूप दीप बहु विधी करी, मन हर्ष उमावेरे ॥ मूर्ती ॥ ८ ॥ जिन प्रतिमा जिन सारखी दाखी, रायपसेणी सूत्र साखी। वलि भगवती माहने, श्रीजिनवर भाखिरे ॥ मूर्ती ॥ ९ ॥ नरभव केरो लाहो लीजे, द्रव्यभावमे पूजा कीजे। चेत सके तो चेत, दान सुपात्र दीजेरे ॥ मूर्ती ॥ १० ॥ तीर्थ ओसीयां मनमें भायो त्रिसलादे राणीजो जायो। चाकर गयवर आपको, चरणोंमें आयोरे ॥ मूर्ती ॥ ॥ ११ ॥ इति पदम् ॥

(२) स्तवन दुजो. (देशी पूर्वकी)

हां पास मन लागे प्यारो, भक्तजनोंकुं जलदी तारो ॥ (गयवर मुनिकुं जलदी तारो) सरणो लीधो आपको । सफल जमारोरे ॥ पास० ॥ टेर ॥ वाणारसी नगरीको रायो, वामादे राणीको जायो । पार्श्व पारस सारखो, वली रूप सवायोरे ॥ पास० १ ॥ वलतो जलतो नाग वचायो, शरणो देके स्वर्ग पहुंचायो । हुवो धरणिंद्र महाराज, सहस्र फण छत्र रचायोरे ॥ पास० २ ॥ समोसरणकी रचना भारी, तीन गढकी छवि हे न्यारी । रत्न सिंहासण ऊपरे, तीर्थपद्धारीरे ॥ पास० ३ ॥ देवता आवे चार प्रकारे, नाटकका लग रह्या झणकारे । भक्ति करे अति भावसे, सुर समकित गाररे ॥ पास० ४ ॥ वादी मानी जो नर आवे, केनो पेहली समकित पावे । नहीं तो हो अपमान, किट होय पाछा जावेरे ॥ पास० ५ ॥ शान्तमुद्रा मोहनगारी, प्रभु पूजा रचावे समकित धारी । देखी छबी आपकी, खूली केसर क्यारीरे ॥ पास० ६ ॥ द्रव्य भावसे पूजा किजे, नरभव केरो लावो लिजे । राखो उज्वल भावना, जीम कारज सिजेरे ॥ पास० ७ ॥ दान शीयल तप भावना भावो, तिणसे वेगा मुक्ति सिधावो । जन्म मरण मीट जाय, फेर नहीं गर्भे आवोरे ॥ पास० ८ ॥ तीर्थ ओसीयां मुक्ति काजे, सरणे आयो गयवर गाजे । तीन लोकके मांहने प्रभु, डंका वाजेरे ॥ पास० ९ ॥ इतिपद ॥

(२) स्तवन तीजा (देशी ख्यालकी)

पूजाके माही आठ कर्म जावे तूटरे ॥ आज० ॥ टेर ॥ चैत्यवंदन स्तुति करता, ज्ञानावरणी टुटे । दर्शन करता भावे भावना, दर्शनावरणी छूटे ॥ आज० ॥ १ ॥ प्राणभूत जीव सत्वकी, करुणा घटमें लावे । अशाता वेदनी जाय मूलसे, शाताको बंध थावे ॥ आज० ॥ २ ॥ आठ कर्ममें नायक कहिजे, मोहको मोटो फंद । वीतरागकी भावो भावना, कटे कर्मको कंद ॥ आज० ॥ ३ ॥ योग अवस्था ध्यावता मरे, चारित्र मोहको नाश । ध्यावो सिद्धकी अवस्था मरे, तूटे दर्शन मोहनी खास ॥ आज० ॥ ४ ॥ परिणामोंकी लहर चडे जद, कैसा आवे भाव । आउ बंधे सुरतणो सरे, यों पूजा परभाव ॥ आज० ॥ ५ ॥ नाम लेउ प्रभु तुमतणो सरे, अशुभ कर्म जावे दूर । बंध होय शुभ नामको मरे, पामे सुख भरपुर ॥ आज० ॥ ६ ॥ वंदना करता गोत्र कर्म जो, होय नीचको नाश । उच गोत्र पदवी मिले मरे, फिर रहु तुमारे पास ॥ आज० ॥ ७ ॥ द्रव्य चढावे शक्ति फोरवे, इम तुटे अंतराय । भाग्य उदय हो जेहना सरे, प्रभुकी भक्ति कराय ॥ आज० ॥ ८ ॥ अशुभ कर्मको नाश पुजामें, शुभको बंधन थावे । द्रव्यक्रियासे भाव आवे जद, वेगो मुक्तिमें जावे ॥ आज० ॥ ॥ ९ ॥ स्वरुप हिंसा द्रव्य पूजामें, देखी चमके भोला ॥ भक्ति नको पिछाणे नाहि, बणरया भर्मका गोला ॥ आज० ॥१०॥ पाणी मासु काढे मायनी, कहो कैसि हिंसा थावे । आगा धर्म

बताया जिनवर, युं पूजामें भावे ॥ आज० ॥११॥ थोडो पाणी माछियां घेरी, कोइ करुणा दिल लावे । जाय नांखे दरियावमें सरे, पाप विना पुन थावे ॥ आज० ॥ १२ ॥ 'जे आसव्वा ते परिसव्वा,' शुभ योगे संवर होय । 'आचारांग भगवती' मांहे, पाठ काढल्यो जोय ॥ आज० ॥ १३ ॥ रावण गोत्र तीर्थकर बांध्यो, केइ श्रावक पूजा किनी । आठ कर्मकी होय निर्जरा, भगवंत आज्ञा दिनी ॥ आज० ॥ १४ ॥ दान शियल तप भावना भावो, पूजा खुब रचावो । नरभवकेरो लाहो लिजे, फेर गर्भ नही आवो ॥ आज० ॥ १५ ॥ साल बहोतर तीर्थ ओसीया, गयवरकी अरदास । वीर प्रभूसे विनती सरे, में रहुं आपके पास ॥ आज० ॥ १६ ॥

(४) स्तवन चोथो. (देशी पूर्ववत्)

दान शीयल तप भावना, पूजामें आवे ॥ टेर ॥ यत्ना सहित जिन घरमें आवे, करूणा घटमें लावे । अभयदान छकायको दे, विधिसे पूजा रचावेरे ॥ पूजा० ॥ १ ॥ अक्षतादि कोई द्रव्यज लावे, प्रभुको आण चढावे । दान सुपात्र शुभ खेत्रमें, हरख २ गुण गावेरे ॥ पूजा० ॥ २ ॥ विषयभोग इंद्रियोंतणा सरे, नही व्यापे तन लेस । शील धर्म इम नीपजे सरे, बण्यो ब्रह्मचारी वेषरे ॥ पूजा० ॥ ३ ॥ घडी महुर्त पच्चख्काण पोरसी, नियमां पूजामांह । तीजो तप इम जांणजो सरे. कर्म दग्ध हो जायरे ॥ पूजा० ॥ ४ ॥ शान्त-

मूर्ती देखने सरे, आवे अच्छा भाव । निरमल चित्तवृति हुवे म्हरे, येहीं ज मुक्ति उपायरे ॥ पूजा० ॥ ५ ॥ च्यार प्रकारे धर्म बताव्यो, सो पूजामें आयो । निंदे गेहली टाटडी मेरे, भेठ कछु नही पायोरे ॥ पूजा० ॥ ६ ॥ मैत्री करूणा मध्यस्थ भावना, चोथी छे प्रमोद । जिन पुजामें च्यारू आवे, लेवे आत्म शोधरे ॥ पूजा० ॥ ७ ॥ अनित्यादिक बारों भावना, जिन घरमाहे भावो । इण भव माहे लीला लक्ष्मी, परभव मुक्त सिधावोरे ॥ पूजा० ॥ ८ ॥ पूजा करणी जिन आनामें, लेवो सुत्र देख । गोत्र तीर्थंकर ज्ञाता माहे, बान्धे जीव विशेषरे ॥ पूजा० ॥ ९ ॥ जन्म राजने केवलीमेरे, सिद्ध अवस्था च्यार । प्रतिमा देखी मनमें भावो, पामो भवनो पाररे ॥ पूजा० १ ॥ म्हाल बहुत्तर तीर्थ ओसीया, भेट्या श्रीमहावीर । भवसागर तीरवाने गयवर, । आयो तोरी तीररे ॥ पूजा० ॥ ११ ॥

(७) स्तवन पाचमो (दशी पूर्व)

पुन्य आछा किधा, भक्ति करु छु प्रभुजी आपकी ॥ पुन० १ ॥ टेर ॥ तुज भक्ती विन काल अनतो, भम्यो चउगति माह । जो किनि तो लोक देखाउ, अतर भिज्यो नाहरे ॥ पुन० १ ॥ आ लोकअर्थी जो जश किर्ति, लोक शोभाके काज । बात कही निति थकीसरे, प्रभु राख हमारी लाजरे ॥ पुन० २ ॥ नीठे नरभव पाम्यो मेरे, प्रभु थारे सरीखा देव । मन मारो हरखे घणो सरे, आन मिलि तुज सेवरे ॥ पुन०३ ॥

तन मन धन अर्पण करे सरे, मिल्यो तुम प्रसाद । जन्म सफल मनमें गणेसरे, कटे कर्म उपाधरे ॥ पुन० ४ ॥ अष्ट प्रकार सत्तरे भेदे, नवपद पूजा सार । पंच इकीस चोसठ भेदसुं, वली नीनाणु प्रकारेरे ॥ पुन० ५ ॥ शान्ति स्नात्र अष्टोत्रीसरे, पुजा विविध प्रकार । करे करावे भावसुं सरे, धन्य तेहनो अवतारेर ॥ पुन० ६ ॥ राखो उजवल भावना सरे, नितका चढता भाव । दान शियल तप भावना भावो, येहीज मोक्ष उपायरे ॥ पुन० ७ ॥ साल बहुत्तर तीर्थ ओसीया, जेष्ट पुर्ण मास । शान्ति स्नात्र पूजा भणावे, रत्नविजयजी खासरे ॥ पुन० ६ ॥ धन्य करणी श्रावक तणीसरे, जिनभक्ति मन भावे । अनुमोदे मन मोहे गयवर, हरख २ गुण गावेरे ॥ पुन० १० ॥

(६) स्तवन छठो. (देशी पूर्व)

पुर्ण लागि छे प्रभु प्रीतडी, छूटी नही जावे ॥ पुर्णटेर ॥ दशमा स्वर्ग थकि चव आया, बहोतर वर्ष आउ पाया । भव्य जीवांका कारज सारी, शिवपुर नगर सिधायाजी ॥ छुट० १ ॥ मूर्ति सुर्ती मोहनगारी, जाणुं अबही बोले । और देव जगमांहने सरे, कोण आवे तुम तोलेजी ॥ छुट० २ ॥ प्रीत करे जो रागीयासरे, तुं छे प्रभु वीतरागी । हुं छुं रागी धर्मको सरे. दिठा क्षयोपशम जागीजी ॥ छुट० ३ ॥ मूर्त्ती मेहलमें आप विराजो, हुं छुं यह अभीलाषी । निशदिन ध्यान धरुं प्रभु थारो, आत्मा अनुभव साखी ॥ छुट० ४ ॥ पति वसे परदे-

शर्मे मरे, ज्यारी नार सवागण होय । हाजर च्यार अवस्था विचे, में प्रत्यच्च लीनी जोयजी ॥ छूट० ५ ॥ न जाणु प्रभु कामण कीधो, चित्त मेरो हर लिनो । नयण निरखता आणद आने, जाणे अमृत पिधोजी ॥ छूट० ६ ॥ काल अनंता प्रीत कर्ममे, अब आयो छे छेडो । अधम उधारण निरूद आपको, माने जलदी तेडोजी ॥ छूट० ७ ॥ ज्ञान ध्यान उद्यम नही सरे, नही कल्प क्रियाकी सार ॥ सजम व्रत पिण स्थिर नही सरे, थारा वचनारो आधारजी ॥ छुट० ८ ॥ निरधनीयाकु ध नवत करदो, सुण शासन सिरदार । गयवरचदकी एही वि नती, करदो बेडा पारजी ॥ छुट० ६ ॥ इति

(७ स्तवन सातमा (देशी पुष)

सरणे आया कि राखो लाज हो, वर्द्धमान जिनेश्वर ॥ सरणे ॥ टेर ॥ में गरीब अनाथ प्रभूजी, और न मुझ आधार। शरणो लीधो आपकोसरे, कर दो बेडा पारहो ॥ व० ॥ १ ॥ दुजा देव अनेरा जगमें, में दीठा सरागी । मूर्ति देखी आपकी सरे, ध्यान वडो वीतरागी हो ॥ व० ॥ २ ॥ चौरासीमें भटक्योसरे, कुगुरूको प्रताप । सूत्र अर्थ नही मानीयासरे, करी अछती थापहो ॥ व० ॥ ३ ॥ एक वचन उत्थापे थारो, रूले अनत ससार । चांडे धारे पाठ मरोडे, ते किम पामे पारहो ॥ व० ॥ ४ ॥ सूत्र अर्थ साची पचांगी, नय निचेप प्रमाण । स्याद्वादमें धर्म तुमारो, में निश्चय लीनो जाणहो ॥ व० ॥५॥

च्यार निक्षेपा जिनतणा सरे, सूत्रमें वन्दनीक । ठाणायंग अणुयोगद्वारमें, नही माने प्रत्यनिकहो ॥ व० ॥ ६ ॥ द्रव्य भावसे श्रावक पूजे, सूत्र लेवो देख । मूर्ख पाप बतावे जिणमें, द्रव्येलीनो भेख हो ॥ व० ॥ ७ ॥ समकित विन चारित्र नही सरे, चारित्र विना नही मोक्ष । कष्ट लोच क्रिया करी सरे, जन्म गमायो फोक हो ॥ व० ॥ ८ ॥ जिनवर वचन आराधलो सरे, मत करो माथाकूट । कोड भवांका किना पातक, छिनमें जावे छूट हो ॥ व० ॥ ९ ॥ सम्यक् ज्ञान दर्शन आराधो, चारित्रसे चित्त लावो । जिन आज्ञा प्रमाण करीने, वेगा मुक्ति सिधावो हो ॥ व० ॥ १० ॥ तीर्थ ओसीयां वीर विराजे, जहाँ मे दर्शन पाया । गयवरचंद कहे साल बहोतर, दिन २ सुख सवाया हो ॥ व० ॥ ११ ॥ इति.

(८) स्तवन आठमो.

मरू दे मईया, आदिकरण तोरा जइया ॥ टेर ॥ स्वार्थसिद्ध थकी चवि आया, वनिता नगर बसईया । नाभिराय मरू देवीनन्दन, तीन लोक पूजईया ॥ पूजईयामईया आदिकरण तोरा जईया० ॥ १ ॥ बालपणामें खेल खेलईया, इंद्र व्यवह रचइया । इंद्राणी मिलि मंगल गावे, नाचत थई थई थईया ॥ थईया० ॥ २ ॥ निती कला बताई प्रभुजी, युगल्या धर्म नसईया । च्यार सहस्र संग संजम लिनो, मुक्तिका पंथ चलईया ॥ चलईया ॥ ३ ॥ स्फटिक सिंहासण प्रभुजी सोहे,

चामर छत्र धरईया । सघला पहेली निज जननीको, शिवपुर विच पठईया ॥ पठईया० ॥ ४ ॥ मूर्ति मूर्ती मोहनगारी, नित्य २ ध्यान धरईया । गयवर शरणे आपरे प्रभु, बेडा पार लगईया ॥ लगईया मइया० ॥ ६ ॥

(९) स्तवन नवमो

मेवा दे मईया नेमकुमर तोरा जईया ॥ मेवा० ॥ टेर ॥ समुद्र विजयका नन्द कहीजे, जादव वस धरईया, खल खेलता आयुध शालामें, पचानन मच्च पुरईया ॥ पुरईया १ ॥ महस गोपीया कर मनसुबो, होरी फाग मचईया, जबरदस्तीसे कृष्ण मुरारी, राजुल ब्याह रचईया ॥ २ ॥ मन जादव मील जान लेइने, जुनेगढ धमईया, नाडा पींजरा भरीया देखी, करूणा नेम धरईया ॥ धरईया ३ ॥ पशु छूडाई गिरिवरजाई, महस पुरुष सगईया, च्यार महाव्रत दिक्षा लीनी, केवल ज्ञान जगईया ॥ जगईया ४ ॥ गीरनार मइया नेमि जिनेश्वर, पूजो भाव धरईया, गयवरचन्द भावे जिन पूजी, आत्मकाज मरईया ॥ मरईया ५ ॥ इति

(१०) स्तवन दशमा

त्रिसलादे मईया, प्यार लगत तोरा जईया ॥ टेर ॥ इन्द्रादिक मिल महोत्सव किनो, इन्द्राणी नृत्य करईया । तीन लोकमें भयो उजालो, वृद्धिकरण तोरा जईया ॥ जईया० १ ॥ मस्तक मुगट कानामें कुंडल, तिलक लिलाड लगईया । नांय चेरगा रत्न जडतका, खेलत तोरा जईया ॥ जईया० २ ॥

रमजम २ नेवरेयां वाजे, ठम २ पॉव धरईया। तीन लोकमें रूप अनोपम, निरखत नयन ठरइया ॥ठरईया० ३॥ दीक्षा लेने तपस्या किनी, केवल ज्ञान जगईया। कारज सारे मोक्ष पधारे, आत्म राम रमईया ॥ रमईया० ४ ॥ मूर्ती सूरती मोहनगारी, ध्यावत् ध्यान धरईया। गयवरचंदकी एही विनती, मोकू ही पार लगईया ॥ लगईया० ५ ॥

(११) स्तवन इग्यारमो. (देशी असवारीकी)

वीर तोरा दर्शनको में आयो, नाथ तोरा दर्शनको में आयो, हे देख छवि हुलसायो ॥ नाथ० ॥ टेर ॥ शांत मुद्रा-मोहनी मूर्ती, दिव्य २ तेज सवायो। दर्शन कोई पुन्यवंत पावे, में जन्म सफल मनायो ॥ नाथ० १ ॥ मस्तक मुगट रत्न जडतको, कानोंमें कुंडल सोहे। बांह बाजूबंद बेरखा भारी, सुरनरका मन मोहे ॥ नाथ० २ ॥ हेम कडा जडाउ भारी, तो पुणचीकी छवी न्यारी। मोत्यांको हार कंठ विराजित, आ अद्भूत रचना थारी ॥ नाथ० ३ ॥ कंचन वरणी काया थारी, अंगीया रचाव भारी। नयन रह्या लोभाय प्रभुजी, हृदये हरख अपारी ॥ नाथ० ४ ॥ भक्ति करे प्रभु भावसे थारी, पूजा विविध प्रकारी। दूर देशका आवे जात्रु, वंदे छे नर नारी ॥ नाथ० ५ ॥ पतीव्रता जो होवे नारी, जीवत और न चावे। मेरे तो तुं जवर धणी है, और नहीं मन भावे ॥ नाथ० ६ ॥ तुं चिंतामणी कल्पवृक्ष है, चित्रावेल वखाणुं। कामधेनु कामकुम्भ समा, रसायन मोक्षकी जाणूं ॥ नाथ० ७ ॥ साल व-

होत्तर नवमी जेठकी, शुक्र सोम जुहारो । जन्म सफल जिण प्राणी भेट्यो, ओसीया तीर्थ थारो ॥ नाथ० ८ ॥ जो भवि-प्राणी आराधे प्रतिमा, सो जिनवरने आराधा । गयवर कहे ते कर्मोथी छुट्यो, आत्मकारज साधा ॥ नाथ० ९ ॥

(१२) स्तवन बारमो (देशी थीणजागती)

नय सात उतारु मारी, जिन बिंबकी जाऊ बलीहारी ॥ टेर ॥ नैगम नय मन्दिर आयो, जिन बिंब देख उलसायोजी । प्रणाम करु चित्तधारी ॥ जिन० १ ॥ संग्रह नय चित्त संभारी, अरिहतका गुण भारिजी । प्रभु अद्‌भूत् रचना थारी ॥ जिन० २ ॥ व्यवहारे वंदना कीधी, साधन भावार्थ सिधीजी । लौकिक व्यवहार मजारी ॥ जिन० ३ ॥ परिणाम ऋजु सूत्र लीनो, जिण चित्त एकाग्र किनोजी । जिन भक्ति के लागो लारी ॥ जिन० ४ ॥ शब्द संपूर्ण जाणे, अरिहतका गुण पिछाणेजी । मिली निमित्त कारण एक तारी ॥ जिन० ५ ॥ समभिरूढ छठो जाणो, चेतनता वीर्य पीछाणेजी । शुद्ध आत्मा आप विचारी ॥ जिन० ६ ॥ शुद्ध नय सातमी जाहारी, प्रगटी चेतनता भारीजी । मिली शुक्ल ध्यानकी सारी ॥ जिन० ७ ॥ इम सात नय वखाणी, जिन सारखी सूत्रमें आणीजी । नित वंदे नर और नारी ॥ जिन० ८ ॥ जिन बिंब देखी हुलसायो, जाणे अमृत प्यालो पायोजी । मारी प्रीत लगी एक तारी ॥ जिन० ९ ॥ सरागीमें मोहनी जागे,

वीतरागीसे तृष्णात्यागेजी । भये निर्मल ध्यानके धारी ॥ जिन० १० ॥ शासनपति वीर विराजे, थारो सेवक उभो गाजेजी । प्रभु पुरो आस हमारी ॥ जिन० ११ ॥ उगणीस वहोत्तर सारी, ओसीयां तीर्थ मजारीजी । गयवर जिन आतम तारी ॥ जिन० १२ ॥ इति ॥

(१३) स्तवन तेरमो. (देशी पूर्व०)

आज दर्श में पायो, प्रभु शरण तुमारे आयो (टेर०) राय सिद्धार्थ भारी, ज्योंरे त्रिसला देवी नारीजी । जिण अनोपम नन्दन जायो ॥ प्रभु० १ ॥ इंद्रादिक महोत्सव किनो, महा वीर नाम तव दीनोजी, इंद्राणी मिल मंगल गायो ॥ प्रभु० २॥ भोग छोडी दीक्षा लिनी, प्रभू करणी अधिकी किनीजी । जरा मरणको रोग मिटायो ॥ प्रभु० ३॥ भव भव मांहे में भटक्यो, तुम वीन कारज मोय अटक्योजी । शुद्ध मार्ग नहीं पायो ॥ प्रभु० ४ ॥ आशातना करी प्रभु थारी, उत्सूत्र बोल्या भारीजी । मेंतो पापे पिंड भरायो ॥ प्रभु० ५ ॥ बिम्ब ध्यान मय दिठो लागे, अमृतसे अति मिठोजी । दर्शनसे आनन्द आयो ॥ प्रभु० ६ ॥ आलोचन प्रभु आगे, म्हारी अनुभव क्षयोपशम जागेजी । मिथ्या मोह दूर हठायो ॥ प्रभु० ७ ॥ जिन सारखो बिंब दाखव्यो, बीजे उपांगे भाख्योजी । भगवतीमें आप बतायो ॥ प्रभु० ८ ॥ शासनाधीशको लीयो सरणो, मांने भवसागरसे तिरणोजी । चाकर चरणोंमें आयो ॥ प्रभु० ९ ॥

मरुस्थल ओसीया मन भाया, रत्नप्रभ सूरीश्वर आयाजी। ओसवाल वंश थपायो ॥ प्रभु० १० ॥ पुरुष कला साल सुखदाइ, गयवरचंद हरखे गाइजी। मैं मंगलीक आज मनायो ॥ प्रभु० ११ ॥ इति ॥

(१४) स्तवन चौदमा (दर्गी चौकरी)

अहो सर्वगुणी वर्धमान, महाराज काज मोय मारो। या अर्ज सुणी जगतपति, जिनराज मनो दधि तारो। टेर ॥ क्षत्रीकुंड नगर भारी, सिद्धार्थ राजा जहांरी। रत्नकुखं त्रिसला नारीजिण, नन्दन जायो सुखकारी ॥ अहो० १ ॥ मोछन करवा सुर आया, दिशि कुमारी मंगल गाया। सुमेरगिरि पर ले जाया,–प्रभु चोसठ इंद्र हरषाया ॥ अहो० २ ॥ इंद्राणी अपछर आवे, माता त्रिसला हुलरावे। देख नन्दन अति सुख पावे,–वर्द्धमान नाम तब धरावे ॥ अहो० ३ ॥ सर्व अंग अलंकृत करे, रमक जमक प्रभु आंगण फिरे। ठमक २ प्रभु पांव धरे,–ज्यारी जननी देखी हरख भरे ॥ अहो० ४ ॥ तीस वर्ष ग्रहवास गमे, लोकांतिक सुर आवी नमे। वर्षीदान दियो तिणसमे,–प्रभु दीक्षा लेइ तपस्यामें रमे ॥ अहो० ५ ॥ कर्म काट केवल पाया, इंद्र मोछवने आया। समोसरण सुर रचाया,–प्रभु श्रोताने अमृत पायो ॥ अहो० ६ ॥ प्रभु में दुख पायो अति भारी, कहता किम आवे पारि। लारे लागी कुमती नारी,–प्रभु अर्ज करूं निति थारी ॥ अहो० ७ ॥ नरक नीगोदमें हुं भमियो, नानाविध त्यां दु:ख खमीयो, निज आत्माकु

नहीं दमीयां,-प्रभु काल अनंतो इम गमीयो ॥ अहो० ८ ॥ मैं कुगुरु कुदेवा संगे राच्यो, मिथ्या मन मोहमें माच्यो । जद में कर्मों संग नाच्यो,-तुम सरीखो धणी में नहीं जाच्यो ॥ अहो० ९ ॥ हो पुद्गल सुखमें अभिलाषी, विधिपूर्वक समकित नहीं चाखी । लही तद्यपी यत्ना नहीं राखी,-सांप्रतनो हे प्रभु तुं साखी ॥ अहो० १० ॥ शुद्ध मनसे प्रभु तुम नाम रटे, छिनमें पुराकृत पाप कटे । शिवनगरी होवे अद्य पटे, तिया काल अरीनो काउ न वटे ॥ अहो० ११ ॥ चंद चकोर न चित्त धसीयो, पुष्पअलीके मन वसीयो । मयूरमग्न घनको रसीयो, इणविध प्रभु तुं मेरे दिल वसीयो ॥ अहो० १२ ॥ मूर्ती प्रभु मोहनगारी, सुरती अति लागे प्यारी । नीरखत नयण दिया ठारी,-मैं वार २ जाउं वलीहारी ॥ अहो० १३ ॥ जो शुभ नजर साहब तेरी, तो मानो वीनती मेरी । काटो भर्म कर्म वैरी,-प्रभु पुनरपि नहीं पडे भव फेरी ॥ अहो० १४ ॥ वीर तीर्थ ओसीयां ठाइ, साल बहोत्तर सुखदाई । गयवरचंद वीनती गाई, प्रभु भाग उदय संपत्ति पाई ॥ अहो० १५ ॥ इति

(१५) स्तवन पन्नरमो. (देशी नागजीरी)

नाथजी टुक एक नयन निहालरे, कांई शरणे आयो साहब हो ना० ॥ १ ॥ ना० सेवकनी अरदासरे कोई, अर्जी पे हुकम लगायदो हो ना० ॥ २ ॥ ना० मस्तक मुगट जडाचेरे कांई, काने कुंडल जल हले हो ना० ॥ ३ ॥ ना० गले

मोतीयनकी मालरे काई, नीचमें लालो शोभतिहो ना० ॥४॥ ना० बाजूबंद सोहे बाहरे काई, नीचे सोहे बहरकाहो ना० ॥ ५ ॥ ना० कडा सोहे दोय हाथरे काई, पुणची रत्न जडाचकीहो ना० ॥ ६ ॥ ना० मुदडीया कर माहरे कांई, कदोग कम्मर विचेहो ना० ॥ ७ ॥ ना० आगी रत्न जडावरे काई, नयन लोभाया निरखताहो ना० ॥ ८ ॥ ना० फूला हदो गेंदरे कांई, शोभे हिवडा माहनेहो ना० ॥ ९ ॥ ना० केसर चदन कपुररे काई, कस्तुरी किच मचावीयाहो ना० ॥ १० ॥ ना० अत्तर अबीर फूलेलरे काई, पूष्प सुगधी आपरेहा ना० ॥ ११ ॥ ना० धूपदीपादिक जाणरे काई, भक्त भक्ति करे भावसु हो ना० ॥ १२ ॥ ना० जननी जायो एकरे काई, दुजी माता नही भरतमेंहो ना० ॥ १३ ॥ ना० और घणाई देवरे कांई, घात कहु देखी जीमीहो ना० ॥ १४ ॥ ना० कोई हाथ हथीयाररे काई, धनुषबाण लिया खडा हो ना० ॥१५॥ ना० कोई हाथ तलवाररे काई, देख्या कपे कालजो हो ना० ॥ १६ ॥ ना० केई त्रिशूल भाला हाथरे काई, कामचेष्टा कर रयाहो ना० ॥ १७ ॥ ना० केईक जपनी हाथरे, कांई स्मरण करे कोई औरकोहो ना० ॥ १८ ॥ ना० हासीवाली बातरे काई, योनिमें लिंग थापियो हो ना० ॥ १९ ॥ ना० कोइ मांगे बली ने भोगरे कांइ, पचइद्रीना घातीया हो ना०॥२०॥ ना० कहेता न आवे पाररे काई, राग द्वेषमें पचरयाहो ना०

॥ २१ ॥ ना० में देख्या वीतरागरे कोई, शरणो लीधो ता-थरोहो ना० ॥ २२ ॥ ना० वीजे तीजे उपांगरे कांई, जिन-प्रतीमा जिन सारखीहो ना० ॥ २३ ॥ ना० छोडी प्रतीमा सेवरे कांई, अन्य देव ध्यावत फिरेहो ना० ॥ २४ ॥ ना० में गरीब अनाथरे कांई, तुम शरणा वीन भटकीयोहो ना०॥२५॥ ना० अंतराय करी दुररे कांई, चरण तुमारा भेव्याहो ना० ॥ २६ ॥ ना० साल वहोतर मांहरे कांई, तीर्थ ओसीयां आ-यनेहो ना० ॥ २७ ॥ ना० आवागमन मिटायरे कांई, गय-वरचंदने तारजोहो नाथजी० ॥ २८ ॥

(१६) स्तवन सोलमो. (देशी पनजीरी)

मासुं मुंढे बोल २ आदेश्वरवाला । कांई थारी मरजी-रे ॥ मासुं० ॥ टेर ॥ मातामरुदेवी वाट जोवतां, इत्तने वधाई आईरे । आज ऋषभजी उतरया वागमें, सुण हरखाई ॥ मा० १ ॥ नाय धोयने गज असवारी, करी मरुदेवी मातारे । जाय वागमें नन्दन निरखी, पाई सातारे ॥ मा० २ ॥ राज छोडने निकल्यो रीखवा, आ लीला अदभुतीरे । चमर छत्र ने ओर सिंहासण, मोहनी मूर्तीरे ॥ मा० ३ ॥ दिनभर वेठी वाट जो-वती, कद मारो रिखवो आवेरे । केहती भरतने आदिनाथकी, खवरां लावोरे ॥ मा० ४ ॥ किसी देशमें गयो वालेश्वर, तुज वीना वनिता सूनिरे । वात कहो दिल खोल लालजी. केउ वनीया मुनीरे ॥ मा० ५ ॥ म्हा मजेमें हे सूखसाता, खुब

कीधा दिल चाहिरे । अमतो बोल आदेश्वर मासु, कल्पे कायारे ॥ मा० ६ ॥ खेर हुई सो होगइ वाला, वात भली नही किनिरे । गयां पछे कागद नही दिनो, मारी खबर न लीनीरे ॥ मा० ७॥ ओलभा मै देउ कहांलग, पाछो क्यों नही बोलेरे। दुख जननीको देख आदेसर, हिवडे तोलेरे ॥ मा० ८ ॥ अनीत्य भावना भाइ माता, निज आतमनें तारीरे । केवलपामी मोक्ष सिधाया, ज्याने वदना हमारीरे ॥ मा० ९ ॥ मुक्तीका दर्वोजा खोल्या, मरू देवी मातारे । काल असख्या रह्या उघाडा, जबू जड गया जातारे ॥ मां० १० ॥ साल बहोत्तर तीर्थ ओसीया, गयवर प्रभु गुण गायारे । मूर्तीमोहन प्रथम जिनन्दकी, प्रणम्र पायारे ॥ मां० ११ ॥ इति पदम् ॥

(१७) स्तवन सत्तरमो

जिन वाणी इसिरे २ निसदिन मेरे दिलमें वसि ॥ जिन० टेर ॥ न आदि अनादि जिनवर वाण, अर्द्ध मागधी मूलपेच्छाण ॥ जि० १ ॥ जो जो तीर्थ थापे जिनद, वाणी फरमावे परमानद ॥ जि० २ ॥ दीक्षा लेइ उपनो केवलज्ञान, चर्म तीर्थंकर श्रीवर्धमान ॥ जि० ३ ॥ अर्थ रुपी, भाषे भगवान, द्वादश अग रचे गणधर ज्ञान ॥ जि० ४ ॥ सूत्र थोडो ने आसा घणी, केइक समजे बुद्धिका धणी ॥ जि० ५॥ स्याद्वादनय निक्षेपा जाण, वस्तुमें दाख्या च्यार प्रमाण ॥ जि०

६ ॥ कारण कारज द्रव्यादि चार, कर्ता कर्म क्रिया लो धार ॥ जि० ७ ॥ उपनेवा विगेवा धुवेवा जाण, हियगय उपदेय तीनों पीछान ॥ जि० ८ ॥ द्रव्याणु गिणतांणु कथाणुयोग, चोथो चरणाणुं जाणे लोग ॥ जि० ९ ॥ कठण सूत्र जाण्या पूर्वधार, घणा आचारज किया उपगार ॥ जि० १० ॥ टीका निर्युक्ति चुर्णी जाण, भाष्य दीपिका अवचूरी वखाण ॥ जि० ११ ॥ लिंग काल विभक्ति प्रमाण, दशमे अंग सोला बोलों-कों जाण ॥ जि० १२ ॥ इत्यादिक जो सूत्र वाण, आराधिक पद तवही जाण ॥ जि० १३ ॥ अणपढ सूत्र भणे अरे, अर्थ-तणा अनर्थ करे ॥ जि० १४ ॥ गुरूगम विन सूत्र भणे कोय, निशिथमें चोमासी प्रायछित होय ॥ जि० १५ ॥ इंद्रादिक केइ आवे राय, सूण वाणी अति हरषीत थाय ॥ जि० १६ ॥ क्रोध मान मद लोभकी जाल, सुणतां शितल होवे ततकाल ॥ जि० १७ ॥ एहीज मंत्र तंत्र जाण, भूत पिशाच वसीकरण व्याख्यान ॥ जि० १८ ॥ वाणी सूणतां जीव अनेक, भवसा-गर तिर गया लो देख ॥ जि० १९ ॥ नंदिसूत्र मांहे अधिका-र, अनन्त जीव आराधिक पाम्या पार ॥ जि० २० ॥ नम-स्कार कीयो गणधार, भगवती सूत्र आदि मझार ॥ जि० २१ ॥ जिन वचनारी राखो प्रतित, अष्टसिद्धि नवनिद्धि नित ॥ जि० २२ ॥ लिखावो छपावो भंडार करो, ज्ञानावरणी तुटे परोरे ॥ जि० २३ ॥ वहु मान देइने पूजा करो, संसार

मभुद्र नेगा तिरोरे ॥ जि० २४ ॥ मारे तो एक एहिज आधा र, गयवर वदे वारवार ॥ जि० २५ ॥

(१८) स्तवन अढारमो

तुमारे कदमका शरणा, मूजे भी याद तो करणा ॥ टेर ॥ भटकायो चोरासी माही, वात कहू कठा ताही । भेटिया अव तोय चरणा ॥ तु० १ ॥ सेवक हु आपका वदा, मिटा दो चोरासी फदा । जरा शुभ नजर तो करणा ॥ तु० २ ॥ तेरे बहु सेवक हे सेवा, मेरे तु एक हे देवा । अरज पे ध्यान तो धरणा ॥ तु० ३ ॥ अवगुण वह बोलिया थारा, उन्हीको छिनकर्म तारा । रागीपर देर क्यों करणा ॥ तु० ४॥ ध्यानमें चिंवतो दिठो, लागे अमृतसे मिठो । हिया मेरा आज ठरजाणा ॥ तु० ५ ॥ उभो था कर रयो अरजी, में हुं एक मोचका गरजी । गौर अव अर्जपे करणा ॥ तु० ६ ॥ मेरे नहीं आसरो दुजो, गयवर कहे भावसे पुजो । जीन्हींसे जलदी हो तिरणा ॥ तु० ७ ॥

(१९) स्तवन उगणिसमो

रखो वीरतणो आधार, जिनसे उतरोगे भवपार ॥ रखो० टेर ॥ जिनवर वाणी अमिय समाणि, भवजल तारण हार । न्यार निक्षेप जिनवर वदो, सुणो सूत्रका सार ॥ रखो० १ ॥ ठाणायग के चोथे ठाणे, सत्य निक्षेपा च्यार । विशेष पाठ सूत्रको देखो, अणुयोगद्वार मजार ॥ रखो० २ ॥ नाम

लियो कोई महावीरको, नाम निक्षेपो सार । अक्षर प्रतिमा थापि वीरकी, थापना निक्षेपो विचार ॥ रखो० ३ ॥ गोत्र तीर्थंकर बांध्यो जिण दिनसे, नही हुवे केवल के धार । जबतक द्रव्य निक्षेपो वंदो, आणी हरख अपार ॥ रखो० ४ ॥ चोंतीस अतीशय पैंतीस वाणी, थापे तीर्थ चार । भाव निक्षेपे केवलज्ञानी, भवजल तारणहार ॥ रखो० ५ ॥ नाम भाव तो सबही मांने, नही इसमें तकरार । द्रव्य स्थापना कहुं सूत्रसें, हृदये करो विचार ॥ रखो० ६ ॥ गणधर मुनिवर स्थापना वंदि, भगवती सूत्र मजार । द्रव्य भावसे श्रावक पूजे, ओ समकितको सार ॥ रखो० ७ ॥ अजितादिक तेवीस तीर्थंकर, वंदे पहिला गणधार । अनन्त चोविसी सिद्ध हूवे सब, द्रव्यनिक्षेप विचार ॥ रखो० ८ ॥ ठाम २ मूत्रके मांहि, प्रतिमाको अधिकार । एक बोल उत्थापण सारू, सहस्र करे नवा तयार ॥ रखो० ९ ॥ अंतरायको दूरी कर दो, बनो प्रतिमा पूजणहार । तीर्थ ओसीयां वीर भेटवा, हृदये हर्ष अपार ॥ रखो० ॥ १० ॥ जेष्ट शुक्र सोम नवमी, बहुतर साल मजार । गयवर कहे शुद्ध समकित धारो, जिम पामो भवपार ॥ रखो० ॥ ११ ॥

(२०) स्तवन वीसमो. (देशी जलारी)

वीर मारो वाल हो, मूक्तिमें माले होराज । वीर मारो साहवो ओसीयांमें माले हो ॥ टेक ॥ प्रत्यक्ष प्रभु दीठा नही जी, जो दीठा नही याद, मूर्ती देखी ताहरि प्रभु, मन उपनो

आल्हाद ॥ वीर० १ ॥ वार २ करू विनती, प्रभु एक वार तो बोल । हु गरीब अनाथ छु, प्रभु अतरपट दो खोल ॥ वीर० २ ॥ बालक आडो लें मायसु , प्रभु जीउ मे तेरे पास । हुस लगी मिलवातणी प्रभु, सफल करो मारी आस ॥ वीर० ३ ॥ पतीव्रता ससारमें प्रभु, दुजो न वंछे यार । मारे एक तुंहिज धणी, प्रभु जीवनप्राण आधार ॥ वीर० ४ ॥ मोहनी मूर्ती देखीने प्रभु, कल्पु अवस्था च्यार । जन्म राजने केवली प्रभु, सिद्ध वडा सिरदार ॥ वीर० ५ ॥ पखाल करावे प्रेमसु, प्रभु जन्म अवस्था जाण । आभरण पुष्प चडावता प्रभु, राज अवस्था मन आण ॥ वीर० ६ ॥ ध्यान सामी दृष्टि करू, जद केवल आवे याद । गुण स्मरू मन मांहने, जद सिद्ध अवस्था साध ॥ वीर० ७ ॥ इम कर निश्चये जाणियो प्रभु, तारक तु वर्द्धमान, शरणे आयो साहवा, अव तारो २ भगवान् ॥ वीर० ८ ॥ आशा राखु मन मांहने प्रभु, निश्चय तारसी वीर । केई पापीने उद्धरीया प्रभु, में रागी तुज तीर ॥ वीर० ९ ॥ भाव पूजा गणधर करे, प्रभु श्रावक द्रव्ये भाव । तूज आग्या शिरपर धरे, प्रभु येहीज मोक्ष उपाय ॥ वीर० ॥ १० ॥

(२१) स्तवन इकवीसमो (देशी अनोकाभवँर)

सुण २ साहवा हो प्रभुजी, सेवककी अरदास (टेक) सिद्धार्थ कुल उपनाहो प्रभुजी, त्रिसलादेवी माय । इन्द्रादिक

महोत्सव कियो हो प्रभुजी, महावीर नाम धरायके ॥ सु० १॥ तीस वर्ष घरमें रह्या हो प्रभुजी, लीनो संजम भार । छदमस्तपणे तपस्या करी हो प्रभुजी, हुवा केवलका धारके ॥ सु० २ ॥ समोसरण देवा रच्यो हो प्रभुजी, वर्णन कियो न जाय। अमृतधारा देशना हो प्रभुजी, श्रोता रह्या लोभायके ॥ सु० ३ ॥ एकवीश सहस्र वर्ष लगे हो प्रभुजी, भगवतीमें जोय । शासन थारो चालसीहो प्रभुजी, एक आश्रय छे मोय ॥ सु० ४ ॥ कोइ आगम माने नहीं हो प्रभुजी, केइ वर्त्ते इच्छाचार। कोइ पाप कहे दया दानमें हो प्रभुजी, कोइ प्रतिमा उथापणहार ॥ सु० ५॥ कोइ वाजे साधु नामका हो प्रभुजी, टोले टोले भेद । क्रियाथी शीथिल हुवा हो प्र०, कर रह्या खेदाखेद ॥ सु० ६ ॥ नहीं अवधि नही केवली हो प्रभुजी, नहि पूर्वके धार। मनःपर्यव ज्ञानी नही हो प्रभुजी कोण निकाले तार ॥ सु० ७ ॥ लब्धि पीण म्हारे नहीं हो प्रभुजी, जाउं विदेह मजार। परचो नहीं कोइ देवरो हो प्रभुजी, किम मेलुं समाचार ॥ सु० ८ ॥ सूत्र पुरा नही रह्या हो प्रभुजी, रह्या में खांचाताण । पेढी जमावे आपरी हो प्रभुजी, नही माने तुझ आण ॥ सु० ९ ॥ छीन्न भिन्न शासन हुवो हो प्रभुजी, वध्यो घणो मिथ्यात । जाय पूकारुं किण कने हो प्रभुजी, कोण सुणे मारी वात ॥ सु० १० ॥ हुं अधन्य अभागीयो हो प्रभुजी, उपनो भरत मझार । दुखमी आरो पंचमो हो प्रभुजी, कहो कहेनो

आधार ॥ सु० ११ ॥ मुख्यतामें ये कह्याहो प्रभुजी, गौणता में गुणवान । शासन तेहने उपरहो प्रभुजी, मे किनो अनुमान ॥ सु० १२ ॥ दुखमा आरा माहनेहो प्रभुजी, एक आधार छे मोय । केइ प्रतिबोध ज पामसीहो प्रभुजी, सत्र प्रतिमा जोय ॥ सु० १३ ॥ शासनकी उन्नति करे हो प्रभुजी, तिणसमो नही उच्च । निंदा करावे धर्मकि हो प्रभुजी, जिण समो नही निच्च ॥ सु० १४ ॥ हु छु पामर जीवडोहो प्रभुजी, तु शासन सिरदार । अर्जीपे हूकम लगायदो हो प्रभुजी, ग्र थारो विरुद्ध विचार ॥ सु० १५ ॥ ध्यान धरु छु ताहरु हो प्रभुजी, प्रतिमा सामें वेठ । तु साहब त्रीभुवन धणीहो प्रभुजी, या अर्ज करी में भेट ॥ सु० १६ ॥ बालक आडो ले मायसुहो प्रभुजी, मा-बाप करे छे सार । आस हमारी पुरसोहो प्रभुजी, में निश्चय लिनो धार ॥ सु० १७ ॥ समदृष्टि कोइ सुर हुवे हो देवा, शासनको रखवाल । तिण सेति पीण विनतीहो देवा, चेतो २ इण काल ॥ सु० १८ ॥ द्रव्य भाव पुजा करेहो प्रभुजी, श्रावकनो आचार । साधु पूजे भावसे हो प्रभुजी, नित्य आणी हरख अपार ॥ सु० १९ ॥ चार निक्षेपा वदसु हो प्रभुजी, घणा सुत्रकि साख । जिन प्रतिमा जिन सारखी हो प्रभुजी, श्रीमुखसे दीनी भाख ॥ सु० २० ॥ गयवरचंदकी विनती हो प्रभुजी, तीर्थ ओसीया आण । जेष्ट शुक्ल एकादशी हो प्रभुजी, साल बहोंचर जाण ॥ सु० २१ ॥

(२२) स्तवन बावीशमो.

जिणंद थारो आसरो हमे लीधोरे, मैंतो अमृत प्यालो पीधो । (मैंतो जाउं मोक्षमें सिधो) ॥ जिणन्द० टेर ॥ विरूद सुणो प्रभु मारीरे, अधम उद्धारण हारीरे । तेथी सेवामें आयो छुं थारी ॥ जिन० १ ॥ बिंब देखिने सुख पायोरे, मारे हृदये हर्ष नही मायोरे । थारो स्वरूप यादमें आयो ॥ जिन० २ ॥ तुं अनंतगुणको धारीरे, गीणतां नही आवे पारीरे । प्रभु आसा पुरो हमारी ॥ जि० ३ ॥ प्रभु और नही आधारोरे, तारे सो तारणहारोरे । जिणथी में लागो छुं लारो ॥ जि० ४ ॥ जमालि गोशालादिकोरे, अवगुण बोल्या प्रत्यक्षोरे । जिणने दियो मोक्षको सिक्को ॥ जि० ५ ॥ तुज गाया लारे गाउंरे, थारी आणा माथे चडाउंरे । फेर किउ नही मोक्ष में जाउं ॥ जि० ६ ॥ नरभवको लावो लिजेरे, द्रव्य भावसुं जिन पूजिजेरे । कर्मोंको दावानल दिजे ॥ जि० ७ ॥ दान शीयल तप भावोरे, एहीज मोक्ष उपावोरे । नित्य अरिहंतका गुण गावो ॥ जि० ८ ॥ तीर्थ ओसीया भारीरे, दर्शनकुं आवे नरनारीरे । गयवर कहे विनती हे मारी ॥ जि० ९ ॥ इतिपदम् ॥

(२३) स्तवन तेवीसमो. (गौतम पचीसी)

श्रीगौतम गणधर वंदिये, लब्धितणा भंडार ॥ गौतम टेर० ॥ मगध देशके माहने, गुब्बर नाम हे गाम । पृथ्वी माता आपकी, पिता वसुभूती नाम ॥ गौ० १ ॥ इंद्रभुती नाम

आपरो, गौतम गोत्री जाण । अग्नीभूती वाउभूती, लघुवन्धव पिछाण ॥ गौ० २ ॥ मध पापा नगरी भली, सोमल नामा माहण । यज्ञ करावण तेडीया, मिलिया इग्यारे आण ॥ गौ० ३ ॥ तिण पाडारे टुकडे, महासैन नामा उद्यान । वैशाख सुदी एकादशी, समोसर्या वर्धमान ॥ गौ० ४ ॥ चार प्र कारे देवता, केई विद्याधर जाण । नगर लोक बहु गुण करे, गौतम साभली वाण ॥ गौ० ५ ॥ ओ कुण्रे इद्र जालियो, मांसु अधिको फेर । कर आडवर शिष्यने, लिधा पांचसो लेर ॥ गौ० ६ ॥ ठीचो उभो आयने, भाषे जिनवर एम । जीव छे किंवा नहीं, गौतम शका छे तेम ॥ गौ० ७ ॥ शसय मेटी दीक्षा दिनी, पचसो परिवार । त्रीपदी तिण ममे रची, द्वादश अंगी सार ॥ गौ० ८॥ गोरीने घणा फुटरा, भगवती में वात । घोर तपसीमें गुण घणा, वीर धरीयो माथे हाथ ॥ गौ० ९॥ छत्तीस महस्र प्रश्न किया, सूत्र भगवती मजार । वजीर वाज्या श्रीवीरना, सत साधूना सिरदार ॥ गौ० १० ॥ हाथतणा दीक्षितने, उपनो केवलग्नान । गौतम मन चिंता थई, जाय वधा भगवान ॥ गौ० ११ ॥ देव वाणी आकाशमें, तीर्थ अ-ष्टापद सोय । भूचर लब्धिसे वांदता, चर्म शरीरी होय ॥ गौ० १२ ॥ आज्ञा मागी श्रीवीरसे, श्रीजिन दिनी फरमाय । तीर्थ-यात्रा जो करे, जन्म सफल होजाय ॥ गौ० १३ ॥ सूर्यकीरण अवलबने, अष्टापद जाइ वद । तापस देखी आश्चर्य थया,

गोतम गुणको कंद ॥ गौ० १४ ॥ अष्टापद कि यातरा, गौतम करी हुलास । चैत्य वंद्या वीतरागना, उत्तराध्ययन खुलास ॥ गौ० १५ ॥ पाछा वलता प्रतीबोधिया, तापस पनरेसो तीन । अष्टम छठ चोथ तप, जूदी मेखला तीन ॥ गौ० १६ ॥ गौतम पडिगामें लावीया, जाणे अमृत खीर । अंजण करसि के देशी टिकिया, तापस मन दिलगीर ॥ गौ० १७ ॥ धरीयो अंगुठो पडिगा विषे, गौतम लब्धि भंडार । पन्नरासे तीनने पारणो, करायो तिणवार ॥ गौ० १८ ॥ पेहला समोसरण देखने, दुजा समोसरण मान । तीजा प्रभुने देखने, उपनो केवलज्ञान ॥ गौ० १९ ॥ बेठा केवली परषदा, गौतम मन उदास । भगवती में भाख्यो, आगे गणो समास ॥ गौ० २० ॥ घणा भव भेला किया, लोक बडाइनी रीत । तुला होसे इण भवथकी, गौतम मन प्रतीत ॥ गौ० २१ ॥ मोक्ष पधार्या वीरजी, गौतम केवलज्ञान । बारह वर्ष लगे विचर्या, पहूंता पद निर्वाण ॥ गौ० २२ ॥ नामे नवनिध संपजे, पूज्या जावे दुःख । एक चित करने ध्यावतां, पामे मोक्षना सुख ॥ गौ० २३ ॥ गौ–कामधेनु त–तरु, म–मणि रत्न जाण । अर्थ अक्षर तीनु तणो, चतुरा लिजो पिछाण ॥ गौ० २४ ॥ जन्म सफल मानुं सदा, लेउ गौतम नाम । वारंवार करुं वीनती, देवो अविचल ठाम ॥ गौ० २५ ॥ कलस–इम गुण गाया, सुख पाया, हरख हियडे अती घणो । वसुभूती नन्दन जगत वंदन, गौतम नाम नित २ भणो ॥ साल बहोतर तीर्थ ओ-

मीया, जेष्ट शुक्र एकादशी । दर्शन पायो गयवर गायो प्रभु मूर्ती मुज हृदये वसी ॥ १ ॥

(२४) स्तवन चोवीसमा

अनुभवीने एकलो । आनन्दमें रेवुरे । करवु प्रभुनु भजन । बीजु कइ न केवुरे ॥ अनु० ॥ १ ॥ सिद्ध बुद्ध चिदानन्द । शुद्ध कुदन जेवुरे । निजानन्द स्वरूप रमणे । परमहंस रहेवुरे ॥ अनु० २ ॥ मुगानु सुपना भया । मनमें समजी लेवुरे । कोइने कहेवानु नहीं । मस्तानन्द रेहेवुरे ॥ अनु० ३॥ ससारी जीव पामर प्राणी । भला भुंडा न कहेवुरे । कहेवु सुनवु वृथा जाणी । मौन व्रत लेवुरे ॥ अनु० ४॥ आशा पास तोटी फोडी । मस्त फकिरी रहेवुरे । रकना रतन जेम । जतन करी लेवुरे ॥ अनु० ५ ॥ भूत भविष्य भुली जाइ, वर्तमाने रहेवुरे । धर्मरत्न आपो आप । तुही तुही कहेवुरे ॥ अनु० ६॥

(२५) स्तवन (राग प्रभाती)

कोन सुने मेरी बात, में कहुं कीस आगे । दुःखकी वातें याद करु जब, दुःख ही दुःख जागे ॥ कोन० १ ॥ दुःख ही में दिन गये, दुःख ही में जावे । दुःख ही के कारण मीलया, चेतन दुःख पावे ॥ को० २ ॥ कीयासो दुःख करे सो दुःख, दुःख उदय आवे । सुनेसो दुःखी कहेसो दुःखी, केसे दुःख जावे ॥ को० ३ ॥ सदु खीको दुःख नहीं, दुःखीको दुःख सतावे । ज्ञानसुन्दर निज दुःखकी वर्तीया, प्रभुको सुनावे ॥ को० ॥ ४ ॥ इति

—॥ इति स्तवन संग्रह प्रथम भाग ॥—

अथ श्री

स्तवन संग्रह भाग दुजो.



नं. १ श्रीफलोधिमंडन गौडी पार्श्वनाथजी।

दरसन कीनारे गौडी पासका, धन्य भाग्य हमारा ॥ द० ॥ टेर ॥ बहुत दिनोंसे थी अभिलाषा, कब भेटुं प्रभु पास; पुन्य अंकुरो उगीयोसरे, आज फली मुज आशजी ॥ ध० ॥ १ ॥ शान्त मुद्रा मोहनगारी, नीलवर्ण तन सोहे। नयन निरखता आनन्द आवे, सुरनरका मन मोहेजी ॥ ध० ॥ २ ॥ ज्ञानादिक गुण संपदा सरे, तुज हे अनन्त अपार, एक अंस तीण मांहलो सरे, मुज दीजे कीरतारजी ॥ ध० ॥ ३ ॥ परम्परा प्रभु आपकी सरे जिन्हके छठ पाट, पर उपकारी श्रीरत्नप्रभसूरी, नाम लीया हो थाटजी ॥ ध० ॥ ४ ॥ नगर फलोधी भेटीया सरे, प्रथम गौडी पास, गयवरचन्द शरणो लियो सरे, पुरो वंछीत आशजी ॥ ध० ॥ ५ ॥

नं० २ श्रीफलोधीमंडन शीतलनाथजी।

(देशी नेमनाथजीकी जानकी)

शीतल जिन अरजी सुन लीजे, सेवक पर महेर नजर कीजे ॥ टेर ॥ दढरथ राजाको नन्दो, सोहे जिम तारामें

चन्दो, सर्व सघ वन्दनके काजे, वाज रहा पाचो ही वाजे ॥ दोहा ॥ गौडिजीसे आविया, शीतलके दरवार, मनोहर मूर्ति देखी म्हारो, हरख्यो हृदय अपार, जरा शुभ द्रष्टि तो कीजे ॥ शी० ॥ १ ॥ प्रभुजी आप वीतरागी, दर्शनसे अनुभव मुज जागी, आजको दिन है भागी, सेवा में आयो हु तारी ॥ दोहा ॥ हु अग्नि कपायमे, जल रहा दिन और रात, शीतल चन्दन बावनो सरे, करलो अपने साथ, रग प्रभु अपनो मोय दीजे ॥ शी० ॥ २ ॥ तारक बिरुद आपको स्वामि, मे हू एक मोत्तको कामी, मेरे मन तुही तु भावे, गयनरचन्द और नहीं ध्यावे ॥ दोहा ॥ मेरी तो मोत्त हो गई, कीना तुम दीदार, एक अरज साहबजी तुमसे, ढुढकको दो तार, इतना यश मेरेको दीजे ॥ शी० ॥ ३ ॥ इति

न० ३ श्रीफलोधिमडन शान्तिनाथजी ।

अचरादे मईया, शान्ति करन तोरा जईया ॥ अ० ॥ टेर ॥ मेघरथ राजा जिनवर पूजी, जीव पारेवा बचइया, वीश स्थानककी करी सेवना, तीर्थंकर गोत बधईया ॥ बन्धईया मईया ॥ शान्ति ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धका सुख अनुभवी, गजपुर भूप घरईया, मृगी वेरो रोग निवारी, शान्ति शान्ति वरतईया ॥ व० शान्ति ॥ २ ॥ मेरु शिखरे महोत्सव कीनो, इन्द्रहरप भरईया, कुमार राजमडलिक भोगवी, पद् खड छत्र धरईया ॥ ध० शान्ति ॥ ३ ॥ मन आपि त्यागी भये वैरागी, केवलज्ञान जगईया, सुरवर रचित समोसरणमालि, अमृतनल

भरसईया ॥ भ० शान्ति ॥ ४ ॥ अमर अमरी मील नाटक कीनो, मृदंग ताल बजईया, भक्ति करे सुर इन्द्र मिलके, नाचित थईथई थईया ॥ थ० शान्ति ॥ ५ ॥ शान्त मुद्रा तीज मन्दिर पूजीत हरष भरईया, गयवरचन्द जिन शान्ति सेवतां दिन २ सुख सवईया ॥ स० शान्ति ॥ ६ ॥ इति.

नं० ४ श्रीफलोधीमंडन आदिनाथजी ।

आदिनाथ अलवेश्वरु, मुज पापीने तार लालरे ॥ आदि ॥ टेर ॥ पद्मासन प्रभु ध्यानमें, मूर्ति शान्त स्वरुप लालरे । अनन्त ज्ञान दर्शन धणी, तुं त्रीभुवनको भूप ॥ ला० ॥ आ०॥१॥ हास्यादिक छउ गइ, गई अन्तराय पांच ला० मिथ्या अज्ञान अव्रत गइ, रही नहीं कोइ खांच ॥ ला० आ० ॥ २ ॥ राग द्वेष निद्रा गइ, दुर गया दोष अढार ला० निष्कलंक शुद्ध आत्मा, अक्षय सुख अवतार ॥ ला० आ० ॥ ३ ॥ योग भोग रोगको नहीं । जन्म जरा नहीं शोक ला० आतमसत्ता रमणातां, अटल अकर्म अभोग ॥ ला० आ० ॥४॥ तुज गुण स्मरण भावना, वीर्य थाय हुलास ला० समकित गुण प्रगट करो, गयवर तोरो दास ॥ ला० आ० ॥ ५ ॥

नं० ५ श्रीफलोधीमंडन चिंतामणिपार्श्वनाथजी ।

हां राणीसर मंडन सोहे, चिंतामणिजी चितको मोहे । पूजा करतो नाथकी सब पातिक खोहेरे ॥ चिं० ॥ टेर ॥ नगर फलोधी है गुलजारी, राणीसरकी छबी है न्यारी, सोहे चिं-

तामणि पार्श्व, और दादाश जाहारीरे ॥ चिं० ॥ १ ॥ अनन्त ज्ञान दर्शनके धारी, तेवीसमा हो तुम अवतारी, शरणे आयो पुरजो, प्रभु आश हमारीरे ॥ चिं० ॥ ३॥ तु जगतारक निरुद धरायो, में हू दीन याचनको आयो, कुलिंग छोडियो नाथजी, चिंतामणि पायोरे ॥ चिं० ॥ ४ ॥ पाचमें मन्दिर मुक्ति काजे, जैनधर्मका डका वाजे, गयवर चाकर आपको या घनजियु गाजेरे ॥ चिं० ॥ ५ ॥

म० ६ श्री जेसलमेर मडन आदिनाथजी

(ग्गा विणजारी)

सुण मरुदेविका नन्दा, म्हारा काट चोरासी फन्दा ॥ सुण ॥ टेर ॥ समोसरण विच सोहे, चउ तीर्थका मन मोहे-जी, थाने सेवे सुरनर इन्दा ॥ सुण ॥ १ ॥ मागधी अर्थ रुपी वाणी, गणधर गूथी गुण खाणीजी, द्वादश अग सुरतरु कन्दा ॥ सु० ॥ २ ॥ धर्म अधर्म आकासा, जीव पुद्गल काल वीका-साजी, पटद्रव्य विचार आनन्दा ॥ सु० ॥ ३ ॥ एकरुपी एक है जीवा, पांच अरुपी पाच अजीवाजी, द्रव्य गुण पर्याय सा-नन्दा ॥ सु० ॥ ४ ॥ तीन एक तीन अनेका, पचास्ति का-लहै शेषाजी, चली देश प्रदेश हैं खन्धा ॥ सु० ॥ ५ ॥ अ-गुरु लघु पर्यायहै जाहारी, साधर्मीपट् मझारीजी, वीचार भाव अमन्धा ॥ सु० ॥ ६ ॥ शुद्ध सम्यकत्व वोही पावे, पट्द्रव्य हृदयमें ध्यावेजी, इम ज्ञान भजे जिनचन्दा ॥ सु० ॥७। इति

नं० ७ जेसलमेर मंडन श्री संभवनाथजी.

भावपूजा संभवनाथकि, करिये शुद्ध परिणाम सलुणा ॥ टेर ॥ द्रव्य भाव शौची करी, जावे जिन प्रासाद ॥ स० ॥ शान्तमुद्रा वीतरागकि, धरियेचित अहलाद । स । भा० ॥१॥ मयूरपिच्छि इर्यातणी, ज्ञान नीर पखाल । स । अनुभव अंग लुणाकरी, पूजो होइ उजमाल ॥ स ॥ भा० ॥ २ ॥ श्रद्धाकि शिला करो, कर्मोकि केसर जाण । स । संतोष चन्दन मुठियों, शील सुगन्ध पिछाण ॥ स ॥ भा० ॥ ३ ॥ तत्वकटोरी शुद्ध मति, नव अंग पूजो देव । स । आतम अनुभव भासना, आज मीली प्रभु सेव ॥ स ॥ भा० ॥ ४ ॥ हारमोति महाव्रत तणो, भावना करिये फूल । स । ध्यान मुगट कुंडल क्रिया । तीलक आज्ञा अनुकुल ॥ स ॥ भा० ॥ ५ ॥ स्याद्वाद बाजुबन्धको, नयनिक्षेप जडाव । स । पुंचाछि निश्चय व्यवहारकि । उत्सर्ग अपवाद मंडाव ॥ स ॥ भा० ॥ ६ ॥ सप्तभंगीको सेहरो, अहिंसा आंगी जाण । स । तपस्या कुडच्छा धूपका, अशुभ कर्म धूप मान ॥ स ॥ भा० ॥ ७ ॥ विवेक दीपक गुणी वति, पाप कर्मको तेल । स । तीक्षण बुद्धि जोतीसे, जिनवचनोंपर खेल ॥ स ॥ भा० ॥ ८ ॥ चार अनुयोग चौकी करी, श्रद्धाको साथियो पुर । स । तीन तत्व उपर धरो, सिद्ध शिलासे मुक्ति नहीं दुर ॥ स ॥ भा० ॥ ९ ॥ सिद्धान्त सांकल सुमति घंटा, सदगुरु बजावनहार । स । अन्त उतारो आरति, आलोचन पद धार ॥ स ॥ भा० ॥ १० ॥ भाव पूजा साधु-

करे, श्रावक द्रव्ये भाव, ज्ञानसुदर जिन पूजतो, मीलीयो चौं-
कनो डाव ॥ स ॥ भा० ॥ ११ ॥ इति

न ८ श्री जेसलमेर मडन चन्द्रप्रभुजी

चन्द्राप्रभु चिंताहरो, करलो आप समान वालेश्वर
। चन्दा । टेर । शान्तमुद्रा सोहामणि, नयन रह्या लोभाय ।
ना । यात्रा करी भला भावशु सफळ हुइ मुज काय । वा ।
। चन्दा ॥ १ ॥ धूर गुणस्थानक पेहलडे, रह्यो काल अनन्त
। वा । यथाप्रवृति करण हुवा, गीणतो न आवे अन्त । ना ।
। चन्दा ॥ २ ॥ करण अपूर्व दुसरो, स्थिति कर्म सातों शम
। वा । कारण निमत्त मीलीया थको । अनिवृति पाम्यों धर्म
। ना । चन्दा ॥ ३॥ औपशम समकित त्या लही, जावे चोथे
गुणस्थान । वा । पडतों स्पर्श दुसरो, छे आविलका प्रमाण
। ना । चन्दा ॥ ४ ॥ मिश्रभाव तीजे गयो, पेहले के चोथे
जाय । वा । सात प्रकृति चय करे, सात बोलोंको बन्ध न
थाय । वा । चन्दा ॥ ५ ॥ तत्वरची षटद्रव्य कि, जाणे
जीवादि भेद । वा । सिद्ध मम गीणे आतमा, रहे सदा अभेद
। वा । चन्दा ॥ ६ ॥ इग्यारे उच्छेदने, जावे पाचमें गुण-
स्थान । ना । श्रावक व्रत जो आदरे, पाले जिनवर आण
। वा । चन्दा ॥ ७ ॥ प्रकृति पन्द्रातणो, चय करे उपशाम
। वा । प्रमत्त गुणस्थानक लहे, मुनिपद क्षम शम दम । वा ।
। चन्दा ॥ ८ ॥ पाच प्रमादने परिहरे, अप्रमत्त गुण होय ।

। वा । जेहथी जावे आठमे, त्यां छे श्रेणि दोय । चन्दा । ६ ।
उपशम करे इकविसनो, नवमे सताविस जांण । वा । दशमे
संज्वलका लोभ कों, उपशम इग्यारमें ठाण । वा । १० ॥
अन्तर महूर्त त्यां रहे, कालसे अनुत्तर वेमान । वा । पाछो
पडे तो विचमें स्थंभे, नही तो पहले गुणस्थान । वा । चन्दा०।
॥ ११ ॥ दूजी क्षपक श्रेणी चडे, करे अठाविस क्षिण । वा ।
दशमाथी जावे बारमे, तोडे घनघाति तीन । वा ॥ चन्दा० ॥
॥ १२ ॥ केवल पद लहे तेरवे, चवदमाथी निर्वाण । वा ।
निज आतम निहाळतो, छुटो न धूर गुणस्थान ॥ वा ॥ चन्दा०
१३ ॥ नाम धराउ छड्ढा तणो, कृत्य जाणे जगनाथ । वा ।
तो पण घन ज्युं गाजसुं, मारे माथे तोरा हाथ वा । ॥चन्दा०॥
॥ १४ ॥ निर्गूणो तो पण आपको, नही औरन से प्रित । वा ।
शरणे आयाने करो सारखो, आछे वडनकि रीत ॥ वा ॥
चन्दा० ॥ १५ ॥ जेसलमेर जुहारियों, महश्रेण नृपको नन्द
। वा । उपकेशगच्छ को किंकरु, आज ज्ञान आनन्द । वा ।
चन्दा० ॥ १६ ॥ इति ॥

नं. ९ श्री जेसलमेर मंडन श्री सुमतिनाथजी.

मुखडो दिठोरे, २ जिनन्दा मोंने लागे मीठोरे ॥ मु०
॥ टेर ॥ काल अनन्तो हूं भम आयो, दंडकमें दंडायोरे, सम-
कित मांहे नामो, म्हारो नहीं मंडायोरे ॥ मु० ॥ १ ॥ सात
नरककों पेहलो दंडक, भुवनपति दश जाणोरे, पृथ्वी पाणी

तेउ वायु, वनस्पति दार्टोणोरे ॥ मु० ॥ २ ॥ वे, ते, चो, पचेन्द्री तीर्यच, मनुष गतिमें रमीयोरे, व्यतर जोतिषी वेमानिकमें, काल अनता गमीयोरे ॥ मु० ॥ ३ ॥ पतला पड्या कर्म हमारा, जद आ रुची जागीरे, अब तो नामो भडानु माहन, तुम वीतरागीरे ॥ मु० ॥ ४ ॥ करुणी करके सबदी तीरीया, काइ वडाइ धारीरे, साचो दाता जबही थाशो, मुन निगुणाने दो तारीरे ॥ मु० ॥ ५ ॥ दुखे पीडीयो आटो तेडो, पोली चम्पा कीजोरे, ज्ञानसुन्दर चाकर चरणाको, हीयडे लगाई लीजोरे ॥ मु० ॥ ६ ॥ इति

न १० श्री जेसलमेर मडन श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ

मुक्ति दिजो चिंतामणिमाने चोडे सुनो चाहे छाने ॥ मुक्ति० ॥ लेनदार जो आवीने बेठे, देरी करे क्या जाने ॥ मु० ॥ १ ॥ पावणो आने मो जिमने जावे, करे टालाटुली शाने ॥ मु० ॥ २ ॥ वीणो होवे तो न्हासने आवे, नहीं तो आने काने ॥ मु० ॥३॥ हु छु दीन ने तु छे दाता, क्यु तरमावे माने ॥ मु० ॥ ४ ॥ सर्व नावको जानो साहन, घणो शु कहेवु थाने ॥ मु० ॥ ५ ॥ इति

तुठो तुठोरे वामाको जायो, म्हेतो महेज मुक्त गढ पाया ॥ तु० ॥ टेर ॥ निज सेवकपर करुणा आणी, अरजीपे हुक्म लगायो ॥ तु० ॥ १ ॥ हु छोरु कुछोरु तो पण, लीनो कण्ट लगायो ॥ तु० ॥ २ ॥ तीन भुवनका राजसे अधिको, आन

आनन्द मोय आयो ॥ तु० ॥ ३ ॥ आज आनन्द रंग ज्ञान बधावो, मो मन हरष सवायो । तु० ॥ ४ ॥ इति.

नं. ११ श्री जैसलमेर मंडन अष्टापद नायक.

अष्टापद वन्दो. भरत भराया बिंब भावसे ॥ टेर ॥ आदिश्वरजी केवल पायो. भरत वन्दनने आयो. हाथ जोडने प्रश्न पुच्छे, और होशे जिनराया हो ॥ अष्टा० ॥ १ ॥ सुन भरतेश्वर राजवि सरे, भाषे जगदाधिश, इणहीज काले भरत क्षत्रमें, होसे जिन तेवीस हो ॥ अ० ॥ २ ॥ सुन भरतेश्वर अष्टापदपर, शिखर बन्ध चोविस, चैत्य कराया बिंब स्थपाया, जिम भाख्या जगदिस हो ॥ अ० ॥ ३ ॥ रत्नमय मूर्तिसरे, वर्ण अवगाहना सरखी, उत्तराध्ययने गौतमस्वामि, चैत्यवन्दन कर निरखी हो ॥ अ० ॥ ४ ॥ कृत्यवस्तु संख्याता कालतक, वादि इणपर बोले, देव साहित्य काल असंख्या, जम्बुद्विपपन्नति खोले हो ॥ अ० ॥ ५ ॥ उत्तराध्ययन सागर चक्रीका, पुत्रे रक्षा कीनी. आवश्यकमें भद्रबाहु. विस्तारे टीका लीनी हो ॥ अ० ॥ ६ ॥ अष्टापद नामको मन्दिर, जेसलमेरके मांहि, लरुंदविको नन्दन दिठो, कमी रहे नहीं कांइ हो ॥ अ० ॥ ७ ॥ जहां भेटुं तहां रत्नविजयजी, आवे मुजने याद, जल्दी मुक्ति होजो तेहनी, मुज मन आज आहलाद हो ॥ अ० ॥ ८ ॥ उपकेशगच्छके नायक कहीजे, रत्नप्रभसूरी राया, ज्ञानसुन्दर चाकर चरणोंको, दिन दिन सुख सवाया हो ॥ अ० ॥ ९ ॥ इति.

न ०२ श्री जसल्मर मडन शान्तिनाथजी

(देशी गाराके गीतरि)

आगी सुब बनी है दीनानाथकीजी, मनडो हरख्यो मारो देखी छबी नाथकीजी । टेर । सर्वार्थसिद्ध थकी आवियाजी, मारी मृगीको रोग निवारीयाजी-माता अचरादेनी जाया, ज्होंके सुरवर इन्द्र आया, प्रभुको मेरुशिखर न्हवाया, इन्द्र महोत्सव करे भक्ति नाथकिनी ॥ आ० ॥ १ ॥ मगल गावे इन्द्राणी आयनेजी, माता आसपुरे हुलरायनेजी-माता आसापुरी रमके, नेवर घुघर पगमे घमके, पगल्या घर रया ठम ठम ठमके, आशा सफळ करी प्रभू मातकिनी ॥ आ० ॥ ॥ २ ॥ पचविश सहस्र कुमर पद गयाजी, इतनाही प्रभु मटलीक रयाजी-भया छे खड केरानाथ, ज्याने सुरनर जोड हाथ, प्रभुजी सरचीय त्यागी आथ, दीक्षा महोत्सव करे म्हारा नाथकोजी ॥ आ० ॥ ३ ॥ छदमस्त माम केवल जन्योनी, सुर समोसरण आनि रच्योजी,-प्रभुके चोंतीस अतिशय छाजे, वानी घन जीयू गाजे, इन्द्र आय वन्दन करे, नाटीक करे इन्द्राणी मन साथकीजी ॥ आ० ॥ ४ म्हेतों आज आनन्द शान्ति लयोजी, योतों अष्टापद उपर रयोजी, येतो पुष्प सुगन्धी लावे, श्रावक आगी सुब रचावे, भावे प्रान सुन्दर गुण गावे, जेसलमेरमें निरखी मुद्रा नाथकीजी ॥आ० ॥ ५ ॥ इति ॥

नं. १३ श्री जेसलमेर मंडन–वीरप्रभु.

वीर तौरे दर्शनकि बलीहारी, २। वारी जाउं वार हजारी । वी० टेर । अनन्त ज्ञान दर्शनकों नायक, लायक शिव सुखधारी, अटल अबाधित सुखके दाता, ताते शरण तुम्हारी ॥ वी० ॥ १ ॥ आतम सत्ता अनुभवाकि रीती, प्रीति की गति न्यारी, भोगि अभोगी योगि अयोगि, लखी न जाय गति रहारी ॥ वी० ॥ २ ॥ भेद अभेद खेद अखेद, जान अजान संभारी, अकल कळा गीनी नही जावत, अन्दर रह के न्यारी ॥ वी० ।। ३ ॥ सुख न दुःख अनुभव रसमें, रोग सोग रहै न्यारा, चाहत अनूभव ज्ञान सुधारस, मीलादो सुमति प्यारी ॥ वी० ॥ ४ ॥ इति ॥

नं. १४ श्री जेसलमेरके ज्ञानभंडार.

सुनो चैतन प्यारे भक्ति करोनि श्रुतज्ञानकी ॥ टेर ॥ जेसलमेर किलाके अन्दर, चैत्य जिनेश्वर पास, गुप्त भोंयरा मोहनेंसरे, ज्ञानभंडारो खासरे ॥ सु० ॥ १ ॥ दोय उपासरे रहे कुंजीयों, यति श्रावकके पास, श्री संघसे करी याचना, पुरी मनकी आशरे ॥ सु० ॥ २ ॥ श्रावक यतिजी आये सरे, खोल दीयो भंडार, स्तुतिकर अन्दर आये, हृदय हरष अपाररे ॥ सु० ॥३॥ गुप्त भंडारा मोहनेसरे, सूत्रपेटी सात, बाविश सौ जाजेरी प्रति, आ छे टीपनी वातरे ॥ सु० ॥ ४ ॥ भंडार मांहन पडे अंधारो, जीन्हसुं सूत्र लाया बारे, ताडपत्रपर आगम

देखी आनन्द जरत्यो म्हारेरे ॥ सु० ॥ ५ ॥ हजार वर्षका जुना देखा, ताडपत्रका लेख, सूत्र ओर ग्रन्थ हैं बहूला. में प्रत्यक्ष लीधा देखरे ॥ सु० ॥ ६ ॥ पचागीको साची मानो, जो चाहो तुम तीरणो, शका हो तो में बतलाउ, जुठो हठ नहीं करणोरे ॥ सु० ॥ ७ ॥ जिनवाणीसे तीरणो होसी, कलीकालके अन्त, ज्ञान कहे आधार हमारे, जिनवाणी महिमावन्तरे ॥ सु० ॥ ८ ॥ इति.

न १२ श्री लोदरवा पार्श्वनाथजी

(देशी गोगवा)

आयो आयोरे लोदरवाजी भेटवाने, मारा भवभव पातिक मेटवाने ॥ आ० ॥ टेर ॥ वामादेविको नन्दो, तु तो दुरोआइ वसीयो, लारेलारे हु पण आयो, तुमेरा चित्तमें धसीयो ॥ आ० ॥ १ ॥ ससाररुपी अटविभारी, डर लागो छे तुजने, तेथी आण एकान्ते बेठो, छोड आयो प्रभु मुजने ॥ आ० ॥ २ ॥ विषम वाटने अुट काकरा, शीत सताइ मांने, सोरो दोरो आयो साहेब, आ अरज करी छे थांने ॥ आ० ॥ ३ ॥ इतना दिन तो भर्म भटकीयो, फीरीयो चौरासी ताई, पतो न लागो साहेब तोरो, उम्मर वृथा गमाई ॥ आ० ॥ ४ ॥ तेरागच्छमें जन्म लीयो पण, दुढक जालमें फसीयो, कुलिंग वेष मुडो बाधी, कर्मो आगे कसीयो ॥ आ० ॥ ५ ॥ मिथ्या मोहको दुर कर्या, अब अन्तराय गइ भागी, चैतनवलीये कर्म हठाया, अन्तर शुद्ध मति जागी ॥ आ० ॥ ६ ॥ बहुत दिनोंमेथी

अभिलाषा, आज दर्शमें किनो, नयन निरखतो आनन्द आयो, जाणे अमृत पीनो ॥ आ० ॥ ७ ॥ कल्पवृक्ष मेरे आंगण फलीयो, चिंतामणि कर आयो, कामधेनुसे अधिको, मैं तो प्रभुजीको दर्शन पायो ॥ आ० ॥ ८ ॥ जेसे पुष्प अली मन वसीयो, मयूर मगन घन रसीयो, चन्दन भुजंगके मन भावे, हुं तुज सेवा तरसीयो ॥ आ० ॥९॥ एक अर्ज साहेबजी मेरी, अब न्यारो मत राखो, हुं तो बालक आडोलीनो, अमृत वयण भाषो ॥ आ० ॥ १० ॥ छठे पाटे रत्नप्रभसूरी, पासे संतानीया वाजे, ओशवंसकी करी स्थापना ज्यारो यश युगमांहे गाजे ॥ आ० ॥ ११ ॥ ज्ञानसुन्दर चाकर चरणोंको, फलोधिसे आयो, पोष कृष्ण पडिवा तेहोतर, दिन दिन सुख सवायो ॥ आ० ॥ १२ ॥ इति.

नं. १६ श्री अमृतसर मंडन आदिनाथजी.

अमृतसर उपर, झाखी बन रहीरे दीनानाथकी ॥ टेर ॥ जेसलमेर लोदरवा विचे, अमृतसर है भारी, निर्मल नीर ओर बाग बगेचा, खुलरही केशर क्यारीरे ॥ अ० ॥ १ ॥ तीनों कांठे तीनो मन्दिर शिखरबंध है सारा, उंचिध्वज गगनसे वातो, नित्य नित्य घूरे नगारारे ॥ अ० ॥ २ ॥ तीनो चैत्यमें मूर्ति सोहे, जीम तारोंमें चन्द, मरुदेविको नन्दन निको, निरखत नयन आनन्दरे ॥ अ० ॥ ३ ॥ शान्त मुद्रा मोहनगारी, आंगीकी छबी न्यारी, महीमा अगम अगोचर प्रभुका, दर्शनकी बलीहारीरे ॥ अ० ॥ ४ ॥ जीतना सुख तुमारे साहब, इतना

मुजको दिजो, दातानाम धरावो तो तुम, दया दीनपे किजोरे ॥ अ० ॥ ५ ॥ हुकम आपको मेरे शिरपर, अच्छो आनन्द आयो, ज्ञानसुन्दर चाकर चरणोंको, आज अमरपद पायोरे ॥अ०॥६॥

१७ श्री पोकरण मडन पार्श्वनाथ

पार्श्वप्रभु मुजने, पार उतारे तु थारो विरुद विचारे ॥ पार्श्व० ॥टेर॥ बनारसीमें जन्म आपको, अश्वसेन कुलचन्दा, मूर्ति मोहन दर्शन पायो, रोमरोम आनन्दा ॥ पा० ॥ १ ॥ स्याद्वाद हे जो तुज वाणी, पांच अगसे पुरी, जो पचागी माने नहि, तेहने मुक्ति हे दूरी ॥ पा० ॥ २ ॥ पाच अगसे पुरुप पूरो, एक माने च्यार छेदे, ते तो दुरमन घाती कहीये, निन्दय आज्ञाने भेदे ॥ पा० ॥ ३ ॥ क्रिया उपर करे आडम्बर, पेट भरा भडछरा, आप थापीने प्रतिमा उत्थापी, कृतघ्नी ने क्रूरा ॥ पा० ॥ ४ ॥ भगवती स्थानायाग बोले, अनुयोगद्वारने नन्दी, समवायाग पचागी माने, नही माने मोह फन्दी। पा० ॥५॥ टीकासु जिण टबो कीनो, मगलाचरणमें बोले, टबो माने टीका नहीं माने, पापी कोन इणतोले ॥ पा० ॥ ६ ॥ करुणा मध्यस्थ प्रमोद मित्रए, भावना नित्य नित्य भाउ, ढुढक बुद्धि सुधारो नाथजी, या बात सदा में चाउ ॥ पा० ॥ ७ ॥ लोदरवामे पाच्छा वलता, पोकरण यात्रा कीनी, एक चौकमें तीनो मन्दिर, तीन तीन प्रदक्षणा दीनी ॥ पा० ॥ ८ ॥ दोय मन्दिर पार्श्व प्रभुका, एक आदिश्वर केरो, ज्ञानसुन्दर जिन चरणकमलमें, एक रूप तेरो मेरो ॥ पा० ॥ ९ ॥ इति

नं. (६८) श्री खीचन्द मंडन चौविस भगवान्

(देशी श्री नेमिश्वरजीकी जानकि)

सुनोश्री चौविसों महाराज, सूधारो सेवकके सब काज। सुनो। टेर। ऋषभ अजित संभवहै स्वामि. अभिनन्दजी हित-कामि, सुमति पद्म सुपासजी सोहे, चन्द्राप्रभुजी मन मोहे। दोहा। सुविधि शीतल श्रेयांसजी, वासुपूज्य भगवान्, विमल अनन्त श्री धर्मनाथजी, शान्तिनाथ सुख खान, प्रभुजी रखीये मेरी लाज। सुनो ॥ १ ॥ कुंथु अरि मल्लीजिन वन्दों, देख मुनिसुव्रत आनन्दो, नमि नेम पार्श्व यशधारी, वीरजी शासन संभारी, । दोहा। चौविसे जिनराजजी, खीचन्द मंडनग्राम. मूलनायक श्री पार्श्वनाथजी, वंच्छीतपुरे काम, सकल हो देव-नके शिरताज। सुनो ॥ २ ॥ द्रव्य और भावसे पूजो, एसो नही देव कोइ दुजो, पूजासे मोक्षफल पावे, सूत्र श्री ज्ञाताजी गावे, । दोहा। आदि अनादि प्रतिमा, भाखे श्री गणधार, पाप बतावे पूजामांहे, डूबे डूबावणहार—नरकमें मारेगा जमराज। सुनो ॥ ३ ॥ रायपसेणी ज्ञाता और, भगवती ठाणांयांग पेच्छाण, जीवाभिगमहै साखी, जहा तहा प्रतिमाही दाखी, । दोहा। ठाम ठाम सूत्रोंके मांही, प्रतिमाको अधिकार, एक बोल उत्थापण कारण, सहस्र करे नवा तैयार. मीलगइ कुंम-त्यादि समाज, सुनो ॥ ४ ॥ साधुकों वन्दनने जावे, चौमासे भठीयों चलावे, साधु कोइ मर भी जावे, दीक्षाको महोत्सव करावे। दोहा। आदि अनेकों बोलमें, रहे हिंसा अनुकुल,

नाम लेवे प्रभु पूजाकेरो, हृदय उठे मूल–छोडदो मिथ्या मतकी पाज । सुनो ॥ ५ ॥ छोडि कइ कुमत्योंकि समाज, भया केइ जिनवरके मुनिराज, दुंढकजी बाहीर नहीं आवे, गालोंका गोला चलावे । दोहा । वह जमाना अब नहीं, भोला पडे कोइ फन्द, अज्ञान अंधेरो नहीं रहे सरे, अब उगो छे चन्द, जराकुच्छ मनमाहे तु लाज ॥ सुनो० ॥६॥ कहेवाहु हितके ताई, समजलो मनके माही, छोडदो कुलिंगीका संग, लगालो समकित केरा रंग । दोहा । फलोधीसे आनीया, संघ चतुर्विध लार; मावकृष्ण पडिवा तेहोत्तर, पूजा नीनाणु प्रकार, ज्ञानपे कर कृपा जिनराज । सुनो ॥ ६ ॥ इति

नं० (८) श्री लोहावट मंडन श्री पार्श्वनाथजी ।

सुनो पार्श्व प्रभुजी डंका बाजे रे तोरा नामका । सु० टेर । ग्राम लोहावट जाटावासे, मन्दिर बनियों भारी, में पण यात्रा भावे किनी, दर्शन कि बलीहारी हो सु० ॥ १ ॥ द्रव्य कषायने योग आतमा, चोथी है उपयोग, ज्ञान दर्शन चारित्र मातमी, वीर्य आतमा उपभोग हो सु० ॥ २ ॥ दोय चौर ने दोय बोलाउ, प्रभुके लाद्रे चार, निज आतम निहालतों सरे योग कषाय प्रचार हो सु० ॥ ३ ॥ दोनों चौर आतमा मोतों, मेरे लारे लागी, लूट लिया बोलाउ दोनों, आयो दोडके भागी हो सु० ॥ ४ ॥ मोहर छापका दो परवाना, लगे न किमका जोर, बोलावाकों साथे करदो, पडिया रहेशी

चौर हो सु० ॥ ५ ॥ जहां लग मीलन च्यार आतमा, ओला वा रहे लार, मीलीयोंसे दुरा हो जावे, चैतन मुक्ति मभार हो सु० ॥ ६ ॥ कर्म चापडा शुक रेसरे, एक लहेरमें जाय, ज्ञानसुन्दर भक्तिमें राच्यो, ओर न आवे दाय हो सु० ॥७॥इति.

नं० २० श्री लोहावट मंडन चन्दाप्रभुजी ।

(देशी मोटी जगमें मोहनी)

चन्दा प्रभु चित्तमें वस्यो, कांइ खसीयो हो ओ मोह विकार । चन्दा ॥ टेर ॥ चन्दपुरीनो राजीयो, कांइ महासेन हो लीछमणानो कन्त, तेहनो नन्दन लाडलो, कांइ त्रीभुवनमें हो महिमावन्त । चन्द० ॥ २ ॥ चौतिस अतिशय शोभता, कांइ वाणी हो ए गुण पैंतिस, आठ प्रतिहारज मोटका, कांइ जीत्या हो ए रागने रीस ॥ चन्द० ॥ २ ॥ लोहावटमें भेटीया, कांइ दुजो हो वीसनोइ वास, पूजा व्रत वारा तणी, कांइ कारण हो मुक्तिनो स्वास ॥ चं० ॥ ३ ॥ आज दहाडो शुभ घडी, कांइ दीठो हो प्रभुको दीदार, जनम सफल भयो मुज तणो, कांइ हृदय हो यो हरष अपार ॥ चं० ॥ ४ ॥ मुज अवगुण तुज गुण तणो, कांइ गीणतां हो नहीं आवे पार, तोपण मुज निगुणा तणी, कांइ लीजो हो प्रभु सार संभाल ॥ चं ॥ ५ ॥ तुं जगतारण साहवो, कांइ उभो हो हुं करुं अरदास, शिवसुख दिजे वालहा, कांइ पुरो हो मनवांछित आश ॥ चं ॥६ ॥ साल तहोतेर फागकी, कांइ तीखी हो आ तीथी

तीज, ज्ञानसुन्दर शरणो लीयो, नहीं चाहे ओ काइ दुजी चीज ॥ च ॥ ७ ॥ इति

न २१ श्री सिद्धचक्रजी महाराज

भवी पूजोरे सिद्धचक्र पदको ॥ भवी० ॥ पहिले पद श्रीअरिहत देवा, चौसठ इन्द्र करे सवारे ॥ भ० ॥१॥ दूजे पद श्री सिद्धको ध्यावो, मनवच्छित सव फल पावोरे ॥ भ० ॥ २ ॥ तीजे पद आचारज सोहे, च्यार तीर्थका मन मोहेरे ॥ भ० ॥ ३ ॥ चोथे पद पाठक गुणधारी, वाचना देवे अति सारीरे ॥ भ० ॥ ४ ॥ पांचमे पद साधु भगवन्ता, खम शम दम वली गुणवन्तारे ॥ भ० ॥ ५ ॥ छठे पद दरशनको पूजो, अनुभव रस नहीं कोइ दुजोरे ॥ भ० ॥ ६ ॥ सातमा पदमें ज्ञान प्रकाशे, लोकालोक जेहथी भासेरे ॥ भ० ॥ ७ ॥ आठमे पद चारित्र सोभागी, चक्रवरत घरी ऋद्धि त्यागीरे ॥ भ० ॥ ८ ॥ नवमे पद श्री तपको ध्यावो, कर्मकाट केवल पावोरे ॥ भ० ॥ ९ ॥ सिद्धचक्र पूजा फल केसो, श्रीपाल मयणा जेसोरे ॥ भ० ॥ १० ॥ रत्नप्रभसूरीश्वर प्रसादे, ज्ञानसुन्दर आतम साधेरे ॥ भ० ॥ ११ ॥ इति

न० २२ श्री सिद्धचक्र भगवान्।

आज रग वरसेरे । आज रग वरसे ये तो सिद्धचक्र महाराज पूज मन मेरो हरखेरे आज० ॥ टेर ॥ श्वेत वर्ण पहेले पद पूजो, अरिहत श्रीवीतरागीरे, रक्त वर्ण दुजे पद

अरचो, सिद्ध सोभागीरे आ० ॥ १ ॥ रक्तमन मंडन कुमति विहंडन, जीण केसरीगा कीनारे, तीजे पद आचारज पूजो, शिव सुख लीनारे आ० ॥ २ ॥ निलवर्ण चोथेपद नीमये, द्वादशांगना पाटीरे, ज्ञानदाता उपाध्याय पूजतां, कुमति नाटीरे आ० ॥ ३ ॥ श्यामवर्ण पदपांचमें पूजो, मुनिवर गुणका दरियारे, पट् खंड केरी छोडी साहबी, शिव सुख वरियारे। आ०। ॥ ४ ॥ श्वेतवर्ण दर्शनपद पूजो, बीज मोक्षनो जाणीरे। करणी सह परिमाण हुवे, स्वसत्ता पिच्छाणीरे आ० ॥ ५ ॥ उज्वल वर्ण ज्ञानपद पूजो, लोकालोक प्रकाशेरे, भक्षाभक्ष तेहथी लहीये, निज आतम भासेरे आ० ॥६॥ श्वेतवर्ण अष्टमपद पुजो, चारित्र मोक्षको दातारे, अचल अटल शिवपुरके मांहि, पावे सातारे आ० ७॥ नवमेपद निर्वाण कारणे, श्वेत वर्ण तप पुजोरे, इन्ह सिवाय मुक्तिकां दाता, नहीं कोइ दुजोरे आ० ॥८॥ साढा च्यार वर्ष कोइ लगती, आंबिलओली करशेरे, भक्ति सहित उजमणो करतो, शिव सुख वरसेरे ॥ आ० ९ ॥ जेसे मयणा श्रीपालजी, सिद्धचक्र आराध्यारे, कष्टरोग भयो सब दुरो, निज आतम साध्यारे आ० ॥१०॥ श्रीकमलेगच्छ नायक सदगुरु, रत्नसूरि मन भायारे, ज्ञानसुन्दर कहे तास प्रसादे, सुखसवायारे आ० ॥ ११ ॥

नं० (२३) श्री ओशीया मंडन श्री वीरप्रभु।

वीर प्रभुसे विनति, करलो आप सामान्य वालेश्वर

॥ वी ॥ टेर ॥ हु अज्ञानी जीव छो, भजीयों नहीं तुज नाम । वा । कुडकपट मद लोभमे, न किधो रुडो काम ॥ वा ॥ ॥ वीर ॥ १ ॥ तु जाणे कृत्य माहरा, हु सब जगत से निच ॥ वा ॥ अशुभ कर्म प्रयोगसे, फसीयों मोहके बीच ॥ वा ॥ ॥ वीर ॥ २ ॥ नियम व्रत नहीं आखडि, नहीं कल्प किया-कीसार ॥ वा ॥ अधम उद्धारण साहबों, मुजपापीने तार ॥ ॥ वा ॥ वीर ॥३॥ धन माल मागु नहीं, राज पाट देवलोक ॥ वा ॥ तुम कृपार्थी शुद्ध छे रे, आ-लोकने परलोक ॥ वा ॥ ॥ वीर ॥ ४ ॥ भवभव चाकर त्हारो, मुजे इतनो आधार, ॥ वा ॥ ज्ञानसुन्दर शरणोलियो, भवो दधिपार उतार ॥ वा ॥ वी ॥ ५ ॥ इति

नं० २८ श्री ओशीया मंडन वीरप्रभु ।

अब शरणे वीरके आयो, शुद्ध निर्मल समकित पायोरे अब ॥ टेर ॥ प्रभुलख चौरासी भमियो, मैं कर्म नाटीक सग रमियों, निज आतम नहीं दमियो, इम काल अनन्तो गमियोरे । अब ॥ १ ॥ मारे कुमति नार लारे लागी, या शुद्ध बुद्ध गई सब भागी, मोहराजाकी ल्हेरो जागी, सब जगमें मैं अभागीरे । अब ॥ २ ॥ प्रभु देखी मुद्राधारी, जद नाठी कुमति नारी, तब अनुभव जागी भारी, प्रगटी चैतनता मारीरे । अब ॥ ३ ॥ अब मेहर निजर कर लिजे, अवगुणकी माफि दिजे, भूखाँतों धायों पतिजे, सुण साहब कृपा किजेरे ॥ अब ॥ ४ ॥ दिन

भयो सफल प्रभु आजे, मलाकावाजा वाजे, यहतीर्थ ओसीया छाजे, थारो ज्ञान घन जीयुं गाजेरे अत्र ॥ ५ ॥ इति

नं. २९ सिद्धाचल स्तवन.

जात्रा नवाणुं करीये विमलगिरि ॥ जात्रा० ॥ टेर ॥ पूर्व नवाणुं वार शेत्रुंजा गिरि, ऋषभ जिनन्द समोसरीये ॥ वि० ॥ १ ॥ कोडी सहस भव पातक तुटे, शेत्रुंजा सामो डग भरीये ॥ वि० ॥ २ ॥ सात छठ दोय अठम तपस्या, करी चढीये गिरिवरीये ॥ वि० ॥ ३ ॥ पुंडरिक पद जपीये मन हरखे, अध्यवसाय शुभ धरीये ॥ वि० ॥ ४ ॥ पापी अभव्य न नजरे देखे, हिंसक पण उद्धरीये ॥ वि० ॥ ५ ॥ भूमि सं-स्थारो ने नारी तणो संग, दूर थकी परिहरीये ॥ वि० ॥ ६ ॥ सचित्त परिहारीने एकल आहारी, गुरु साथे पद चरीये ॥ वि० ॥ ७ ॥ प्रतिक्रमण दोय विधिशुं करीये, पाप पडल विखरीये ॥ वि० ॥ ८ ॥ कलीकाले ए तीर्थ मोटुं, प्रवहण जीम भव दरीये ॥ वि० ॥ ९ ॥ उत्तम ए गिरिवर सेवन्ता, पद्म कहे भव तरीये ॥ वि० ॥ १० ॥

॥ इति श्री स्तवनसंग्रह भाग दुजो समाप्तम् ॥



अथ श्री

॥ स्तवन संग्रह भाग त्रीजो ॥

न० १ श्री पार्श्वनाथ अक्रोधी (असवारी)

नाथमोंको क्रोधसे नथु न बचाने, अक्रोधी नाम धरावे। नाथ। टेर। स्वं परे उभयं निर्थकं वरधुं। चेत्रंशरीरं औपधि, जाने अर्जन उपशमें अनोपशमें, सन्नले भत्यें अभत्यें अनन्तौ-नुबंधि, । नाथ० ॥ १ ॥ समुचय जीव और चौविश दंडक, सोला गुण जो करिये, भागा चारमो इणि परे होवे, क्रोध सदा परिहरिये नाथ० ॥ २ ॥ चियं उपचियं बन्धं उदयं और, उदीरणां निरजंरीया, तीन कालसे गुणा करतों, अठारा उर धारिया ॥ नाथ० ॥ ३ ॥ एक वचन बहु वचनसे गणतों, सरया छतीस दीजे, समुचय जीव और चौवीस दंडक, नवमो भागा गीण लिजे नाथ०॥४॥ पूर्व च्यारसो मीलके मारा, तेरां मो भागा जाणो, मांन माया लोभें इणीपरे, नौनसो भागा पिच्छाणो ॥ नाथ० ॥ ५ ॥ एक एक भागे काल अनन्तो, चेतन चउगति रमीयों, अब तुज चरण शरण दो साहब, ज्ञानसुन्दर मन गमीयो ॥ नाथ० ॥ ६ ॥ इति.

नं० २ श्री आदिनाथ ।

सुनके पातीक मेरा, अवतार तार तार आदिनाथ ॥ टेर ॥ काल अनादि ताप तपतों, आज आलोचित पाप, पांचसो त्रेसठ भेद जीवका, माफी करादो आप ॥ सु० ॥ १ ॥ चौदा नरक अडतालीस तीर्यच, मनुष्य तीनसेतीन । एकसो अठाणु भये देवका, अभिहयादि गुण लीन ॥ सु० ॥ २ ॥ राग द्वेषसे दुगुना करिये, तीन्हको गुनीये तीहुकाल, तीन योगसे पुनः गुनलीजे, गुन करण तीहु संभाल, ॥ सु० ॥३॥ षट्के साखसे करत आलोचन, होत है लक्ष अठार, सहस्र चौविस एक सो उपर, वीस भये निरधार ॥ सु० ॥ ४ ॥ शुद्ध आतम निष्कपटसे, मिथ्यादुष्कृत निवार, ज्ञानसुन्दर जिन चरन शरन अब, नइयां करदो पार ॥ स० ५ ॥ इति.

नं० ३ श्रीआदिनाथ प्रभु ।

अपनाही रंगमें रंगदो नाथ मोंको अपनाही रंगमें रंगदो ॥ टेर ॥ मोह मिथ्यात लग्यो मुज लारे, सो अब इन्हको हरदो ॥ नाथ० ॥ १ ॥ राग द्वेष दोय चौर लुटेरा, इन्साफ करी इन्हको दंडदो ॥ नाथ० ॥ २ ॥ रत्न तीन तुम पास खास हैं । सो अब हमको संग दो ॥ नाथ० ॥ ३ ॥ अनन्त ज्ञान दर्शनके दाता, एक अंस अब मुज दो ॥ नाथ० ॥ ४ ॥ ज्ञानसदा प्रभु शरन तुमारे, मेरी नइयां पार लगादो ॥नाथ० ॥ ५ ॥ इति.

न० ४ श्री नेमिनाथ प्रभु।

कोंण जाने श्याम तौरा मनकि मनाकि तनाकि लगन-किरे कोंण ॥ टेर ॥ मिवा देविके नन्द कहाया, आ जान युक्तसे लाया, रथ नेमी तोरण पे आयारे । को० ॥ १ ॥ पुकार सुनी पशुवनकी, प्रभु दया करी तुम तीनकि, मेरी प्रीत तोडी नव भवकीरे । कोण ॥ २ ॥ कोण दुति कामन कीनो, शिव रमणीपे चित्त दीनों, सहसावन सयम लीनोरे ॥कोण ॥ ३ ॥ विन अवगुण मुजकों त्यागी, लो-आप भये वैरागी, फिर कहा जावोगा भागीरे। कोण॥ ४ ॥ आप पेहलीमें जाउ, शिव-पुरमें सेज बिन्छाउ, मे अचल प्रेम बनाउरे । कोण ॥५॥ यों चनीयों प्रेम मजारो, अपनोभि विरुद विचारो, प्रभु ज्ञानसुन्दर को तारोरे । कोण ॥ ६ ॥ इति

न० ५ श्री आदिनाथ भगवान्।

हे प्रभु मोय दर्शन दे ॥ टेर ॥ में हु प्यासा तुज दर्शनका, दीनपे करुणा क्यों न करे॥ हे० ॥ १ ॥ क्या नुकशान किया में तेरा, मेरी अरजी क्यों न सुने ॥ हे० ॥ २ ॥ अबर पापीकों तार दिया, अब भक्तकों क्यों विसारा ॥ हे० ॥ ३॥ आप नीरागी बनके बेठे, मुजे निरागी क्यों न करे॥ हे० ॥ ४ ॥ रहीम दील उत्कृष्टा, होके अब क्यों हृदय निष्टुर भये । हे० ॥ ५ ॥ जब होवेंगे आप रुपमें, तब तेरी गरजी कोन करे ॥ हे० ॥ ६ ॥ आदिनाथकों भेट लिया, फिर इच्छत

सुखको क्यों न वरे ॥ हे० ॥ ७ ॥ आतमराम अध्यात्म साखी ज्ञान सुमति संग लपट रहे ॥ हे० ॥ ८ ॥ इति.

नं० ६ श्री भगवतीसूत्रकी स्तुति. (होरी)

जय बोलो सदाशिव शान्तिकी जय बोलो ।
जय बोलोरे पांचमा अंगकी जय बोलो ।
जय बोलोरे सूत्र भगवतीकी जय बोलो ।

भगवतीसूत्रने विवाहपन्नति, पांचम अंग और शिवशान्तिरे ॥ जय० ॥ १ ॥ जिनवर भाषित द्वादशांगी, गणधर गुन्थी नवरंगीरे ॥ जय० ॥ २ ॥ मूल श्रुतस्कन्ध शतककी शाखा, अन्तर शतक[१३८] हे प्रति शाखारे ॥ जय० ॥ ३ ॥ पत्र पुष्प उद्देश[१९२५] जिन्हका प्रश्न[३६०००] सुन्दर फल तीन्हकारे ॥जय०॥४॥ अनुभव रस और प्रेमका प्याला, चैतन बन गया मतवालारे ॥ जय० ॥ ५ ॥ भरतचक्रीने श्रेणिक राजा, तुंगीया तणा श्रावक ताजारे ॥ जय० ॥ ६ ॥ मृगावतीने और जयन्ति, चेलणा राणी गुणवंतीरे ॥ जय० ॥ ७ ॥ इत्यादिक चउविध संघ सारा, द्रव्यभाव बनी पुजारारे ॥ जय० ॥ ८ ॥ गहुंली करी मंगल गावे, मोतीयन चोक पुरावेरे ॥ जय० ॥ ९ ॥ भगवती सुनीया भगवन्त थावे, पूजा करतो शिवपद पावेरे ॥ जय० ॥ १० ॥ भवभव शरणो होजो मुजने, आयाद करुं नहीं हुं तुजनेरे ॥ जय० ॥ ११ ॥ आज आनन्द रंग मंगल वरसे, पाप रही हीवेशुं करशेरे ॥ जय० ॥ १२ ॥ अष्टसिद्धि

नवनिधिके दाता, शरणे आयो करे बहु ज्ञातारे ॥ जय० ॥ १३ ॥ नगर फलोधि साल सीत्तर, चौमासे चित आनन्दकर ॥ जय० ॥ १४ ॥ आषाढ आरम फागण पुरे, कृष्ण चोथ चउगति चुरेरे ॥ जय० ॥ १५ ॥ ज्ञानकल्प तरु आगण फलीयो, सुन्दर आज मेलो मीलीयोरे ॥ जय० ॥ १६ ॥ इति

न० ७ भाव (होरी)

खेलो होरीरे ज्ञान बगीचेमें ॥ खेलो० ॥ टेर ॥ क्षमाको कोट ने श्रद्धाकी धरती, दयातणी बुरज फीरतीरे ॥ खे० ॥ १ ॥ तपकी तोपो उपशम साजे, दानादिक चउ दरवाजेरे ॥ खे० ॥ २ ॥ मन मोगरो चित चम्पेली, क्रिया केतकी बनी वेलीरे ॥ खे० ॥ ३ ॥ ज्ञान गुलाब जाइ जुइ जतना, ध्यान मडप बनीया कीतनारे ॥ खे० ॥ ४ ॥ गुप्तीका गुच्छा समितिकी लत्ता, शील सुगन्ध भरी सत्तारे ॥ खे० ॥ ५ ॥ नयननिक्षेप पुष्प हे निका, नवतत्त्व फल नम्या जीकारे ॥ खे० ॥ ६ ॥ हृदय होदने शुद्ध मन पाणी, शम संवेगनु रंग जाणीरे ॥ खे० ॥ ७ ॥ स्याद्वादकी डोलची मारी, कुट काडी कुमति नारीरे ॥ खे० ॥ ८ ॥ ज्ञान पीचकारी भरी भरी मारी, मोहकी छाकको निवारीरे ॥ खे० ॥ ९ ॥ सिद्धान्तकी भग गुरु गुरु गोटी, भर भर पीवो बडी लोटीरे ॥ खे० ॥ १० ॥ नसेकी तारमें माल मसाला, षट् द्रव्य ओडण दुसालारे ॥ खे० ॥ ११ ॥ राचे माचे नाचे मारी, चेतन संग सुमति नारीरे ॥ खे० ॥ १२ ॥ मरुधर नगर फलोधि भारी, साल सीत्तर सुखकारीरे

॥ खे० ॥ १३ ॥ इण विध होरी खेलो मेरे प्यारे, ज्ञानसे कर्म करो न्यारे रे ॥ खे० ॥ १५ ॥ इति.

(८) श्री आनंदघनजी कृत अध्यात्मपद.

अवधू क्या मागुं गुन हीना, वे गुन गनान प्रवीना ॥ अवधू० ॥ गाय न जानुं वजाय न जानुं, न जानुं सुर मेवा । रीज न जानुं रीजाय न जानुं, न जानुं पद सेवा ॥ अ० ॥ १ ॥ वेद न जानुं कीताव न जानुं, जानुं न लच्छन छंदा, तर्कवाद विवाद न जानुं, न जानुं कवि फंदा ॥ अ० ॥ २ ॥ जाप न जानुं जुवान न जानुं, न जानुं कवि वाता, भाव न जानुं भगति न जानुं, जानुं न सीरा ताता ॥ अ० ॥ ३ ॥ ग्यान न जानुं विग्यान न जानुं, न जानुं भज नामा, आनंदघन प्रभुके घर द्वारे, रटन करुं गुण धामा ॥ अ० ॥ ४ ॥ इति.

(९) अवधू राम राम जग गावे, विरला अलख लखावे ॥ अवधू० ॥ मतवाला तो मतमें माता, मठवाला मठराता, जटा जटाधर पटा पटाधर, छता छताधर ताता ॥ अ० ॥ १ ॥ आगम पढी आगम घर थाके, माया धारी छाके, दुनियांदार दुनिसें लागे, दाशा सब आशाके ॥ अ० ॥ २ ॥ बहिरात्मा मूढ जग जेता, मायाके फन्द रहेता, घट अन्तर परमातम भावे, दुर्लभ प्राणी तेता ॥ अ० ॥ ३ ॥ खग पद गगन मीनपद जलमें, जोखों जेसो वैरा, चित्त पंकज खोजे सो चिन्हे, रमता आनंद भौरा ॥ अ० ॥ ४ ॥ इति.

(१०) आशा औरनकी क्या कीजे, ज्ञान सुधारस पीजे । आशा ॥ भटके द्वार द्वार लोकनके, कूकर आशा धारी, आतम अनुभव रसके रसीया, उतरे न कबहु खुमारी ॥ आ० ॥ १ ॥ आशा दासी के जे जाये, ते जन जगके दासा, आशा दासी करी जे नायक, लायक अनुभव प्यासा ॥ आ० ॥ २ ॥ मनका प्याला प्रेम मसाला, ब्रह्म अग्निपर जाली, तन भाठी अवटाइ पीये कस, जागे अनुभव लाली ॥ आ० ॥ ३ ॥ आगम प्याला पीयो मतवाला, चिन्ही अध्यातम वासा, आनन्दघन चैतन वहै खेले, देखत लोक तमासा ॥ आ० ॥४॥

(११) अकल कला जगजीवन तेरी, अकल० । अनन्त उदाधिथी अनंत गुणा तुज, ज्ञान लघु बुद्धि ज्यु मेरी ॥ अकल० ॥१॥ नय अरु भंग निक्षेप विचारत, पुरवधर थाके गुण हेरी, विकल्प करत थाग नहीं पाये, निर्विकल्प होत लहरी ॥ अ० ॥ २ ॥ अंतर अनुभव विनतोय पदमें, युक्ति नहीं कोउ घटत अनेरी, चिदानन्द प्रभु करी कीरपा अब, दीजे ते रस रीझ भलेरी ॥ अ० ॥ ३ ॥ इति.

(१२) जोग जुगति जाण्या विना, कहा नाम धरावे. । रमापति कहे रकसु, धन हाथ न आवे ॥ जो ॥ १ ॥ भेख धरी माया करी, जगकु भरमावे, पूरण परमानन्दकी, सुधिरंचन पावे । जो ॥ २ ॥ मन मुडये विन मूडकु, अति घेट मुंडावे, जटा जूठ शिर धारके, कउ कान फरावे । जो ॥ ३ ॥ उर्ध्व-

बाहु अधोमुखें, तन तापत पावें, चिदानंद समज्यों विनो, गि-णती नवि आवे ॥ जो ॥ ४ ॥ इति.

(१३) अवधू निरपक्ष विरला कोइ । देख्या जग सहु जोइ ॥ अ० ॥ समरस भाव भला चित्त जाँके, थाप उथापन कोइ, अविनासीके घरकी वातों, जानेगा नर सोइ ॥ अ० १ ॥ राव रंकमें भेद न जाने, कनक उपलसम लेखे, नारी नागणीको नहीं परिचय, सो शिव मन्दिर देखे ॥ अ० ॥ २ ॥ निंदा स्तुति श्रवण सुणिने, हर्ष शोक नवि आणे ॥ ते जगमें जोगी-सर पुरा, नित्य चडते गुणठाणे ॥ अ० ॥ ३ ॥ चन्द्र समान सौम्यता जाकी, सायर जेम गंभीरा; अप्रमत्त भारंड परे नित्य, सुमेरगीरी सम धीरा ॥ अ०॥ ४ ॥ पंकज नाम धराय पंकशुं, रहत कमल जिम न्यारा, चिदानंद इस्या जन उत्तम, सो साह-बका प्यारा ॥ अ० ॥ ५ ॥ इति ॥

(१४) मारग साचा कोउ न बतावे, जाकुं जाय पूछीयें ते तो अपनी अपनी गावे । मारग । मत्तवारा मत्तवाद वाद धर, थापत निजमततनीका, स्याद्वाद अनुभव विन ताका, क-थन लगत मोहे फीका । मा० । १ । मत्त वेदांत ब्रह्मपद ध्यावत, निश्चय पख उर धारी, मीमांसक तो कर्म वदे ते, उदय भाव अनुसारी । मा० । २ । कहत बौद्ध ते बुद्ध देव मम, क्षणिक रूप दरसावे, नैयायिक नयवाद ग्रहीने, करता कोउ ठेरावे । मा० । ३ । चारवाक निज मनः कल्पना, शुन्यवाद

कोउ ठाये, तिनमें भये अनेक भेद ते, अपनी अपनी ताये। मा०। नय सरवग साधना जामे, ते सर्वज्ञ कहावे, चिदानन्द एसा जिन मारग, खोजी हो सो पावे। मा०। ५।

(१५) अपने पदकों तजके चैतन, परमें फसना ना च-हिये, रजमे रोना अेस असरतमें हसना ना चहिये। टेर। जगत वस्तु सब विनासीक, तीहु काल विसरना ना चहिये, रान रक हो कभी अपशोष करना ना चहिये। सुखमें दुःख और दु खमें सुख इनमें चित्त धरना ना चहिये, यह पौद्गलीक है इनका आपमें समझना ना चहिये, तेरा तो एक भेष निराला, कीसीमें वसना ना चहिये। रज। १। भाइ बन्ध सुत दारासे कर प्रित हरखना ना चहिये, यह स्वार्थ साथी भरोसा इन्हका रखना ना चहिये, हुइ तेरी गफलत अनादाकी अबतों रखना ना चहिये, यह दुःखदाइ है, भुल या भली नही, रखना ना चहिये, दर्शनज्ञान जो सभाव तेरा, जिसे विसरना ना चहिये। रज। २। तु चैतन है सबसे न्यारा, भरममें आना ना चहिये, जडमें आपा आपमें जडका गाना ना चहिये। तु अविनासी येह विनासी, तुजे लोभाना ना चहिये, इन आतम रत्नको काचखड मूल्य विकाना ना चहिये, निकल जलदी इन्ह अन्ध कूपसे, पड्या तडफना ना चहिये। रज। ३। राग द्वेष भट पाडासे निज विभव ठगाना ना चहिये, ज्ञानी होके कभी पर सग लगाना ना चहिये, तेरे और परमातममें कुच्छ फरक

समझना ना चहिये, ये वही चिदानन्द जिसको वृथा मताना ना चाहिये, हो कुन्दन अब जगसे न्यारा, भोग विलसना ना चहिये ॥ रंज ॥ ४ ॥ इति ॥

(१६) दरशन दिजे शीतलनाथ, मुक्तिपदके देनेवाले । टेर । मैं लख चोरासीमें भटका, मेरा मीटा नहीं क्यों खटका, नित कर्म दीखावे लटका जोकि, नरक लेजाने वाले । द० । १ । प्रभु तुमहो पर उपगारी, एक मानो अरज हमारी, दो स्थिर चित्त सेवाधारी, अनुभव ज्ञान जचाने वाले । द० । २ । शुद्ध समकित दर्शन पाया, मिथ्या मत अंधेर मीटाया, गुण रत्नत्रय प्रगटाया, भवोदधि पार लगानेवाले । द० ।३। इति.

(१७) वलिहारि वलिहारि वलिहारि जगनाथ ह्मजाउं तोरी शान्ति जिन शान्ति सेवक दीजीयेजी ॥ टेर ॥ काल अनादिकेरा फिरताहुं जगमें फेरा, अंत न आयो जिन उपगारी ॥जग० १॥ पून्यउदय पायो, चरण शरण आयो, और न तुमसमजग दातारी ॥जग० २॥ चिदघन नामी स्वामि शिवपदगामी पामी, जूठ न मानु अब हितकारी ॥ जग० ३ ॥ दीन अनाथ नाथ, ग्रहियो में हाथ साथ, दोष न रंनक गुण भंडारी ॥जग० ४॥ आतमको सुख आपो, वल्लभना दुःख कापो, फेर न लेउं भव अवतारी ॥ जग० ५ ॥ इति ॥

(१८) नजरटुक महेरकी करके, दिखादोगे तो क्या होगा ।

अनुपम रुपहै प्रभुजी, नचादोगे तो क्या होगा ॥ टेर ॥ प्रभु तुमदीनके रक्षक, करो मुझ दीनकी रक्षा, चौराशीलक्ष कि फेरी, मिटादोगे तो क्या होगा ॥ १ ॥ अनादि कालसे भमता, नहि अभी अंत आया है, शरण अब आपका लीना, हटादोगे तो क्या होगा ॥२॥ अनादि कालसे रुलिया, बन्यो मिटी, कभी पानी, तेउ वायु हरीकाया, नचादोगे तो क्या होगा ॥ ३ ॥ बि-तिं-चउजाती पचेन्द्री, पशु परवश दुःखपाया, अमर नरना-रकी रुपे, छुडादोगे तो क्या होगा ॥ ४ ॥ इसी समार साग-रमें, मेरी प्रभु डुबती नईया, करी करुणा किनारेपर, लगादोगे तो क्या होगा ॥ ५ ॥ करो प्रभुपार भवोदधिसे, निजातम सम्पदा दीजें, सेवकको अपना वल्लभ, बनालोगे तो क्या होगा ॥ ६ ॥ इति

(१९) भर लावोरे कटोरा चन्दनका, नव अग पूजो परमेश्वरका। भ० १। सति द्रौपदी चन्दन चरच्यो, ज्ञान सुनो सूत्र ज्ञाताका। भ० २। नर नारी मीलमील के पूजो, पावो अचल सुख मुक्तिका। भ० ३। आज आनन्द रग मगल गावो, सेवक चाकर चरणोंका। भ० ४। इति

(२०) भर लावोरे चगेरी फूलनकि, आगी रचावो ना भिकुलनकि। टेर। चपो चपेली मरवो मोगरो, विचविच छ-डियो गुलाबनकि। भ० १। केवडो केतकि गन्ध सुवासीत, खुब खुली छबी हारनकि। भ० । २। गेंद गुलाबको हृदय

विराजित, मूर्ति सोहे मन मोहनाकि । भ० । ३ । सुरसुरियामें जिनवर पूजा. साख सूत्रों रायप्रसेनीकि । भ० । ४ । द्रव्य भावसे पूजा करतो, निर्मल ज्योती समकितकि । भ०।६। इति.

(२१) प्रभु तुम सम और न कोइ खलकमें । प्रभु० । हरिहर ब्रह्म विगोवता सो तो मदन तें जीत्यो पलकमें । प्रभु० ।१। ज्युं जल जगमें आग बूजावत । वडवानल सो पीवे पलकमें । प्रभु । २ । आनन्दघन प्रभु वामारे नन्दन । तोरी हाम न होत हलकमे । प्रभु० । ३ ।

(२२) सोहं सोहं सोहं सोहं सोहं । सोहं रटना लगीरी । सो । टेर । इंगला पिंगला सुखमना साधके, अरुण पतिथी प्रेम पगीरी । वंक नाल खट चक्र भेदके, दशमें द्वार शुभ ज्योति जगीरी । सोहं० । १ । खुलत कपाट घाट निज पायो, जनम जरा भय भीति भगीरी ॥ काच शकल दे चिंतामणि ले । कुमता कुटिल कूं सहज ठगीरी । सोहं० । २ । व्यापक सकल स्वरूप लख्यो इम । जिम नभमें मग लहत खगीरी । चिदानन्द आनन्द मूरति । निरख प्रेमभर बुद्धि थगीरी । सोहं० । ३ । इति

(२३) किन गुन भयोरे उदासी भमरा । किनगुन० । टेर । पंख तेरी कारी, मुख तेरा पीरा । सब फूलनको वासी । भमरा० । १ । सबकलीयनको रस तुम लीनो । सो क्युं जाय

नीरासी । भमरा० । २ । आनन्दघन प्रभु तुमारे मीलनकों । जाय करवत ल्यू कामी । भमरा० । ३ ।

(२४) वारोरे कोइ परघर रमवानो ढाल, न्हानी वहुने परघर रमवानो ढाल । वारोरे । टेर । परघर रमतों थई जूठाबोली, देशे धणीजीने गाल । वारो । १ । अलवे चाला करति हींडे, लोकडा कहे छे छीनाल । ओलजडा अण जणना लावे, हुंडे उपासे शाल । वारो । २ । वाडेर पाडोसण जुआने लगारक । फोकट खासे गाल । आनन्दघन प्रभु रगे रमतों, गोरे गाल भत्रुके भाल । वारो । ३ । इति ।

(२५) ऐसे जिनचरने चित्त लाउरे मना एसे अरिहतके गुन गाउरे मना । टेर । उदर भरनके कारनेरे गौआ वनमें जाय । चारो चरे चिहु दिश फीरे, वाकी सुरति वछरुआ माहेरे । मना । १ । पाच सात साहेलीयारे, हील मील पाणी जाय, ताली दीये खडखड हसेरे, वाकी सुरति गगरुआ माहेरे । मना ॥ २ ॥ नटुआ नाचे चोकमेंरे, लोक करे लख सोर । वांसग्रही वरते चढे । वाकों चित्त न चले कहु ठोररे मना ।३। जूआरी मनमें जूवारे, कामिनीके मन काम । आनन्दघन प्रभु कहे, तुमे ल्यो भगवन्तको नामरे मना । ४ । इति ।

॥ इति श्री स्तवनसग्रह भाग तीजा समासम् ॥



अथ श्री

सज्झाय तथा गहुंली संग्रह.

भाग १ ला.

नं० १ दशवैकालिककी सज्झाय.

धम्मो मंगल मुकिठं, अहिंसा संजमो तवो। देवावितं नमंसंति, जस्स धम्मे सयामणो ॥ १ ॥ जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आविरइ रसं। नय पुप्फ किलामेई, सोय पीणइ अप्पयं ॥ २ ॥ एमे ए समणा मुत्ता, जे लोए संति साहुणो। विहं-गमाव पुप्फेसु, दाण भत्ते सणे रया ॥ ३ ॥ वयं च विर्त्ति लब्भामो, न य कोइ उवहम्मई। अहागडेसु रीयंते, पुप्फेसु भमरा जहा ॥४॥ महुकार समा वुद्धा, जे भवंति अणिस्सिया। नाणापिंड रया दंता, तेण वुच्चंति साहुणो। त्तिबेमि। इति.

नं० २ बीजकी सज्झाय.

या बीज कहे सुण कन्त शान्त घर आवो तो सही ॥ या बीज० ॥ टेर ॥ रतन तीन तुम पास खास किम खोवो छो सही। यों शम संवेगका रंग पिया किम धोवो छो सही– धोवो छो सही रे मेरे चैतन धोवो छो सही ॥या बीज०॥१॥ कुमति कुटीला नार जार संग जोवो छो सही। यों नरक निगोदको बीज पिया किम बोवो छो सही ॥ बोवो० ॥ या बीज०

॥२॥ शब्द रूप रस गन्ध फन्दमें मोहो छो सही। या पर-पुद्‌गल मग बेठ बेठ किम खोवो छो सही ॥ खोवो० ॥ या बीज० ॥३॥ तृष्णा मच्छर मान विषय निप होवो छो सही। या देख पराइ नार लार किम जोवो छो मही ॥ जोवो० ॥ या बीज० ॥४॥ सुमति बिच्छाइ सेज मेजपर पोढो तो सही। या अनुभव ज्ञानकी प्रीत रीत घर माटो-तो सही ॥ मांडो० ॥ या बीज० ॥ ५ ॥

नं० ३ पाचमकी सझाय

तप वडोरे ससारमें जीव उज्वल थावेरे । कर्मरुपी इधन जले, वेलो मुक्तिमें जावेरे ॥ तप० ॥ टेर॥ शासनपति श्री वीरजी, कर्म काटण जगमूरारे। साढा बारा वर्ष भूजीया, बाजा तप कारण तूंरारे ॥ तप० ॥ १ ॥ कठिन कर्मको छेदके, पाम्या केवल नाणोरे । छठ छठ तप कीया पारणा, गणधर गौतम जाणोरे ॥ तप० ॥ २ ॥ छठ तप अंबिलपारणे, अरस निरस आहारोरे । वीर जिनन्द बखाणीयो, धन्य धनो अण-गारोरे ॥ तप० ॥३॥ काली आदि दश जाणजो, श्रेणिक नृपनी नारोरे । एकावली मुक्तावली, पोया तपस्याना हारोरे ॥ तप० ॥ ४ ॥ आनन्द आदि श्रावक हुवा, धरी प्रतिमा इग्यारोरे । तप करी काया शोपवी, हुवे एका अवतारोरे ॥ तप० ॥ ५ ॥ कोटी सचित हुवे, किधा कर्म विकरालोरे। क्षमा सहित तपस्या करे, देवे छीनमें प्रजालोरे ॥ तप० ॥ ६ ॥ आगधो

ज्ञान पंचमि, दुःख दोर्भाग्य जावेरे। निर्मल हुवे आतमा, ज्ञान केवल पावेरे ॥ तप० ॥ ७ ॥ इति ।

नं० ४ पखवाडाकि सझाय।

पिया पखवाडो वितों, वितोंरे दोय पखा एक मास, पिया पखवाडो वितों । टेर । एकम कहे तुं एकलोरे, थारो नहीं जग कोय । स्वारथीया मीलीया सहुरे, ज्ञान दीपकसे जोय–पिया । १ । दुज कहे बन्ध करमकारे, राग द्वेष दोय बीज । उखेडो जडा मूलसेरे, संभालो निज चीज पि० । २ । तीज कहे तत्त्व धरोरे, हृदय करों विचार । देवगुरु धर्म शुद्ध-तारे, भवजल तारणहार पि० । ३ । चोथ च्यार कषायकोंरे, चंडाल चोकडी नाम । त्यागो संगत तेहनीरे, तो पामों निज धाम पि० । ४ । पंचमि पंच इन्द्रिय तणारें, तेवीस विषयसे रहो दूर । दो सो बावन विकारकोंरे, जाण करो चकचूर पि० । ५ । छठ जयणा छे कायनीरे, सात भय निवार, आठमदको परिहरोरे, नव पालो ब्रह्मचार पि० । ६ । दशविध यतिधर्म धरोरे, पडिमा वहो इग्यार । बारा प्रतिमा साधुतणीरे, तेरा काठीया निवार पि० । ७ । चवदा नियम चीतारजोरे, जनम सफल होय जाय । पख पुरो पुनम दिनेरे, पूर्णकला प्रगटाय पि० । ८ । सातवार पन्दरे तीथीरे, एक दिन आसे काल । चेत सके तो चेतलेरे, पाणी पहेला बान्धो पाल पि० । ९ । उगणीसे इठंतरेरे, फलवृद्धि कीयों चोमास, ज्ञान उपदेश सुणी भलोरे, करो करमोंका नास पि० । १० । इति ।

न० ८ इग्यारा अंगकि सझाय ।

अग इग्यारे पूजो प्राणी, इम कह्यो केवलनाणीरे । अग० । टेर । प्रथम अग आचारग जीणरा, दो श्रुत स्कन्ध वाजेरे, अध्ययन पैंचवीस उदेशा पीच्यासी, मुनि क्रियासु छाजेरे ॥ अग० ॥ १ ॥ बीम स्रयघडायांग दो श्रुत स्कन्धे, अ-तेवीस उ-तेतीसरे । स्वमत मडन परमत खडन, न्याय युक्ति विशेषरे ॥ अग० ॥ २ ॥ ठाणायग दशठाणा उदेशा, एकवीस कह्या न्यारान्यारारे । एक से दश बोलोंको सग्रह, सक्षेपे कह्या सारारे । अग ॥ ३ ॥ सामवायगमें एक से लेके, क्रोडाक्रोडी ताई रे । अरिहत चक्री हरी हलधर सन, सून सुधज आइ रे । अग ॥ ४ ॥ पचम अग भगवती सूत्र, शतक इगतालीस सारा रे । उगणीसो पचवीस उदेशा, प्रश्न छत्तिस हजारा रे । अग ॥ ५ ॥ ज्ञाता धर्मकथा छे जिणमें, अध्ययन कह्या उग णीसो रे । साढा तीन क्रोड छे कथा, नन नव रगवणीसोरे । अग ॥ ६ ॥ उपासक दशाग सातमे, श्रावकोंका अधिकार रे । प्रतिमा साधी व्रत आराधी, हुवे एका अनतार रे । अग ॥ ७ ॥ अन्तगढमें मुनिवर नेउ (९०), अन्तमें केवलनाणो रे। अनुत्तरोववाइमें मुनि तेतीस, गया अनुत्तर वैमाणो रे । अग ॥ ८ ॥ प्रश्न व्याकरण दशमे अगे, विद्या अनेक प्रकारो रे । अगुष्टादि उत्तर आपे, सनरासवर विचारो रे । अग ॥ ९ ॥ दोय भेद विपाक लहीजे, सुख दु खको अधिकाररे । द्रष्टिवाद

अंग बारमो, नही हमाणो प्रचार रे । अंग ॥ ६ ॥ पूजा कीजे शील पालीजे, दान सुपात्रे दीजे रे । ज्ञान कहे कल्याणक दिवसे, मौने पौषद लीजे रे । अंग ॥ १० ॥ इति ।

नं० ६ संखपोक्खली श्रावककी सज्झाय.

भविक जन तरीये इम संसार, पामी जे भवपार ॥ भविक जन तरीये इम संसार ॥ टेर ॥ जम्बुद्विपका भरतमेंजी, सावत्थी नगरी जाण । संख श्रावक जहां वसेजी, पोखली आदि गुणखाण ॥ भ० ॥ १ ॥ विचरन्त वीर समोसर्याजी, परिषदा वन्दन जाय । वाणी सुधारस देशनाजी, सुणतां आनन्द थाय ॥ भ० ॥ २ ॥ वांदीने पाछा वळ्याजी, संख कहे सुनो एम । आज पाखीनो दीन छेजी, पौषध करो धरी प्रेम ॥ भ० ॥ ३ ॥ यत्ना कर निपजावजोजी । असनादिक चउआहार । खातां पीतां विचरशोजी, पौपद शुं करी प्यार ॥भ० ॥ ४ ॥ विनय करी कहे पोखलीजी, तुम आज्ञा परिमाण । भोजनकी तैयारी करेजी, विविध प्रकारे जाण ॥ भ० ॥ ५ ॥ संख निज घर आवतांजी, चढीयां भाव रसाल, निज नारी सूचित करीजी, पहुंचा पौपधशाल ॥ भ० ॥ ६ ॥ निराहार पौपध करीजी, ध्यावे धर्म ज ध्यान, पोखली आव्या तेडवाजी, उत्पला[1] दे सन्मान ॥ भ० ॥ ७ ॥ वन्दन कर पुछे इसोजी, भले पधार्या आज,* संख श्रावक किहां गयाजी, छे मुज तेथी काज ॥ भ० ॥ ८ ॥ वळती बोले उत्पलाजी, पौषधशाल

१ उत्पलाजी संख श्रावककी भार्या है वह भी श्राविका है । * पोखली बोला.

मझार । पोखली त्या आवी करीजी, वन्दन करे नमस्कार ॥ भ० ॥ ६ ॥ चालो पौषध कीजीयेजी, भोजन त्रिविध तैयार, आज मुझे कल्पे नहींजी, तुम छन्दे करो विचार ॥भ०॥१०॥ विस्मय पामी पोखलीजी, आया निज पौषधशाल । खाता पीता पौषध करेजी, निज आतम उज्वाल ॥ भ० ॥ ११ ॥ प्रात. उठी गया वीरपेजी, सुनी उपदेश रसाल । सख हीले पोखलीजी, भापे दीनदयाल ॥ भ० ॥ १२ ॥ प्रिय द्रढ धर्मि मख छेजी, निंदता लागे कर्म । भय पामे अति पोखलीजी, वीर नवायो मर्म ॥भ०॥१३॥ अपराध खमायो आपणोजी, वन्दन कर नमस्कार । सखजी प्रश्न पुछीयोजी, कीसो कपायको सार ॥ भ० ॥ १४ ॥ उत्तर आपे जगधणीजी, सुनजो सहु नरनार। कर्म वाधे चीकणाजी, रूले अनन्त ससार ॥भ० ॥ १५ ॥ विपय कपाय निवारजोजी, धरजो आतम ध्यान । स्वामिवत्सल भावसेजी, करलो सुन्दर ज्ञान ॥ भ० ॥ १६ ॥ सख श्रावक व्रत पालनेजी, जाशे स्वर्ग मझार । विदेहक्षेत्रमें सीझसेजी, करशे भवनो पार ॥ भ० ॥ १७ ॥ भगवती शतक बारमेजी, प्रथम उदेशे मझार। एकासणे पौषध करोजी, भापे जगदाधार ॥ भ० ॥ १८ ॥ उगणीसे इठातरेजी, माघ कृष्ण सोमवार, फलवृद्धि एकादशीजी, ज्ञान सदा जयकार ॥ भ० ॥ १९ ॥ इतिशम्.

न० ७ तुगीया नगरीके श्रावकोंकी सज्झाय (सला)

श्रावक तुगींया तणा श्री वीरना रागी हो राज ॥ श्रा-

वक्र० ॥ टेर ॥ तुंगीया नगरी सुहामणीजी, श्रावक वसे त्रि-शाल । धनधान्य उद्धारताजी, चैत्यघणा पौषधशाल ॥ श्रा० ॥ १ ॥ नवतत्त्वने ओळखेजी, क्रिया पचवीशना जाण । गुरु गीतार्थसे लीयोजी, स्याद्वाद परिमाण ॥ श्रा० ॥ २ ॥ साहाज न वंछे सुरतणोजी, द्रढ श्रद्धा जिनरंग । देव दानव समरथ नहींजी, करे धरमको भंग ॥ श्रा० ॥ ३ ॥ पार्श्वनाथ संतानी-याजी, पांचसो मुनि परिवार । तुंगीया नगरी समोसर्याजी, भवजल तारणहार ॥ श्रा० ॥ ४ ॥ श्रावक मीली वन्दन गयाजी, देशना सुनी रसाल । तप संयम फल पुछीयाजी, उत्तर आपे दीनदयाल ॥ श्रा० ॥ ५ ॥ संयम रोके आवताजी, छीण तपथी थाय । श्रावक तर्क करे इसीजी, तो देवलोके किम जाय ॥ श्रा० ॥ ६ ॥ तप संयम सरागसेजी, कर्म संग सुर थाय । परिषदा वन्दे प्रेमसेजी, आइ जीण दिशी जाय ॥ श्रा० ॥७॥ वीर कहे गौतम सुणोजी, मुनि श्रावककी जोड । दोनों शिवपद पामशेजी, कर्म झंझीरो तोड ॥ श्रा० ॥ ८ ॥ उगणीसे इठान्तरेजी, वसंतपंचमी जान । फलवृद्धि पामे सदाजी, सुन्दर करीये ज्ञान ॥ श्रा० ॥ ९ ॥ इतिशम्.

नं. ८ कामदेव श्रावककी सज्झाय (असवारी)

धन्य हे श्रावक व्रतके धारी, निज आत्माकों तारी । ॥ धन्य ॥ चम्पानगरी कामदेवजी, एक दिन पौषदशाले, दढ प्रतिज्ञा पौषद कीनो, निज आतम उज्जवाले । ध० ॥ १ ॥ देव पिशाचको रुप बनायो, दीसे महा भयंकारी, हाथमें खडग

शालामें आयो, एसा वचन उचारी । ध० ॥ २ ॥ धर्म छोडणो नहीं तुझ कल्पे, हु रे छुडावण आयो, खड खड तुझ तनका करशु, श्रावक नहीं गभरायो । ध० ॥ ३ ॥ अडग देख गज-रूप बनायो, सर्प रूप अरु कीनो । दान्ताशूल श्रोर डंक मारिया, उपसर्ग सुर बहु दीनो । ध० ॥ ४ ॥ ध्यान अखंड आत्मरमणता, देखी सुर शरमायो, देवरूप असली कर अपना, सब अपराध खमायो । ध० ॥ ५ ॥ चरम तीर्थंकर चम्पा नगरी, समोसरण सुर ठायो । कामदेव पौषद पारीने, जिन चरणोंमे आयो ॥ ध० ॥ ६ ॥ कामदेवकी करी प्रशंसा, मुनिगण वीर बुलावे । उपसर्ग सह्या श्रावक मेरा, एक भव करी शिव जावे । ध० ॥ ७ ॥ तुमे तो द्वादश अंगके पाठी, अधिक रखो मजबुती । कर्मशत्रुका नाश करीने, जलदिवरों वरमुक्ति । ध० ॥ ८ ॥ उगणीसे इठान्तर माघकी, शुक्र तीज भोमवारो, आतम ज्ञान सदा सुखकारी, फलोधी नगर मझारो । ध० ॥ ९ ॥ इतिशम् ।

न ९ आनंद श्रावककी सझाय ।

हाथ जोडी आनन्द कहे, नीचो शिप नमाय हो । स्वामी मारी उठवारी शक्तिकों नहीं, आगाचरण कराय हो । स्वामी हु अर्ज करु थासे विनति । टेर । ॥ १ ॥ गौतम चरण आगा कीया, वांद्या गणे हुलास हो । स्वामी मारो धन्य दहाडो धन्य घडी, सफल हुइ मुझ काय हो । स्वा० ॥ २ ॥ आनन्द प्रश्न पुछीयो, गौतम बोले एम हो, आनन्द प्रायश्चित लो

इण व्रतकों । राखो मुक्तिसे प्रेम हो । स्वा० ॥ ३ ॥ साचाने प्रायश्चित नहीं, झूठाने लागे पाप हो । स्वामी मैं देख्यो जैसो भाषीयो प्रायश्चित लोनी आप हो । स्वा० ॥ ४ ॥ इतनी सुण शंका हुइ, आया वीरनी पास हो । स्वामी हुं आज्ञा लेइ गयो गौचरी, कीधी वात प्रकाश हो । स्वा० ॥ ५ ॥ वळता वीर इसी कहे, वचन थयो पतीत हो । गौतम जाय खमावो आनन्दने, आ जिनमारगनी रीत हो । स्वा० ॥ ६ ॥ तहत वचन श्री वीरना, शिप चढाइ आण हो । गौतम पारणो कीधो नहीं, न्याय मारगना जाण हो । स्वा० ॥ ७ ॥ साचा साचा थे श्रावकों, गुणो करी गंभीर हो । आनन्द सरधामें संठागणा, थोरा गुण कीया श्रीमहावीर हो । स्वा० ॥ ८ ॥ सेवानन्दा नारी भली, पतिवरता शुभनित हो, गौतम वहां पण श्रेणी श्राविका, जिनमार्गकी प्रतित हो । स्वा० ॥९॥ एक मासनी संलेखना, गयो पेहले देवलोक हो । गौतम च्यार पल्योपमनो आउखो । चवीने जासी मोक्ष हो । स्वा० ॥१०॥ दान शीयल तप भावना, यह जगमें तंतसार हो । प्राणी पाळो आराधो भावसे, कुशल सदा जयकार हो । स्वा० ॥ ११ ॥ इतिशम् ।

नं० १० अमरपदकि सझाय ।

अब हम अमर भये न मरेंगे ॥ अब० ॥ या कारण मिथ्यात दीयो तज, क्युं कर देह धरेंगे ॥ अब० ॥ १ ॥ राग द्वेष जग बंध करत है, इन्हकों नाश करेंगे, मरीयों अ-

नत काल तें प्राणी, सो हम काल हरेंगे ॥ अव० ॥ २ ॥ देह विनाशी में अविनाशी, अपनिगति पकरेंगे। नासी जासी हम थिरवासी, चाखे व्है निखरेंगे ॥ अव० ॥ ३ ॥ मर्यो अनतवार बिन समज्यों, अब सुख दुःख विसरेंगे। आनदघन निपट निकट अक्षर दो, नहीं समरे सो मरेंगे ॥ अव० ॥ ४ ॥ इति ।

न० ११ निद्रासे जागृत होना ।

अवधु खोली नयन अब जोवो, द्रिग मुद्रीत काहा सोवो । अव० । मोह निंद्रा सोवत तु खोया, सर्वस्व माल अपना, पचचोर अजहु तोय लूटत, तास मर्म नहीं जाना ॥ अव० ॥ १ ॥ मीली च्यार चडाल चोकडी, मत्री नाम धराया । पाइ केफ प्याला तोहे, सकल मुलक ठगखाया ॥ अव० ॥ २ ॥ शत्रुराय महाबल जोद्धा, निजनिज सैन्य सजाये । गुणठाणेमें बन्ध मोरचे, घेरिया तुम पुर आये ॥ अव० ॥ ३ ॥ परमादी तुं होय पियारे, परवशता दुःख पावे । गया राजपुर सारथ सेंती, फीर पाछा घर आवे ॥ अव० ॥ ४ ॥ सामली वचन विवेक मित्तका, छिनमे निज दल जोड्या । चिदानद एसी रमत रमतां, ब्रह्म वक गढ तोड्या ॥ अव० ॥ ५ ॥ इति ॥

न० १२ आपस्वभावनि समाय ।

आप स्वभावमां रे अवधु सदा मगनमें रहेना । टेर । जगत जीवहे करमाधिना, अचरिज कच्छुअ न लिना ॥ आप० ॥ १ ॥ तु नहीं केरा कोइ नहीं तेरा, क्या करे मेरा मेरा,

तेरा है सो तेरी पासे, अवर सबे अनेरा ॥ आप० ॥ २ ॥ वपु विनासी तुं अविनासी, अबहै इनको विलासी । वपु संग जब दूर निकासी, तब तुम शिवका वासी ॥ आप० ॥ ३ ॥ राग ने रीसा दोय खविसा, ए तुम दुःखका दीसा । जब तुम उनको दूर करीसा, तब तुम जगका ईशा ॥ आप० ॥ ४ ॥ परकी आशा सदा निराशा, ये है जगजन पासा । ते काटनकुं करो अभ्यासा, लहो सदा सुखवासा ॥ आप० ॥ ५ ॥ कबहीक काजी कबहीक पाजी, कबहीक हुआ अपभ्राजी । कबहीक जगमें कीर्ति गाजी, सब पुद्गलकी बाजी ॥ आप० ॥ ६ ॥ शुद्ध उपयोगने समताधारी, ज्ञान ध्यान मनोहारी । कर्मकलंककुं दूर निवारी, जीव वरे शिवनारी ॥ आप० ॥ ७ ॥ इति ॥

नं० १३ समकितनी सझाय.

समकित नवि लह्योरे, एतो रूल्यो चतुर्गति मांहे ॥ सम० ॥ त्रस थावरकी करुणा कीनी, जीव न एक विराध्यो । तीनकाल सामायिक करतां, शुद्ध उपयोग न साधो ॥ सम० ॥ १ ॥ झूट बोलवाको व्रत लीनो, चौरीको पण त्यागी । व्यवहारादिक महानिपुण भयो, अंतरद्रष्टि न जागी ॥ सम० ॥ २ ॥ उर्ध्व भुजा करी उंधो लटके, भस्म लगा धूम गटके । जटा जूट शिर मुंढे झूटो, विन श्रद्धा भव भटके ॥ सम० ॥ ३ ॥ निज परनारी त्यागज करके, ब्रह्मचारी व्रत लीनो । स्वर्गादिक याको फल पामी, निज कारज नवि किनो ॥ सम० ॥ ४ ॥

बाह्य क्रिया सब त्याग परिग्रह, द्रव्यलिंग धर लीनो। देवचन्द्र कहे आनिधतो हम बहुतवार कर लीनो ॥सम०॥५॥ इति

न० १४ लघुताकी सझाय

लघुता मेरे मन मानी, लेइ गुरुगम ज्ञान निशानी ॥ लघु० ॥ टेर ॥ मद अष्ट जिनोने धारे, ते दुर्गति गये निचारे। देखो जगतम प्रानी, दु ख लहत अधिक अभिमानी ॥लघु०॥१॥ शशी सूरज बडे कहावे, ते राहुके वश आवे। तारागण लघुता धारी, स्वर भानु भीति निवारी।।लघु०॥२॥ छोटी अति जोयण गन्धी, लहे खटरस स्वाद सुगन्धी। करटी मोटाइ धारे, ते छार शीश निज डारे ॥ लघु० ॥ ३ ॥ जब बालचन्द्र होय आवे, तब सहु जग देखण जावे। पूनम दिन बडा कहावे, तब क्षीण कला होय जावे ॥ लघु० ॥ ४ ॥ गुरुवाइ मनमें वेदे, उपश्रवण नासिका छेदे। अग माहे लघु कहावे, ते कारण चरण पूजावे ॥ लघु० ॥ ५ ॥ शिशु राज धाममें जावे, सखी हिलमिल गोद खेलावे। होय बडा जाण नहीं पावे, जावे तो शिश कटावे ॥ लघु० ॥ ६ ॥ अतरमद भाव वहावे, तब त्रिभुवन नाथ कहावे। इम चिदानद ए गावे, रहणी विरला कोउ पावे ॥ लघु० ॥ ७ ॥ इति

न० १५ कथणी

कथणी कथे सहु कोइ, रहेणी अति दुर्लभ होइ ॥टेर॥ शुकरामको नाम बखाणे, नवि परमारथ तस जाणे। या विध

भणी वेद सुणावे, पण अकल कला नवि पावे ।।कथ०।। १।। षट्
त्रीस प्रकारे रसोइ, मुख गीणतों तृप्त न होइ। शिशु नाम नाही
तस लेवे, रस स्वादत सुख अति लेवे ।कथ०।।२।। वंदीजन क-
डखा गावे, सुणी शूरा शीष कटावे। जव रुंढ मूंडता भासे, सहु
आगळ चारण नासे। कथ० ।। ३ ।। कहणी तो जगत
मजुरी, रहेणी हे वंदी हजुरी। कहेणी साकर सम मीठी,
रहणी अति लागे अनीठी। कथ० ।। ४ ।। जब रहणीका घर
पावे, कथणी तब गीणती आवे। अब चिदानन्द इम जोई,
रहणीकी सेज रहे सोई। कथ० ।। ५ ।। इति।

नं. १६ मीजाजीको हितशिक्षा।

कह्यो मान मीजाजी जोबन जावेंगा छीनमें छोडके।
क्ह्यो ।।टेर।। रंगी चंगी सुन्दर काया, देख छबी इन तनकी।
टेडी पगडी बाल सुवारे। कर रह्यो मोजों मनकीजी कह्यो०
।। १ ।। मेला खेला तीज तमासा नाटक देखण जावे। पर
रमणीसे प्रीत करे तुं, कुलको कलंक लगावेजी। कह्यो० ।२।।
हाड मांसको पींजर बनीयो, विष्टा केरी कोठी। नारी दीपक
नरक दीखावे, क्या छोटी क्या मोटीजी। कह्यो० ।।३।। गर्भा-
वासमें उंधो लटक्यो, दुःख अनंतो पायो। भुल गयो वेदन
जोबनमें, पुद्गल प्रेम लगायोजी। कह्यो० ।। ४ ।। काल आनके
दोलो फीरसी, कीसके सरणे जासी। ज्ञानसुधारस प्याला
पीले, काटे मोहकी फांसीजी। क्यों० ।। ५ ।। इति।

न १७ क्रोधकी शान्ति।

क्रोध मत करीये तुम सेणारे, क्रोध मत करीये तुम सेणा। धारधार सतोष जरा रस समताका लेणा ॥ टेर ॥ क्रोध प्रीतकों तोडे छीनमें, वैर करे जगसे। तप संयमकों दव लगावे, ताप होय तनसे। क्रोध० ॥ १ ॥ कल्पवृक्ष सम मुनिपद धारी, क्रोध बहुत कीनो। तीर्यंच गति नाग योनिमें, जाय जनम लीनो। क्रोध० ॥२॥ चालीस क्रोडाकोड उदयमें, स्थितिबन्ध थावे। उदय रस विपाक विपाके, चैतन्य दु ख पावे। क्रोध० ॥ ३ ॥ गजसुख माल मैतारज मुनिवर, खधक ऋषि जाणो। एवन्ती सुकुमाल क्षमा करी, प्रदेशी राणो। क्रोध० ॥ ४ ॥ निज रिपुके मनमुख होके, क्षमा खडग लीजे, ज्ञान सुधासम रसके प्याले, भर भरके पीजे। क्रोध० ॥ ५ ॥ इति।

नं० १ गहुली श्री चिदानन्दजी कृत।

चन्द्रवदनी मृगलोचनी, ए तो सजी शोला शणगाररे। एतो आवी जगगुरु वन्दवा, धरी हियडे हरख अपाररे ॥च०॥ १ ॥ हांरे एतो मुक्ताफल मुठी भरी, रचे गहुली परम उदाररे। जिहा वाणी जोजन गामिनी, घन वरसे अखडित धाररे ॥ च० ॥ २ ॥ हांरे जिहा रजत कनक रतनना, सुर रचित त्रण प्रकाररे। तस मध्य मणि सिंहासने, शोभित जगदाधाररे ॥ च० ॥ ३ ॥ हांरे जिहा नरपति खगपति लखपति, सुरपति युत परखदा बाररे। लब्धि निधान गुण आगरे,

बजारे बहु परिवारे, समोसरणमें आवेरे ॥ दर० ॥ ४ ॥ वंदन भक्ति गहुंली करके, निज निज स्थाने बेठीरे । वीर जिनेश्वर रत्नों केरी, खोले पेटीरे ॥ दर० ॥ ५ ॥ वाणी सुणने प्रश्न पुच्छे, उत्तर प्रभुजी देवेरे । प्रथम सज्जातर बाइ जयन्ती, दीक्षा लेवेरे ॥ दर० ॥ ६ ॥ व्याख्यान मांहे रस घणेरो, ज्ञानकि गहुंली गावेरे ॥ जयन्ति जीम वीर वन्दतो, शिवसुख पावेरे ॥ दर० ॥ ७ ॥ इति ॥

नं. ५ श्रीवीरप्रभुकी वाणीकी गहुंली.

सुन लो जिनवाणी करेलो पवित्र पोते आतमा । सुन लो० ॥ टेर ॥ हेमाचल सम वीर मुखसे, गंगा नदी चल आइ । गंगा प्रभास कुंड गुरु गौतम जिसमें आय समाइ हो सुन० ॥ १ ॥ स्याद्वादकी बनी वेदका, समकित भूमि जाणो, षट् द्रव्यकों पाणी जिसमें, नयकी गति पेच्छाणो हो सुन० ॥ २ ॥ च्यार निक्षेपा पन्थ दीखावे, परिमाण चलावे आगे। उत्सर्ग और अपवादकी ल्हेरों, चले जलके सागे हो सुन० ॥ ३ ॥ चौद हजार नदी जिम मुनिवर, शोभे बहु परिवार । नदी समुद्र मुनि शिव मन्दिर, करे अचल अवतार हो । सुन० ॥४॥ भक्ति करके वाणी सुन लो, गहुंली गावो रंग । सुन्दर करलो ज्ञान साथमें, चलो शिवपुर संग हो । सुन० ॥ ५ ॥

नं. ६ श्रीसौधर्मस्वामिकी गहुंली.

सूत्र सुणवा मैं जासो, कांई करशो हो सद्गुरुकी सेव । सूत्र० ॥ टेर ॥ ग्राम नगर पुर विचरन्तो, कांई आया हो चम्पा

उद्यान । चौदा पूर्व श्रुत केवली, काई चोथो हो मनःपर्यव ज्ञान । सूत्र० ॥ १ ॥ मुनि मत्तगज शोभता, काइ पांचसो हो जेहनो परिवार। उत्तम जाति कुलतणा, काइ पाले हो सुन्दर आचार । सूत्र० ॥ २ ॥ छठ अठम तपस्या करे, काइ मास हो करे दोय मास । चम शम दम शस्त्र करी, काइ कर हो कर्मोंको नाश । सूत्र० ॥ ३ ॥ सूत्र अर्थकी वाचना, लेवे देवे हो मुक्तिके काज । भक्ति विनय वैयावच करे । काइ चढीया हो शिवपुरकी पाज । सूत्र० ॥ ४ ॥ कनक कमल पर बेठके, पचम गणधर हो देवे उपदेश, ज्ञान सुधारस देशना, कांइ श्रोता हो पीवे हमेश । सूत्र० ॥ ५ ॥ इति ।

नं० ७ गहुली (वलीहारी हो सतगुरुजी आपरे ज्ञानकीजी)

व्याख्यान सुनो शुद्ध भावसेजी । ससार तीरो सूत्र नाव-सेजी ॥ व्याख्या० ॥ टेर ॥ वाणी अर्थरूपी जिनवर कहीजी, गुथी गणधर सूत्ररूपी सहीजी (छूट) उपर निर्युक्तिका सार, टीका कीनी टीकाकार, भाष्यचुरणी विस्तार (मीलत) श्रोता सुनके आनन्द लावसेजी ॥ व्या० १ ॥ वाणी नय निक्षेप प्रमाणसेजी जाणो स्याद्वाद गुण खाणसेजी (छूट) समझो उत्सर्ग ओर अपवाद, ज्यामें गुणपर्यायको स्वाद, ज्ञानी कर रह्या सिंहनाद (मीलत) सुरनरवर सुणे उत्सावसेजी ॥ व्या० २ ॥ गुरु ज्ञान सुधारस देशनाजी, मीटे राग द्वेष कलेशनाजी (छूटे) वाणी सुनतों कुमति जावे, सुमति सुन्दर निज घर आवे, चैतन्य मनोभवमें सुख पावे, (मीलत) कर्मशत्रु जीतों इण

दावसेजी ॥ च्या० ॥ ३ ॥ गुरु गौतम गुण सागर वर्याजी, ये तो राजग्रही समोसर्याजी (छूट) राजा श्रेणिक वन्दन आवे राणी चेलणा संग जावे, गहुली हर्ष हर्षके गावे, (मीलत) अक्षय पदकों पावों सुन्दर ज्ञानसेजी ॥ च्या० ॥ ४ ॥ इति ।

नं० ८ गहुंली (गेहरोजी फूल गुलाबको)

मीठी वाणी जिनतणी।आतो मीठी २ दुद्ध निवात म्हारा गुरुजी मीठी वाणी जिनतणी ॥ टेर ॥ राजग्रही उद्यानमें, ए तो आया वीरजिनन्द म्हारागुरुजी ॥ मी० ॥१॥ समौसरण देवें रच्यो । एतो श्रेणीक वन्दन जाय ॥ म्हा० मी०॥२॥ गहुली करे राणी चेलणा । ए तो श्रोता सुधारस पान ॥ म्हा० मी० ॥४॥ जीव अजीव पुन्य जाणवा । पापाश्रव बन्ध छोड म्हारा जीवड ॥ मी० ॥ ५ ॥ संवर मोक्ष निर्जरा । ए तो तीन करो अंगीकार म्हारा जीवड मी० ॥ ६ ॥ च्यार जीव नवतत्त्वमें । ए तो पांच कह्या अजीव म्हा० मी० ॥७॥ च्यार अरूपी रूपी कह्या । ए तो रूपी अरूपी एक म्हा० मी० ॥८॥ इत्यादिक जिन देशना।ए तो सुनी चेत्या नरनार म्हा० मी॥९॥ सुन्दर गहुंली गावतो, एतो ज्ञान सदा जयकार म्हारागुरुजी मी० ॥ १० ॥ इति ॥

समाप्तम्.

अथश्री

उपकेश (कमला) गच्छ लघुपट्टावली ।

कवितास्र्ता,

श्रीमदुपकेश (कमला) गच्छाचार्य परमपूज्य भट्टारक

श्री श्री सिद्धसूरिजी महाराज



(१)

छन्द छप्पय

प्रथम पट्ट अधिरूढ पार्श्वजिन ज्ञान प्रकाशक ।
सयम श्रुत सपन्न अखिल अज्ञान विनाशक ॥
अहि बालक प्रतिपाल कमट कृत मित मुनि त्रासक ।
सरणागत भयहरण भय भवि जन भय नाशक ।
वसुवेद सत्य जिण पट्ट अपराजत शुभ जिन धर्मवर
सचियाय चरण सेवन निरत सिद्ध सूरि श्रीपूज्यवर ॥ १ ॥
द्वितिय पट्ट शुभदत्त तृतिय हरदत्त सुजानहु ।
चतुर्थ आर्य समुद्र सकल गुन सागर मानहु ॥
पचम केशीकुमार भूप परदेशीय बुद्धे ।
षष्ट स्वयप्रभसूरि यत्न के तन मन शुद्धे । वसुदेव ॥ २ ॥

मरूथल श्रीमालनगरे राय यज्ञ करावही ।
ने वे हजार प्रतिबोध श्रीमाल वंश धरावही ॥
देविविघ्न विनास नयरी पम्हा जाणहु ।
प्राग्वट वंस पैंतालीस हजार ठाणहु । वसु ॥ ३ ॥
श्रीरत्नप्रभसूरि पट्ट सप्तम जत्र लिनहु ।
मंत्री सुतहि जीवाय गच्छ उपकेश किनहु ॥
कर प्रसन्न सचियाय कर्म हिंसादिक शुद्धे ।
लक्ष तीन सिद्धि व्यूह सह शिष्य प्रति बुद्धे । वसु ॥४॥
अष्टम पट्ट प्रविष्ट यक्ष प्रति बोध प्रकाशक ।
यक्षदेव आचार्य संघ जन विघ्न विनासक ॥
नवम पट्ट अधिरूढ कक्क सूरि गुन पूरने ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट दिग दोष विचूरने । वसु ॥ ५ ॥
पट्ट एकादश पूज्य सिद्धसूरि पुनः चारहु ।
श्रीरत्नप्रभसूरि द्वादश पट्ट विचारहु ।
यक्षदेवसूरि सु कक्कसूरि मनु संजक ॥
वीरप्रकृति कि विकृति स्नात्र शुभविधि सनभंजक । वसु ॥६॥
देवगुप्त सूरि सु पंचदश पट्ट प्रभानहु ।
शशिरस पट्टारूढ सिद्धसूरि पुनः मानहु ॥
श्रीरत्नप्रभसूरि सप्तदश पट्ट वखानिय ।
यक्षदेवसूरि जु पट्ट अष्टादश जानिय ॥ वसु० ॥७॥

---

१ श्री पार्श्वनाथप्रभुकों प्रथमपट्ट गीननेसे श्री रत्नप्रभसूरिजी सातमे पाटपर आते हैं । और शुभदत्त गणधरसें प्रथम पट्ट गीननेसे रत्नप्रभसूरि छठे पाटपर होते है ।

चन्द नन्द पट्ट ककसूरि गुन ग्यान अतिनहु ।
देवगुप्तसूरि हु निशय यतवि छिन्नहु ।
सिद्धसूरि पट्ट एकत्रीस सिद्ध सपत्त पूग्यि ।
नेत्र नेत्र पट्ट पूज्य त्रिज्ञ रत्नप्रभसूरिय ॥ वसु० ॥८॥
यक्षदेवसूरि सुनयन गुन पट्ट भनीजे ।
अश्विवेद पट्ट ककसूरि गुनवन्त गनीजे ।
लोचनसर पट्ट देवगुप्तसूरि सुखदायक ।
सिद्धसूरि पट्विंश पट्टमुनि जन गन नायक ॥ वसु० ॥६॥
श्रीरत्नप्रभसूरि नवत्रीति सतावीस पट्ट पजित जानिये ।
यक्षदेवसूरिसु अष्टविंशति पट्ट मानिये ।
उनत्रिस पट्ट ककसूरि गुन गन गभीरहु ।
देवगुप्तसूरिसु पट्ट गुननभ अति धीरहु ॥ वसु० ॥१०॥
शिव लोचन शशिपट्ट सिद्धसूरि सुखकारिय ।
श्रीरत्नप्रभसूरि सकल भविजन भवहारिय ।
द्वात्रिंशत पट्ट पूज्य प्रवर पडित अवधारिय ।
यक्षदेवसूरि सुदेवादि गुन पट्ट विचारिय ॥ वसु० ॥११॥
ककसूरि चउतीस पट्टमें अति तप धारिय ।
जिन वचन पुन त्रिपत्त सेठ सोमाकी टारिय ।
देवी दर्शन प्रत्यक्ष छड भडारसु डारिय ।
नाम उमेद्वाविंश अपर गण साख निकारिय वसु० ॥१२॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट गुन सर वर जानिय ।

सिद्धसूरि गुनभूरि राम रस पट्ट वखानिय ।
शिव लोचन मुनि पट्ट कक्कसूरि चित्त आनीये ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पावक सिद्धि मानिय ॥ वसु० ॥१३॥
गुननिधि मुनिनिधि पट्ट सिद्धसूरि सुभमानहु ।
कक्कसूरि तपभूरि पट्ट विधि मुख वखानिहु ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट वीर धीर शशिमानहु ।
वीण विद्या प्रविण ज्ञान क्रिया कच्छुक प्रमानहु । वसु० ॥१४॥
सकल संघ मील सिद्धसूरि मुनि नायक थापे ।
वारिद्धि लोचन पट्ट अखिल तप तेज अमापे ।
पट्ट वरण कक्कसूरि श्रावक अघहारक ।
निज मुख पंच प्रमाण ग्रन्थ रच ज्ञानपसारक । वसु० ॥१५॥
वेद वेद पट्ट देवगुप्त सूरि दुःख सहु हरता ।
स्त्रोपयोग टीका सु ग्रन्थ नवपद पर करता ॥
वारिद्धि बाण सु पट्ट सिद्धसूरि सिद्धि धरता ।
सागर रस पट्ट कक्कसूरि मुद मंगल भरता । वसु० ॥ १६ ॥
हरि भूज मुनि पट्ट देवगुप्तसूरि गुरु ग्यानिय ।
चरण सिद्धि पट्ट सिद्धसूरि बहु बुद्धि विधानिय ॥
वारद्धि निधि पट्ट कक्कसूरि उज्वल यशजानिय ।
तस्स चरण चित्त लाय नाम नित्य स्वमुख वखानिय । वसु ॥१७॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पंचाशत सुजानहु लिन्नो ।
तब भैसा निज भक्त सप्त लक्ष धन व्यय किन्नो ॥

ताते कोटि न कोट द्रव्य ताकों गुरु दिन्नो ।
नर शशि पट्टारूढ सिद्धसूरि सवपुर चिन्नो । वसु० ॥१८॥
कक्कसूरि वाचन पट्ट पूजित जन धारैं ।
नृप वचने हेमाचार्य शिष्य निर्दयी निवारें ॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट तेपन्न विराजै ।
लच्छन धन निज त्याग साधु साधन सन सजै । वसु ॥१९॥
बाण वेद पट्ट सिद्धसूरि पूरण गुन पूजहु ।
बाण बाण पट्ट कक्कसूरि कारत कि कुजहु ॥
जिन किय कोट मरोट प्रगट अत्यन्त सुशोभत ।
देवगुप्तसूरि सुपत्रि रस पट्ट अलोभत । वसु० ॥ २० ॥
सायक मुनि पट्ट सिद्धसूरि शरनागत त्राता ।
कक्कसूरि सर सिध्धि पट्ट गुन ग्यान निधाता ॥
देवगुप्तसूरि पट्ट इषु निधि गुन सिद्धाता ।
रस नभ पट्टारूढ सिद्धसूरि जगत विख्याता । वसु० ॥ २१ ॥
ऋतु विधु पट्टारूढ कक्कसूरि जिन मडन ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट रस भूक्ष अज्ञानहु खडन ॥
राग राम पट्ट सिद्धसूरि पुरण गुनवन्तहु ।
शास्त्रवेद पट्ट कक्कसूरि जपतप जसवन्तहु । वसु० ॥ २२ ॥
देवगुप्तसूरि सु पट्ट रस शर शुभ धारेउ ।
तीर्थाटन कर देशलादि भक्तनकों तारेउ ॥
दर्शन दर्शन पट्ट सिद्धसूरि जव लीन्नो ।

आदिनाथकों पूज्य प्रतिष्टापन जिन किन्नो ॥ वसु० ॥२३॥
रसऋषि पट्टारूढ ककसूरि तप धारिय ।
तीन किया गच्छ प्रवन्ध सकल साधुन सुखकारिय ॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पट वसु बुद्धि वारधि ।
सिद्धसूरि मुनिराज पट्ट वडभाग राग निधि ॥ वसु ॥२४॥
मुनिनभ पट्टारूढ ककसूरि बुद्धिसागर ।
इति विनाशन करन सरनभय हरनयनागर ॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट ऋषि रसा सुजानिय ।
स्वर लोचन पट्ट सिद्धसूरि दुःख मोचन मानिय ॥ वसु० ॥२५॥
द्विपदेव पट्ट ककसूरि जप तप तन धारिय ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट ऋषि वेद विचारिय ॥
ताल त्रीलोचन वदन सिद्धसूरि पट्ट मानहु ।
ककसूरि गुन भूरि पट्ट मुनि रस पहिचानहु ॥ वसु० ॥२६॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पुनि मुनिमुनि मानिय ।
ऋषि वसु पट्टारूढ सिद्धसूरि चित्त आनिय ॥
तरुनिधि पट्ट प्रविष्ट ककसूरि चित्तलावहु ।
दिग्गज नभ पट्ट देवगुप्तसूरि गुन गावहु ॥ वसु० ॥२७॥
सिद्धि अवनि पट्ट सिद्धसूरि सतन कुले भूषन ।
भूधर भुज पट्ट ककसूरि पूरन तप पूषन ॥
निधि लोचन गुन देवगुप्तसूरि पट्ट मंडन ।
पावन पूज्य प्रताप ताप भविजन भयखंडन ॥

वसुवेद सख्य जिण पट्ट अवराजत शुभ जिन धर्मधर ।
नचियाय सेवन निरत सिद्धसूरि श्रीपूज्यवर ॥ वसु० ॥२८॥

दोहा-सोरठा ।

सिद्धसूरि श्रीपूज्यवर । कमलागच्छाधिश ॥
निरची यह पट्टावली । जासु वचन धर शिस ॥ १ ॥
जो नर या पट्टावली पढहि सुनहि चित्त धार ॥
सो पावत संसारमें । शीघ्र पदारथ न्यार ॥ २ ॥
गीनियत बहुत ग्रन्थनमांहिं । वक्रगति तें अङ्क ।
या में तो ऋजु रीत तें । गुनि गन गनो निशङ्क ॥ ३ ॥
चैत्र शुक्ल तृतिया सुदिन । चन्द नन्द रस व्योम ॥
लिखी यह पट्टावली । नतसर वासर सोम ॥ ४ ॥

(७) श्रीओसवंश स्थापक श्रीरत्नप्रभसूरिजी महाराजकी स्तुति ।

कमले गच्छनायक श्रीरत्नप्रभसूरि पूजसो । कमले ।टेर॥
रत्नचुड विद्याधर नायक, जा रहे बेठ वैमान । पार्श्वनाथके पाट पचमे, स्वयप्रभसूरि करे व्याख्यान हो कमले ॥ १ ॥
अटक गयो वैमान नभमें । सुनवा आये वाणी ॥ चार महाव्रत दीक्षा लीनी । अनन्त सुखोंकी खाणी हो कमले ॥ २ ॥
वीर निर्वाण वर्ष बावनमें । आचार्य पद पाया ॥ नेथी वर्ष

भिनमाल भव तारवा वारवा मिथ्या जाल ।
सयंप्रभसूरी किया श्रीमाली पोरवाल ॥ २ ॥
रत्नप्रभसूरि आविया ओसीया नगरी मजार ।
ओशवंश जैनी कीया तीन लच्च चोराशी हजार ॥ ३ ॥
राजगृही मणिभद्रने प्रतिबोध्यो हित काज ।
सवा लच्च जैनी किया, यच्चसूरी महाराज ॥ ४ ॥
कक्कसूरी करुणा निधि, देश कनोजमें जाय ।
जीव छोडाया यज्ञका दीया जैन बनाय ॥ ५ ॥
गुप्तपणे रहे देवता करे शासनका काम ।
स्मरणथी शिवपद लहे देवगुप्तसूरी नाम ॥ ६ ॥
सिद्धपद वरवा नित्य नमुं सिद्धसूरी महाराज ।
पांच नाम जो पाछला अविच्छिन्न चाले आज ॥ ७ ॥
उपकेशी उपकेशगच्छ कमलापति सुजान ।
भवसागर तीरवा भणी शरणे आयो ज्ञान ॥ ८ ॥
विशुद्ध सिद्धे संस्कृतं प्रभक्तिरेव सत्तमे ।
सुतत्त्व एक दत्त दृष्टि रुत्तमैर्गुणैसदाभि ॥

श्रीओशीया मंडन रत्नप्रभसूरिजी ।

(देशी तुमारे कदमका शरना.)

रत्नप्रभसूरीका शरना, मुजे संसारसे तारना ॥ टेर ॥ विद्याधर वंसके दाता, नंदिश्वर जातरा जाता, बीचमें मुनिपद धरना ॥ रत्न० ॥ १ ॥ चतुर्दश पूर्वके धारी, पांचसे शिष्य

है लारी, ओशीया आपके चरणा ॥ रत्न० ॥ २ ॥ मत्रीका पुत्र बचाया, नगर सब जैन बनाया, देवी समकित शुद्ध धरना ॥ रत्न० ॥ ३ ॥ उपकेशगच्छ आपसे बाजे, गौत्र अढार हे ताजे, गुरुका समरन नित्य करना ॥ रत्न० ॥ ४ ॥ ढुढक और पन्थी है किधर, शिखरबन्ध वीरका मन्दिर, सीतर वर्ष वीरसे गीनना ॥ रत्न० ॥ ५ ॥ नामसे दु.ख सब जावे, पूजासे सम्पदा पावे, अक्षयसुख मोक्षका वरना ॥ रत्न० ॥६॥ तीर्थ जग ओशीया चावो, गुरुगुण मीलके गावो, ज्ञानका ध्यान तुम चरना ॥ रत्न० ॥ ७ ॥ इति.

श्रीफलोधीमडन श्रीरत्नप्रभसूरिजी म०

पूजो रत्नसूरी महाराज, मोक्षकि राह बताने वाले । । पूजो० । नगर ओशीया आये, सबकों जैनी आप बनाये, जिन्होंका वस ओश थपाये गौत्र अठारे बनाने वाले । पू० । ॥ १ ॥ जग तारण गुरुराज, सुधारों भक्तों के सब काज, शरणे आयोंकि रखो लाज, दुःख सब दुर हटाने वाले । पू० । ॥२॥ तुमहो दीन दयाल, करीये सेवक कि प्रतिपाल, मीटादो कर्मोंका जजाल, ज्ञानकों अमर बनाने वाल । पू० । ॥३॥ इति.



॥ श्री ॥

॥ ओएशवंशस्थापक श्रीमदुपकेश (कमला)गच्छीय दादासाहिब श्री १००८ श्री जिनरत्नप्रभसूरी-श्वरजी महाराजके गुणानुवादका संग्रह ॥

॥ छन्दाष्टक त्रिपदी ॥

सुगुरु दयालं जन प्रतिपालं, मूर्ति विशालं अशुभहरम्। ताप विदारं दुरित निवारं, भवदधितारं शुभ्भकरं॥ तजनपठाठं संयमवाटं गणधरपाटं ऋद्धभरं। सुमतिवधारं जापउच्चारं विद्याभण्डारं सिद्धकरम् ॥ १ ॥ जनमनरंजं दुःखविभंजं, दधि-श्रुतमंजं पूर्वधरं। योगउच्चारं अर्थविचारं, शीलअपारं ध्रुवठरं॥ प्रेमपवित्रं अद्भयचरित्रं, शिशवकलत्रं खुबभरं। सूर्यप्रकाशं मुक्तिविलासं, ओएशवासं स्थूम्भकरम् ॥ २ ॥ मिथ्यानिकासं व्रतधरवासं, सुरनृपरासं सेवकरं। पूरतआसं मेटतत्रासं, सर्व-विभासं नेवकरम् ॥ ज्ञानसुमंडं चरित अखंडं, कुमतिविहंडं देवपरम्। जोतिस्वरूपं मूर्तिअनुपं, भवदधिकूपं त्तेमकरम् ॥३॥ वैक्रियधारं कोरंटपारं, विम्बपधारं धर्मधूरम्। शीलसलीलं निरमलनिलं, सुमतिसुढीलं भर्मदूरम् ॥ ओएशवंशं निशीकर-अंशं, मिथ्याध्वंसं धर्मपूरम्। समकितसारं पासआधारं, जप-नवकारं कर्मचूरम् ॥ ४ ॥ साचलपरचं सद्गुरुअरचं, वसुविध-चरचं कुसुमफलं। पुरपुरधामं जपगुरुनामं, इच्छतकामं कलुष-

जल ॥ बहुविधभोग अगनिरोग, तापकुशोक अनिलटल । मारविडार कुष्टकुठार, वचघनधार सुमनखिल ॥ ५ ॥ नवग्रहतुष्ट हरिकरिदुष्ट, निषधरुष्ट शान्तिकर । प्रेतपिशाच आवैनापास, लीलविलास ध्यानधर ॥ पगपगमान ज्ञानसुज्ञान, आवतध्यान प्रातधर । हयगयउज्जल मनिधननिपुल, गुनमनविमल ज्ञातवर ॥ ६ ॥ सकटचूर अनधनपूर, अघतमदूर पीरहर । विद्यापीठ सुगुनगरिष्ट, भाजतदिष्ट धीरकर ॥ अशरणशरण भवभयहरण, भविसुखकरण तीरपर । स्वयप्रभपाट शिवपुरवाट, अघयठाठ वीरभर ॥ ७ ॥ ओएशगच्छ रयणप्रभसच, विरुदसुलच्छ जानमन । भणयविलास श्रीधरवास, दालिद्रनास जानमन ॥ जगमयुवर सिद्धगुरुसुगुर, खेवतअगर जानमन । कविशुभकथन लस्करवसन, मुनिश्रुतवरप जानमन ॥ ८ ॥ इति मंगलाष्टक सम्पूर्णम् ॥

—※(◎)※—

॥ दादाजी महाराज श्रीजिनरत्नप्रभसूरीश्वर छन्दाष्टकम् ॥

———०———

आदित्य तेज प्रताप निशिकर वाणी जलधर गाजहिं । नय सप्तधारक पूर्वपारक सूरि पद गुरु गाजहिं ॥ भव जीव सहायक कर्मघायक तरणि भव सम छाजहिं । शुभ लेत जो प्रभरत्नसूरि नाम अघदल भाजहिं ॥१॥ कुल राज सम्पत त्याग

संयम लेन महितल फिरै । कोरंट गढ ओण समैं पतित पावन जन करै । सेठ उहड तनय निर्विष कीन शुभ यश पावहिं ॥ शुभ० ॥ २ ॥ देवी साचल पद्मा अम्बा और वहु देवाघरो । करत सुर मुनि भूप सेवा वीर पावन स्तुति भरो । मिथ्याध्वंसक जैन थाप्या जैनाऽखंड दीपावहिं ॥ शुभ० ॥३॥ पुर ग्राम पट्टन धाम विचरे जैन आणाहिय धरी । देश देशसें कुमति काढी सुमति वहु पुर विस्तरी । शान्त दान्त महान्त पूरण गणश्री कहावहि ॥ शुभ० ॥ ४ ॥ उपकेशगच्छाऽधिपमंडण पद स्वयंप्रभ सोहते । छवी कान्ति सुन्दर कमल मुख लखदेव दाणव मोहते ॥ ध्यानारूढ निशंक शत गुण कथन कीरत पावहिं ॥ शुभ० ॥५॥ सलिल चन्दन कुसुम विकसित भावसे चाढै सदा । क्रोड व्याधि दुर होवे पावै पग पग सम्पदा । आणा चउदिश जाहि फैले भावसें भवि ध्यावहिं ॥ शुभ० ॥ ६ ॥ परताप सब महाराजका जाने सुधिमन प्रेमसें । प्रातः उठ कर जाप जपे दो घटि नित टैमसे । सबल चिन्ता शीघ्र भाजै सेव त्रैकरण लावहिं ॥ शुभ० ॥ ७ ॥ ये आद्य मंगल शुद्ध चित कर पठन पाठन जो करै । लहत सम्पदा लोक त्रैकी सुयश भूपर विस्तरै ॥ कर जोर कवि शुभकरण कहता दासपे मया राखहिं ॥ शुभ० ॥ ८ ॥ इति छन्दाष्टकम् ॥

॥ श्रीरत्नप्रभसूरीश्वराष्टकम् ॥

भव्यावली सकलकानन राजहंस, श्रेयः प्रवृत्ति मुनि मानस राजहंस। श्रीपार्श्वनाथ पदपंकज चिंचिरक, रत्नप्रभु गुण धर सतत स्तवीमि ॥ १ ॥ विद्याधरेन्द्र, पदवी कलितोपिकाम, श्रीमत् स्वयंप्रभुगिरः परिपीय योऽत्र। दीक्षा वधुमुदवदव मुदमादधानो, रत्नप्रभुःस दिशतात् कमलाविलास ॥२॥ मत्रीश्वरोहड सुतो भुजगेन दष्टः, सजीवित' सकल लोक सभा समक्ष। यस्यांघ्रि वारिसह पुष्कर सिंचनेन, रत्नप्रभु'स दिशतात्कमलाविलास ॥ ३ ॥ मिथ्यात्व मोह तिमिराणी विधूययेन, भव्यात्मनां मनसि तिग्मरुचेव निश्चे। सदर्शित सकल दर्शन तत्वरुप ॥ रत्न० ॥ ४ ॥ येनोपकेश नगरे गुरु दिव्य शक्त्या, कोरटके च विदधे महती प्रतिष्ठा। श्रीवीर बिंबयुगलस्य वरस्य येन॥ रत्न० ॥ ५ ॥ श्रीसत्यिका भगवती समभूत प्रसन्ना, सर्वज्ञ शासन समुन्नति वृद्धिकर्त्री। यद्देसना रस रहस्य मनाप्य समाक ॥ रत्न० ॥ ६ ॥ गृह्णति यस्य सुगुरोर्गुरनामत्र सम्यक्त्व तत्त्व गुणगौरव गर्भिताये तेषां गृहे प्रतिदिन निलसति पद्मा ॥ रत्न० ॥ ७ ॥ कल्पद्रुमः करतले सुर कामधेनु, श्चिंतामणि स्फुरति राज्य रमाभि रामा। यस्योन्नमत् क्रमयुगाम्बुज पूजनेन ॥ रत्न० ॥ ८ ॥ इत्थ भक्तिभरेण देवतीलकश्चातुर्य लीलागुरो'। श्रीरत्नप्रभसूरिराज सुगुरो स्तोत्र करोतिस्मय' प्रात काम्यमिद पठत्य

विरतं तस्यालये सर्वदा सानंदं प्रमदेव दिव्य तीतरां साम्राज्य लक्ष्मीः स्वयं ॥ ६ ॥ इति श्रीओएश नगरे त्रयलक्ष चौराशी हजार श्रावक प्रतिबोधिता ओशवाल ज्ञाति स्थापिता तस्य स्तोत्रमिदं प्रत्यहं पठनीयं ॥ सम्पूर्ण जात॥ः

॥ पद ॥

शरणो तो तिहांरो लीयो लीयो ॥ लखे चरण गुरुराजसरे सबकाज प्रबलसुखदीयो दीयो ॥ स० ॥ १ ॥ दीये संसय भ्रम मेट भई मुझ भेट, प्रफुल्लित हियो हियो ॥ स० ॥ २ ॥ कहत करण कर जोर जपो नित भोर, अखंड शाशन कीयो कीयो ॥ ३ ॥ इति ॥

॥पुनः॥

मो मन लागो तिहांरे चरणा, भव भव हरणा शिव-सुखकरणा आनन्द अन धन भरणा ॥ मो ॥ १ ॥ जय २ युगवर रयण सूरीश्वर सुमति सुबुध घट धरणा ॥ मो ॥ २ ॥ कहत करण शुभ दोय कर जोडी, महर निजरदी करणा ॥ ॥ मो ॥३॥ इति पदम् ॥

पूजन मेरे मन भाई सद्गुरुकी ॥ रूडै भावे जो नित पूजै, कष्ट कठिन टर जाई । ईत उपद्रव तुरत पुलावै, पग पग ऋद्ध जश पाई ॥ सद्गु० ॥ १ ॥ जो सद्गुरुको ध्यान धरत मग क्षेम कुशल घर आई । अरिकारि सागर सिंह दावानल देखत चट टर जाई ॥ स० ॥ सद्गुरु रयण-

चिन्तामणी फल सम देत अधिक वरदाई । सद्गुरु जगमें सुर तरुसरिषो मन इच्छित फल पाई ॥ स० ॥ ३ ॥ इह भव पर-भव अन धन लक्ष्मी सुखसम्पद ठकुराई । वध्या पुतर गोद खिलावे निश्चय मन गुरु गुण गाई ॥ स० ॥ ४ ॥ धन धन रत्न प्रभुयुगराया देवो दरश गुरु आई । शुभको अविचल प्रेमसे दीजे येहीज वात समाई ॥ स० ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ चाल होरीकी ॥

गुरु पद पूजा सुहाई मिलकर पूजो रे भाई ॥ गुरुमुख-चद विलोकन सेती । जठर ताप टर जाई ॥ मिथ्या अना दिकी मोहनी निद्रा । नासत लरा अधिकाई ॥ लगन जद गुरुसें लगाई ॥ गु० ॥ १ ॥ गुरुगुण अमृत श्रवण पानतें । विप निर्विप हो जाई ॥ दीध श्रुत लहर सुमत घट आवे । मोडत मान हरिकरि आई ॥ सुरत जद गुरुसे लगाई ॥ २ ॥ गु० ॥ गुरु रुज धूलि चरन फरसनतें । कुमता मोरी घुलाई ॥ कहत करण शुभ दोई कर जोडी । सुभग दशा घडी आई ॥ निरख छवी रयो हुं लुभाई ॥ गु० ॥ ३ ॥ इति ॥

॥ पुन ॥

लगेंरी मोकू नाम गुरजीका प्यारा । जाके रटे भव-पारा ॥ गुरजीका नाम अमरफल देवे । जो जपे पटि प्यारा ॥ साचे मनसें जो कोई ध्यावे । टूटे करम जजारा ॥ १ ॥लगें॥

गुरुसम देव ना कोई जगमैं । देख्या नैंन पसारा ॥ रूडै भावै जो भवि पूजै । पावै ऋद्धि भंडारा ॥ लगै ॥ २ ॥ जन मन रंजन भव भय भंजन । मेटत दुरित विकारा ॥ अघदल खंडन कुमति विहंडन । सुमति मंडण धारा ॥ ३ ॥ लगै ॥ केशी गणधर पाट दीपता । नाम रतन प्रभु प्यारा ॥ मिथ्या ध्वंशक जैन दीपायो, एसे गुरु अवतारा ॥ ४ ॥ लगै ॥ नगर ओ-एश्यां ओस वंश थाप्यो, फेल्यो सुयश विस्तारा । करन कहै शुभ दोई कर जोडी देवो दरश दीदारा ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ राग आशा ॥

सुगुरुने भंगिया एसी पिलाई, जामें शिवमग देत दिखाई ॥ टेर ॥ सिलवट सुमता शीलकी लोढी, गुप्तिकी भांग मिलाई। ग्यानकी मिरच व्रतके पिस्ता, नियमकी एलची लाई ॥ सु० ॥१॥ आगम दूध नयके बीजे, करण बिदामैं पिसाई । जिन-वाणी अति नीर सुधारस, शर्करा भावे मिलाई ॥ सु० ॥ २॥ शुद्ध क्षमा अति उज्वल साफी, तामें लुगदी छनाई । भविजन चेतन हरखसे पीवै, निरखै आतमा शांई ॥ सु० ॥३॥ करण कहै शुभ एसी भंगीया, पीवै जो पूरा न्याई । शिवपद पदवी प्रेमसे पावै, भवभव तांत जलाई ॥ सु० ॥ ४ ॥

॥ राग आशावरी ॥

सुगुरु तोरी छवि लागै मोहे प्यारी मैं तो वारि जावुं

वार हजारी ॥ टेर ॥ महेन्द्रचूड लक्ष्मीवति नदा गौर वरण द्युति भारी। इक अवतारी कारज सीझा तीन भूवन यश आरी ॥१॥ चोखै भावैं जोजन अरचित भाजै कलुपता सारी। ऋधसिध सम्पत सामी आवैं ध्यान धरे इकतारी ॥ २ ॥ भीम भगदर नामसे भाजे तुटै बध अपारी। शौक मरी स्वपने नवि व्यापै डरपै कुमति निचारी ॥ ३ ॥ रतनप्रभुसूरि जगम जुगपति उपकेशगच्छ पटधारी। मिथ्या-वसक जैन दीपायो एसे गुरु अवतारी ॥ ४ ॥ देवि चामुडा समकित कीनि कीने गोत्र अढारी। एसे सद्गुरु शुभ उठ नमता वारि जाउ वार हजारी ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ राग काफि-जिला ॥

सुगुरुजी अब मोहे पार उतारो, भवभव भटकत तुम पद पायो। लीनो शरण तिहारो ॥ सु० ॥ १ ॥ च्यारे लुटेरे मोहे नित घेरे ताते दूर निकारो ॥ सु० ॥ २ ॥ आस धरिने चहुली आयो चिंतित काज सुधारो ॥सु०॥३॥ मोहे भरोसो अतिही नीको जानत मम हियवारो ॥ सु० ॥ ४ ॥ शुभ उठ शुभ करजोडके नमतां कुमति कलुपता टारो॥सु०॥५॥ इति ॥

॥ राग जिल्लाजोगीया तथा श्यामकल्याण ॥

सुगुरु तोरो दरश सरस अति नीको, दरश करतहिं पातिक भाजे मिट गयो फद अरिको ॥ सु० ॥ १ ॥ याभव

परभव ऋद्धसिद्ध चाहै कर अरचन गुरुजीको ॥ सु० ॥ २ ॥ नाम लियासे आनन्द उपजै वाढै सुमति कोटीको ॥ सु० ॥ ३ ॥ उकेशगच्छ नायक सोहो नामरतनप्रभुजीको ॥ सु० ॥ ४ ॥ शुद्ध मन शुभ कवि सद्गुरु नमतां जमियो वीज सुगतिको ॥ सु० ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ राग रेखता ॥

दशा शुभ आज मम जागी भज्या भ्रमवास मो मनका ॥ टेर ॥ रतनप्रभसूरि पद पाये । फल्या मनकाज सव मेरा, रविसम ज्योत लखनखकी नसा मिथ्यात्व अंधेरा ॥ द० ॥ १ ॥ कलपसम इच्छ फल देते जोसेते द्रव्य-युक्तिसे । उपाधी व्याधि टर जावै वंदणाकर भावभक्तिसें ॥ द० ॥ २ ॥ कुसुम जुहि जाति अहि चम्पा चढावो नित चरणो पै। ग्रहादिक क्लेश अति पीडा, नशावै शिघ्र पलकोंमें ॥ द० ॥ ३ ॥ गया हुवा राज भट आवै अचिंति लक्ष्मी वहु पावै सुवंध्या पुत्र तत् पावै सुगुरुके ग्राम गुण गावै ॥ द० ॥ ४ ॥ अरज कर जोडके करता हमारी विनती सुन लीजै ॥ दयानिधि आप सद्गुरु हो दरश शुभको तुरत दीजै ॥ द० ॥ ५ ॥ इतिपदम्

राग देशी

गुरु मया करो तप जप संयम सुख भरे अनुभव दी-जीये ॥ टेर ॥ गुरु नाम जपत-रीध सीध आवे ॥ अरीजन

सगळा दुर पुलावे ॥ मन वछीत कारज सीध थावे ॥ गु० ॥ ॥ १ ॥ रोग दोहग दुःख सघला नासे ॥ पग पग पामे लील विलासे ॥ भय भय रव सुपने नही भासे ॥ गु० ॥ २ ॥ श्री श्री स्वयप्रभ पट पर छाजो ॥ उपकेश गच्छके नायक गाजो ॥ कुमति कुटील मद तज भाजो ॥ गु० ।' ' ॥ गुरु नामे निर्धन धन पामे ॥ वध्या पुत्र गोद खिलावे ॥ रण बीच जीत सुगम घर आवे ॥ गु० ॥ ४ ॥ सुभ उठ जोजन सद्गुरु रटते ॥ अनिल सलिल ज्वरमे नही डरते ॥ सुख मोद प्रमोद हीयेमे विचरते ॥ गु० ॥५॥ मो मन गुरु नामा भावे। गुरु विन दुजा याद न आवे ॥ शुभ करी गुरु गुण गावे ॥ ॥ गु० ॥ ६ ॥ इतिपदम्

मलूनाकी देशी

सुगुरु चरण नीत भजीये सलूना ॥ मन इच्छित बहु फलीये सलूना ॥ टेर ॥ सुगुरु मेहरसे अन धन लखमी ॥ भरीय अखूटे भंडार सलूना सुगुरु चरनसे पाप जो नासे ॥ हरीये दुरीत प्रचार सलूना ।। सु० ॥ १ ॥ सुगुरु जगतमे पोत समाना ॥ सुगरु विना भव रुलीये सलूना ॥ सुगुरु चिंतामणी रत्न समाना ॥ मन चींता सहु फलीये सलूना ॥ सु० ॥ २ ॥ सुगुरु चरण कज सुरतरु सरीखो ॥ मन वंछीत फल देय सलूना ॥ अजर अमर पदवी सुख चाहो ॥ तो

भवी सद्गुरु सेव सलूना ॥ सु० ॥ ३ ॥ गुरुसम दुजो देव ना जगमे ॥ सद्गुरु भवदधि जाहाज सलूना ॥ गुरु देवनके देव कहीजे ॥ गुरु है जग शिरताज सलूना ॥४॥ सुगुरु कृपासे मनु भव पायो फलियो साहस विचार ॥ सलूना ॥ करण कहे मम पातीक भाजे ॥ सुगुरु जीवन आधार सलूना ॥ सु० ॥५॥ इतिपदम्

देशी मालवी.

रत्न प्रभूजीसे वंदणा नित होय जो हमारीरे ॥टेर॥ महेंद्र चूड लक्ष्मीवति नंदन ॥ गौर वर्ण द्युती कायारे ॥ सूरी स्वयं प्रभ पाटपे छाजो ॥ जंगम युगपती रायारे ॥ रत्न० ॥ १ ॥ आप वस्या बारमे देवलोके ॥ हुं इन भरत मझाररे ॥ मो मन तुम चरणे लाग्यो ॥ किम आवूं तुम पासरे ॥ रत्न० ॥ २ ॥ सुरतरु सुरमणी रत्न हो गुरु ॥ चाकर खंडाका चोरे ॥ आप समो मोय कीजीये गुरु ॥ दीजे अनुभव दासारे ॥ रत्न० ॥ ३ ॥ जो जो काज कर्या तुम मेरा । में भूलनका नांहीरे ॥ अब तो किंकर ये नित चाहे । आय बसो दिल मांहीरे ॥ रत्न० ॥४॥ उपकेश मंडण साहीबा । सुरतरु सम अवदातारे ॥ को कवी गुण गण कह सके । गुरु गिरवा गुणवंतारे ॥ रत्न० ॥ ५ ॥ में तो पदरज धूल हुं । तुम्हे सुरगिरी जेवारे ॥ अवगुण म्हारा छांडीने । गुरु कीजे पार जो खेवारे ॥ रत्न० ॥ ६ ॥ शुभ

उठ शुभ करणे रटे । चाकर पद रजवासा रे ॥ भवभव सेवा चाकरी गुरु । आपो सयम खासारे ॥ रत्न० ॥७॥ शशी नव अब्दा तेहोत्तरा । वद आश्विन मासारे ॥ लस्कर सघ्या माहने । गुर विनती रची सुखशाता रे ॥ रत्न० ॥८॥ इति पदम् ।

यह पद हमेशा प्रतिक्रमण करनेके बाद बोलनेसे सब तरहका आनद मगल होता है । इत्यलम् ।

॥ दादासाहेबकी थुई ॥

आज दिनस मनोहर ए भेटे परम दयाल तो । जन्म कृतारथ मम थयो ए पाप गया पायालतो । सुरतरु घर आंगण फल्यो ए सरिया चिंतित काजतो । रत्नप्रभसूरि सेवतांए भाजै कोटी फिसादतो ॥१॥ उकेश गच्छनायक दीपतां ए रवि सम ज्योत प्रकाशतो । ओएश गढ गुरु आवियाए मिथ्या ध्वस निकासतो । चउदै पूर्व विद्यानिधिए चउनाणि तप स्वादतो। ॥२॥ सद्गुरु दीनी देशनाए टाल्या दुरित जजालतो । पद्मा अम्ब सिद्धादिकाए सुनके भई है निहालतो । समकित सुवसाचल लह्योए तज कुमति परमादतो । ॥ ३ ॥ ताके पट्ट परपराए सिद्धसूरि महाराजतो । बलदेव गणी मुख शोभताए विद्यागुण भण्डारतो । शुभ उठ सद्गुरु शुभ नमेए मनमें धरी आनन्दतो ॥ ४ ॥ इति ॥

॥ पद बेमात्रा ॥

पारस नाम समाया मुज मन ॥ टेर ॥ भवभय हरता मुखधन करता ग्यान उज्वल सुखदाया ॥ मुज० ॥ १ ॥ जय जय वामा तनय भुवन तप गुण गण सुर गुरु गाया ॥ मुज० ॥ २ ॥ कहत करण शुभ उठ तुम्ह पद चरण शरण लय लाया ॥ ३ ॥ इति ॥

श्रीरत्नप्रभसूरी स्तुति.

महिन्द्र चुड घर जनमिया, लक्ष्मी कुक्ष निधान ।
कुलभूषण विद्याधरा, रतन रत्न समान ॥ १ ॥
दिक्षा शिक्षा उर धरी, सूरीपद गणाधीश ।
चौदा पूर्व श्रुत केवली, मयल विचरे मुनीश ॥ २ ॥
अतिशय तेज अखंड यश- भव्य जन सुधारत काज ।
उपकेश पट्टन आविया, तारण भवजल जहाज ॥३॥
मंत्रीसुत विषधर ग्रह्यो, वासक्षेप विष निवार ।
पँवार नृप जैनी भया, तीन लक्ष चौरासी हजार ॥४॥
गौत्र अष्टादश स्थापीया, जैन धर्म जयकार ।
रत्नप्रभसूरी नमुं दिनमें वार हजार ॥ ५ ॥

समाप्त.